"रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका"

पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी

हिन्दी विषय में पीएच.डी.

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

P.K. UNIVERSITY
ACC No.
TH004
SHIVPURI (M.P.)

द्वारा

दीप्ति शर्मा

नामांकन सं0–161595204519

शोध निर्देशक

डॉ. विक्रांत शर्मा

(विभागाध्यक्ष)

कला संकाय, हिन्दी विभाग

पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म०प्र०) पिनकोड-473551

वर्ष–2021

Scanned with OKEN Scanner

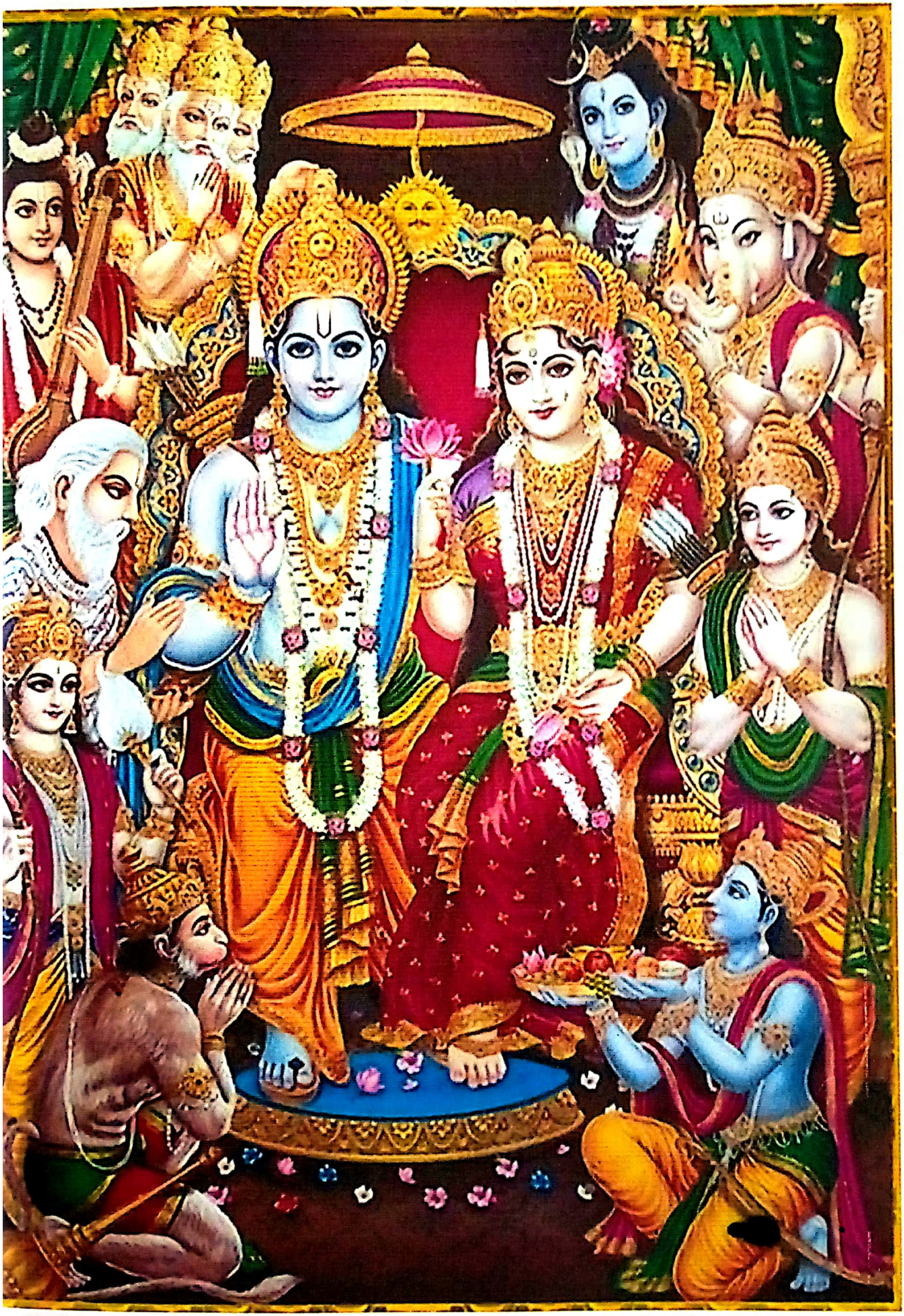

Scanned with OKEN Scanner

विषय वस्तु

1. शीर्षक पृष्ठ
2. पर्यवेक्षक प्रमाण–पत्र
3. घोषणा पत्र
4. आभार
5. कोर्स वर्क प्रमाण–पत्र
6. प्री–पीएच.डी. सबमिशन प्रमाण–पत्र
7. प्लेगरिज्म प्रमाण–पत्र
8. सेन्ट्रल लाइब्रेरी प्रमाण–पत्र
9. शोध सार
10. शोध प्रबन्ध
11. वर्कशॉप प्रमाण–पत्र
12. पुस्तकालय प्रमाण–पत्र
13. लेख
14. शोध पत्र

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC Act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)
Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27, District Shivpuri (M.P.)

CERTIFICATE OF SUPERVISOR

This is to certified that work entitled **"रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका"** of research work done by **Ms. DIPTI SHARMA** under my supervision for the degree of Doctor of Philosophy in HINDI to be awarded by P.K. University, Shivpuri, Madhya Pradesh, India.

I certify that the candidate has put an attendance of more than 240 days with me.

To the best of my knowledge and belief the thesis

I. embodies the work of candidate herself,

II. has duly been completed,

III. Fulfill the requirements of the ordinance related to Ph.D. degree of the University.

Signature of the Supervisor

HOD
Department of Art
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

Dr. Vikrant Sharma
Head of Department
Department of Arts
P.K. University

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC Act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)

Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27, District Shivpuri (M.P.)

DECLARATION BY THE CANDIDATE

I declare that this thesis entitled "रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका" is my own work conducted under the supervision of **Dr. Vikrant Sharma, Supervisor, Head of Department, Department of Arts, P.K. University**, approved by Research Degree Committee. I have put more than 240 days of attendance with the Supervisor at the center.

I further declare that to the best of my knowledge the thesis does not contain my part of any work has been submitted for the award of any degree either in this university or any other university without proper citation.

Date :

Place: Shivpuri

(Signature of the Candidate)

DIPTI SHARMA
Researcher
Reg. No.: PH16ART004HN

Scanned with OKEN Scanner

आभार

दो वर्णों का मेल है **'राम'** जिसका शाब्दिक अर्थ है, रोम-रोम में वास करने वाला अर्थात् जो पूरे ब्रह्मांड में रमण करता हो। राममात्र नाम नहीं है अपितु जीवनमंत्र है, गति है, सृष्टि की निरंतरता का नाम है। जो हमारा परिचय हम से ही करवाता है। उच्चारण करने में जितना कम समय लगता है; उसकी सघनता उतनी ही अधिक है। जो हमारी आत्मा को ऐसी ऊँचाइयों पर ले कर जाता है, जहाँ से देखने पर अपने गुण-अवगुण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। अदम्य साहस का नाम है राम; स्वभाव में मृदुलता का नाम है राम; मानवता को अपने मन मस्तिष्क पर धारण करने वाली धुरीका नाम है राम; जिस सरोवर में स्नान कर हम राम नाम की सिद्धि को प्राप्त करते हैं; वह है रामचरितमानस। बाल्यकाल से ही सुनती आई हूँ कि यदि पुत्र हो तो राम जैसा, भाई हो तो राम जैसा, राजा हो तो राम जैसा, सखा हो तो राम जैसा और यह मेरे लिए सदैव ही उत्सुकता का विषय रहा कि कैसे एक व्यक्ति श्रेष्ठ राजा भी हो सकता है? आज्ञाकारी पुत्र भी हो सकता है? सदा साथ देने वाला मित्र भी हो सकता है? पत्नी की रक्षा करने वाला पति भी हो सकता है? अन्याय से युद्ध करने वाला वीर योद्धा भी हो सकता है? क्या यह संभव है? भोलेनाथ की कृपा से मेरी इस जिज्ञासा को राम को और निकटता से जानने की पिपासा को शांत करने का अवसर मुझे मेरे शोध कार्य के रूप में मिला। जिस समाज में मैं पली-बढ़ी वहाँ हमेशा ही कुछ भी अच्छा होने पर सुंदरकांड का पाठ, अखंड रामायण का पाठ यही सुनती देखती आई हूँ। जब वहां उपस्थित श्रद्धालुगणों में उत्साह, उमंग और रामरस में भीग जाने की प्रक्रिया देखती तो एक अलौकिक अनुभूति स्वतः ही हो जाती थी; कुछ तो है श्री राम के व्यक्तित्व में जो सबको उनसे आज भी जोड़े हुए हैं। कई सारी कहावतों, लोकोक्तियों और बोलियों में श्रीराम नाम का पुट भारतीय जनमानस के लिए आम-सी बात है परंतु विशेष में कैसे किसी का व्यक्तित्व इतना विशाल और इतना गहरा हो सकता है? कि पीढ़ी दर पीढ़ी बीत जाने के बाद भी उन्हें उसी रूप में याद किया जाता है। हमारे पर्व जैसे रामनवमी, दीपावली, विजयदशमी, राम विवाह सब राम जी के जीवन से जुड़े हैं, जो हमें सामाजिक समरसता का स्पष्ट संदेश देते हैं। उनके गुणों को धारण करने की सीख देते हैं। उनका शील उनका स्नेह दूसरों को दिए जाने वाला मान सम्मान अपने आप में उनके व्यक्तित्व की महानता और विशालता को चरितार्थ करता है और उनको भारतीय जनमानस से जोड़ने का कार्य रामचरितमानस करता है। इसी महान ग्रंथ की अनन्य छोटी-छोटी चौपाइयां, दोहे, छंद इत्यादि हमें जीवन की सीख देते हैं। हमारे कर्तव्यों का बोध कराते हैं हमारे मन में विश्वास भरते हैं और सबसे अधिक तो हमें प्रेरित करते हैं कि यदि राम धर्म के मार्ग पर चलते हुए नीतियों का पालन करते हुए मात्र राम न रहकर मर्यादा पुरुषोत्तम राम बन जाते हैं,

Scanned with OKEN Scanner

लोकनायक राम बन जाते हैं तो क्यों न हम भी उनके जीवन से प्रेरणा लें और प्रयास तो अवश्य ही करें उनके गुणों को मान-सम्मान दें| उनके जीवन के यदि किसी छोटे से भी अंश को हम जी जाएँ; तो अपना जन्म सफल हो जाए| रामचरितमानस में समाज में जिस पारिवारिक तथा सामाजिक आदर्श को स्थापित किया उसके नायक है राम, उस स्थापना की आधारशिला हैं राम| मैं अपने आप को अत्यंत सौभाग्यशाली मानती हूँ कि भोलेनाथ की कृपा से मुझे यह शोध कार्य करने का शुभ अवसर मिला|

'रामचरितमानस में सामाजिक-पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका' यह मेरे लिए मात्र शोध कार्य अथवा शोध का विषय नहीं है,अपितु मेरे जीवन में एक बहुत बड़ा परिवर्तन है| जिसके प्रेरणा स्रोत मेरे **पिताजी श्री दिनेश कुमार शर्मा** है, उनका मुझ पर यह विश्वास करना कि मैं अपने शोध कार्य को करने में सफल होऊँगी; सदैव ही मुझे प्रेरित करता रहा| ये उन्हीं की प्रेरणा तथा विश्वास है; जिस कारण इस शोध कार्य को नियत समय में पूर्ण करने में सफल हुई, साथ ही मेरी **माता जी श्रीमती पुष्पा शर्मा** जिन्होंने हर स्थिति में मेरा साथ दिया अपना पूर्ण सहयोग एवं आशीर्वाद दिया उनके सहयोग के बिना मैं यह कार्य पूर्ण नहीं कर पाती| परिजनों, शुभचिंतकों की शुभेक्षाएँ तथा मित्रों का सहयोग इस पावन कार्य को पूर्ण करने हेतु सदैव मुझे मिलता रहा|

विशेष रुप से पी.के. विश्वविद्यालय के कुलाधिपति, **श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, कुलपति, प्रो॰ (डॉ.) रंजीत सिंह, कुलसचिव,** श्री हिमांशु पालीवाल, प्रशासनिक निदेशक, **श्री जितेंद्र कुमार मिश्र, अध्यक्ष, रिसर्च विभाग,** प्रो. (डॉ.) **दिनेश बाबू,** शोध **निर्देशक- डॉ. विक्रांत शर्मा, लाइब्रेरियन- मिस निशा यादव एवं समस्त पी. के. एकेडमिक स्टाफ** का सहयोग तथा मार्गदर्शन मिला| ईश्वर की असीम अनुकंपा से मेरा यह शोध कार्य संपन्न हुआ और मैं यह विश्वास तथा आशा दोनों प्रकट करते हुए कहती हूँ कि श्री राम का यदि छोटा सा भी अंश हम सब अपने अंदर समाहित कर ले तो राम राज्य का सपना अवश्य ही साकार होगा क्योंकि **इस ब्रह्मांड के रोम-रोम में कण-कण में बसे हैं राम**|

जय श्री राम

Dipti Sharma

दीप्ति शर्मा

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2f of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref. No PKU/2021/12/13/RD-SCH/609-2001

Date: 13/12/2021

CERTIFICATE OF COURSE WORK

This is to certify that **Ms. Dipti Sharma,** (Enrollment No.161595204519) Daughter of **Mr. Dinesh Kumar Sharma,** Researcher of Ph.D(Hindi) session 2016-17, Under the Faculty Of Arts. She has completed the course work examination with **'A'** grade form P.K. University, Shivpuri.

Registrar

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2f of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref.No. RC/ PKU/21/06 **Date:** 13-12-2021

Certificate of Pre- Ph.D Submission

This is to certify that **Ms. Dipti Sharma** is a Research Scholar, in P.K. University. The title of her thesis Work in **"रामचरितमानस में; सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका"**. Her Pre Submission Defense Committee was held on 27-10-2021. She has successfully cleared the PSDC.

18/12/21

Dean Research
Research Cell
P.K. University

Dean Reserch
University
(M.P.)

Scanned with OKEN Scanner

P. K. UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2(F) of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref. No. PKU/2021/12/13/ LIB- SCH/001-1293 Date 13.12.2021

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Dipti Sharma
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D)
3. Title of the Thesis	:	"रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका"
4. Name of the Supervisor	:	Dr. Vikrant Sharma
5. Department	:	Department of Hindi
6. Subject	:	Hindi
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	0%
9. Software Used	:	Ouriginal (Formerly URKUND)
10. Date of Verification	:	26.10.2021

Signature of Ouriginal Coordinator
(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)
LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

13/12/21

CAMPUS : VILLAGE - THANRA, TEHSIL - KARERA, NH-27, DIST. - SHIVPURI (M.P.) -473665
Mob.: 7241115088, Email: registrar.pkuniversity@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref No. PKU/2021/10/25/LIB-SCH/004-1203 Date: 25.10.21

TO WHOM IT MAY CONCERN

This is to certify that **Ms Dipti Sharma** Research Scholar, Department of Art under the Faculty of Art at P.K. University, Shivpuri (M.P.) came and visited the Central Library of P.K.University for collecting the literature reviews for her research work. Her Research topic is "रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका"

I wish hes all the best for all future endeavors.

Librarian
Central Library
P.K.University

ADD: VIL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI (M.P.) -473665
MOB: 7241115088, Email: registrar.pkuniversity @gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

शोध का सार

रामचरितमानस का अर्थ है- **'राम के चरित्र का सरोवर'** जिसके चरित्र में ही इतनी गहराई हो कि संपूर्ण रचना ही उनके चरित्र को समर्पित हो, रामचरितमानस में श्री राम की बाल्यावस्था से लेकर उनके वनवास से लौटकर अयोध्या नरेश बनने तक की प्रत्येक घटना का अगर हम अध्ययन करते हैं, तो हमको ज्ञात होता है कि रामचरितमानस के प्रत्येक कांड में राम के चरित्र को उत्तम दशा में दर्शाया गया है | रामचरितमानस में मानव-चरित्र की समस्त प्रवृत्तियों का समावेश किया गया है | इसमें श्रीराम के चरित्र का मानवीय लौकिक रूप- पुत्र, पति, भाई, आदर्श राजा आदि के विविध रूपों का भी समावेश हुआ है|

श्रीराम का चरित्र इतना साधारण तथा सरल है कि वह हमारे जीवन के समस्त आयामों को स्पर्श करता है| उनका आचरण, दायित्व की भावना, त्यागमयी जीवन, परोपकारी स्वभाव, सत्यवादी, समस्त प्राणियों के प्रति प्रेम की भावना तथा प्रिय वचन बोलने वाले हम सभी को प्रेरित करते हैं, कि हम भी व्यवहार की उन गहराइयों तक जाते हुए उनके जीवन से जीवन जीने की कला सीखे | अपने कुटुंब, समाज, धर्म तथा देश के प्रति प्रतिबद्ध रहें | अपने संबंधों तथा अपने दायित्वों को वरीयता दें | श्रीराम के जीवन से यह भी सीखने को मिलता है कि स्वयं के लिए जीना वास्तव में जीना नहीं कहलाता | जब तक हम दूसरों के सुख-दुख को अपना मान कर उसके अनुरूप व्यवहार नहीं करते हैं ,तब तक हम श्वास तो ले रहे हैं परंतु जीवित नहीं हैं| श्रीराम अपने नगर तथा राज्य के प्रत्येक व्यक्ति के प्रति पिता होने का दायित्व निभाते रहे | प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का आधार बने| अपनी प्रजा के ऊपर संकट आने पर अत्यधिक दुखी हो जाते हैं और उनके घरों में होने वाले उत्सवों को देखकर एक पिता की भांति प्रसन्न होते हैं| किसी भी तरह का लोभ उन्हें स्पर्श तक नहीं करता है| समाजवाद के सच्चे प्रणेता,धर्म के पुरोधा तथा सब के मान -सम्मान को अपना मान-सम्मान समझने वाले श्री राम अनुकरणीय हैं| माता सीता के हरण के पश्चात भी राम जी ने अपना आत्मविश्वास नहीं डगमगाने दिया उन्होंने सभी को एकत्रित करके समुद्र पर सेतु की निर्माण किया और रावण का वध करके माता सीता को वापस लाए। योजनाबद्ध तथा एकता के साथ कार्य किया जाए तो कठिन से कठिन कार्य भी पूरा किया जा सकता है और लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है, इस बात को श्रीराम के जीवन से अवश्य सीखना चाहिए|

श्रीराम जी का जीवन-चरित्र प्रत्येक स्थिति में सामंजस्य सहित धर्म के मार्ग पर दृढ़ता से आगे बढ़ते रहने का पर्याय है| उनके गुणों तथा दृष्टिकोण को पूर्णता से कलमबद्ध कर लेना संभव कार्य नहीं है फिर भी युगो-युगो से सांस्कृतिक साहित्यिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों

Scanned with OKEN Scanner

प्रस्तावना

दो वर्णों का मेल है 'राम' जिसका शाब्दिक अर्थ है,रोम-रोम में वास करने वाला अर्थात जो पूरे ब्रह्मांड में रमण करता हो| राम मात्र नाम नहीं है अपितु जीवनमंत्र है गति है,सृष्टि की निरंतरता का नाम है| जो हमारा परिचय हम से ही करवाता है| उच्चारण करने में जितना कम समय लगता है; उसकी सघनता उतनी ही अधिक है| जो हमारी आत्मा को ऐसी ऊँचाइयों पर ले कर जाता है, जहाँ से देखने पर अपने गुण- अवगुण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं| अदम्य साहस का नाम है राम; स्वभाव में मृदुलता का नाम है राम; मानवता को अपने मन मस्तिष्क पर धारण करने वाली धुरी का नाम है राम; जिस सरोवर में स्नान कर हम राम नाम की सिद्धि को प्राप्त करते हैं; वह है रामचरितमानस| बाल्यकाल से ही सुनती आई हूँ कि यदि पुत्र हो तो राम जैसा ,भाई हो तो राम जैसा,राजा हो तो राम जैसा, सखा हो तो राम जैसा और यह मेरे लिए सदैव ही उत्सुकता का विषय रहा कि कैसे एक व्यक्ति श्रेष्ठ राजा भी हो सकता है? आज्ञाकारी पुत्र भी हो सकता है? सदा साथ देने वाला मित्र भी हो सकता है? पत्नी की रक्षा करने वाला पति भी हो सकता है ? अन्याय से युद्ध करने वाला वीर योद्धा भी हो सकता है? क्या यह संभव है ? भोलेनाथ की कृपा से मेरी इस जिज्ञासा को राम को और निकटता से जानने की पिपासा को शांत करने का अवसर मुझे मेरे शोध कार्य के रूप में मिला| जिस समाज में मैं पली-बढ़ी वहाँ हमेशा ही कुछ भी अच्छा होने पर सुंदरकांड का पाठ, अखंड रामायण का पाठ यही सुनती देखती आई हूँ| जब वहां उपस्थित श्रद्धालुगणों में उत्साह, उमंग और रामरस में भीग जाने की प्रक्रिया देखती तो एक अलौकिक अनुभूति स्वतःही हो जाती थी; कुछ तो है श्री राम के व्यक्तित्व में जो सबको उनसे आज भी जोड़े हुए हैं| कई सारी कहावतों , लोकोक्तियों और बोलियों में श्रीराम नाम का पुट भारतीय जनमानस के लिए आम-सी बात है परंतु विशेष में कैसे किसी का व्यक्तित्व इतना विशाल और इतना गहरा हो सकता है? कि पीढ़ी दर पीढ़ी बीत जाने के बाद भी उन्हें उसी रूप में याद किया जाता है| हमारे पर्व जैसे रामनवमी ,दीपावली ,विजयदशमी ,राम विवाह सब राम जी के जीवन से जुड़े हैं,जो हमें सामाजिक समरसता का स्पष्ट संदेश देते हैं| उनके गुणों को धारण करने की सीख देते हैं| उनका शील उनका स्नेह दूसरों को दिए जाने वाला मान सम्मान अपने आप में उनके व्यक्तित्व की महानता और विशालता को चरितार्थ करता है और उनको भारतीय जनमानस से जोड़ने का कार्य रामचरितमानस करता है| इसी महान ग्रंथ की अनन्य छोटी-छोटी चौपाइयां, दोहे, छंद इत्यादि हमें जीवन की सीख देते हैं| हमारे कर्तव्यों का बोध कराते हैं हमारे मन में विश्वास भरते हैं और सबसे अधिक तो हमें प्रेरित करते हैं कि यदि राम धर्म के मार्ग पर चलते हुए नीतियों का पालन करते हुए मात्र राम न रहकर मर्यादा पुरुषोत्तम राम बन जाते हैं,लोकनायक राम बन जाते हैं तो क्यों न हम भी उनके जीवन से प्रेरणा लें और प्रयास तो अवश्य ही करें उनके गुणों को मान-सम्मान दें| उनके जीवन के यदि किसी छोटे से भी अंश को हम जी जाएँ;तो अपना जन्म सफल हो जाए| रामचरितमानस में समाज में जिस पारिवारिक तथा सामाजिक आदर्श को स्थापित किया उसके नायक है राम,उस स्थापना की आधारशिला हैं राम| मैं अपने आप को अत्यंत सौभाग्यशाली मानती हूँ कि भोलेनाथ की कृपा से मुझे यह शोध कार्य करने का शुभ अवसर मिला|

'रामचरितमानस में सामाजिक-पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका' यह मेरे लिए मात्र शोध कार्य अथवा शोध का विषय नहीं है, अपितु मेरे जीवन में एक बहुत बड़ा परिवर्तन है| जिसके प्रेरणा स्रोत मेरे पिताजी श्री दिनेश कुमार शर्मा है,उनका मुझ पर यह विश्वास करना कि मैं अपने शोध कार्य को करने में सफल होऊँगी;सदैव ही मुझे प्रेरित करता रहा| ये उन्हीं की प्रेरणा तथा विश्वास है; जिस कारण इस शोध कार्य को नियत समय में पूर्ण करने में सफल हुई,साथ ही मेरी माता जी श्रीमती पुष्पा शर्मा जिन्होंने हर स्थिति में मेरा साथ दिया अपना पूर्ण सहयोग एवं आशीर्वाद दिया उनके सहयोग के बिना मैं यह कार्य पूर्ण नहीं कर पाती|

परिजनों , शुभचिंतकों की शुभेक्षाएँ तथा मित्रों का सहयोग इस पावन कार्य को पूर्ण करने हेतु सदैव मुझे मिलता रहा|

विशेष रुप से कुलाधिपति -श्री जगदीश प्रसाद(चांसलर), कुलपति-प्रो०रंजीतसिंह(वाइस चांसलर), कुलसचिव श्री जितेंद्र कुमार मिश्र, रिसर्च विभाग अध्यक्ष डॉ.दिनेश बाबू, रिसर्च विभाग उपाध्यक्ष एवं मार्ग निर्देशक-
डॉ. विक्रांत शर्मा, लाइब्रेरियन-मिस निशा यादव एवं समस्त पी. के. एकेडमिक स्टाफ का सहयोग तथा मार्गदर्शन मिला| ईश्वर की असीम अनुकंपा से मेरा यह शोध कार्य संपन्न हुआ और मैं यह विश्वास तथा आशा दोनों प्रकट करते हुए कहती हूँ कि श्री राम का यदि छोटा सा भी अंश हम सब अपने अंदर समाहित कर ले तो राम राज्य का सपना अवश्य ही साकार होगा क्योंकि इस ब्रह्मांड के रोम-रोम में कण कण में बसे हैं राम|

जय श्री राम

दीप्ति शर्मा

अध्ययन अनुक्रम

क्रम

प्रथम अध्याय: शीर्षक उपादेयता	पृष्ठ संख्या
१.१ शीर्षक का महत्व	१ - १६
१.२ रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास का दृष्टिकोण	
१.३ साहित्य के संदर्भ में रामचरितमानस की प्रकृति	
१.४ रामचरितमानस में राम का आदर्श रूप	
द्वितीय अध्याय : व्यावहारिक विवेचन	१७ - ६०
२.१ पारिवारिक जीवन में श्रीराम की भूमिका	
२.२ सामाजिक आदर्श के रूप में श्री राम की भूमिका	
२.३ श्री राम के जीवन मूल्य	
२.४ साधारण जनमानस के राम	
२.५ श्री राम की व्यवहारिक कुशलता	
२.६ श्रीराम के जीवन का सार	
तृतीय अध्याय: पारिवारिक व सामाजिक चेतना के प्रणेता श्री राम	६१ - ८३
३.१ पारिवारिक सद्भाव	
३.२ समस्त दायित्वों के कुशल निर्वाहक	
३.३ समाज के प्रत्येक स्तर हेतु क्रियाशील	
३.४ संयमित व्यवहार	
चतुर्थ अध्याय: कुशल राजनीतिज्ञ एवं प्रबंधक	८४ - १३७
४.१ विशाल राजनीतिक दृष्टिकोण एवं निर्णय क्षमता	
४.२ सहज उपलब्धता	
४.३ जनसेवक	
४.४ कूटनीतिज्ञ व सफल रणनीतिकार	
४.५ सशक्त संचार एवं सूचना तंत्र	

पंचम अध्याय: लेखकीय परिपेक्ष्य १३८ - १८७
५.१ तुलसीदास के पुरुषोत्तम राम
५.२ वाल्मीकि के असाधारण राम
५.३ भगवान सिंह के दाम दैवीय राम
५.४ कोहली के न्यायप्रिय एवं नूतन समाज के निर्माता राम
५.५ अमिश के दृढ़ता से नियमों का पालन करने वाले राम
५.६ सुलभ अग्निहोत्री के संस्कृति के रक्षक राम

षष्टम अध्याय: उपसंहार १८८ - १९७
* रामराज्य की विवेचना

परिशिष्ट १९८ - १९९
*संदर्भ ग्रंथ सूची
*सहायकपुस्तकें
*लेख तथा पत्रिकाएं

रामचरितमानस में सामाजिक-पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका

प्रथम अध्याय: शीर्षक उपादेयता

१.१ शीर्षक का महत्व :-

रामचरितमानस का अर्थ है-राम के चरित्र का सरोवर अर्थात जिस के चरित्र में इतनी महानता हो कि संपूर्ण रचना ही उनके चरित्र को समर्पित हो| रामचरितमानस में श्रीराम की बाल्यावस्था से लेकर उनके वनवास से लौटने तथा लौटकर अयोध्या नरेश बनने तक का प्रत्येक घटनाक्रम का यदि हम अध्ययन करते हैं, तो हमको ज्ञात होता है कि रामचरितमानस के प्रत्येक कांड में श्री राम के चरित्र को उत्तम दशा में दर्शाया गया है | रामचरितमानस में राम को ब्रह्म मानते हुए उनमें मानवोचित समस्त प्रवृत्तियों का समावेश किया गया है इसमें जहां एक ओर राम के ईश्वरत्त्व को स्वीकार किया गया| वहीं दूसरी ओर राम के चरित्र में उनका मानवीय लौकिक रूप पुत्र, पति तथा आदर्श राजा के विविध रूपों का भी समावेश हुआ है| तुलसीदास के इष्ट देव राम थे ,वही उनके जीवन के परम आदर्श थे| श्री राम के प्रति उनकी अद्भुत भक्ति भावना की अभिव्यक्ति रामचरितमानस समेत उनकी संपूर्ण रचनाओं का विषय है| तुलसीदास जी ने राम की शक्ति-शील, सौंदर्य, स्वभाव रूप की अवतारणा की है|

'मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का चरित्र भारतीय संस्कृति के समष्टि रूप का पर्याय बन चुका है |' १

सारी सृष्टि में रमे राम युग युग से सात्विक रसिक जनों की रस साधना एवं अध्यात्म प्रिय जनता की आस्था का केंद्र रहे हैं| श्रीराम का चरित्र इतना लोकप्रिय रहा है कि भारत की विभिन्न प्रांतीय भाषाओं में ही नहीं विश्व वाङमय का भी अभिन्न अंग बना तथा रामकथा युग के साथ नूतन सांचों में ढलती रही| वे महापुरुष महात्मा धीरोदत्त नायक से अवतारी बन गए| श्री राम के चरित्र के कारण ही; वे विभिन्न संप्रदायों में पूजनीय हैं| सगुण एवं निर्गुण दोनों पक्षों के प्रवर्तकों ने उनके चरित्र को उत्कृष्ट माना है| तुलसीदास ने रामचरितमानस में उनके नाम के साथ उनके रूप लीला और धाम का उल्लेख करते हुए उन्हें कल्पतरू तथा मुक्ति का धाम बताया है|

'नामु राम को कल्पतरू कली कल्याण निवासु | २

श्रीराम भारत की अस्मिता का आधार हैं| राम तो वह हैं, जो रावण से युद्ध करने के लिए निकलते हैं तो एक राजकुमार होते हुए भी किसी राजा का साथ नहीं लेते बल्कि वंचितों को वनवासियों को गले लगाते हुए उनके सहयोग से एक नई सेना का निर्माण करते हैं| श्री राम का भारतीय जनमानस के अंतर्मन में महत्व मात्र इसलिए नहीं है क्योंकि उन्होंने जीवन में अनेक कठिनाइयाँ झेली थीं; अपितु इसलिए है क्योंकि उन्होंने इन तमाम कठिनाइयों का सामना बड़ी शिष्टतापूर्वक तथा संयम से किया अपने सर्वाधिक कठिन क्षणों में भी उन्होंने स्वयं को अत्यंत गरिमापूर्ण विधि से प्रस्तुत किया| श्री राम को यदि हम एक चित्र अथवा मूर्ति के रूप में न भी देखें मात्र उनका चरित्र देखें तो भी वह स्वयं में पूर्ण हैं| राम की भक्ति मात्र इसलिए नहीं की जाती

---

१ - राम की प्रासंगिकता लेख डॉ राजेंद्र कुमार सिंघवी द्वारा

२ - बालकांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास जी गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ३०

कि वे हमारी भौतिक इच्छाएं पूर्ण करें या उनके नाम का स्मरण करने से हमारी समस्त भौतिक इच्छाएं पूर्ण हो जाएँगी वरन हम उनकी भक्ति उनके गुणों, व्यवहार तथा शील के कारण करते हैं कि कैसे उन्होंने स्वयं को संयमित रखते हुए भी जीवन की सभी चुनौतियों का सामना धैर्यपूर्वक किया था| उसी प्रकार हम भी धैर्य रखते हुए अपने जीवन के सभी चुनौतियों का सामना करते हुए अपने जीवन में सफलता प्राप्त कर सकें| राम प्रेरणास्रोत हैं तथा भारतीय संस्कृति का आधार है| तुलसीदास वेदांत के गूढ़ रहस्य को 'रामब्रहम चिन्मय अबिनासी' तथा 'राम सच्चिदानंद दिनेसा' कहकर स्पष्ट कर देते हैं कि तुलसी के राम लोक के राम हैं| लोक उनमें एकीभूत है ,उन्होंने राम के चरित्र को ऐसे प्रस्तुत किया है कि जिससे राम सबके अपने राम बन गए| उनके राम मात्र सुखियों के ही नहीं दुखियों के भी राम हैं| राम लोक के आराध्य तो हैं ही परंतु तुलसीदास जी ने उनका इतना लौकिकीकरण कर दिया है कि राम कभी पुत्र के रूप में कभी बंधु के रूप में कभी सखा के रूप में प्रत्येक व्यक्ति के साथ रहते हैं| 'रामचरितमानस के राम एक आदर्श राम हैं|'

तुलसीदास ने राम के प्रत्येक रूप को भली प्रकार दर्शाया है| ऐसे अनगिनत प्रसंग है जिन से ज्ञात होता है कि रामचरितमानस शब्द अपने आप में ही सार्थकता को दर्शाता है| राम के चरित्र का सरोवर यदि हम इसकी गहराई में जाएं गहन अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि क्यों राम पूजनीय, आदरणीय, माननीय हैं?

राम जी के द्वारा सीता जी को वचन दिया जाता है कि मैं अपने जीवन में एक ही विवाह करुँगा,तुम ही मेरी एकमात्र पत्नी रहोगी ,जो यह दर्शाता है कि वे बहु-विवाह के विरोधी थे;जबकि उस समय राजाओं की कई रानियां हुआ करती थीं| वन में निषादराज से गले मिलकर श्रीराम ने ऊँच-नीच की भावना पर कुठाराघात किया, यह संदेश दिया कि समाज में भेदभाव नहीं होना चाहिए| शबरी के बेर खाकर यह ज्ञान दिया कि मोल वस्तु का नहीं वरन मनुष्य की भावनाओं का होता है| अहिल्या को श्राप मुक्त कर यह संदेश दिया कि अनजाने में हुई गलती ,गलती नहीं कहलाती जिसका अपराध हो दंड उसको मिलना चाहिए मात्र स्त्री होने के नाते दंडित करने का कोई अधिकार नहीं वरन सुखद भविष्य हेतु क्षमा कर देना ही उचित है|

बालि वध का सार यह है कि यदि आपका मित्र निष्पाप है,तो परिस्थिति कोई भी हो हमें अपने मित्र का साथ देना ही चाहिए तथा येन-केन-प्रकारेण असत्य पर सत्य तथा अन्याय पर न्याय की विजय हेतु तत्पर रहना चाहिए| ऐसे संदेश देने वाली पवित्र रामचरितमानस द्वारा श्री राम के शब्द व्यवहार तथा मानवता से पूर्ण आचरण की महत्ता सर्वविदित है| हमारे समाज में आज भी पुत्र हो तो राम जैसा,शासक हो तो राम जैसा इसी प्रकार की उपमा दी जाती है| ऐसा बनने की आशा की जाती है रामचरितमानस के राम युग प्रणेता है| तुलसीदास जी की रसक्ति से सरल शब्द सर्जना से राम के चरित्र को जैसा प्रस्तुत किया गया है वैसा कोई अन्य न कर सका उन्होंने राम के प्रति जैसे भाव प्रकट किए हैं उन्हें कुछ पंक्तियों द्वारा समझा जा सकता है -

राम निकाईं रावरी है सबही को नीक |
जौं यह साँची है सदा तौ नीको तुलसीक || ३

राम की लोकप्रियता सरल तथा परोपकारी स्वभाव के द्वारा सब के कल्याण की कामना तथा एक भक्त के रूप में स्वयं के कल्याण के लिए आश्वस्त होना दर्शाता है कि वे श्री राम के आदर्श व्यवहार को सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वहितकारी मानते हैं| तुलसीदास जब राम को राजा बना देते हैं तब ऐसा लगता है कि राजा शब्द केवल राम के लिए ही बना है तुलसीदास ने राम के समाजवादी रूप को भी बड़ी स्पष्टता से प्रदर्शित किया है|

---

३ -बालकांड,रामचरितमानस,गोस्वामीतुलसीदासजी,गीताप्रेसगोरखपुर,पृष्ठसंख्या३३

राम ने समाजवाद के इस अर्थ को अपने जीवन में उतारा तथा अपने आचरण द्वारा लोगों को भी यही शिक्षा दी| वैसे तो संपूर्ण रामचरितमानस में राम का आदर्श रूप एक समाजवादी सोच का प्रतिनिधित्व करता है क्योंकि राम ने अपने चरित्र तथा कर्तव्य पालन में अपने समाजवाद को सजीव रूप में प्रस्तुत किया है| सत्ता सुख को त्याग कर समाजवाद को ढोकर हमने अपने साहस का परिचय दिया त्याग की भावना साहसिक कृत्य का सर्वोच्च उदाहरण है| यदि व्यक्ति में साहस नहीं तो जीवन नहीं; साहस सत् जीवन का आधार है| श्री राम ने अपने लिए कभी कुछ नहीं चाहा| यदि हम श्री राम के जीवन सरोवर के समान रामचरितमानस के सातों कांड का अध्ययन करते हैं, तो किसी भी कांड के किसी भी घटनाक्रम में हम यह नहीं पाएंगे कि श्रीराम ने स्वयं के लिए कभी कुछ किया हो अथवा किसी वस्तु पर या अधिकार की इच्छा की हो वे जीवन पर्यंत दूसरों को देते ही रहे चाहे वह भक्ति हो या मुक्ति; किसी भी प्रसंग में हम यह नहीं पाते कि श्रीराम ने किसी भी व्यक्ति परिवार के सदस्य से किसी भी प्रकार की कोई इच्छा प्रकट की हो गुरु विश्वामित्र ने श्री राम को राजा दशरथ से तब मांगा जब वे कुमार अवस्था में थे| वहाँ के आश्रम तथा आश्रमवासियों को इसी रक्षक की आवश्यकता थी | जिसको श्री राम ने पूरी निष्ठा के साथ निभाया| दशरथ के वचन का पालन माता-पिता की छवि तथा संबंध को निभाने के लिए किया | सीता जी को हिरण चाहिए था, इसलिए मारीच के पीछे चले गए फिर सीता हरण के पश्चात उनको लाने हेतु अथक प्रयत्न किए| वनवास अवधि के के प्रारंभ में लक्ष्मण के आक्रोश को भाँपते हुए कहते हैं कि तुम्हारे मन में भरत के लिए जो वैमनस्य का भाव है;उसे समाप्त करो वह भी तुम्हारा भ्राता है| मेरे ही समान वह भी तुम्हारा हितैषी है वह भी सबका हित चाहने वाला है राम सर्वत्र परोपकारी रूप में ही दिखते हैं|

विश्वामित्र जी ने उन्हें यही शिक्षा दी थी कि स्वयं के हित की इच्छा न रखते हुए जन कल्याण का कार्य करो और उन्होंने इस शिक्षा का आजीवन पालन किया | सामने जो भी व्यक्ति आया श्रीराम ने उसकी मनोदशा तथा उसकी आवश्यकता के अनुरूप ही उससे व्यवहार किया| श्री राम रामचरितमानस के चरित्र नायक हैं; जिसकी प्रासंगिकता सर्वमान्य है | आदि कवि वाल्मीकि जी ने भी श्री राम के संबंध में कहा है कि, वे गांभीर्य में समुद्र के समान हैं वीरता, मर्यादा के परम आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित हैं| वे सदैव कर्तव्यनिष्ठा के प्रति आस्थावान रहे| उन्होंने कभी लोक मर्यादा के प्रति दौर्बल्य प्रकट नहीं होने दिया| जिस परिस्थिति में हमारा मानसिक संतुलन खो जाता है| हमारा व्यवहार असहिष्णु हो जाता है| जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से हमारे संबंधों तथा आसपास के लोगों पर पड़ता है, हम इसके प्रभाव से अनभिज्ञ रहते हैं तथा ऐसे कई निर्णय ले लेते हैं जिसका दुष्परिणाम हमें तथा हमारे परिजनों को भुगतना पड़ता है| यह हमारे चरित्र की दुर्बलता ही होती है | श्रीराम ने किसी भी विषम परिस्थिति में चरित्र तथा आचरण को दुर्बल नहीं पड़ने दिया| उनकी इन्हीं चारित्रिक विशेषताओं के कारण उन्हें आदर्श माना जाता है, उन्होंने कभी किसी संबंध को, किसी इच्छा को अपने चरित्र की दुर्बलता नहीं बनने दिया न केवल संबंधों तथा कर्तव्य को पूरा मान दिया अपितु संबंधों को कर्तव्यों के पालन हेतु बलिदान भी कर दिया| स्वयं के लिए किसी सत्ता किसी राजगद्दी किसी भी प्रकार की धन -संपत्ति , ऐश्वर्य की कोई भी इच्छा नहीं रखी| वे कर्म योगी थे और कर्म करने में ही विश्वास रखते थे वह भी यथावत धर्मानुसार| वनवास की अवधि में जब वे सीता तथा लक्ष्मण जी को लेकर रहने योग्य स्थान ढूंढते हुए वाल्मीकि जी के आश्रम जाते हैं तथा निम्न पंक्तियां कहते हुए वाल्मीकि जी को सम्मान देते हैं|

---

४ - वर्तमान समय में राम की प्रासंगिकता, लेख द्वारा केशव मोहन पांडे

तुम्ह त्रिकालदर्शी मुनि गाथा| बिस्व बदर जिमी तुम्हरे हाथा | ५

मुनि की महानता को दर्शाते हुए स्वयं को तुच्छ मानते हैं| सब कुछ ज्ञात होने के पश्चात भी अज्ञानता का प्रदर्शन करते हुए वाल्मीकि जी में इस प्रकार विश्वास जताते हैं, जैसे श्रीराम तो सर्वथा अनभिज्ञ-अनजान हैं और ऋषि वाल्मीकि सर्वज्ञ एवं जगत के कर्ता-धर्ता हैं| उनको सभी स्थितियों का ज्ञान है,क्योंकि वे त्रिकालदर्शी हैं उनका यह विश्वास ही किसी भी व्यक्ति को आत्मविश्वास तथा उत्तरदायित्व की अनुभूति करवाता है तथा व्यक्ति संवेदनशील भी हो जाता है| श्री राम ने अपने जीवन में सब को प्रमुखता दी चाहे वह किसी भी जाति संप्रदाय अथवा लिंग से हो उसकी सामाजिक स्थिति अच्छी हो बुरी हो आर्थिक रूप से सुदृढ़ हो या विपन्न श्रीराम के लिए सदैव चरित्र तथा व्यक्तित्व की प्रमुखता रही है स्थिति या अवस्था कि नहीं यह सदैव दूसरों की सुविधा को ध्यान में रखते थे| इसका सत्यापन एक बड़ी ही मधुर पंक्ति के द्वारा होता है जिसमें उन्होंने राजा के बारे में अपने विचार व्यक्त किए हैं एक राजा को कैसा होना चाहिए?

मुनि तपस जिन्ह तें दुखु लहहीं | ते नरेस बिनु पावक दहही || ६

जिस राजा के राज्य में मुनि तथा तपस्वियों को दुख सहन करना पड़े उसका दहन बिना अग्नि के ही हो जाता है अर्थात श्री राम कदापि नहीं चाहते थे| राज परिवार का होने के कारण कभी भी उनके परिवार अथवा उनके कारण किसी भी ऋषि-मुनि को किसी भी तरह का कष्ट उठाना पड़े तथा उसका प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उनके परिवार पर पड़े| श्रीराम के व्यवहार को ऐसे ही श्रेष्ठ नहीं माना जाता उनका व्यवहार उनकी सोच उनका दृष्टिकोण सच में अनुकरणीय है| श्री राम के व्यवहार की सार्थकता को हम झुठला नहीं सकते उन्होंने अपने जीवन में प्रत्येक संबंध तथा घटना से सीखने का प्रयास करते हुए अपने व्यवहार को उत्कृष्ट बना लिया राजा दशरथ से उन्होंने वचन तथा प्रेम दोनों को महत्व देते हुए उन्हें निभाना सीखो दशरथ ने राम को बांधा नहीं यद्यपि बांधने के सौ कारण उपस्थित थे| दशरथ बुढ़ापे तक पुत्र के लिए तरसते रहे सौभाग्य तथा गुरु कृपा से उन्हें राम जैसा पुत्र मिला ऐसे पुत्र को वनवास देकर खोना सरल काम नहीं था, परंतु दशरथ ने राम को छल कपट करके पिता के प्रेम का वास्ता देकर नहीं रोका, उन्होंने बड़ी प्रार्थनाएं की राम किसी भी प्रकार यहां रुक जाए परंतु स्वयं उन्होंने कभी उनको बलवश रोकने का प्रयास नहीं किया| सदाचरण के मार्ग पर चलने से कैसे रोकते महाराज दशरथ ने अपने वचनों को पूरा करके अपने चरित्र को तो गरिमा दी ही साथ ही साथ राम को भी गरिमायुक्त आचरण करने के लिए प्रेरित किया| राम ने आजीवन पिता के समान ही न्यायपूर्ण व्यवहार किया पिता के समान ही सब को यथासंभव सम्मान दिया|

महर्षि वाल्मीकि द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर इस संसार में वीर धर्म को जानने वाला कृतज्ञ सत्यवादी सच्चरित्र सर्वहितकारी जितेंद्र तेजस्वी क्रोध को जीतने वाला ईर्ष्या न करने वाला ऐसा मनुष्य कौन है? तब नारद मुनि ने उन्हें श्रीराम का वृतांत सुनाया उनकी भी माता कैकेयी ने श्रीराम के गुणों का वर्णन स्वयं किया है-

कौसल्या सम सब महतारी | रामाहि सहज सुभायँ पिआरी |
मो पर करहि सनेहु बिसेषी | मैं करि प्रीति परिछा देखि || ७

५-अयोध्या कांड, रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास जी,गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ४०५
६-अयोध्या कांड ,रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या ४०६
७-अयोध्या कांड ,रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी,गीताप्रेस गोरखपुरपृष्ठसंख्या३१९

कैकेयी ने कहा कि राम को सहजभाव से सभी माता कौशल्या के समान ही प्यारी हैं| मुझ पर तो वे विशेष प्रेम करते हैं, मैंने उनके प्रेम की परीक्षा लेकर भी देख ली है कहने का तात्पर्य यह है कि कैकेयी को भी राम के न्यायपूर्ण तथा प्रेम से भरे व्यवहार पर विश्वास था| श्री राम के लिए कोई अपना या पराया नहीं था| वे सदैव ही सबका हित चाहते थे सदा ही दूसरों की अभिलाषाओं को पूर्ण करते थे, चाहे इसके लिए उन्हें कष्ट क्यों न सहन करना पड़े| मंथरा द्वारा कैकेयी के हृदय में द्वेष भरने के पहले श्री राम के राजतिलक की सूचना सुनकर अत्यंत प्रसन्न होते हुए ,वे मंथरा को बहुमूल्य हार देती हैं और कहती हैं| हे मंथरे ! तूने यह आनंददायक समाचार सुनाया है इसके बदले मैं तुझे और क्या दूँ ? कैकेयी हर्षित थीं क्योंकि उनके अनुसार राम धर्मज्ञ , गुणवान ,जितेंद्रिय ,सत्यवादी तथा पवित्र हैं| बड़े पुत्र होने के नाते ही वे राज्य के भावी नरेश भी हैं| राम अपने भाइयों तथा सेवकों का संतान की भांति ही पालन करते हैं| आदि कवि वाल्मीकि के अनुसार राज्य अभिषेक के लिए बुलाने तथा उनके लिए विदा लेने गए राम के मुख के आकार में कोई परिवर्तन नहीं था| राज्य अभिषेक के अवसर पर उनके मुख्य मंडल पर कोई प्रसन्नता नहीं थी तथा वनवास के दुखों से उनके मुख पर शोक की रेखाएं भी नहीं थी| वन के लिए जाते समय श्री राम अयोध्यावासियों से कहते हैं कि आप लोगों का जो मेरे प्रति सम्मान है| मुझे इसकी प्रसन्नता तभी होगी यदि आप मेरे प्रति किया जाने वाला व्यवहार ही भरत के प्रति भी करेंगे ऐसे उत्तम व्यवहार को आदर्श क्यों न माना जाए?

प्रत्येक व्यक्ति के आचरण में कोई न कोई दुर्बलता अवश्य ही होती है| परंतु श्रीराम के चरित्र तथा आचरण में जिस मात्र भी दुर्बलता नहीं दिखती क्योंकि वे न्याय पूर्ण तथा संतुलित होता था न कोई आवे न कोई द्वेष न कोई विशेष अनुराग उन्होंने प्रचलित प्रथाओं को मान्यता न देते हुए नीति के अनुसार ही कार्य किया| राजा राजनैतिक लाभ हेतु बहु-विवाह करते थे परंतु श्री राम ने सीता जी को ही अपनी पत्नी के रूप में स्थान दिया वनवास के उपरांत भी वे सदैव सीता जी का ही स्मरण करते रहे अश्वमेघ यज्ञ हेतु उन्हें जब ऋषियों मुनियों ने कहा कि आपके द्वारा कराए जाने वाला यह यज्ञ तभी संपूर्ण होगा जब आप के साथ आपकी पत्नी भी उस यज्ञ में सम्मिलित हों| यह यज्ञ तभी बलदायक होगा जब सीता जी भी आपके साथ हवन में भाग ले| यदि वे जीवित हों तो उनको बुला लिया जाए अन्यथा यज्ञ की पूर्ति हेतु दूसरा विवाह कर लें| जब प्रभु श्री राम ने दूसरे ब्याह की बात हुई तो उन्हें इस बात से आघात लगा और बड़े विनम्र भाव से श्री राम कहते हैं कि मुझ पर आपकी बड़ी कृपा होगी यदि आप ऐसी आज्ञा न दें अन्यथा आपके द्वारा दिए गए इस आदेश का पालन न कर पाने का अपराध मुझसे हो जाएगा| जिसके लिए मैं पहले ही क्षमा मांगता हूँ और अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए सीता जी के प्रति अपने समर्पण तथा अपने संबंध के महत्व को समझाते हुए गर्व से कहते हैं कि

छिन जाए सारा राजपाट हो जाऊं रंक न डरता हूँ |
सौगंध पूज्य चरणों की है मैं सत्य सत्य ही कहता हूँ |
चाहे यूं ही रह जाए यज्ञ निज- निज गृह नृप मंडल जाए ||
चाहे सूरज सूरज अपमान निशा में ढल जाए|
ज्वाला हो जाए सरयू जल सरयू जल चाहे जल जाए |
इतना विप्लव होने पर भी ऐसा उत्साह नहीं होगा |
कोसलपति का इस जीवन में दूसरा विवाह नहीं होगा || ८

---

८ - लवकुश कांड-राधेश्याम रामायण पंडित राधेश्याम ठाकुर प्रसाद प्रकाशन पृष्ठ संख्या ४३८

उपर्युक्त कथन से स्वतः स्पष्ट होता है कि श्रीराम के जीवन में सीता जी का क्या स्थान था उनको स्वयं का अहित सर्वनाश सब कुछ स्वीकार था, परंतु सीता का स्थान किसी और को दे देना कदापि स्वीकार नहीं था उनके सामने कोई बाध्यता नहीं थी| एक छत्र राज्य के स्वामी थे;सब कुछ उनके अधीन था,परंतु वह उन सभी मर्यादाओं तथा नियमों का पालन करते थे जिनका पालन करना किसी भी साधारण व्यक्ति के लिए न्याय संगत तथा उचित था| अपने लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं चुनते थे वे स्वयं को भी उसी तराजू में रखते थे जिसमें किसी भी साधारण मनुष्य को रखा जाता है सदैव ही आदरणीय लोगों को आदर देते थे| उनका एक और गुण जो उन्हें विशेष बनाता था;वह था कभी किसी को किसी कार्य के लिए आदेश न देते हुए न्याय पूर्ण विधि से मनवाना ताकि कार्य करने वाले व्यक्ति को उसकी विशेषता का आभास हो तथा वे उत्साहित होकर कार्य करे| पुस्तक' सीता के जाने के बाद राम' डॉक्टर अशोक शर्मा जी द्वारा लिखित है| इसके एक प्रसंग में जब लव -कुश अपने पिता राम से पूछते हैं कि क्या एक राजघराने की पुत्रवधू होने के उपरांत भी वनवास उनके लिए उचित था? क्या मात्र एक व्यक्ति के कहने से माँ को इतना कठोर दंड देना या उनके प्रति इतना कठोर निर्णय लेना आवश्यक था? तो इसके उत्तर में श्री राम कहते हैं, वह मात्र एक व्यक्ति नहीं था कुछ लोग थे हाँ ,सामने एक ही व्यक्ति आया था| कुछ लोग ही सही पर कुछ लोग तो थे और अगर उनको हम संख्या के रूप में न देखें तो पूरी एक विचारधारा थी जो दुर्भावना से ग्रसित थी और मात्र विरोध करने के लिए विरोध कर रहे थे| ऐसे लोगों को जितना भी समझाया जाए वे मानते नहीं है इस पर कुश ने प्रश्न पूछा कि दूसरे तरीके भी थे उसकी बात को बहुत छोटा समझ कर उसकी अवहेलना की जा सकती थी| उस व्यक्ति को राजदंड का भय दिखाकर चुप कराया जा सकता या अधिक से अधिक प्राण दंड देकर इस तरह की बात न करने वालों को भी संदेश दिया जा सकता है इसके उत्तर में श्री राम कहते हैं कि इनमें से कुछ भी किया जा सकता था परंतु इससे विचार नहीं मरता , अपितु किसी न किसी रूप में और उसका परिणाम और बुरा ही होता| राजा को अपने परिवार के हितों का बलिदान देना पड़ता है| यह पहले भी होता रहा है और आगे भी होता रहेगा| लव-कुश को यह बात ध्यान आई कि उनकी माता भी यही कहा करती थीं कि प्रजा की भलाई और राजधर्म का पालन करने में राजा को परिवार का मोह और व्यक्तिगत स्वार्थों की बलि देने से भी हिचकना नहीं चाहिए और जब उन्हें इस बात का भान हुआ कि वह पीड़ा रामचंद्र के मन में भी उसी तरह समाई हुई है| वह भी उस पीड़ा से उतनी ही आहत है जितना कोई अन्य साधारण व्यक्ति होता परंतु एक राजा होने के कारण वे अपनी पीड़ा को शब्दों का रूप नहीं दे सकते| राम सीता के जाने के बाद कभी भी प्रसन्न नहीं रहे न तो सीताहरण के उपरांत और न उनके वनागमन के उपरांत वे अंतर्मन से सीता जी से जुड़े हुए थे| उनकी भावनाएं उनका प्रेम उनकी सोच सीता जी के साथ ऐसे जुड़े हुए थे जैसे तार के साथ तार; वे स्वयं को सीता जी के बिना अधूरा समझते थे परंतु यह भी जानते थे कि यदि पति के रूप में वे अपने निर्णय का विरोध करते हैं तो एक राजा के रूप में उन्हें अपने कर्तव्य से विमुख होने का बोझ उठाना पड़ेगा और सीता जी किसी भी स्थिति में श्री राम का वह रूप नहीं देख सकती थी| वे कभी नहीं चाहती थी कि उनके पति को उस राज्य का एक भी व्यक्ति कर्तव्य विमुख समझे| यह राम और सीता जी का आपसी सहमति से लिया गया निर्णय था| जिसको सीता जी ने स्वयं धारण किया श्री राम की पीड़ा का अनुमान लगाना किसी भी साधारण मनुष्य के लिए असंभव कार्य है क्योंकि वह उस प्रेम की भी अनुभूति नहीं कर सकता जो श्री राम जी का सीता जी के प्रति था |श्री राम और सीता जी का संबंध आत्मा और शरीर के समान खान जैसे बिन आत्मा के शरीर निर्जीव हो जाता है इसी प्रकार सीता जी के जाने के बाद श्री राम का जीवन निर्जीव हो गया निर्जन हो गया| यह बात अलग है कि श्री राम ने इसको किसी अन्य के सामने कभी भी व्यक्त नहीं किया न तो अपने व्यवहार से और न ही किसी अन्य प्रकार से; इस कारण कोई भी साधारण मति का व्यक्ति उनके इस रूप को देख नहीं पाया|

१.२ रामचरितमानस में तुलसीदास का दृष्टिकोण:-

तुलसीदास एक उच्च कोटि के रचनाकार थे, रामचरितमानस में जीवन के सभी परिस्थितियों का वर्णन है राम जी तथा अन्य पात्रों की भी मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति की गई है श्री राम के मंगलकारी रूप को समाज के सामने प्रस्तुत किया है जो संपूर्ण जीवन को विपरीत धारा और प्रवाह के बीच संगति प्रदान कर उसे अग्रसर करने में सहायक है|

रामचरितमानस एही नामा | सुनत श्रवण पाइ विश्रामा ||

रामचरितमानस उस सरोवर के समान है, जिसमें गोता लगाकर व्यक्ति अपने आप को धन्य मानता है |

उनके पात्रों के गुणों से सीख लेता है| रामचरितमानस कथा तुलसीदास दोनों ही एक-दूसरे का पर्याय बन चुके हैं| श्रीराम ने स्वयं को लोभ विलासिता आदि से दूर रखा;जो उनकी इंद्रिय शक्तियों को दर्शाता है| समानता का भाव दर्शाती हुई पंक्तियां जिसमें श्री राम का बंदरों को भी अपने सामान बनाने और समझने के बारे में विचार व्यक्त किया गया है

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आपु समान |
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान || ९

तुलसीदास के अनुसार वृक्षों की डालियों पर कूदने वाले वानरों को वृक्ष के नीचे बैठे श्री राम अपने समान ही मानते हैं उनके विचार से सभी जीवो को अपने समान ही समझना चाहिए| जिस प्रकार हमें मान सम्मान हर्ष शोक आदि की अनुभूति होती है ठीक उसी प्रकार समस्त प्राणियों को भी इन सभी संवेदनाओं की अनुभूति होती है अतः स्वयं को आनंदित करने हेतु किसी की भावनाओं को आहत नहीं करना चाहिए हर एक सृजन को अगर अपने समान मानेंगे तो किसी के प्रति कोई भी गलत निर्णय नहीं लेंगे श्री राम ने कभी भी किसी योजना या उसकी सफलता का श्रेय स्वयं को नहीं दिया,प्रत्येक छोटे से छोटे जीव को उसके योगदान के लिए धन्यवाद दिया प्रत्येक जीव चाहे वह मनुष्य हो या कोई और प्राणी सभी को आत्मीयता प्रोत्साहन तथा प्रशंसा की आवश्यकता होती है| अपने इष्ट राम के अनुरूप ही तुलसीदास की भी विचारधारा ऐसी ही थी | तुलसीदास जी को लोकनायक का दर्जा दिया गया| जिस युग में तुलसीदास जी का जन्म हुआ उस युग में धर्म समाज राजनीति आदि क्षेत्रों में पारस्परिक विभेद तथा वैमनस्य का बोलबाला था ऐसे समय में गोस्वामी जी ने तत्कालीन परिस्थितियों का गहराई से अध्ययन करते हुए समाज में व्याप्त वैमनस्य को दूर करने का प्रयास किया तुलसीदास जी का दृष्टिकोण एक दार्शनिक दृष्टिकोण था| उन्होंने ज्ञान तथा भक्ति का समन्वय समझाया और कहा कि दोनों मार्गों में कोई अंतर नहीं है तथा दोनों की महत्ता स्थापित की

भगतहिं ज्ञानहिं नहिं कुछ भेदा | उभय हरहिं भव संभव खेदा |

इस प्रकार वे स्वयं समाज के प्रत्येक व्यक्ति जाति वर्ग समुदाय के महत्व को भली प्रकार से समझते थे; ऐसा संभवतः इसलिए था क्योंकि वे स्वयं श्री राम के दिखाए हुए मार्ग पर ही चलते थे उन्हीं के आदर्शों को मानते थे| उनकी प्रत्येक श्वास में राम का वास था| रामचरितमानस मात्र एक काव्य रचना ही नहीं धार्मिक सामाजिक नैतिक धरोहर भी है ,रामचरितमानस विश्व की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक है| तुलसीदास जी के युग में राजा और प्रजा के बीच में बहुत अंतर था| राजा कैसा होना चाहिए? प्रजा के साथ उसका व्यवहार तथा उसका पालन-पोषण ,न्याय ,रक्षा एक राजा का परम कर्तव्य है| रामचरितमानस में तुलसीदास एक नीतिकार के रूप में सामने आते हैं| उन्होंने एक महान साहित्यिक रचना की जिसका आधार हमारे मूल्य हैं जिसके बिना हम संसार की कल्पना नहीं कर सकते; तुलसीदास का दृष्टिकोण कलालक्षी ही नहीं जीवनलक्षी भी था|

---

९ - बालकांड, रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास जी गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ३३

तुलसीदास की रचना कोरी रचना नहीं है, अपितु समाज का दर्पण है उन्होंने दर्शाया कि कैसे कोई कृति हमें यह सीख देती है कि हम अपने आवेगो में सम्मति तथा संतुलन स्थापित कर सकते हैं| उन्होंने हमारी अनुभूतियों के क्षेत्र को व्यापक बनाया तथा मनुष्य को परस्पर सहयोग के लिए प्रेरित किया| अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण उन्होंने सार्थकता विषयक एक समन्वित दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया| उन्होंने लोकमंगल की भावना से प्रेरित होकर सामाजिक मर्यादा का स्वरूप निश्चित किया तथा समन्वयवादी होते हुए भी मर्यादा विरोधी तथा लोक विद्वेषकारी प्रवृत्तियों के आगे झुकना स्वीकार नहीं किया| रामचरितमानस में जीवन मूल्यों का क्षेत्र सीमित नहीं है, उसकी दृष्टि वैश्विक है मानव मात्र के कल्याण की कामना है जीवन मूल्य स्थान काल के बंधनों से मुक्त स्वस्थ समाज एवं कल्याणकारी राजनीति की स्थापना में सहायक एवं मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है| रामचरितमानस में धार्मिक दार्शनिक सामाजिक एवं राजनीतिक मूल्यों का निरूपण सुंदर ढंग से हुआ है| धर्म का उद्देश्य शुभत्व एवं शिवत्व की राह दिखाकर आत्मा उन्नति की ओर अग्रसर करना है इसके लिए तप तथा त्याग की आवश्यकता है तप की महत्ता बताने वाले अनेक उक्तियां रामचरितमानस में मिलती हैं|

तप तें अगम न कछु संसारा | तपु सुखप्रद दुख दोष निवारा || १०

उपर्युक्त पंक्तियों के अनुसार संसार में तप से कुछ प्राप्त किया जा सकता है अर्थात संसार में कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे तप से प्राप्त न किया जा सके| तप सुख देने वाला तथा दुख-दोष का नाश करने वाला है तुलसीदास जी ने बताया कि त्याग की भावना ही सर्वोपरि है, रामचरितमानस के प्रत्येक कांड में त्याग के विभिन्न रूपों को दर्शाया गया है| चक्रवर्ती होने वाले राम वनवासी हो जाते हैं ,लक्ष्मण राज महल के सुख तथा अपनी पत्नी को छोड़कर राम की सेवा हेतु वन की ओर चले जाते हैं ,भरत सारा राज-पाट ठुकरा कर नंदनवन में वास करते हैं ,शत्रुघ्न भरत का साथ देते हैं अर्थात राम ने पिता के वचन को निभाने के लिए त्याग किया ,लक्ष्मण ने भातृ सेवा हेतु त्याग किया भरत ने दोनों भ्राताओं के साथ हुए अन्याय को सुनकर उनके कष्ट के बारे में सोचकर त्याग किया तथा उनका अनुसरण करते हुए शत्रुघ्न जी ने भी वही मार्ग अपनाया

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ |
सब पर हरि रघुवीरहिं भजहु भजहिं जेहिं संत || ११

काम क्रोध मद लोभ यह सब नरक के रास्ते हैं| इन सब को छोड़कर रघुवीर का जाप करना चाहिए | उन्होंने स्वयं के जीवन में भी अनेक कष्ट सहे परंतु प्रत्येक कष्ट के साथ उनकी सोच परिपक्व तथा भक्ति प्रगाढ़ होती गई| रामचरितमानस में भी उन्होंने अपने इन्हीं निष्कर्षों को दर्शाते हुए समाज को जागृत करने का कार्य किया| उन्होंने प्रत्येक संबंध को उचित स्थान देते हुए रामचरितमानस में दर्शाया गुरु- शिष्य संबंध भी उनमें से एक है| मित्रता में भी उनका अटूट विश्वास था इसी कारण उन्होंने राम की मित्रता के अनेक रूप दर्शाए उन्होंने दर्शाया कि जहां तक हो सके यथाशक्ति यथासंभव हमें अपने मित्र के साथ मित्रता अवश्य निभानी चाहिए|

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी | तिन्हहि विलोकत पातक भारी || १२

कल्याणकारी राज्य में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का बहुत महत्व है; रामराज्य एक प्रकार से प्रजातंत्र था, कल्याणकारी राज्य में सत्ता प्रजा की धरोहर मानी जाती है| प्रजा की भावना का आदर करते हुए ही राम जी ने सीता का परित्याग किया था ,शायद ही इससे बढ़कर कोई साक्ष्य होगा किसी राजा की प्रजाप्रियता एवं महानता का रामराज्य सत्य, दया, नीति तथा धर्म का राज्य था| राम राज्य के बारे में बताते हुए तुलसीदास जी सुशासन के बारे में बताते हैं| वे सत्ता को प्रजा की सेवा का निमित्त मानते हैं|

११,१२-सुंदरकांड रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदासजी, गीता प्रेस गोरखपुर,पृष्ठसंख्या ६६८,६८९,६६४

तुलसीदास जी के अनुसार चाहे राजा हो या प्रजा, स्वामी हो या सेवक ,जब तक उसका मन भगवत मन नहीं बनेगा ,तब तक कोई भी व्यक्ति जीवन की सार्थकता का परितोष प्राप्त नहीं कर सकेगा| तुलसीदास कृत रामचरितमानस आदर्शों की उर्वर भूमि है ;जिसको अपनाने से किसी भी युग की प्रजा अपने कल्याण की साधना कर सकती है अगर किसी राज्य को सुराज्य के रूप उपमा में दी जा सकती है ; तो वह मात्र रामराज्य ही है ,श्री राम के चरित्र सरोवर के माध्यम से तुलसीदास जी ने उत्कृष्ट मानवीय मूल्यों को दर्शाया है|

' तुलसीदास :आज के संदर्भ में' पुस्तक में योगेश्वर जी ने कहा है 'राष्ट्र की भावनात्मक एकता के लिए जिस उद्यात चरित्र की आवश्यकता है | वह चरित्र राम कथा में है रामचरितमानस एक ऐसा वागद्वार है ,जहाँ समस्त भारतीय संस्कृति ,साधना तथा ज्ञान परंपरा प्रत्यक्ष दिखाई पड़ती है| दूसरी ओर देश काल से परेशान तथा टूटे ह्रदय का सहारा तथा उनको सकारात्मक संदेश देने की अद्भुत क्षमता है| आज भी रामचरितमानस करोड़ों दुखियों का सहारा बनी हुई है| तुलसीदास के युग में धार्मिक, सामाजिक ,राजनैतिक मूल्य अपना महत्व हो चुके थे| धन के मद में डूबे शासक वर्ग को शोषित एवं संत्रास जन समाज की कोई चिंता नहीं थी| अत्याचारी शासकों ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी थी; कि उनके शासन में जनता स्वयं को असुरक्षित अनुभव कर रही थी | लोगों को मानसिक तथा आत्मिक रूप से सुदृढ़ करने हेतु रामचरितमानस की रचना कर तुलसीदास जी ने मानव जाति को अनुपम उपहार दिया| इस ग्रंथ की सहायता से उन्होंने यह समझाने का प्रयास किया कि एक राजा का उसकी प्रजा के साथ कैसा संबंध होना चाहिए ? राजनीति ,धर्म और समाजनीति ये तीनों एक दूसरे के समकक्ष चलती हैं यदि इन तीनों में से किसी एक की भी धुरी अपने केंद्र से विकेंद्रित हो जाए तो समाज का ढांचा पूरी तरह चरमरा जाएगा| जिसका दुष्प्रभाव अवश्य ही देखने को मिलेगा एक भक्त कवि के रूप में तुलसीदास की राजनीतिक चेतना में आध्यात्मिक और पौराणिक नैतिक दृष्टि की प्रधानता थी | अतः उन्होंने अपने तात्कालिक अनुभवों को परंपरागत आदर्शों के साथ संबद्ध किया |

'गोस्वामी तुलसीदास के काल तक आते-आते हिंदू समाज का ढाँचा लड़खड़ाने लगा था उन्होंने पूर्ववर्ती सामाजिक स्थितियों को गहराई से देखा तथा उसका निरीक्षण-परीक्षण किया|' १३

अकबर भारतीय इतिहास का बहुत बड़ा समन्वयवादी सम्राट रहा वह इस विचारधारा को मानता था, कि युद्ध से ही सब कुछ प्राप्त नहीं किया जा सकता| अतः वह कूटनीति का पालन करते हुए हिंदू धर्म तथा संस्कृति को परिवर्तित करने का प्रयास कर रहा था| तुलसीदास जी का सामाजिक,राजनीतिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण परिपक्वता समाज में हो रहे अनैतिक आचरण तथा परिवर्तन को देखते हुए उन्होंने भारतीय संस्कृति तथा जन भावना का संचार कर समाज को उचित दृष्टिकोण प्रदान करते हुए एकता का पाठ पढ़ाया गोस्वामी जी मानव जीवन के पारखी थे| सच्चे इतिहासकार कुशल राजनीतिज्ञ तथा विचारों के सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषक भी थे भारतीय दर्शन जो कि उस काल में मृतप्राय हो चुका था निर्गुण उपासक निराकार सर्व व्याप्त ईश्वर प्रचार में निमग्न थे ,तो वैष्णव कर्मकांड तथा आडंबर का राग अलाप रहे थे|

'ऐसे विषम समय में तुलसीदास जी ने रामचरितमानस की रचना करके समाज धर्म और राष्ट्र में एक नूतन क्रांति की सृष्टि कर दी |' १४

रामचरितमानस कोई नर काव्य नहीं है यह मानव जीवन का विज्ञान है विज्ञान किसी भी विषय के क्रमबद्ध एवं नियम व अध्ययन का नाम है इसमें मानव जीवन के आचार विचार रहन-सहन परिवार राज्य और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यों पर विशद गूढ़ एवं व्यापक प्रकाश डाला गया है|

---

१३ -तुलसीदास की साहित्य साधना, डॉक्टर लल्लन राय पृष्ठ संख्या 16

१४- तुलसीदास की प्रासंगिकता लेख द्वारा विजय राज

जिस समय साहित्य का उपयोग भी चाटुकारिता के लिए हो रहा था गोस्वामी जी के समय जब कभी परानतः सुखाय साहित्य का सृजन कर रहे थे| उस समयगोस्वामी जी ने इस ग्रंथ की रचना राजाश्रय से विरक्त होकर सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय नीति के अंतर्गत की ताकि जनमानस दूसरों के हित में अपना हित समझे जिससे सामाजिक एकता का भाव उत्पन्न हो सके|

तुलसीदास जी ने अपने विचारों का लक्ष्य केंद्र राम में स्थापित किया तुलसी के राम राजाओं -सामंतों के रूप में नहीं ढलें उनके अनुसार 'सेवक कर पद नयन से मुख सो साहिब होय' अर्थात राजा मुख के समान होना चाहिए तथा प्रजा आँख, हाथ, पैर के समान जिस प्रकार शरीर को सुचारू रूप से चलाने के लिए समस्त अंगों का तालमेल सही होना चाहिए ठीक उसी प्रकार राजा तथा प्रजा का आपस में सामंजस्य होना ही चाहिए | लोग गरीबी भुखमरी आदि को दैवीय प्रकोप मानते थे परंतु यह समस्त परेशानियां समाज के भौतिक अवस्थाएं हैं| जिसके लिए सत्ता अधिकारी ही उत्तरदायी है |

तुलसीदास नारी वेदना से भी भलीभांति परिचित थे| नारी वेदना को समझते हुए लिखते हैं 'कत विधि सृजि नारी जग माही पराधीन सपनेहु सुख नाही' ऐसा समाज जहां नारी के लिए बंधन था;वहीं पुरुष बंधनमुक्त था अर्थात संबंधों की विषमता थी| इस विषमता को तुलसीदास जी ने रेखांकित किया इस विषमता का एक ही उत्तर था और वह था- राम का आचरण मानव संबंधों में समानता की खोज तुलसीदास जी रामचरितमानस के रूप में समाज के समक्ष एक ऐसा उदाहरण रखना चाहते थे, जो सभी प्रकार से प्रिय हो एक पत्नीव्रता रूप राम का सर्वाधिक प्रिय रूप है| निषादराज,शबरी,केवट आदि श्रीराम के अनन्य सखा है| सामंती राज में जो सबसे अधिक प्रताड़ित है ,राम उन सब के निकट हैं इसलिए तुलसीदास जी प्रासंगिक हैं|

तुलसीदास के समय समाज में जो बुराइयां व्याप्त थी;वे आज भी हैं| अतःतुलसीदास के संघर्ष से हमारा भी संबंध है तुलसीदास जी राजपाट के वर्णन से दूर जनसामान्य के कवि थे ,ठीक उसी प्रकार तुलसी के राम भी राजाओं या सामंतों के रूप में नहीं डाले हैं राम समस्त जीवन मूल्यों के एकमात्र प्रतीक हैं|

१.३ साहित्य के संदर्भ में रामचरितमानस की प्रकृति : -

तुलसीदास का रामचरितमानस हिंदी साहित्य का सर्वोत्तम महाकाव्य है ,जिसकी रचना चैत्र शुक्ल नवमी संवत १६३१ से प्रारंभ हुई| इसको पूर्ण होने में दो वर्ष, सात महीने,छब्बीस दिन लगे| संवत १६३३ के मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में राम विवाह के दिन सातों कांड पूर्ण हो गए| इसे हिंदी साहित्य का सर्वोत्तम महाकाव्य माना जाता है| भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य के छह प्रमुख मानदंड निर्धारित किए गए हैं- ध्वनि, रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, तथा औचित्य तुलसीदास ने इन सब का समन्वय किया है ;सैद्धांतिक रूप में भी और प्रायोगिक रूप में भी उनका काव्य इन सभी काव्य सौंदर्य तत्वों से समन्वित है| यह काव्य अपनी प्रबधात्मकता मार्मिक प्रसंग विधान चारित्रिक महत्ता सांस्कृतिक गरिमा , गुरुता गंभीर भाव प्रवाह सरस घटना संगठन अलंकारिक ता तथा उन्नत कलात्मकता से परिपूर्ण है|

तुलसीदास जी ने जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में रहकर उन सभी परिस्थितियों का साक्षात अनुभव किया था| तुलसीदास की लोकप्रियता का एक कारण यह भी है कि उन्होंने पूर्ण व्यापकता के साथ सत्यता का चित्रण किया है| उन्होंने राम के संघर्ष कथा को अपने समकालीन समाज एवं अपने जीवन के संघर्ष कथा के आलोक में देखा है|

उन्होंने वाल्मीकि तथा भवभूति के राम को स्थापित ही नहीं किया अपितु अपने युग के नायक के रूप में राम को चित्रित किया| तुलसीकृत रामचरितमानस को विश्व साहित्य तथा स्वांत सुखाय के रूप में देखा जा सकता है,जो उनके अंतःकरण में निरंतर निवास करने वाले प्रभु श्रीराम के अंतःकरण के साथ एकाकार हो गया रामचरितमानस ऐसी लोकग्राह्य कृति है, जिसमें समाज के लगभग प्रत्येक वर्ग की रेखांक की क्षमता तथा गंभीर दृष्टि से देखा जा सकता है उनके राम स्वर्ग में विचरण करने वाले राम नहीं अपितु समाज में रहने वाले राम हैं| तुलसी के राम आदर्श चरित्र के नायक हैं| राम का मानवीय व्यवहार सब को लुभाता है आश्चर्य में डालता है| राम आदर्श पुत्र, आदर्श भ्राता ,आदर्श मित्र, आदर्श पति ,आदर्श नृप तथा आदर्श रिपु भी हैं , जो अपने बैरी के आचरण में भी अच्छाई देखते हैं और उसे सुधार हेतु सुझाव भी देते हैं| मानस अंतस में एक निर्णायक संघर्ष का विन्यास यह संघर्ष है मर्यादा और अमर्यादा के बीच शुद्ध तथा अशुद्ध विचारों के बीच सरल व प्रपंची भक्ति के बीच सुगम एवं जटिल जीवन दर्शन के बीच, मानस कोरे आदर्श को स्थापित करने वाला ग्रंथ नहीं है; यह साहित्य जगत की अजर अमर कृति है ;एक चरित्र काव्य है इसमें चरित्र और काव्य दोनों के गुण समान रूप से मिलते हैं इस महाकाव्य के चरित्र नायक सभी के आराध्य भी हैं| अतः यह चरित्र तथा काव्य होने के साथ-साथ कवि की भक्ति का भी प्रतीक है| रामचरितमानस को तुलसीकृत रामायण भी कहते हैं ,रामचरितमानस मानव अंतः करण के सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तर तक पहुँचता है ,मानस साहित्य के समस्त रसों से युक्त उत्कृष्ट रचना है भावों तथा भाषा दोनों के संदर्भ में मानस का एकाधिकार है|

अवधी भाषा में लिखी गई यह रचना छंद चौपाई और दोहों से परिपूर्ण है तथा हिंदी साहित्य की प्रेरक रचनाओं में से एक है| इस महाकाव्य से प्रेरित अनेकों रचनाएं हिंदी साहित्य में मिलती हैं| एक उत्कृष्ट महाकाव्य के जितने भी लक्षण दिए गए हैं, मानस उन सब पर खरा उतरता है| श्रृंगार ,शांत तथा वीर रस से परिपूर्ण महाकाव्य तुलसीदास कृत एक अनुपम रचना है जो सात कांडों से सुसज्जित तथा अलंकृत है राम के चरित्र से अलंकृत मानस हिंदी साहित्य का भी मान बढ़ाती है|

मति कीरति भनीति भूति भली सोई |
सुरसरि सम सबकर हित होई || १५

ऐसा कहकर अपने साहित्य का आरंभ करने वाले तुलसीदास जी कला के लिए कला नामक सिद्धांत के समर्थक नहीं थे| वे काव्य में उपयोगितावादी सिद्धांत के अनुयायी रहे,इसलिए कविता की सार्थकता सुरसरि के समान सबका हित करने वाले गंगा के जल के समान मानते थे| अपनी काव्य कला में उन्होंने विषय को प्राथमिकता दी है,वे जीवन में उदारता, महत्ता, भव्यता, शक्ति तथा सौंदर्य की प्रेरणा देने के लिए अपनी काव्य शैली का स्तर सरल एवं सहज रखते हैं| यह भाषा-भाव, उद्देश्य,कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, संवाद, प्रकृति-वर्णन समस्त दृष्टि से हिंदी साहित्य का अद्वितीय ग्रंथ है;मानस की काव्य कला में रूप वस्तु तथा भाव का समय है | इसमें काव्य कला के विभिन्न उपादनों, अक्षर, अलंकार, रीत, गुण, वक्रोक्ति, औचित्यध्वनि भाषा आदि का जैसा औचित्य पूर्ण संश्लेषण कथा संविधान तथा चरित्र चित्रण हुआ है वैसा कदाचित ही विश्व के किसी भी अन्य काव्य में मिले| गोस्वामी जी घटनाओं और पृष्ठभूमि में चित्रात्मकता , भाव चित्रण में रूपात्मकता पात्रों के रूप वर्णन में आदर्श चरित्र- चित्रण से काव्य कला को रमणीय बना देते हैं|

इस महाकाव्य में तुलसीदास जी का स्पष्ट संकेत है कि काव्य कला की शोभा तथा सार्थकता सहृदय पाठक के हृदय में शोभा वस्तु बनने में है अर्थात कविता इतनी प्रभावशाली हो ताकि वह प्रबुद्ध सहृदय तथा सज्जनों के

---

१५ -बालकांड ,रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास जी गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ५

हृदय में शोभा अनुराग तथा सम्मान की वस्तु बनने की इच्छा रखती हो| यदि हम उनकी काव्य कला की प्रभाव उत्पादकता का विश्लेषण करें तो हमें उसके कई कारण तथा आधार दिखलाई पड़ते हैं| मानस की काव्य अनुभूति की सच्चाई है विश्व जीवन की ओर ले जाने वाली महायात्रा साहित्य की परिधि में रहते हुए यह उच्च श्रेणी का जीवन दर्शन प्रस्तुत करती है| जीवन की प्रत्येक परिस्थिति का वर्णन बहुत ही सहज रूप से किया गया है| अध्यात्म तथा साहित्य का सम्मिश्रण है मानस मात्र हिंदी साहित्य में ही नहीं जगत के साहित्य में भी निराला है| इसके जोड़ का ऐसा सर्वांग सुंदर उत्तम काव्य लक्षणों से युक्त सर्वोपरि हितकारी दूसरा ग्रंथ नहीं है इसकी लोकप्रियता विदेशों तक फैली है प्रत्येक भाषा में इसका अनुवाद किया जा चुका है| यह रचना हमें धर्म के साथ साथ मानवता से भी जोड़ती है| ऐसा साहित्य जो प्रेरणा स्रोत का कार्य करता है जब आप निराश हों,तो यह साहित्यिक रचना आपके जीवन में नई संभावनाएं भरने का कार्य करती है समस्त साहित्य प्रेमियों के लिए रामचरितमानस एक ऐसा स्त्रोत है जो रस एवं स्वाद के साथ-साथ हमें संवेदनशील तथा कर्तव्य परायण बनने की भी सीख देता है प्रत्येक घर में मानस अवश्य होता है| हर एक सशक्त मार्गदर्शक के रुप में साहित्य शिरोमणि के अलंकरण से विभूषित यह महान कृति साहित्य जगत की अनुपम धरोहर है|

१.४ रामचरितमानस में राम का आदर्श रूप :-

राम के चरित्र को एक उद्देश्य के रूप में प्रस्तुत करते हुए राम के व्यवहार को मानस की रचना का आधार माना गया है| ऐसा व्यक्तित्व जो सबका आदर्श बन सके राम की छवि ऐसे पुरुष की छवि है| जो अपने व्यक्तिगत सामाजिक राजनैतिक तथा सांस्कृतिक जीवन में मानवीयमूल्यों का पालन करता है| जो अनुशासन में बंधा है| यह किसी कानून के अंतर्गत बनाया गया अनुशासन नहीं परंतु आंतरिक अनुशासन है जो कि व्यक्ति को एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है| राम जी ने सदैव ही सब को सम्मान दिया प्रत्येक रूप में सब के प्रति स्नेहा करुणा तथा सेवा का भाव रखा वे संपूर्ण मानव जाति के लिए अनुकरणीय हैं| श्रीराम की कोई भी चेष्टा ऐसी नहीं जो कल्याणकारी न हो मानस के राम के द्वारा चारित्रिक तथा सैद्धांतिक सुंदरता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया गया है| वनवास मिलने के उपरांत भी भरत के लिए त्याग प्रेम तथा आत्मीयता का जो उदाहरण राम ने प्रस्तुत किया ऐसा कोई दूसरा नहीं हो सकता बाल्यकाल से ही दूसरों की इच्छाओं को मान दिया मुनि विश्वामित्र के साथ संत समाज की रक्षा हेतु वन के लिए गए समस्त मुनियों को उनकी सुरक्षा का आश्वासन देते हुए कहा

प्रात कहा मुनि सन रघुराई | निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई || १६

अर्थात प्रातः काल रघुनाथ जी ने मुनि विश्वामित्र से कहा कि आप लोग निडर होकर यज्ञ कीजिए | राम धीरज, ध्यान और ध्येय के प्रतीक हैं| वे सौम्य हैं, शालीन हैं| उनकी राजनीत में भी मर्यादा दिखती है| श्री राम का जीवन अपने कुल की परंपरा को निभाने का उसके प्रति समर्पण का उत्कृष्ट उदाहरण है|

१६-अयोध्याकांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदासजी गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १८०

वे व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों ही जीवन में अनुशासित दिखते हैं| राजा होकर भी चौदह वर्ष का वनवास वह भी पूर्ण निष्ठा तथा संयम के साथ बिताना; श्रीराम ने अपने संघर्ष में एक समावेशी चरित्र विकसित किया था उनका समस्त जीवन एक साधारण मनुष्य के जीवन की तरह ही कष्टप्रद था परंतु उनका व्यवहार उनका संयम प्रत्येक स्थिति में उत्कृष्ट था उनके शत्रु भी उनके सदाचार से परिचित तथा प्रभावित थे श्री राम के आदर्श रूप का सबसे सशक्त उदाहरण है रामराज्य जिसमें सभी वर्गों के लोग सुरक्षित हैं चाहे वे सक्षम हो या अक्षम रामराज्य का यदि कोई पर्याय हो तो वह केवल धर्मराज्य ही हो सकता है जिसमें सभी कार्य धर्म एवं मर्यादा पूर्वक किए जाएं दुर्बल की रक्षा हो लोकमत का सदैव राम का राजतंत्र वस्तुतः प्रजातंत्र ही था क्योंकि अपनी प्रजा पर आने वाले प्रत्येक संकट या आपदा को उन्होंने अपने ऊपर ही वहन किया किसी और को कष्ट ना हो उनका यह उदार रूप उनके जीवन के प्रत्येक पक्ष में देखने को मिलता है| उन्होंने सदैव ही सामने वाले व्यक्ति की भावनाओं को प्रमुखता दी है उन्होंने व्यक्ति तथा समाज के उत्कृष्ट स्वरूप को प्रमुखता दी है|

सिय निंदक अघ ओघ नसाए | लोक बिसोक बनाइ बसाए || १७

श्री राम की धर्मपत्नी सीताजी की निंदा करने वाले धोबी और उसके समर्थक नर-नारियों के पाप समूह को नाश कर उनको शोक रहित बनाकर श्रीराम ने उन्हें भी मोक्ष दिया उपर्युक्त पंक्तियों द्वारा श्री राम के सदाचरण की झलक स्पष्ट मिलती है कि किस प्रकार अपने प्रिय की निंदा को भी सहन करते हुए उन्होंने उस आचरण को ही वरीयता दी जो समाज के लोगों के अनुरूप था| जीवन के प्रत्येक क्षण में उन्होंने स्वयं को पटल के पार्श्व में रखते हुए के प्रति समान व्यवहार रखा चाहे वह व्यक्ति उनका हितैषी हो या न हो जबकि मनुष्य वस्तुतः इस पूर्वाग्रह से ग्रसित होता है कि जो उसका प्रेम होगा वह केवल उसी के लिए अनुराग रख सकता है यदि कोई व्यक्ति हमारे विचारों से सहमत नहीं होता तो भी हम उसे अपना मित्र या हितैषी मानने से मना कर देते हैं| उसके विचारों को मानना तो बहुत दूर की बात है वैचारिक और असमानता ही कई बार हमें ऐसा प्रतीत करवाती है| अमुक व्यक्ति हमारे लिए हितकारी हो ही नहीं सकता फिर यह कैसे संभव है कि हम वैचारिक और समानता वाले व्यक्ति के विचारों को पूर्ण सम्मान दें ,स्वयं कष्ट सहन करें एक सीधा एवं सरल उत्तर है नहीं हम ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि यह सरल बात नहीं है हम उस व्यक्ति से स्वयं को जोड़ नहीं सकते एक अदृश्य तनाव सदैव ही व्याप्त रहता है तो किस प्रकार हम उस व्यक्ति को संतुष्ट करने के लिए स्वयं कष्ट सहन कर सकते हैं| अपने सुखों का त्याग कर सकते हैं| इस प्रकार का व्यवहार विचारों में अत्यंत सुलभ प्रतीत होता है परंतु व्यवहार में ग्रह नहीं होता क्योंकि स्वयं को दूसरे की संतुष्टि हेतु कष्ट देना सरल नहीं है|
श्री राम ने इस उच्च श्रेणी के व्यवहार का समावेश बड़ी सरलता से किया न ही उन्होंने कभी अपने कष्ट का आभास किसी को होने दिया और न ही कभी किसी प्रकार की चिंता किसी के समक्ष व्यक्त की मनुष्य के जीवन में आने वाले सभी संबंधों को पूर्ण तथा उत्तम रूप से निभाने की शिक्षा देने वाले श्री राम के समान कोई दूसरा चरित्र हो ही नहीं सकता हम श्री राम के जीवन पर दृष्टि डालें तो उसमें कहीं भी और अपूर्णता दृष्टिगोचर नहीं होती उनका व्यवहार उनका जीवन परिपूर्ण है जिस समय जैसा कार्य करना चाहिए श्रीराम ने उस समय वैसाही कार्य किया| वे नीति-रीति-प्रीति तथा भीति सभी जानते हैं | वे परिपूर्ण हैं आदर्श हैं| उनका संयमित व्यवहार नियम तथा त्याग एक आदर्श स्थापित करता है ,भारतीय जीवन में उसी प्रकार अनुस्यूत है जिस प्रकार दुग्ध में धवलता|

---

१७ -बालकांड रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी,गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या २१

श्री राम विश्व को दिशा देने वाले व्यक्तित्व के स्वामी हैं 'देवत्व से बड़ी है देवत्व की साधना' अपने सत्कर्मों द्वारा यदि आपको समाज तथा परिवार में प्रतिष्ठा मिलती है | उस मान प्रतिष्ठा को बनाए रखना प्रतिष्ठा अर्जित करने से भी बड़ा कार्य होता है| हमारा व्यवहार पक्षपात रहित होना चाहिए सकारात्मक सोच होनी चाहिए क्योंकि विषम परिस्थितियों में हम कई बार पक्षपातपूर्ण व्यवहार करते हैं लाभ-हानि का लेखा-जोखा करने लगते हैं परंतु श्रीराम एक अलग व्यवहार का प्रदर्शन करते थे| जो नीति का पालन करते हुए प्रत्येक परिस्थिति में न्याय संगत व्यवहार का उदाहरण ही प्रस्तुत करता था सामने वाले व्यक्ति की मनोदशा के अनुकूल व्यवहार करते हुए अपनी समस्त भूमिकाओं का उचित रूप से निर्वहन किया तुलसीदास के अनुसार राम विशुद्ध प्रेम से ही रहते हैं मनोविज्ञान समझने में पारंगत श्रीराम सामने वाले व्यक्ति के विचारों तथा मनोभावों को भली प्रकार समझते थे परंतु कुछ विरोधी विचारों को भाँपने के पश्चात भी श्री राम का व्यवहार सदैव संयमित रहा| शिव-धनुष टूटने के पश्चात परशुराम जी के क्रोध की ज्वाला देखकर उस सभागार में उपस्थित सभी राजा भयभीत थे,वे भयवशकुछ नहीं बोल पा रहे थे;परंतु श्रीराम ने अपने संयमित व्यवहार का प्रदर्शन करते हुए परशुराम जी को पूरा मान सम्मान देते हुए अपना परिचय दिया एवं उनकी क्रोध की अग्नि को शांत किया| श्रीराम किंचित विचलित नहीं हुए यह उनकी व्यवहार कुशलता थी वह समय अनुसार अपने व्यवहार का उत्कृष्ट उदाहरण देते हुए सबके मन को जीत लेते थे|

श्रीराम ने सभी को न्यायोचित धर्मोचित व्यवहार करने की प्रेरणा स्वयं के व्यवहार के द्वारा दी उपदेश के द्वारा नहीं; उनके द्वारा कहे गए पौराणिक शब्द इस प्रकार हैं -

नास्ति धर्मत्वरो बधुर्नास्ति धर्मात्परं धनं | १८

श्री राम के दृष्टिकोण में ज्ञानी वह नहीं जिसे मात्र वेद पुराणों का ज्ञान हो असल में ज्ञानी वही है जिसमें धैर्य है| जो व्यक्ति कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य को नहीं खोता,वह संकटों से मुक्ति प्राप्त करने में सफल होता है मनुष्य को उन तथ्यों का ज्ञान अवश्य होना चाहिए जिनकी सहायता से वह स्वयं के जीवन को संयमित बनाते हुए दूसरों के दुखों को कम करने में सहायक हो| हमारा व्यवहार निष्कपट होना चाहिए क्योंकि ऐसा व्यवहार करने वाले तथा प्राणी मात्र से प्रेम करने वाले व्यक्ति ही भगवान के सच्चे भक्त कहलाते हैं श्रीराम का चरित्र बड़ा ही प्रभाव उत्पादक एवं अलौकिक था राम राज्य में उनके व्यवहार का अनुकरण करते रहने के कारण स्त्री तथा पुरुष सभी संयमित जीवन जी रहे थे; सभी वर्गों के लोग दूसरे वर्गों के लोगों को यथोचित सम्मान देते थे | श्री राम का जीवन आदर्शों से भरा हुआ है उनको एक राष्ट्र संयोजक के रूप में देख सकते हैं क्योंकि उन्होंने वर्णों के भेद को मिटाते हुए एक समाज एक राष्ट्र का निर्माण किया राजतंत्र होते हुए भी प्रजातंत्र की तरह ही शासन व्यवस्था चलाई प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार दिया कि वह अपने विचारों को व्यक्त कर सकें रामचरितमानस का अध्ययन करते हुए हमें यह ज्ञात होता है कि श्री राम एक कुशल व्यक्तित्व के स्वामी थे जिन्होंने अपने शत्रु के साथ भी विनम्रता का व्यवहार करते हुए उत्कृष्ट व्यवहार का उदाहरण प्रस्तुत किया| संपूर्ण जीवन काल में लक्ष्मण जी उनकी परछाई बनकर चलते रहे ऐसे अनेक प्रसंग हुए जहाँ लक्ष्मण जी ने क्रोध प्रदर्शित किया परंतु राम जी के मृदुल व्यवहार के सामने वह क्रोध अधिक समय तक नहीं टिक पाता था| श्रीराम ने एक बार लक्ष्मण जी से पूछ लिया कि क्रोध कहाँ ले जाता है?

---

१८ -श्री राम मूल शब्द अंतरयात्रा- श्री राम की धर्मनिष्ठा ,लेख शिवकुमार गोयल

लक्ष्मण जी ने उत्तर दिया अन्याय, अकर्मण्यता से घृणा की ओर, लक्ष्मण जी के इस उत्तर पर श्री राम अपनी चित-परिचित मुस्कान के साथ पूछते हैं घृणा कहाँ पहुँचाती है ? लक्ष्मण जी कहते हैं अन्याय अकर्मण्यता के स्रोतों के उन्मूलन की ओर यह संवाद राम तथा लक्ष्मण जी के बीच तब होता है, जब एक धोबी के आरोप के बाद श्री राम सीता जी को वन भेजने का निर्णय लेते हैं। लक्ष्मण जी इस परित्याग से क्रोधित हैं और क्रोध की अग्नि में जलते हुए वे श्री राम को कुछ ऐसे पीड़ादायक शब्द कहते हैं;जिससे श्रीराम की सोच पर तो कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता परंतु राम जी उनके क्रोध एवं पीड़ा को पहचानते हुए अपनी पीड़ा को छुपाते हुए कहते हैं । प्रिय भाई सीता के विछोह का अकेले तुम्हें हीतो दुख नहीं है। मैं भी तो सहन कर रहा हूँ; मेरे प्रति तो निष्ठुर मत बनो प्रेम और आत्मीयता स्थापित करने की श्री राम की यही तो शक्ति है। जिससे लक्ष्मण अभिभूत और अचेत हो जाते हैं तथा क्षमाप्रार्थी होते हैं। अब राम उन्हें केवल राम ही नहीं महाराज बनकर भी दिखाई दे रहे हैं और वह भी तब जब राम महाराज न रहकर; मात्र राम बने रहना चाहते हैं ,क्रोध में विवेक नहीं रहता इसलिए विद्वान का ज्ञान भी जड़ हो जाता है। एक जलते हुए अंगारे की तरह दूसरों को झुलसाने की चेष्टा में क्रोधी व्यक्ति सबसे पहले स्वयं को जलाता है नष्ट करता है। उसके बाद भी यदि कुछ जलनशीलता बची रहती है तो उसकी तपिश में व्यक्तित्व भी स्वाहा हो जाता है। ऐसे में मानसिक स्थिति सही दिशा की ओर नहीं ले जाती इस कारण व्यक्ति कोई सही निर्णय नहीं ले पाता। श्री राम ने जगत को ज्ञान दिया कि दुख में यदि किसी ने थोड़ा पानी भी दिया हो तो उसे कभी भूलना नहीं।

कदाचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुषयती ।
न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवतत्या || १९

किसी ने थोड़ी सी भी सहायता रामजी उसे कभी नहीं भूलते अपकार को भले ही भूल जाते हो परंतु उपकार को वे कभी नहीं भूलते वे कहते हैं कि साधु संत ना बन सको तो कोई बाधा नहीं परंतु मनुष्य का हृदय सरल होना चाहिए रावण से युद्ध के समय वानरों द्वारा की गई सहायता के लिए उन्होंने कहा

तुम्हरे बल मै रावण मारयो || २०

श्री राम ने अपने गुरु वशिष्ठ जी से कहा कि इन वानरों ने मेरी बहुत सहायता की है ,तब ही मैं रावण को मार पाया अपनी जीत का सारा यश उन वानरों को ही देते हैं तथा उनके साथ बहुत ही प्रेम करते हैं। इसी प्रकार वनवास अवधि में श्री राम लक्ष्मण तथा सीता जी को नदी पार करनी थी। केवट ने जब श्रद्धापूर्वक उनको नदी पार करवाई तो श्रीराम ने पारिश्रमिक देना चाहा परंतु उनके पास उस समय केवट को देने के लिए कुछ नहीं था। वे संकोच वर्ष धरती की तरफ देखने लगे सीता जी यह बात समझ गई थी तथा उन्होंने उनकी एकमात्र अंगूठी श्री राम जी को दे दी और कहा यह केवट को दे दीजिए। जब श्रीराम ने वह अंगूठी केवट को देनी चाही, तो केवट ने यह कहते हुए मना कर दिया कि मैं पढ़ा लिखा नहीं हूं अनपढ़ हूं परंतु मेरे पिता ने कहा है कि अगर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, साधु तुम्हारे पास नदी पार कराने के लिए आए तो इनसे बिना कुछ लिए ही इन्हें नदी पार करवाना और मैंने सदा इस आज्ञा का पालन किया ;आज आप एक तपस्वी के रूप में आए हैं, महाराज के रूप में नहीं अतः मैं आपसे कुछ भी नहीं ले सकता । श्री राम ने कहा कि मजदूरी नहीं तो प्रसाद समझकर ही रख लो इस बात पर केवट बोले जब उचित समय आएगा तो प्रसाद अवश्य दीजिएगा;मैं सहर्ष ग्रहण करूँगा मना नहीं करूँगा परंतु आज नहीं।

१९,२० -तत्वार्थ रामायण, श्री रामचंद्रजी की सरलता, केशव महाराज, भारतप्रेस,पृष्ठ संख्या ५४,५६

वनवास पूर्ण होने के पश्चात जब राम अयोध्या आए तो दो दिन के बाद ही उनका राज्याभिषेक कर दिया गया समय कम होने के कारण केवट राज्याभिषेक में न आ सके उस समय श्रीराम के नेत्र विशेष रूप से केवट को ही ढूंढ रहे थे| सीताजी ने पूछा कि ऐसा कौन है जिसके दर्शन की आपको इच्छा है ? तब श्री राम बोले अपने मित्र केवट को देखने की मेरी इच्छा है उसने कहा था कि जब राज्य अभिषेक होगा तब मैं प्रसाद लूँगा|

केवट मीत कहे सुख मानत || २१

केवट को अपना मित्र मानकर याद करने में श्री राम को परम सुख मिलता है| अपने वचन को निभाने के लिए वे अपने सखा निषादराज गुह के हाथों केवट के लिए वस्त्र आभूषण आदि भिजवाते हैं| इस प्रकार से राम ने अपने आचरण द्वारा यह संदेश दिया दुख में यदि किसी ने थोड़ा सा भी साथ दिया हो तो उसके साथ को कभी नहीं भूलना चाहिए|

२१ - तत्वार्थ रामायण, श्री रामचंद्र जी की सरलता, केशव महाराज, भारत प्रेस ,पृष्ठ संख्या ,५६

द्वितीय अध्याय : व्यावहारिक विवेचन

२.१ - पारिवारिक जीवन में श्रीराम की भूमिका:-

परिवार समाज की इकाई होता है, परिवार ही किसी बालक की प्रथम पाठशाला होती है| आचरण, सदाचार ,नैतिकता आदि अनेक मानवीय गुण हैं,जो मनुष्य परिवार के संसर्ग में ही सीखता है| यदि मनुष्य में परिवार का नेतृत्व, संरक्षण आदि करने का भाव है,तो वह अवश्य ही कुशलतापूर्वक सामाजिक जीवन का संचालन भी कर सकता है| श्री राम एक सुपुत्र,श्रेष्ठ भ्राता, एक पत्नीव्रता पति थे| उनके पारिवारिक जीवन में वे सभी रूपों में अपना व्यवहार पारदर्शी रखते थे| एक बड़े भाई के रूप में उन्होंने समस्त उत्तरदायित्व का निर्वहन किया,जिसकी अपेक्षा अपने भाइयों से करते थे उदाहरण स्वरूप माता-पिता की आज्ञा का पालन तथा छोटों को स्नेह तथा उनका संरक्षण| उनके परिवार में राजा दशरथ उनकी माता कौशल्या के अतिरिक्त दो अन्य विमाता कैकेयी तथा सुमित्रा भी थीं| श्री राम रानी कौशल्या के पुत्र थे दोनों भी माताओं से भरत ,लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न थे | श्री राम ने अपनी माता की तरह ही दोनों विमाताओं का पूर्ण मान सम्मान किया कैकेयी तथा सुमित्रा अपने पुत्रों से अधिक राम के प्रति स्नेह रखते थीं| मंथरा के यह बताने पर कि राजा दशरथ राम का राज्याभिषेक कर रहे है; कैकेयी इतनी प्रसन्न हुई कि अपने आभूषण मंथरा को देने लगी कि अगर राम का राज्य अभिषेक हो रहा है, तो यह भरत को राज्य देने के समान ही है| इधर वशिष्ठ जी के द्वारा श्री राम को यह समाचार दिए जाना कि उनका राज्याभिषेक होने वाला है जिसे सुनकर श्री राम कहते हैं -

जन्मे एक संग सब भाई | भोजन सयन केलि लरकाई |
करन बेध उपबीत बिआहा | संग संग सब भए उछाहा |
बिमल बंस यहु अनुचित एकू | बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकु || २२

हमारा जन्म एक स्थान पर हुआ एक साथ भोजन किया एक साथ सोए एक साथ बचपन बीता ,एक जगह खेलें, हमारा विवाह भी एक ही घर में संपन्न हुआ सूर्यवंश की यह कैसी परंपरा है कि राज्याभिषेक बड़े पुत्र का ही होता है;मुझे यह अच्छा नहीं लगता हम चारों ही भाइयों का राज्य अभिषेक करवा दीजिए वह किसी परिपेक्ष में अपने भाइयों को स्वयं से अलग नहीं समझते थे| उनको वनवास मिलने की बात जानकर लक्ष्मण जी अत्यंत क्रोधित हुए| तब श्रीराम ने उन्हें शांत करवाते हुए कहा था कि अपने माता-पिता के दुख को मैं एक मुहूर्त भी सहन नहीं कर सकता| सत्यवादी ,सत्यसंध तथा सत्यपराक्रमी परलोक के भय से मेरे पिता निर्भय होवे| मेरे जाने के बाद ही तो माता कैकेयी; भरत का राज्य अभिषेक करवा सकेंगी | पिता के मन में होने वाला ताप मेरा भी दहन कर देगा| मैं यहां एक क्षण भी रुक कर किसी के भी दुख का कारण नहीं बनना चाहता,मैं माताओं में कोई भेदभाव नहीं करता माता कैकेयी का भाव कभी मुझ में और भरत में अंतर करने वाला नहीं हुआ| यह जो भी घटनाक्रम हुआ है यह मेरे प्रारब्ध से ही हुआ है| भला प्रारब्ध से भी कोई लड़ सकता है? उन्होंने राजा दशरथ सहित परिवार के सभी सदस्यों को माता कैकेयी के प्रति द्वेष न रखने की सलाह दी उन्होंने सब से अनुरोध किया कि सभी लोग उनके साथ पूर्ववत व्यवहार करें| वे परिवार के वातावरण को शुद्ध बनाए रखने में विश्वास करते थे| वनवास की प्रथम रात्रि में सीता तथा लक्ष्मण जी से कहते हैं कि आज ही से चौदह वर्ष धर्म के अनुसार वन में रहना होगा, इससे अब घर के सुखों की कोई भी उत्कंठा न करना

---

२२ -तत्वार्थ रामायण, राज्य अभिषेक की तैयारी, केशव महाराज, भारत प्रेस, पृष्ठसंख्या ३६०

मुझे माता-पिता की चिंता हो रही है कि वह हमारे वियोग में कहीं उनकी स्थिति दयनीय न हो गई हो | वही भरत की प्रशंसा करते हुए वे कहते हैं कि भरत बड़े धर्मात्मा हैं ,मुझे विश्वास है कि वे धर्मअर्थ, काम तीनों के अनुकूल वचनों से माता-पिता को सांत्वना देंगे| ऐसी विषम परिस्थितियों में वस्तुत व्यक्ति अपने हित-अहित को देखकर ही व्यवहार करता है,वही राम परिवार में चल रहे समस्त विरोधाभास को समाप्त करना चाहते हैं| प्रत्येक स्थिति में धैर्य का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने सब के मान-सम्मान का ध्यान रखा, लक्ष्मण जब वन जाने की हठ करते हैं| वे कहते हैं की है बड़े भाई मैं आपके साथ चलूँगा, मैं आपका सेवक हूं;सर्वदा आपकी सेवा ही करुँगा| आप मुझे वन में कैसे नहीं ले चलेंगे आप जा भी तभी सकेंगे जब मुझे ले जाने के लिए तैयार होंगे अन्यथा मैं आपका हाथ पकड़ कर आप को रोक लूँगा लक्ष्मण की ऐसी बात सुनकर श्रीराम उत्तर देते हैं

जिस आज्ञा पर तत्पर हूँ, मैं उससे क्यों कर टल सकता हूं ?
मझली माता ने कहा नहीं , मैं कैसे ले चल सकता हूं ?
अब तुम भी साथ चलोगे तो, सब बात नष्ट हो जाएगी |
वनवास नहीं है 'वन विहार', यह कह कर मां झुँझलाएगी || २३

वे किसी भी स्थिति में लक्ष्मण जी को वनवास के लिए नहीं ले जाना चाहते| अपना सुख तो वे अपने छोटे भाइयों को देने के लिए सहर्ष तैयार रहते हैं परंतु अपना दुख नहीं| एक कर्तव्यनिष्ठ भाई के रूप में वे सदैव अपने छोटे भाइयों के लिए मंगल कामना करते हैं,वे कभी भी उनको कष्ट में नहीं देख सकते| पूरे राज महल में राम के वनवास का समाचार सुनकर दुख का वातावरण बन गया था| ऐसी अवस्था में भी राम सबके साथ सामंजस्य बिठाने तथा सब को समझाने में व्यस्त थे;उनके दुख का प्रदर्शन किसी भी पंक्ति से हुआ हो ऐसा नहीं दिखता माता-पिता की चिंता सीता लक्ष्मण को वन न जाने के लिए समझाना कौशल्या ,सुमित्रा से पिताजी की देखभाल के लिए आग्रह करना और न जाने ऐसे ही कितने कर्तव्य तथा प्रयासों में लिप्त रहे | वे परिवार के सभी सदस्यों को समान रूप से प्रेम करते थे किसी को भी किसी बात से दुख न पहुँचे यही श्री राम का प्रयास रहता था| राज महल में रहने तथा वहाँ पर कार्य करने वाले प्रत्येक सदस्य का व्यक्तिगत रूप से ध्यान रखते थे ,जितना स्नेह व माता कौशल्या के प्रति रखते थे उतना ही माता सुमित्रा तथा कैकेयी के प्रति भी रखते थे| लक्ष्मण जी जब माता सुमित्रा से वन जाने के लिए अनुमति मांगने जाते हैं ,तो वे कहती हैं जहाँ श्री राम का निवास है वही जगह तुम्हारे लिए अयोध्या है यदि निश्चय ही राम ,सीता वन को जाते हैं तो अयोध्या में तुम्हारा भी कोई काम नहीं है| वे माँ सुमित्रा के कक्ष में ही सोते थे, सुमित्रा की गोदी में जाते ही श्रीराम सो जाते अपने स्नेहमयी व्यवहार के कारण वे आजीवन सबका सम्मान ,आदर ,स्नेह पाते रहे| मृदुभाषी तथा संयमित व्यवहार के स्वामी राम अपने सरल सहज व्यक्तित्व के कारण सबके प्रिय रहे ,उन्होंने अपने परिवार को एक सूत्र में पिरो कर रखा यदि हम कहें कि श्रीराम अपने परिवार की धुरी थे तो यह गलत नहीं होगा| जब कभी परिवार के सदस्यों के मन में एक दूसरे के प्रति रोष आता था, तो वे सबके मन को शांत कर देते थे| सब के मनोभावों को पढ़ना उन्हें भली प्रकार से आता था उनका ऐसा मानना था कि मनुष्य का जीवन तथा चरित्र पारदर्शी होना चाहिए अर्थात जो अपेक्षा वह दूसरों से रखता है; वही गुण सर्वप्रथम स्वयं के स्वभाव में होने चाहिए आदेश देना उनके व्यवहार में नहीं था|

---

२३ -राधेश्याम रामायण, कौशल्या माता की विदाई ,राधेश्याम कथावाचक, राधेश्याम पुस्तकालय पृष्ठ संख्या ११६

वे स्वयं अपने व्यवहार को अनुकरणीय बनाते थे जिससे प्रत्येक सदस्य सीख ले सके एक बड़े भाई के रूप में उन्होंने समस्त मूल्यों का निर्वहन किया जिसको आमतौर पर लोग आदेश के रूप में तो दे देते हैं परंतु उसका समावेश व्यवहार में नहीं कर पाते उन्होंने अपना जीवन ऐसा ही बनाया था कि सभी लोग उनके जीवन से सीख ले सके उनका आचरण नैतिकता सदैव दूसरे सदस्यों पर अनुकूल प्रभाव डालती रही| वनवास काल में जब भरत जी जब उनसे मिलने वन पहुंचे उस समय लक्ष्मण जी ऐसा आभास हुआ कि भरत जंगल में श्री राम को मारने के लिए आ रहे हैं, ऐसा विचार करते हुए अत्यंत क्रोधित हुए श्री राम अपने ही मन के भावों में मग्न हो रहे होते हैं कि भरत उनसे मिलने आ रहे हैं श्रीराम के व्यवहार की सरलता देखते हुए लक्ष्मण जी कहते हैं कि

नाथ सुहृद सुठि सरल चित्त सील सनेह निधान |
सब पर प्रीति प्रतीति जिय जानिय आपु समान || २४

अर्थात हे भ्राता! आप सबको अपने सामान प्रेम से परिपूर्ण समझते हैं; सब के ऊपर आपकी प्रीति समान भाव से रहती है | आप कभी भी किसी के व्यक्तित्व का दूसरा रूप नहीं समझते आपको लगता है कि वह भी आप के समान ही सरल स्वभाव वाला है| लक्ष्मण जी को ऐसा लगता है कि भरत जी नीति विमुख हो गए हैं, नीति की बात करते-करते वे वीर रस के अधीन हो जाते हैं ,तब रामजी उन्हें समझाते हुए कहते हैं

भरतहि होइ न राजमद बिधि हरि हर पद पाइ |
कबहुँ कि काँजी सिकरनि छीर सिंधु बिनसाइ || २५

अयोध्या राज्य की तो क्या बात है यदि भरत को भगवान का पद भी प्राप्त हो जाए तो भी उसे अभिमान नहीं होगा क्या कभी कांजी की बूंदों से समुद्र नष्ट हो सकता है? मच्छर की फूँक से चाहे सुमेरु पर्वत उड़ जाए परंतु भरत को कभी भी राजमद नहीं हो सकता| हे लक्ष्मण! मैं तुम्हारी शपथ तथा पिताजी की सौगंध खाकर कहता हूँ| भरत के समान पवित्र तथा उत्तम भाई पूरे संसार में नहीं है श्री राम की बातें सुनकर लक्ष्मण जी को इस बात का आभास होता है कि सच में भरत के हृदय में कोई भी दुष्विचार नहीं है|
इस स्थिति में जहाँ यह देखने को मिलता है कि भरत जी के बारे में सोच कर लक्ष्मण जी क्रोधित हो जाते हैं साथ ही वे भारत का साथ देने की बात सोचकर शत्रुघ्न पर भी क्रोधित होते हैं| वही श्री राम अपने परिवार के संस्कार तथा भारत के सुविचार पर पूर्ण विश्वास करते हैं ,उनकी बातों से उनका प्रेम प्रकट होता है ऐसा ही विश्वास वे परिवार के सभी सदस्यों पर करते थे कि कोई भी सदस्य परिवार की प्रतिष्ठा तथा एकता को नष्ट करने का कार्य नहीं करेगा| वे अपने परिवार के लिए एक सशक्त स्तंभ के रूप में दिखते हैं ,जो परिवार को कभी गिरने नहीं देगा| उधर भरत भी मन ही मन भाति -भाति के विचार करते हुए श्रीराम की ओर चले आ रहे हैं| रानी कैकेयी को अपने कृत्यों को याद करते हुए लज्जा आ रही है| भरत जी भी सोच रहे हैं कि कैसे राम मेरी माता की गलतियों को माफ करेंगे उनके मन में पूर्ण विश्वास है कि उनको तथा उनकी माता को क्षमा अवश्य मिलेगी | भरत जी मन ही मन सोचते हैं कि मेरी माँ ने जो कुछ भी किया है ,वह थोड़ा नहीं है और मेरी माता के इस कर्म पर मुझे भी माता के मत में मानकर;श्री राम मेरे साथ जितना भी बुरा करें वह भी कम होगा; पर वे अपना छोटा भाई समझ कर मुझे तथा मेरी माता को क्षमा कर देंगे|

२४,२५-अयोध्याकांड,रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी, गीताप्रेस गोरखपुर,पृष्ठ सं ४८६,४८९

उठे रामु सुनि प्रेम अधीरा | कहुँ पट कहुँ निषंग धनुतीरा || २६

उन्हें अपने भाई के प्रेम पर पूर्ण विश्वास है; जब श्री राम प्रेम में विभोर होकर भरत जी से मिलते हैं तो उन्हें स्वयं की सुध भी नहीं रहती भरत मिलन भी राम का उनके परिवार के प्रति अटूट प्रेम का अनूठा उदाहरण है| भातृप्रेम में सदैव भरत मिलन का उदाहरण दिया जाता है| उनसे से मिलने गए लोगों में रानी कैकेयी भी गई हुई थी तथा श्री राम तीनों माताओं में सबसे पहले उनसे ही मिले | उनकी चरण वंदना करके श्रीराम ने सारा दोष विधाता के सिर पर मढ़ दिया , उसको भी श्री राम का अपने परिवार के प्रति प्रेम ही कहा जाएगा कि वे किसी को भी किसी स्थिति के लिए दोष नहीं देना चाहते अपने परिवार के प्रेम तथा सामंजस्य को सदैव सर्वोपरि रखते हैं; यदि श्री राम को प्रेम का सागर कहा जाए तो यह गलत नहीं होगा एक पारिवारिक सदस्य के रूप में वह सदा वही सम्मान के पात्र होंगे आदर्श होंगे अनुकरणीय होंगे|

२.२ सामाजिक आदर्श के रूप में श्री राम की भूमिका :-

कुमार अवस्था में जब राम विद्या ग्रहण करने हेतु अपने भाइयों के साथ गुरुकुल गए तो,वहाँ उसी प्रकार का आचरण करते थे जैसे कि अन्य घरों से आए हुए बालक में गुरु की सेवा करते, गुरु माँ की सहायता करते जंगल से लकड़ी लाने से लेकर आने भरना भिक्षा माँगना गुरु के पैर दबाना आदि समस्त कार्य बड़ी प्रसन्नता से करते थे| गुरुकुल में कभी अन्य छात्रों के साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जिससे उन्हें यह प्रतीत हो कि वे राजकुमार हैं तथा अन्य छात्र साधारण परिवार से संबंध रखते हैं राम के पास समाज के लिए समानता की सोच थी वह आत्मसुख को किनारे रखकर दूसरों के सुख को वरीयता देते थे| उनको इस बात का ज्ञान था कि समाज में समरसता एकरूपता की नितांत आवश्यकता है| निषादराज तथा श्री राम की भेंट को हम समरसता का अनुपम उदाहरण कह सकते हैं ,वे दोनों बचपन के मित्र थे तथा निषादराज बाल्यकाल में श्री राम के साथ उनके महल में कई दिनों तक ठहरे थे तब राजा दशरथ ने निषादराज को अपने हाथ के कंगन उपहार दिए उनके हाथ में पहनाते हुए| उन्हें श्रृंगवेरपुर का राजा घोषित कर दिया था| इसके उपरांत वे वनवास के समय ही मिले निषादराज तो श्री राम के प्रेम में विह्वल होकर उन्हें निहारते ही रहे उस समय रघुकुल के समान शक्तिशाली कोई और वंश नहीं था फिर भी श्रीराम के व्यवहार से कभी इस बात का आभास नहीं होता था भी एक सुदृढ़ समाज के सर्व रूप के रचनाकार थे| वन गमन के समय नदी पार करने के लिए जब उन्होंने केवट की सहायता ली तो उसको भी पूर्ण मान-सम्मान देते हुए इस बात का आभास कराया कि वह कितना महत्वपूर्ण है; बिना उसकी सहायता के वे लोग नदी पार नहीं कर सकते और उन्होंने एक साधारण यात्री की तरह ही व्यवहार किया न कि किसी राजवंशी की तरह ठीक इसी प्रकार शबरी का प्रकरण है; प्रसंग में शबरी कहती हैं कि प्रभु मुझे समझ नहीं आ रहा कि प्रसन्नता व्यक्त करूँ कि आप मेरी कुटिया में पधारे अथवा सीताहरण पर दुख व्यक्त करूँ ? विधाता को ऐसा कारण नहीं देना चाहिए था कि सीता जी का हरण हो और आपको रावण को मारने जाना पड़े यह कैसा प्रारब्ध है? रावण को तो लक्ष्मण भी मार सकते हैं परंतु मुझे तो आपसे मिलने आना था , इसलिए आगे रावण को मारने भी चला जाऊँगा| श्रीराम की इन बातों से शबरी हो वे समाजवाद के सच्चे संस्थापक थे|

२६-अयोध्याकांड रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी, गीताप्रेस गोरखपुर,पृष्ठसंख्या ४९६

सत्ता सुख को त्याग कर समाजवाद को अपनाकर श्री राम ने अपने समय की अनेक विरोधी संस्कृतियों साधना जातियों विचार पद्धतियों को आत्मसात करते राम ने अपनी साहस का परिचय दिया है त्याग की भावना साहसिक कृत्य का सर्वोच्च उदाहरण है राम का चरित्र लोकमानस का आदर्श चरित्र है वह हमारे दैनिक जीवन के प्रेरणा स्त्रोत हैं| राम ने अपने साहस के बल पर अपने समय की अनेक विरोधी संस्कृतियों ,साधनों ,जातियों आचार-निष्ठाओं तथा विचार-पद्धतियों को आत्मसात करते हुए उनका समन्वय करने का साहस किया| ऐसा साहस करने के लिए शारीरिक और भौतिक बलिष्ठता की आवश्यकता नहीं पड़ती ,हृदय में पवित्रता तथा चरित्र में दृढ़ता की आवश्यकता पड़ती है| साहस का यह गुण राम में पूर्ण रूप से उपस्थित था तभी तो उन्होंने कदम कदम पर साहसिक कार्यों के अनेकों उदाहरण प्रस्तुत किए उन्होंने अपने साहस के बल पर सामान्यजनों के कष्ट की अनुभूति करने के साथ ही बड़े आदर्श की स्थापना की उन्होंने हर उस परिस्थिति में स्वयं को डाला जिसमें एक सामान्य व्यक्ति अपना जीवन व्यतीत करता है उसके जीवन के प्रत्येक क्षण को आत्मसात किया वे प्रत्येक स्तर के व्यक्ति से संवाद कर उसकी स्थिति को समझते थे राम के चरित्र में पग-पग पर मर्यादा त्याग प्रेम और लोक व्यवहार के दर्शन होते हैं| उनका पूरा जीवन समाज तथा राष्ट्र के विकास ऋषियों के यज्ञ-रक्षण, लोक-कल्याण आदि में व्यतीत हुआ| वनवास मिलने पर जिस यात्रा पर वे निकले वह उत्तर से प्रारंभ होकर दक्षिण दिशा तक गई अर्थात उनकी सामाजिक समरसता का भाव संपूर्ण राष्ट्र को एकता तथा समान भावना का संदेश देता है| इसके अतिरिक्त बाल्यकाल में ऋषि विश्वामित्र तथा वशिष्ठ के मार्गदर्शन में उत्तर से लेकर पूर्व दिशा की यात्रा राजा बनने पर पश्चिम दिशा की राज्य एवं संस्कृति की यात्रा इस बात को स्पष्ट करती है कि वे एक सजग समाज सेवक रहे उन्हें इस बात की कोई भी चिंता नहीं थी की उनके पास अधिकार है या नहीं क्योंकि वह अधिकारों से अधिक कर्तव्यों को प्रमुखता देते थे प्रत्येक सम विषम परिस्थिति में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते रहे उनके द्वारा किए गए कार्यों को देखते हुए हम उन्हें सामाजिक आदर्श के निर्माता के रूप में देखते हैं|

पुस्तक 'रक्षक राम' के एक अध्याय में राम कहते हैं -"प्रिय भाई भरत यह सत्य है विशेष रूचि नहीं है मैं केवल समाज में बुराइयों को समाप्त करना चाहता हूं क्योंकि उस से आमजन पीड़ित है; नए राज्यों पर विजय प्राप्त करने से अच्छा है कि जो राज्य हमारे पास है उसे ही सुंदर बनाया जाए इसके लिए शक्ति नहीं बुद्धि की आवश्यकता है |" २७

उनकी यह बात सुनकर भरत और लक्ष्मण एक दूसरे को देखने लगे भरत ने पूछा भैया समानता की क्या आवश्यकता है ऐसे में तो आलस्य की प्रधानता हो जाएगी और राज्य का विकास रुक जाएगा | श्री राम ने उत्तर दिया नहीं भरत; साधारणतः मनुष्य समानता की यही कल्पना करता है किंतु समानता कार्यों में कभी नहीं हो सकती अपितु यह समानता संसाधनों में ही संभव है हमें प्रत्येक व्यक्ति को एक समान भोजन तथा जीवित रहने के संसाधन उपलब्ध करवाने चाहिए अपने इन विचारों को उन्होंने राम राज्य के रूप में मूर्त रूप दिया उनकी कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं था| वे समाज के प्रत्येक प्राणी को अपने परिवार का सदस्य समझते थे| वे सभी की अपेक्षाओं को पूर्ण करना चाहते थे प्रत्येक व्यक्ति की सोच को महत्व देते थे असंभव सी लगने वाली प्रत्येक घटना को स्वेच्छा से ग्रहण करते थे | समानता ही उनके लिए समाज का आधार थी; उनको ज्ञात था कि आसमानता से असंतोष उपजता है तथा असंतोष से समाज निर्बल हो जाता है खंडित हो जाता है| खंडित राज्य किसी भी राजा कि असफलता का प्रतीक है|

---

२७ -रक्षक राम,महान प्रतियोगिता और रक्षक की खोज सूरज पटेल,प्रभात प्रकाशन ,पृष्ठ संख्या९०

दूसरों को असंभव लगने वाली बातों को व्यावहारिक ढांचे में ढाल लेते थे वे केवल आदर्शों की बातें नहीं करते थे बल्कि उसको यथार्थ रूप से सिद्ध करते हैं| सुग्रीव तथा विभीषण को राज्य सौंपते हुए भी उन्होंने उस राज्य के उनके राज्यों के समाज की मंगल कामना की थी, उन्होंने सदैव ही राज्य हित को सर्वोपरि रखा, वे सबकी सोच को जागृत कर समाज का उत्थान करना चाहते थे| आदर्श पुरुष त्याग करते हैं किंतु श्री राम का जीवन त्याग से भी कुछ अधिक था जहां केवल और केवल समाज को देने की भावना थी कहीं भी आधिपत्य की भावना नहीं थी|

भगवान सिंह द्वारा रचित अपने अपने राम में राम ऋषि वशिष्ठ से कहते हैं -

"शिक्षा तो मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक है ,आचार्य और अशिक्षितों की भी संख्या कुछ कम तो नही |" २८

उनका मानना था कि यदि समाज के उच्च वर्ग सहयोग करें तो कमजोर वर्ग भी शिक्षित होकर समाज के स्तर को ऊंचा कर सकता है| वे समाज के प्रत्येक वर्ग को एक दूसरे का पूरक मानते थे काहे परामर्श देते समाज को राम की विचारधारा के साथ ही एक सही दिशा में एक साथ लेकर जाया जा सकता है वे कामना क्रोध, लोभ आदि से उसे दूर रहते हुए नव समाज का निर्माण करना चाहते थे| रामराज्य इसका एकमात्र उदाहरण है|

२.३ श्रीराम के जीवन मूल्य : -

श्री राम की जीवन को रामचरितमानस के संदर्भ में देखें यह किसी भी ग्रंथ के संदर्भ में एक बात सभी जगह दिखती है| वह है सत्य का समान पालन एक मर्यादित नियंत्रित तथा वैधानिक अस्तित्व की कथा है मर्यादित रहना, उन्होंने इसका चयन स्वयं किया श्रीराम ने बिना अधिकार जताए स्वयं का विस्तार किया| वे किसी भी प्रकार के अतिक्रमण पर विश्वास नहीं करते थे चाहे वह व्यक्तिगत रूप से हो या किसी अन्य रूप में वे अपनी सीमा निर्धारित कर उसका पालन करते थे अयोध्या के राजकुमार थे राजा बनना उनके लिए कठिन नहीं था परंतु राम ने पारिवारिक संबंधों की मर्यादा को सर्वोपरि रखा उनके जीवन मूल्य में समावेश का महत्वपूर्ण स्थान है राम ने जीवन से जुड़े प्रत्येक मूल्य तथा मर्यादा को स्थापित किया|

अयोध्या नरेश बनने के बाद मर्यादा न्याय तथा धर्म से भरी ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित की जिसकी आर्थिक राजनैतिक मर्यादाओं ने प्रत्येक नागरिक को सुखी एवं समृद्ध कर दिया राम का पूरा जीवन ही मानवीय गुणों एवं कर्तव्यों के पालन से ओतप्रोत है| उन्होंने अपने जीवन में सभी संबंधों चाहे वह पिता-पुत्र, पति-पत्नी,राजा-प्रजा,गुरु-शिष्य और सभी अवस्थाओं में चाहे घर हो या वनवास चाहे दुख हो या सुख प्रत्येक परिस्थिति में अपने कर्तव्य का पालन करके समाज के सामने एक आदर्श स्थापित किया;जिसका अनुकरण करने से प्रत्येक व्यक्ति श्रीराम का नैतिक आचरण उनके जीवन मूल्यों को समझते हुए उसे अपनाते हुए मानव जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है| इसीलिए लोग इन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम कहते हैं सच पूछो तो श्रीराम का जीवन मिष्ठान के समान था| जिसे कहीं से भी खाओ मीठी ही लगेगी वैसे ही श्री राम और कृष्ण हमारी संस्कृति के दो महान आधार स्तंभ है जिनके जीवन को पढ़कर भारतीय ही नहीं बल्कि मानव मात्र इन दोनों के जीवन से प्रेरणा पाकर अपने जीवन को सफल बना सकते हैं|

---

२८ - अपने अपने राम, भगवान सिंह, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या ६३

युद्ध के समय जब लक्ष्मण जी को शक्ति बाण लगता है और वे मूर्छित हो जाते हैं, तब हनुमान जी लंका जा कर सुषेण वैद्य को लेकर आते हैं;तो वे श्री राम कहते हैं कि मैं तो शत्रु पक्ष का वैद्य हूँ, मेरा कर्तव्य मुझे आज्ञा नहीं देता कि मैं आपकी कोई सहायता करूँ| इसके उत्तर में श्री राम कहते हैं मैं आपको कर्तव्यच्युत होने को नहीं कहूँगा चाहे;मुझे अपने भाई को ही क्यों न खोना पड़े| श्री राम के मर्यादा देख कर वैद्य सुषेण उनसे बहुत प्रभावित होते हैं और संजीवनी बूटी का पता देकर उससे उपचार करके लक्ष्मण जी के प्राण को बचाया जाता है| इससे इस बात का बोध होता है कि मर्यादा का पालन करने में श्रीराम कितने दृढ़ प्रतिज्ञ थे| मर्यादा की रक्षा करने के लिए कोई भी त्याग करने को तत्पर रहते थे| श्रीराम तथा रावण के युद्ध में जब मेघनाथ मारा जाता है और उसका शीश कटकर रामजी के दल में जा करता है, तब सुलोचना अपने साथ मंदोदरी से बोली कि माता जी मैं अपने पति मेघनाथ का शीश लेकर सती होना चाहती हूँ| इसलिए शीश लाने के लिए मुझे श्री राम के दल में जाना पड़ेगा और वह तो मेरे ससुर के शत्रु हैं तो कहीं मैं उधर जाऊँ और वह मुझे बंदी न बना लें इसके उत्तर में मंदोदरी ने जो कहा वह अक्षरों में लिखने योग्य है मंदोदरी कहते हैं बेटी -महान चरित्रवान श्रीराम तुम्हारा सम्मान करेंगे|

विभीषण रावण से रुष्ट होकर राम के दल में आ गए श्री राम ने विभीषण के चेहरे के हाव-भाव से समझ लिया कि यह व्यक्ति रावण से दुखी होकर ही हमारे पास आया है| श्री राम ने प्रथम मिलन पर ही विभीषण को लंकेश कहकर संबोधित किया तब लक्ष्मण जी ने कहा भैया अभी तक तो हमने रावण से युद्ध भी नहीं किया इस बात पर श्री राम जी ने कहा सुनो लक्ष्मण पहली बात तो यह कि हम सत्य के मार्ग पर हैं;तो ईश्वर हमारी विजय अवश्य ही सुनिश्चित करेंगे| अतः विजय के उपरांत विभीषण को ही लंका का राज्य देकर लंकेश बनाना होगा फिर भी दुर्भाग्यवश यदि हमारे विजय नहीं होती तब भी मैं इसको लंकेश नहीं तो अयोध्या का राज्य देकर अयोध्या नरेश तो बना ही सकता हूँ| इससे पहली बात तो यह सिद्ध होती है कि श्रीराम अपने वचन के इतने पक्के थे दूसरी बात यह भी सिद्ध होती है कि वे राजनीति में भी पूर्ण रूप से कुशल थे| श्री राम का नैतिक आचरण उनके जीवन मूल्यों को भली प्रकार दर्शाता है जब सुग्रीव को यह प्रतीत हुआ कि विभीषण किसी अनिष्ट मंशा से राम के पास आ रहे हैं तब उन्होंने अपने विचार कुछ इस प्रकार व्यक्त किए| सुग्रीव जी, श्री राम से कहते हैं ऐसा लग रहा है कि यह कोई नया नाटक रचा गया है| जिसमें हमारे वैरी रावण का भाई हमारे पास आ रहा है अवश्य ही इसमें कोई न कोई भेद छुपा हुआ है|इनकी सच्चाई कुछ और होती है दिखाते कुछ और है| ये विधर्मी तथा असत्यवादी होते हैं सब राक्षस कुल के मायावी राक्षस हैं| अतः आप इन्हें अपनी तरह सीधा-साधा मत समझ लेना यह दूसरों को उत्तर दिशा दिखाकर स्वयं दक्षिण की ओर चले जाते हैं| मेरे हृदय में तो ऐसा विचार आ रहा है कि रावण के इस भाई को अच्छी तरह स्वाद चखा दिया जाए अभी अपने वानरों को आधार देखकर इसे बंदी बनवा दूं रावण को जब यह पता चलेगा उसका भाई हमारे यहां बंदी बन चुका है तब वाह बड़ी सरलता से माता सीता को यहां हमें वापस अपने भाई को ले जाएगा | सुग्रीव की ऐसी बात सुनकर जामवंत जी कहते हैं कि धीरज भरिए हम लोगों को ऐसी अच्छी बातें शोभा नहीं देती जो धर्म को धारण करने वाले योद्धा है| वे कभी भी अपने कर्तव्य को नहीं भूलते अपने बैरी से लड़का होने से उसे परास्त करके उसे यमराज के लोक तक पहुंचा देते हैं इन सबको भविष्य के लिए सीख मिल जाएगी और वे कहते हैं-

---

२९ -सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्रीराधेश्यामपुस्तकालय,श्रीराधेश्याम कथावाचक द्वारा रचितपृष्ठ संख्या २७८

जो धर्ममान है योद्धा हैं- रण में कर्तव्य चुकाते हैं।
बैरी से कहकर बतलाकर यमपुर उसको पहुंचाते हैं।
आ रहा भेद लेने को यदि तो भी हमको कुछ फिक्र नहीं।
कुछ यहाँ भेद की नीति नहीं कुछ यहाँ कपट का जिक्र नहीं।
धोखे से लड़ने आया हो तो भी न बात चिंता की है ।
श्री लक्ष्मण जी का एक बाण - उसके संहार को काफी है।। २९

उपर्युक्त पंक्तियों में सुग्रीव जी को ऐसी शंका होती है कि विभीषण रावण के जासूस बनकर आए हैं | वे श्री राम से कहते हैं कि इन रजनीचरों अर्थात राक्षसों पर विश्वास नहीं करना चाहिए | ये किसी को भी सही बात का ज्ञान नहीं देते जो कार्य कर रहे होते हैं यह जिस दिशा की तरफ जा रहे होते हैं पूछने पर अमुक व्यक्ति को विपरीत आते ही बताते हैं| श्री राम मेरे हृदय में तो ऐसा विचार आ रहा है कि अभी वानरों को आज्ञा दे दूँ कि इसे बंदी बना लिया जाए अपने भाई को बंदी बना जानकर रावण यहाँ अवश्य आएगा तब हम उसके सामने ऐसा प्रस्ताव रखेंगे अगर उसे अपना भाई वापस चाहिए तो वह हमें सीता माता को लौटा दे हमारा कार्य आसान हो जाएगा| श्री राम किसी भी सदस्य पर विश्वास नहीं करना चाहिए उनकी ऐसी बात सुनकर जामवंत जी कहते हैं कि हे तात! इतने शीघ्र किसी भी निर्णय पर नहीं पहुंचना चाहिए और इस तरह की बात आप के मुख से निकलती हुई शोभा नहीं देती हमें इतना सामर्थ्य है कि अपने शत्रु को सामने से चुनौती देते हुए उसे यमलोक पहुंचा सकें यदि यह हमारा भेद लेने आ रहा है तो भी चिंता का कोई विषय नहीं है|हमने तो किसी प्रकार का छल-प्रपंच नहीं किया;हम कौन सा कपट का कार्य कर रहे हैं? और यदि यह धोखे से युद्ध करने आया है तो भी हमें किसी भी प्रकार की चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि इसके लिए तो लक्ष्मण जी का एक बार ही काफी है इस को हराना किसी भी प्रकार से असंभव नहीं है| अतः हमें शीघ्र किसी निर्णय पर नहीं पहुँचना चाहिए प्रतीक्षा करनी चाहिए ताकि इसकी मंशा पता चल सके| जब तक यह अपने मुख से अपने मन की बात नहीं कहता अब तक हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए क्योंकि, अतिशीघ्रता में किसी भी बात का आकलन करना उचित नहीं होगा हमें नहीं पता कि यह मन में कौन सी भावना रखकर यहां तक आया है अतः इतने शीघ्रइसके बारे में किसी भी तरह की धारणा नहीं बनानी चाहिए और जब तक यह हमारे सामने तथ्यों को नहीं रखता तब तक हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए| समय के साथ सबका वास्तविक रूप सामने आ ही जाता है|

फिर क्यों छेड़े बानर उसको संभव है मिलने आया हो?
हो सकता है वह साथ-साथ संदेश संधि का लाया हो।
अथवा रावण का क्षमापत्र वह पास हमारे लाता हो।।
या रावण से कुछ बिगड़ गई शरणार्थी होकर आया हो । ३०

जामवंत जी अपने पक्ष के क्रम को सुनिश्चित करते हुए अपने अनुभव के आधार पर कहते हैं कि हो सकता हो यह सिर्फ मिलने आया हो या रावण के शांति दूत के रुप में संधि का संदेश लाया हो| ऐसा भी संभव है यह रावण का क्षमा-पत्र लेकर हमारे पास आया हो इसकी भी संभावना हो सकती है, इसका रावण से मतभेद हो गया और रावण का साथ छोड़कर यह हमारे दल में शरण लेने आया हो तो क्या यह आवश्यक है कि हम इसे

२९,३०-सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्री राधेश्याम पुस्तकालय, श्री राधेश्याम कथावाचक द्वारा रचितपृष्ठ संख्या २७८

बंदी बना ले या इसे किसी भी प्रकार की यातना दें जो कि उचित नहीं होगा| शरणार्थी की बात सुन बोल उठे रघुनाथ उसे सादर तथा शिष्टाचार से साथ लेकर आओ |शरणार्थी की बात सुनकर रघुनाथ जी कहते हैं कि जो व्यक्ति हृदय से निर्मल,निश्चल है| वही मुझ तक पहुंच सकता है| चालाक, प्रपंची, धूर्त छल करने वाला व्यक्ति मेरे सम्मुख नहीं आ सकता| यदि वह शरणागत होगा तो मैं अवश्य ही उसे अपने साथ रखूंगा| जहां तक हो सके उसको सानिध्य प्रदान करूंगा| मैं एक सच्चे साथी के रूप में सदैव ही उसके साथ रहूंगा और कभी भी उसका त्याग नहीं करूँगा |

मैं उसका सच्चा साथी हूँ -जो सब प्रकार से आरत है।
उसका सच्चा साथी हूँ -जो जन मेरा शरणागत है।
यदि शरण आ रहा है मेरी-तो अपना कह कर रखूंगा मैं।
अपने समीप बिठलाऊंगा-लक्ष्मण जैसा समझूंगा मैं। ३१

विभीषण के लिए शरणार्थी शब्द सुनकर श्री राम तत्काल कहते हैं कि अगर यह शरणार्थी बनकर हमारे पास आया है; तो हमें इसकी पीड़ा को समझते हुए इसका समर्थन करना चाहिए| अतः शिष्टाचार के साथ उचित आचरण करते हुए विभीषण को लेकर आया जाए जो सरल है जिसके मन में किसी भी तरह का छल कपट नहीं है, वह मुझे अत्यंत प्रिय है क्योंकि कपटी धूर्त विश्वासघाती ऐसे दुर्गुणों वाला व्यक्ति मेरे सामने नहीं आ सकता| यदि विभीषण हमारे पास शरण चाहता होगा तो मैं अपने सामर्थ्य अनुसार उसका साथ अवश्य दूँगा और उसको कभी भी त्यागूँगा नहीं चाहे उसने दुष्कर्म भी क्यों न किए हो| जो भी मेरी शरण में आता है ,वह इस भावना से ही आता है कि मैं उसका साथ दूँगा| मैं उसकी रक्षा करुंगा और अपने आचरण से मैं पीछे नहीं हट सकता जो भी मुझ तक आया है वह मेरा अपना है मैं विभीषण को अपने निकट बैठा कर उसके साथ वैसा ही व्यवहार करुंगा जैसा मैं लक्ष्मण के साथ करता हूँ|

श्री राम भली प्रकारसे शरणागत के मनोभाव से परिचित है| वे यह जानते हैं कि शरणार्थी सदैव ही प्रत्येक प्रकार से शरण देने वाले पर निर्भर रहता है| अतः यदि उसके साथ किसी भी प्रकार का दुर्व्यवहार किया जाए चाहे वह आचरण से संबंधित हो अथवा वाणी से शरणार्थी को दुख ही देता है और किसी भी शरणार्थी को यदि दुख दिया जाए तो स्वयं के जीवन में सुख नहीं आ सकता शरण में आए हुए व्यक्ति का त्याग कर देने से आत्मिक ग्लानि होती है| इसी कारण वे कहते हैं कि जो भी हमारी शरण में आया हो;उसको किसी भी स्थिति में त्यागना नहीं चाहिए चाहे उसके लिए आपको किसी भी प्रकार की हानि क्यों न उठानी पड़े| उसकी रक्षा हेतु यदि अन्न, धन आभूषण, मन और यहां तक कि जीवन भी त्यागना पड़े तो त्याग देना चाहिए परंतु किसी भी स्थिति में शरणागत के मन को दुखाना नहीं चाहिए|

शरणागत पर प्रीति लख पुलकि उठे हनुमंत।|
स्वामी स्वभाव विलोक कर बोले बचन तुरंत।
जय शरणागत वत्सल रमेश जय आरत हरण नमामि हरे।
जय भानु वंश अवतंस हंस जय अशरण शरण नमामि हरे।| ३२

३१,३२ -सुंदरकांड, विभीषणकीशरणागति, राधेश्यामरामायण, श्रीराधेश्यामकथावाचक
श्री राधेश्याम पुस्तकालय, पृष्ठसंख्या २७९

श्री राम कहते हैं| हे भाई! इस बात को सुनो और समझो की शरण में आए हुए व्यक्ति को जो भी सताता है वह इस दुनिया में और इस जीवन में किसी भी तरह की सुख को प्राप्त नहीं कर पाता शरण में आए हुए व्यक्ति को त्यागने वाले को सदैव ही आत्मग्लानि का सामना करना पड़ता है| अतः किसी भी शरणागत को त्यागना नहीं चाहिए चाहे उसके लिए कितनी भी हानि हो जाए अन्न धन संपदा आभूषण व्यक्ति का तन तथा मन और जीवन भी नष्ट होता है तो हो जाए लेकिन शरण में आए हुए व्यक्ति के हृदय को दुख नहीं पहुँचाना चाहिए एक शरणार्थी के प्रति श्रीराम के भाव सुनकर हनुमान जी अत्यधिक प्रसन्न हुए और श्री राम के विनम्र स्वभाव देखते हुए बोले ऐसा विचार रखने वाले प्रभु श्री राम की जय हो जो अपनी शरण में आने वाले व्यक्ति के सभी दुखों को हरता हो;ऐसे श्री राम की जय जो शरण में आए हुए व्यक्ति के लिए अपना मान सम्मान धनसंपदा तन मन सब कुछ न्योछावर करने को तैयार हो ऐसे श्री राम की जय |

निश्चय शरणागत है प्रभु की कुछ सेवा काज चाहता है।
इस आशा से भी आया लंका का राज चाहता है।
हम सभी उसे ले आते हैं वह साथ हमारे आएगा।|
अपना तो वह महालाभ ही है घर का भेदी मिल जाएगा।
पवनतनय के वचन सुन मुस्काए भगवान।
जय कृपालु कह कर चले अंगद आदि हनुमान। ३३

हनुमान जी अपने लंका प्रसंगों को याद करते हुए कहते हैं कि मैं स्वयं भी विभीषण से परिचित हूँ| उनके स्वभाव के बारे में जानता हूं यह बहुत प्रेमयुक्त सभाओं के अनुरागी व्यक्ति हैं हो सकता हो यह श्री राम के दर्शन करने आए हों और प्रभु की सेवा करना चाहते हों| यह भी तो हो सकता है कि वे लंका का राजसिंहासन चाहते हो हम उसे अभी अपने साथ लेकर आते हैं क्योंकि उसके हमारे साथ आने से हमारा हित ही होगा अहित नहीं क्योंकि हमें ऐसा व्यक्ति मिल जाएगा | जो लंका के बारे में सब कुछ जानता है जिससे हमें युद्ध करने में किसी भी तरह की बाधा नहीं आएगी क्योंकि हमारे साथ एक ऐसा व्यक्ति होगा जो लंका के बारे में और लंका के लोगों के बारे में हमें सब कुछ बता सकता है और इस युद्ध में हमारी जीत सुनिश्चित कर सकता है हनुमान जी के चतुराई भरे वचन को सुनकर श्री राम मुस्कुराने लगे और श्री राम नाम का जयकारा लगाते हुए अंगद हनुमान आदि विभीषण जी को लेने चल पड़े |

घर में, वन में रिपुगण में भी-भय नहीं कहीं कुलभूषण को।
स्वागत सम्मान पूर्वक सब ले आए भक्त विभीषण को।
पहले तो देखा दूर से ही चारों ही ओर कीशगण को।
तिरछी चितवन से ताड़ लिया वीरासन बैठे लक्ष्मण को।
फिर नीची नजरों से देखा कौशल किशोर के चरणों को
एड़ी तलवों को पंजों को उंगलियों नखो रेखाओं को।
फिर आँख उठाकर कुछ ऊपर देखा उस कंदली जंघा को। ३४

३३,३४ -सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्री राधेश्याम कथावाचकश्री राधेश्याम पुस्तकालय, पृष्ठ संख्या २७९

घर हो अथवा वन हो या शत्रुओं का समूह हो, कहीं भी भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि किसी भी परिस्थिति में अहित की कामना नहीं की जा सकती न ही इस प्रकार की कोई शंका रखनी चाहिए | शरण में आए हुए विभीषण को सम्मान सहित लेकर आया जाए| विभीषण जी ने आते ही अपने दृष्टि से स्थिति और व्यक्तियों का आकलन कर लिया लक्ष्मण जी को अपनी तिरछी नजर से पहचान लिया श्री राम को उनके चरणों की तरफ से देखना प्रारंभ किया चरण कमल से दर्शन प्रारंभ करते हुए, उनकी जूट-जटा तक पहुंचे| इसी क्रम में उनकी आंखों की तरफ देखते हुए विभीषण ,श्री राम के व्यक्तित्व के प्रति आसक्त हो गए तथा एक टक श्री राम को देखने लगे| उनके ह्रदय में श्री राम के प्रति प्रेम उमड़ रहा था और वह प्रेम पुलकित मन से संभाला नहीं जा रहा था बड़ी विनम्रता के साथ हाथ जोड़कर प्रभु के सामने खड़े हुए तथा अपने मस्तक को उनके चरणों में झुका दिया और अपने मन में यह कामना की अब वे श्री राम की शरण में आ गए हैं , तो श्रीराम ही उनकी मान- मर्यादा की लाज रखेंगे| विभीषण संपूर्ण समर्पण भाव के साथ स्वयं को श्री राम के प्रति समर्पित कर दिया क्योंकि बिना किसी संशय के वे समझ गए थे कि श्रीराम ही उनका तथा लंका प्रजा का उद्धार कर सकते हैं | श्री राम के दर्शन मात्र से ही उन्हें उनके अंदर समाया सारा दुःख सारी पीड़ा समाप्त हो गयी | जिस भी प्रकार का दुःख ,भय , क्षोभ उनके ह्रदय में था वो समाप्त हो गया की उनका क्या होगा| उनके ह्रदय में प्रेम तथा विश्वास स्थान ले चुका था|

अचरज मे बानर-भालु हुए जब देखी दशा विभीषण की।
पुलका उठे श्री रामचंद्र हुचकी भर आई लक्ष्मण की
गदगद थे हनुमंत जामवंत कपिपति को कुछ लज्जा आई।
अपने हाथों पर उठा उसे लिपटे सहर्ष श्री रघुराई । ३५

विभीषण जी की ऐसी दशा देखकर सेना में सम्मिलित सभी वानर और भालू अचरज में पड़ गए श्री रामचंद्र विभीषण के इस प्रेम को देखकर पुलकित हो और लक्ष्मण जी भी विस्मृत से देखते रहे हनुमान कथा जामवंत जी उनके इस प्रेम को देखकर अत्यधिक हर्षित थे| वही सुग्रीव को अपने निर्णय द्वारा बोले गए वचनों पर लजा रहे थे| श्री राम ने विभीषण का अपने प्रति निश्चल प्रेम देखते हुए उन्हें अपने हाथों से उठाया और उन से गले मिले यह स्थिति अपने आप में प्रेम सद्भावना और अपनी शरण में आए हुए व्यक्ति के प्रति श्री राम के स्नेह को दर्शाती है कि किस प्रकार श्रीराम अपने शरण में आए हुए व्यक्ति को मान सम्मान देते हैं उसकी रक्षा का वचन देते और उसको सहज रूप से स्वीकार करते हैं| विभीषण जी मन ही मन स्वयं को सांत्वना और विश्वास दे रहे हैं कि उन्होंने श्री राम की शरण में आकर कोई भी गलत निर्णय नहीं लिया| वे सभी प्रकार से यथासंभव सहयोग एवं प्रयास अवश्य करेंगे तथा उनके सहायता करके उन्हें इस विकट और विषम परिस्थिति से बाहर अवश्य निकालेंगे श्री राम के निकट आकर उन्हें एक विशेष प्रकार का आत्मिक सुख एवं शांति मिलती है| लंका में बने सोने के महलों निवास करने से कहीं अधिक आनंद की अनुभूति कर रहे हैं श्री राम के संगति में उन के सानिध्य में आकर वे स्वयं को धन्य मानते हैं तथा इस विश्वास से परिपूर्ण हो जाते हैं| श्रीराम रावण के साथ अपने शत्रुता को एक तरफ रखते हुए विभीषण के साथ भाई जैसा व्यवहार ही करेंगे ऐसी स्थिति में निसंकोच भाव से विभीषण अपने मन की बात श्रीराम के समक्ष रख सकते है|

३५- सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्री राधेश्यामकथावाचक,श्री राधेश्याम पुस्तकालय , पृष्ठ संख्या २८१

यथायोग्य भेंटे सभी भालू- कीश -समुदाय।
फिर आसन दे पास में बोले श्री रघुराय।
कहिए लंकेश !कुशल से हैं? घरमें सभी प्रसन्नता है?
बतलाए मुझे मैं प्रस्तुत हूँ; क्या इच्छा है ?क्या आज्ञा है? ३६

सेना में उपस्थित सभी भालू रीछ आदि समुदाय से शिष्टता पूर्ण मिलन के उपरांत श्री राम ने विभीषण को बैठने के लिए आसन दिया तथा बड़े प्रेम से उन्हें लंकेश की उपाधि दी और पूछा कि घर में सब कुशल मंगल है; आप मुझे अपनी इच्छा बताएं और आज्ञा दें कि आपके लिए क्या करना है? मैं तो आश्चर्यचकित हूं इतना ज्ञानवान और स्वभाव से सरल व्यक्ति लंका में कैसे रह सकता है किस तरह वह धर्म की रक्षा करते हुए अत्याचारों को सहता है? हनुमान जी श्री राम को ये बात बता बताया चुके थे कि लंका में विभीषण हि एक मात्र वो व्यक्ति थे जो धार्मिक तथा रावण कि विचारधारा से सहमत नहीं थे| श्रीराम उन्हें पूर्ण विश्वास दिलाते हैं कि मैं आपके मित्र के समान हूं| आप मित्रता के भाव से अपना हाल मुझे बताएं जो भी मेरे पास मित्रता की भावना से आता है मैं उसका पूर्ण रूप से समर्थन करते हुए उसका साथ देता हूं| आप मुझे अपना मित्र मानकर उसी भाव से अपने हृदय का हाल बताएं| मैं स्वभाववश ही ऐसा हूं;जो सहृदय किसी भी सज्जन को अपना मानता है| जो सत्मार्गी होता है वह मुझे प्राणों से भी प्यारा होता है और मुझ तक उसी की पहुंच हो सकती है| जिसके हृदय में मेरे प्रति अपनापन होगा जो मुझे पूरी तरह अपना मानता होगा और मेरे प्रति समर्पित होगा यही भाव वह मेरी ओर से भी पाएगा और मेरे अति निकट हो जाएगा मुझे अपने प्राणों के जाने की भी परवाह नहीं है हर वह व्यक्ति मुझसे मिल सकता है| जिसे मुझ में प्रेम तथा मित्रता का भाव दिखता जिसे किसी भी अपने ने दुखी किया जो किसी भी संबंध से दुखी हो ऐसे हर व्यक्ति का मेहमान सम्मान करते हुए उसके साथ प्रेम पूर्वक व्यवहार करता हूं क्योंकि वह कुछ सोचकर ही मेरे पास आया है और मेरा कर्तव्य है कि मैं उसके दुख को कम करूं इसलिए बिना किसी भाग के अपने मन की इच्छा अपने मन की पीड़ा को मेरे साथ बांट सकते हैं| अतः आप किसी भी प्रकार का संकोच न करें इस तरह के भाव से ग्रसित न हों| श्री राम के मधुर वचन सुनकर विभीषण जी पूरी तरह आश्वस्त होकर पूर्णानंद में कहते हैं

वह दास बड़ा बड़भागी है जो प्रभु पद का अनुगामी हो।
वह जन निष्कंटक निर्भय है जिसका रघुकुल सा स्वामी हो।
वह काम या क्रोध लोभ उस समय हृदय से हटते हैं।
जब रघुराई भक्तों के चित्त में बसते हैं। ३७

विभीषण जी श्री राम के गुणों तथा उनके व्यवहार को देखते हुए अपने मन के भावों को प्रकट करते हुए उनके प्रति विश्वास व्यक्त करते हुए कहते हैं; जहां धर्म होता है वही बुद्धि का प्रताप होता है निशाचरों के कुल में पैदा होकर अपने अभी तक के जीवन में बहुत अधिक भ्रम की स्थिति में रहा हूं अर्थात श्री राम से मिलने से पहले तक के अपने जीवन को वह भ्रम से भरा हुआ बताते हैं| श्री राम जिस प्रकार उनको अपने गले से लगाते हैं उससे विभीषण जी भावविभोर हो जाते हैं| वे कहते हैं धन-संपत्ति घर परिवार सब कुछ छूट गया परंतु

३६,३७ -सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्री राधेश्याम कथावाचक ,श्री राधेश्याम पुस्तकालय, पृष्ठ संख्या २८२

मुझे इस बात का न तो कोई दुख है और न किसी प्रकार की चिंता जो कुछ भी हुआ और जो कुछ भी मेरे पास था उसमें से किसी भी एक वस्तु की मुझे लालसा नहीं है| अब तो मैं बस यही चाहता हूं कि मैं यहीं आपके पास रहूं और कभी भी लौट कर लंका न जाऊँ| कोई भी प्राणी तबतक मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकता जब तकवह निष्काम भाव से राम को धारण नहीं करता| अब तक लंका में जिस प्रकार उनका अपमान और उपहास होता था और श्री राम से उन्हें जितना प्रेम सम्मान और उनकी सेना तथा दल में जो स्थान श्रीराम ने उनको दिया उस सबसे वह आह्लादित है| वो हर उस बात कि अनुभूति करते हैं जो वो श्री राम के बारे में सुनते थे|

रामचरितमानस में इस कथानक की प्रस्तुति कुछ इस प्रकार की गई है कि जब लंकापति रावण के क्रोधित होने और विभीषण का अपमान किए जाने के बाद विभीषण लंका तथा रावण का त्याग करके श्री राम की शरण में आते हैं,तो श्रीराम उन्हें सहर्ष स्वीकारते हैं| उनके लिए वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा लक्ष्मण जी के प्रतिकरते हैं| वे विभीषण जी को सांत्वना देते हैं और प्रेम पूर्वक तुम को गले लगाते हैं| श्री राम के प्रेम युक्त वचन सुनकर विभीषण अत्यधिक हर्षित एवं रोमांचित होते हुए कहते हैं| अब मैं निश्चिंत हूं क्योंकि मैं सही जगह पर आ गया;निश्चित ही मेरा घर-परिवार सब कुछ छूट गया है लेकिन मैं इस बात को लेकर निश्चिंत हूं की मैं आप की शरण में आगया और व्यक्ति को इससे ज्यादा क्या चाहिए मुझे किसी राजपाट धन वैभव आदि की लालसा नहीं है मैं तो सिर्फ और सिर्फ आपके पास रहना चाहता हूँ| एक राक्षस कुल में जन्म लेने के कारण मैं बहुत व्यथित रहा हूँ| अब मेरी वह सारी व्यथा और दुख दूर हो गए हैं| धन वैभव आदि में फंसा हुआ व्यक्ति कभी भी धर्म तथा प्रेम की अनुभूति नहीं कर सकता अतः मुझे किसी भी संपदा की लालसा नहीं है क्योंकि मेरे लिए जो श्रेयस्कर था उसे मैं प्राप्त कर चुका हूँ और इससे श्रेष्ठ कुछ हो ही नहीं सकता ऐसा मेरा विश्वास है मैं तो सिर्फ और सिर्फ आपके पास रहना चाहता हूँ आपके साथ रहना चाहता हूँ| श्री राम की कूटनीति तथा राजनीति स्वार्थ रहित थी| रावण जैसे वैभवशाली सम्राट पर विजय पाकर भी राम ने अपना कोई स्वार्थ नहीं सिद्ध किया जो कुछ भी आभूषण रत्न अमूल्य वस्त्र आदि लंका की जीत के बाद विभीषण द्वारा उनको समर्पित किए गए वह सब उन्होंने अपने सैनिकों में वितरित कर दिया लंका का राज्य विभीषण को तथा किष्किंधा के राज्य को सुग्रीव को सौंपकर अपने दिशा की ओर बढ़ गए| अपनी कूटनीति के अंतर्गत, हानि को होने से टाला जा सकता है| श्री राम का सारा आकलन उस दिशा में ही होता था| विभीषण को शरण देने पर पर सुग्रीव जामवंत सबके अलग-अलग विचार थे श्री राम ने विभीषण को शरण देने या न देने पर सबके विचार मांगे थे| वहां पर उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना दृष्टिकोण था| श्री राम ने प्रत्येक व्यक्ति के दृष्टिकोण पर धैर्य पूर्वक भली-भांति विचार किया सुग्रीव तो क्रोधित होकर आक्रमण करने तथा विभीषण का वध करने पर उतारू थे क्योंकि उन्हें ऐसा लगता था कि विभीषण शत्रु पक्ष के सदस्य हैं अवश्य ही यहां भेद लेने आए हैं| सुग्रीव ने तर्क दिया की वनवासियों वंशानुगत सेवकों अथवा अनुचरों को स्वीकार किया जा सकता है परंतु शत्रु द्वारा भेजे गए किसी ऐसे व्यक्ति को स्वीकार नहीं किया जा सकता जो भेद लेने आया हो श्री राम सब विचार कर नीति पूर्वक कहते हैं नीति शास्त्र के अनुसार राजाओं की दुर्बलता दो प्रकार से बताई गई है;एक तो उसी कुल में उत्पन्न हुए सजातीय भाई तथा दूसरे पड़ोसी देशों के निवासी ;जो संकट में पड़ने पर अपने विरोधी राजा अथवा राजपुत्र पर भी प्रहार कर सकते हैं अतः हो सकता है इसी भय से विभीषण यहां आए हों?

---

३७ -सुंदरकांड, विभीषण की शरणागति,राधेश्याम रामायण, श्री राधेश्याम कथावाचक
श्री राधेश्याम पुस्तकालय, पृष्ठ संख्या २८२

जिनके मन में पाप नहीं ऐसे कुटुंबजनों को हितैषी मानते हैं परंतु यह सजातीय बंधुओं अच्छा होने पर भी प्रायः राजाओं के लिए शंका का विषय होता है| आप लोगों ने शत्रु पक्ष के सैनिकों को अपनाने में जो दोष बताया है कि वह अवसर देखकर प्रहार कर सकता है उसके विषय में मैं नीतिशास्त्र के अनुरूप उत्तर देना चाहता हूं कि हम लोग इसके कुटुंबी तो हैं नहीं, ये राज्य पाने का अभिलाषी हो सकता है समाज में बुरी संगत के बीच भी विद्वान लोग होते हैं, हो सकता है किसी बात से असंतुष्ट, आहत होकर यहां हमसे मिल जाने पर इसे प्रसन्नता तथा निश्चिंतता प्राप्त हो; सकता है यह किसी भय अथवा दुर्बलतावश यहां आया हो यदि शत्रु शरण में आए तथा दीनभाव से हाथ जोड़कर दया की याचना करें तो उस पर कभी भी प्रहार नहीं करना चाहिए| शत्रु दुखी हो अथवा अभिमानी यदि वह अपने विपक्ष की शरण में जाए तो शुद्ध होने वाले पृष्ठ पुरुष को अपने प्राणों का मोह छोड़कर उसकी रक्षा अवश्य करनी चाहिए| यदि वह भय, मोह अथवा किसी कामना से न्याय के अनुसार यथाशक्ति उसकी रक्षा नहीं करता तो उसके पाप कर्म की लोक में बड़ी निंदा होती है| यदि शरण में आया हुआ शरणार्थी संरक्षण न पाकर उस रक्षक के देखते देखते ही नष्ट हो जाए तो वह उस रक्षक रूपी मनुष्य के सारे पुण्य अपने साथ ले जाता है क्योंकि वह रक्षक उसकी रक्षा न कर सका इस प्रकार शरणागत की रक्षा न करना एक महान दोष बताया गया शरणागत का त्याग बल और यश की प्राप्ति को मिटा देता है और मनुष्य के बल का नाश करता है| रामचरितमानस के अनुसार रावण के द्वाराअपमानित होकर जब विभीषण सोने की नगरी लंका को छोड़कर श्री राम की शरण में जाते हैं तो श्रीराम उन्हें सहर्ष स्वीकार लेते हैं|

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि ||
ते नर पावर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि || ३७

श्री राम कहते हैं जो मनुष्य अपने अहित का अनुमान करके शरण में आए हुए व्यक्ति को त्याग देता है ऐसा व्यक्ति पापमय है और उसे देखने में भी हानि होती है | उपर्युक्त पंक्तियों में श्रीराम नीतिपूरक बात करते हैं तथा सुग्रीव आदि को समझाते हुए कहते हैं कि स्थिति चाहे जैसी भी हो अगर आप की शरण में आपका आश्रय मांगने के लिए कोई व्यक्ति आता है तो सदैव ही उसको शरण देनी चाहिए अपना लाभ हानि न सोचते हुए उसकी रक्षा करना उसके साथ सहयोग करना ही हमारा परम कर्तव्य है यदि हम अपने लाभ हानि को सोचते हुए किसी भी लोग हमें पड़कर उस व्यक्ति को अस्वीकार कर देते हैं तो हमारा आचरण निंदनीय है और ऐसे आचरण वाले व्यक्ति को देखना भी नहीं चाहिए बिना उसके आकांक्षा जाने हुए स्वयं ही निर्णय लेकर उसको बंदी बनाना या उसको किसी प्रकार से हानि पहुंचाना अपने लिए भी घातक हो सकता है क्योंकि शत्रु पक्ष का कोई भी व्यक्ति या तो गुप्तचर बनकर आया होता है अथवा वह आपके साथ किसी प्रकार की संधि करने आया होता है| अतः बिना सत्यता को जाँचे-परखे हुए, हमें किसी भी निर्णय पर नहीं पहुंचना चाहिए हो सकता है, उससे संधि या मित्रता करके हम शत्रु पक्ष की दुर्बलता को भली प्रकार जान जाए और हमारे लिए युद्ध करना युद्ध नीति बनाना सरल हो जाए| इसलिए कोई भी निर्णय लेने से पहले किसी भी प्रकार का विरोध करने से पहले प्रत्येक स्थिति में नीति का ध्यान अवश्य रखना चाहिए|

अनुज सहित मिलिढिग बैठारी | बोले बचन भगत भयहारी |
काहू लंकेस सहित परिवरा | कुसल कुठाहर बास तुम्हारा || ३८

३७,३८ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी ,गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ६९३,६९४

जब विभीषण श्री राम के पास गए थे;तो वे बहुत सकुचाते हुए हुए संशय के भावों से घिरे हुए गए थे क्योंकि उन्हें भली-भांति इस तथ्य का ज्ञान था कि वे उस कुटुंब से संबंध रखते हैं; जो रावण का है और यह जानते हुए कि वह रावण के भाई हैं पता नहीं उनके साथ किस तरह का व्यवहार किया जाएगा लेकिन उन्हें इस बात का पूर्ण विश्वास था श्री श्री राम का ह्रदय अत्यंत निर्मल कोमल तथा प्रेम भाव से भरा हुआ है अवश्य ही विभीषण की पीड़ा को समझेंगे और उन्हें आश्रय देंगे क्योंकि वे एक नीतिवान पुरुष हैं | श्री राम के पास पहुंचने पर जब उन्होंने छोटे भाई लक्ष्मण जी सहित गले मिलकर उन्हें अपने पास बिठाया और लंकेश कहकर संबोधित किया साथ ही परिवार की कुशल क्षेम पूछी और कहा कि आपके स्वभाव के विपरीत आप का निवास एक बुरी जगह स्थित है| यहां हम श्री राम को एक कुशल कूटनीतिज्ञ की भूमिका में देखते हैं शत्रु पक्ष के प्रमुख व्यक्ति को पूर्ववत ही नरेश कहकर संबोधित करना लंकेश कहकर संबोधित करना उसके विश्वास को बढ़ाते हुए उसे अपने पक्ष में कर लेना उसके विश्वास को जीत लेना तथा उसके समक्ष बिना लंबी चौड़ी बात किए कुछ सरल से शब्दों में सब कुछ अभिव्यक्त कर देना|

लंकेश शब्द सुनकर विभीषण संख्या में पड़ गए क्योंकि उन्हें रावण की शक्ति के बारे में सब कुछ ज्ञात था किस प्रकार रावण साम,दाम, दंड, भेद किसी भी प्रकार का यत्न करके श्री राम को हराने का प्रयत्न करेंगा एक प्रश्न था विभीषण के मन में कि क्या यह सब इतना सरल है? कितनी सरलता से श्रीराम ने मुझे लंकेश कहकर संबोधित किया और वे इस बात से पूरी तरह सहमत नहीं होते हैं | परंतु श्री राम ने सिर्फ उन्हें कहने के लिए ही लंकेश नहीं करा था अपने शब्दों का मान समझते थे रघु की नीति को भली प्रकार आत्मसात करते थे कि चाहे प्राण चले जाएं पर मुख से निकला हुआ वचन व्यर्थ नहीं जाना चाहिए अतः विभीषण से कहते हैं-

जदपि सखा तव इच्छा नाही | मोर दरसू अमोघ जग माहीं ||
अस कहि राम तिलक तेही सारा | सुमन बृष्टि नभ भई अपारा || ३९

हे सखा ! यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है तथापि तुम मेरे पास आए हो और यह आना निष्फल नहीं जा सकता ऐसा कहकर श्री राम विभीषण का राजतिलक करते हैं और उनके इस आचरण की सभी लोग प्रशंसा करते हैं और वातावरण प्रफुल्लित हो जाता है|

रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड|
जरत बिभिष राखेउ दीन्हेऊ राजु अखंड || ४०

राम जी ने रावण के क्रोध रूपी अग्नि में जो विभीषण की वचन रूपी पवन से प्रचंड हो रही थी उससे जलते हुए विभीषण को बचा लिया तथा उसे अखंड राज्य दिया |विभीषण द्वारा दिए गए परामर्श के कारण लंकापति रावण जिस सीमा तक क्रोधित हुआ तब विभीषण को भी लगा होगा कि कहीं रावण का यह क्रोध उनकी मृत्यु का कारण ही न बन जाए क्योंकि उस समय जो भी रावण की इच्छा के विपरीत तथा श्री राम के पक्ष में बोलता था अथवा किसी तरह की नैतिक सीख रावण को देने का प्रयास करता था कि उसने जो कुछ भी किया है वह किसी भी नीति किसी भी शास्त्र के अनुसार उचित नहीं और उसे अपने इस कार्य का भुगतान करना ही पड़ेगा एवं यह भुगतान उसके साथ साथ अन्य लोगों को भी करना पड़ेगा जो चाहे अनचाहे उसका समर्थन कर रहे हैं; तो उसका जीवित रहना तो अपने आप में ही एक प्रश्न होगा| रावण के क्रोध की अग्नि से बचने के लिए वे श्री राम की शरण में आए|

३९,४० -सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी, गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठसं ६९४,६९७

श्री राम कहते हैं हम जानते हैं कि विभीषण को हमारे राज्य की कोई इच्छा नहीं है| राक्षसों में भी विवेकी होते हैं| इसलिए विभीषण सभी प्रकार से ग्राह्य हैं इनके हमारे साथ सम्मिलित होने से हमें हर्ष की प्राप्ति होगी| ऐसी स्थिति में व्यक्ति स्वयं को असहाय समझने लगता है| अतः हमें विभीषण को प्रत्येक स्थिति में अपने साथ रखना चाहिए और युद्ध में विजय प्राप्त करने के उपरांत अपनी इसी सोच तथा अपने इसी निर्णय के साथ वे विभीषण को अपने दलबल में प्रमुख स्थान देते हैं और इस बात को सुनिश्चित करते हैं कि युद्ध के उपरांत लंका का राज विभीषण को दे देना चाहिए| वह राज्य जिसे रावण ने न जाने किस प्रकार प्राप्त किया, किस प्रकार उसका विस्तार किया कि संपूर्ण आर्यव्रत के दक्षिणी छोर पर रावण का ही एक छत्र साम्राज्य था उसकी सोने की लंका चारों ओर से चारदीवारी से घिरी हुई थी| राज्य तथा उस राज्य का राजा दोनों ही और सशक्त एवं सुदृढ़ थे| नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र तथा विभिन्न विद्याओं में निपुण अनेक प्रकार के पराक्रमी योद्धाओं से सुसज्जित सेना का स्वामित्व प्राप्त था| रावण को जो अपने राज्य की सुरक्षा को लेकर सदैव ही निश्चिंत रहता था, अत्यंत बलशाली होने के कारण उसके अंदर दर्प का वास हो गया था |यही दर्प उसके पतन का कारण बना यह बात तो विभीषण ने भी स्वप्न में नहीं सोची होगी कि रावण का समस्त साम्राज्य उसको इतनी सरलता से मिल जाएगा क्योंकि उनके हृदय में भी एक भाव था कि वह शत्रु पक्ष से आए हैं;तो उनके प्रति कहीं न कहीं शंका का भाव अवश्य होगा| यदि विभीषण लंका में रह रहे होते तब भी इस राज्य का उत्तराधिकारी बनना उनके लिए संभव न था क्योंकि रावण के अति महत्वकांक्षी पुत्र इंद्रजीत के द्वारा सत्ता हस्तांतरित कर ली जाती| अतः श्रीराम ने जब उनके सामने यह वचन दिया कि जैसे ही वे युद्ध में विजयी होते हैं ठीक उसी समय लंका की सत्ता उनके हाथों में होगी और यह निर्णय किसी तरह की राजनीति से प्रेरित नहीं था अपितु श्री राम लंका के राजा के भविष्य को एक कुशल राजा के हाथों में सौंपना चाहते थे वे चाहते थे कि लंका की प्रजा सुखी रहे श्री राम के इस निर्णय से विभीषण के मन में राम के प्रति भक्ति तथा विश्वास और भी प्रबल हो गया | इन पंक्तियों को पढ़ने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि श्री राम का आचरण तथा उनके जीवन मूल्य कितने सरल सहज एवं उच्च कोटि के थे| वे अपनी शरण में आए हुए शत्रु के भाई को भी लक्ष्मण की भांति अपनाने की बात करते हैं तथा वानर भालू आदि को यह आदेश देते हैं कि कोई भी विभीषण के साथ बुरा व्यवहार नहीं करेगा सच में उनका जीवन आदर्श एवं मानवता से ओतप्रोत है। राधेश्याम रामायण में अंकित यह पंक्तियां श्री राम के व्यवहार तथा प्रत्येक मानव के प्रति उनकी सोच को उजागर करती है| यह इतना सहज नहीं होता कि जिससे आप युद्ध करने जा रहे हों, उसके परिवार के किसी व्यक्ति को अपनी शरण में ले लें और उस पर पूर्ण विश्वास करे; जैसा कि आप अपने भाई बंधुओं पर करते हैं।

श्रीराम सदाचार तथा संयम की मूर्ति हैं| संयम कैसा होना चाहिए यह तो राम जी ने जगत को बताया है, आँख का संयम ,जीभ का संयम ,कान का संयम, सर्व इंद्रियों के संयम का राम जी ने पालन करके बताया है। मनुष्य को संपत्ति थोड़ा सुख देती है, परंतु इंद्रियों का संयम बहुत सुख देता है| ध्यान रखें कि आप मालिक हैं और इंद्रियाँ नौकर हैं। आप नौकरों के अधीन हों या नौकर आप के अधीन हैं ?आप जहाँ जाते है; वहाँ नौकर जाता है? अथवा नौकर जहाँ जाता है ;वहाँ आप जाते हैं? मनुष्य बोलता है मेरी आँख, मेरी जीभ, मेरा मन इसका

अर्थ यह होता है कि मैं मालिक हूँ ।आँख ,जीभ यह मेरे सेवक है इंद्रियाँ मेरी नौकर है ।आप इंद्रियों के अधी अधीन रहेंगे तो इंद्रियां आपकी शत्रु सिद्ध होंगी, परंतु इंद्रिया आप के अधीन रहेंगी तो वे मित्र बनी रहेंगी।

राम जी की सरलता भी अद्वितीय है। रामजी अतिशय सरल हैं श्रीराम तो रावण के साथ भी सरल हैं। रामायण में वर्णन आता है । श्री राम रावण का भीषण युद्ध चल रहा है उसमें युद्ध करते-करते रावण घायल हो जाता है रावण का बाण टूट गया है। माथे का मुकुट गिर गया है।

धनुष के टुकड़े-टुकड़े हो गए हैं और रथ के घोड़े मर गए हैं, रथ छिन्न-भिन्न हो गया है रावण बहुत घबराया हुआ है उसको इस समय बहुत थकान हुई है राम जी उसको देख नहीं पाते हैं, राम जी ने रावण से कहा तुम मेरे प्रधान वीरों को मारकर भयंकर युद्ध कर रहे हो तुम बहुत थक गए मालूम होते हो, इसलिए तुम्हें आज मरता नहीं तुम घर जाकर आराम करो भोजन करो और अपनी थकान उतारो और धनुष को फिर से सजाओ फिर आने वाले कल में मैं तुमसे युद्ध करुंगा शत्रु के साथ इतनी सरलता किसी ने दिखाई हो ऐसा उदाहरण कहीं नहीं मिलता शत्रु घायल हो उसी समय तो शत्रु को मारना होता है ऐसा अवसर चुका नहीं जाता राजनीति ऐसा ही कहती है परंतु रावण जिस समय घायल है उस समय रामजी उसे नहीं मारते श्रीराम तो उसके सम्मुख युद्ध बंद करने को कहते हैं आराम करने को कहते हैं| रावण को आश्चर्य हुआ उसको लगा कि लोग राम जी की जितनी प्रशंसा करते हैं| वह बहुत कम है रावण का माथा झुका तो नहीं परंतु उसका हृदय नमित हो गया।

वनवास के समय जब भरत जी श्री राम से मिलने आए तो रामजी ने उनसे कुशल-क्षेम पूछने के साथ ही साथ राज्य की और धर्म की बहुत सारी बातें बताई तथा प्रश्न पूछे जिससे उनको यह पता चल सके कि भरत राज धर्म का पालन कर रहे हैं या नहीं ? उन्होंने भरत को यह समझाया कि एक राजा के रूप में यह अत्यंत आवश्यक है कि हम प्रजा के साथ-साथ राज्य की सेवा में नियुक्त कर्मचारियों का भी ध्यान रखें क्योंकि एक कुशल राजा का यह धर्म होता है कि उसके राज्य में सभी उससे संतुष्ट रहें किसी के भी असंतुष्ट होने पर नेतृत्व संदेह में आ जाता है जब भरत उसे बार-बार अयोध्या वापस चलने के लिए कहते हैं तो श्री राम कहते हैं कि अपने कुल की मर्यादा का मान रखना है यह हमारा परम कर्तव्य है। पिता की आज्ञा का पालन न करना महापाप है।तुम अभी बालक हो ,भरत इस कारण ऐसा सोच रहे हो एक पिता का यह अधिकार होता है कि वह अपने पुत्र को चाहे जैसे भी आज्ञा दे वही पुत्र का दायित्व होता है कि वह अपने पिता की आज्ञा का पालन करें। महाराज दशरथ को यह पूर्णरूपेण अधिकार है कि वह मुझे वल्कल और काले मृग का चर्म पहनाकर वन में भिजवा दें या राजगद्दी पर बिठला दे। हे धर्मवीर ! श्रेष्ठ एवं धर्मज्ञ भाई भरत जनता के लिए माननीय पिता के समान ही माता को भी गौरव प्रदान करना उचित है। जब दोनों ही धर्मशील माता-पिता ने मुझे वन में जाओ यह कहकर आज्ञा दी है, तो हे रघुवंश-भूषण भरत! मैं भला किस प्रकार विपरीत आचरण करूँ ? अयोध्या में जनता अनुमोदित राज्य शासनभार तुम्हें ही वहन करना होगा और मुझे वल्कल पहनकर दंडक वन में ही रहना होगा । ऐसा समझ जनता के समक्ष यह कहकर तथा वैसे ही व्यवहार रखने की आज्ञा देकर राजा दशरथ स्वर्ग सिधारे वही जनता के गुरु नरेश तुम्हारे लिए प्रमाण हैं इसलिए पिताजी के आदेशानुसार प्राप्त राज्य का उपभोग तुम्हें करना चाहिए और जो सब माताओं के लिए मान्य बने| मेरे पिताजी ने मुझसे जो कहा है, उसी में मेरा सर्वोपरि कल्याण है न कि अतुल स्वर्गलोक के राज्य में, ऐसी मेरी सम्मति है।
जब धर्मज्ञ श्री रामचंद्र जी अपने भाई भरत को यह सब बातें समझा रहे थे ठीक उसी समय जाबालि नाम के ब्राह्मण ने उन्हें यह वचन कहना आरंभ किया कि, हे रघुनंदन !आपकी बुद्धि श्रेष्ठ है। आप तपस्वी हैं| आपको गवार मनुष्य के समान ऐसा निरर्थक विचार अपने मन में नहीं लाना चाहिए। प्राणी अकेले ही तो उत्पन्न होता है फिर अकेले चला भी जाता है। तब किसने, किसी को कौन सी वस्तु दी? इससे क्या फर्क पड़ता है? यह सब निरर्थक व्यवहार है| हे राम! यह मेरी माता यह मेरा पिता ऐसा मानकर जो संसार में फंसता है| वह विक्षिप्त है। जैसे कोई यात्री कहीं के लिए चले और बीच में कहीं और किसी स्थान पर टिक जाए और प्रातः काल उस स्थान को छोड़कर आगे कुछ चला जाए| ऐसे ही मनुष्य के पिता ,माता गृह,धन आदि एक संग निवास के स्थान मात्र ही तो हैं।

हे नरोत्तम! आप पिता का राज्य त्याग दुखत वनवास के योग्य नहीं हैं; जाकर अयोध्या में अपना अभिषेक करवाइए क्योंकि समस्त अयोध्या आपकी प्रतीक्षा में है। बहुमूल्य भोगों को भोंगते हुए अब अयोध्या में राज करें न तो दशरथ आपके कोई है और न आप ही दशरथ के कोई हैं| राजा तो कोई और ही है इसलिए मैं आप से कहता हूं कि आप मेरी बात माने और अयोध्या में जाकर अपना राज्य संभाले|

प्राणी के उत्पन्न होने के विषय में पिता तो बस बीज मात्र है राजा को जहाँ भी जाना था वहाँ चले गए। इसलिए व्यर्थ ही दुख क्यों करते हैं ?मुझे तो उनका भी बड़ा दु:ख होता है, जो अन्न संग्रह, धर्म संग्रह में परिश्रम कर रहे हैं। श्राद्ध जो लोग करना आवश्यक समझते हैं, वह तो मानो अन्न को नष्ट ही करते हैं क्योंकि मर जाने पर भोजन कौन करता है ? यदि अन्य का किया हुआ भोजन अन्य को प्राप्त होता तो विदेश जाने वालों को श्राद्ध द्वारा अन्न जाना चाहिए| उन्हें अन्न पकाने की भी आवश्यकता नहीं होनी चाहिए ।जो ऐसे वचन लिखे हैं कि यज्ञ करो ,दान दो घर में भरकर संकल्प करो, देव पूजन करो, तपकरो ये तो बुद्धिमान जनों ने धन प्राप्ति के लिए बना लिए हैं। इसलिए हे रामचंद्र! आप इस बुद्धि का त्याग कर प्रत्यक्ष सुखद राज्य ग्रहण करें। सब लोग अर्थात सब लोगों को दिखाने वाले पंडितों की बुद्धि को आगे कर भरत की विनती मानकर राज्य स्वीकार करें।

जाबालि के ऐसे वचन सुनकर राम वेदों के अनुकूल वाक्य बोले कि आपने जो प्रेम में ऐसा कहा है । ये सब और अकर्तव्य होने पर भी कर्तव्य तथा अपथ्य होने पर भी पथ्य प्रतीत होते हैं।मर्यादा रहित पुरुष सज्जनों से समाधान नहीं प्राप्त कर सकता। कुलीन और अकुलीन ,वीर, कायर ,पवित्र तथा अपवित्र पुरुष अपने आचरण से ही जाने जाते हैं ।वेदानुकूल न चलने पर अनार्य -अच्छे मनुष्य और अशौच पवित्र लक्षणहीन, लक्षणवाले तथा दु:शील -शीलवान कहलाएंगे। यदि शुभ क्रिया को त्याग वेद वर्जित क्रिया को मैं करूं। जब दूषित दुराचार करूँगा तो कौन पुरुष मुझको श्रेष्ठ मानेगा? यदि मैं इस प्रतिज्ञाहीन वृत्ति में वर्तमान हुआ तो, फिर किससे अपना समाचार कहूँगा? तथा स्वर्ग को कैसे जाऊँगा? जो मैं स्वेच्छा से यह कार्य करूँ तो मेरी देखा देखी यह संसार अपना मनमाना करने लगे। सत्य क्रूर नहीं कहलाता तथा सत्य ही सनातन राज्य है और सत्य ही परलोक स्थित है। देवर्षिगण भी इसी सत्य को स्वीकार करते आए हैं। सत्यवादी पुरुष ही अक्षयलोक पाता है। मिथ्याभाषी मनुष्य से लोग सर्प के समान भय करते हैं ।संसार का मूल सत्य पर ही आधारित है लोक में सत्य ही ईश्वर तथा सत्य में ही सदा धर्म का वास है, सत्य ही सबका मूल है सत्य से बढ़कर और कुछ भी नहीं है। दान ,इष्ट, होम तप तथा वेद सब सत्य में ही स्थित है ।एक ही लोक की और एक ही कुल की रक्षा करता एक ही नरक में डूबता है और अकेला ही स्वर्ग पूजित होता है।फिर भी मैं सत्यप्रतिज्ञ पिता की आज्ञाका पालन क्यों न करूँ ? मैं लोभ, मोह तथा क्रोध से सत्य का सेतु न तोड़ूंगा।

मिथ्याभाषी का दिया हुआ दान देवता तथा पृतगण नहीं लेते। सत्य रूप इस धर्म को मैं इस प्रकार निश्चित रूप से जानता हूँ। सत्यभाषी की भूमि ,कीर्ति ,यश लक्ष्मी आदि सभी प्रार्थना करते हैं। लोक में कायिक ,मानसिक तथा वाचिक यही तीन प्रकार के पाप होते हैं और आप जो यह कह रहे हैं कि राज्य करो, इसका करना ही श्रेष्ठ है -यह तो अनार्यों का सा वाक्य है। मैं पिता के आगे जो प्रतिज्ञा कर चुका हूँ। उसका तिरस्कार कर भरत की बात कैसे मान लूं। जब मैंने पिताजी के आगे प्रतिज्ञा की थी तब कैकेयी मां भी बहुत प्रसन्न हुई थी। वनवास कर पवित्र चित्त रहकर पुष्प फल खाकर देवता पितरों को तर्पण करता हुआ निष्कपट भाव से गोचर में श्रद्धा रखता हुआ पिता की आज्ञा का पालन करता रहूँगा। इस कर्मभूमि को प्राप्त होकर इसमें शुभ ही कर्म करने चाहिए । देखो अश्वमेध यज्ञ करने से इंद्र स्वर्ग के राजा बन सके तथा कठोर तप से ऋषिगण स्वर्ग को प्राप्त हुए| नास्तिक भाव से परिपूर्ण भाषण करने वाला जाबाली इस बात को सुनकर अचंभित हुआ।

श्री राम ने कहा कि साधु सज्जन एवं संतों का कथन है कि सत्य ,धर्म ,पराक्रम ,दया ,प्रियवादिता द्वारा अतिथियों की पूजा से ही स्वर्ग पद का सृजन होता है। इस संतजन प्रतिपादन के अनुसार मुख्य धर्म के स्वरूप को यथावत जानकर निश्चित पूर्वक ध्यानपूर्वक धर्म का भली प्रकार से आचरण करने वाला विप्र उत्कृष्ट लोकों को पहुंचने की इच्छा रखता है। श्रीराम सदैव अनीति पूर्वक व्यवहार करते थे| उन्होंने कभी भी अनैतिक आचरण कर किसी को भी अवसर नहीं दिया कि कोई भी उनके आचरण तथा विचार पर दोषारोपण करें अनेक सुझावों तथा प्रलोभनों की उपस्थिति में भी कभी अपने आदर्शों से विचलित नहीं हुए कष्ट सहन करना उन्हें मंजूर था लेकिन पथ भ्रष्ट होना नहीं वनवास स्वीकार करने से पहले विश्वामित्र के साथ ऋषियों की रक्षा हेतु वनागमन स्वीकारा सीता वियोग, पिता की मृत्यु, सेना का गठन वन में रहते हुए सभी के लिए मंगल-कामना, राज्य अभिषेक के उपरांत सीता को वनवास देना तथा स्वयं भी वनवासी की तरह रहना एक पत्नी धर्म का पालन करना आदि न जाने कितने ही गुण हैं जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि वे एक आदर्श पुरुष थे।

जब लक्ष्मण जी को युद्ध के समय मेघनाथ के द्वारा शक्ति बाण लग गया और वे मूर्छित हो गए| तब हनुमान जी लंका जा कर वैद्य सुषेण को ले आए| श्री राम ने सुषेण जी से कहा, कि आप मेरे भाई को किसी भी प्रकार से बचा लीजिए| मैं आपका बड़ा आभारी रहूंगा तब वैद्य जी ने कहा कि मैं तो आपके शत्रु का वैद्य हूँ| मैं आपके भाई वह कैसे जीवित कर सकता हूँ ? मेरा कर्तव्य मुझे यह आज्ञा नहीं देता, तब श्री राम ने कहा मैं आपको कर्तव्यच्युत होने को नहीं कहूँगा, चाहे मुझे अपने भाई को ही क्यों न खोना पड़े। श्री राम को अपनी मर्यादा का इतनी दृढ़ता से पालन करते देख वैद्य सुषेण बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने संजीवनी बूटी मंगवा कर लक्ष्मण को ठीक किया श्री राम अपनी मर्यादा पालन करने में कितने दृढ़ थे। इस बात का बोध होता है मर्यादा की रक्षा के लिए श्री राम ने लक्ष्मण जैसे भाई के त्याग को भी निश्चित कर लिया इससे बड़ी मर्यादा का पालक और कौन हो सकता है? श्री राम के गरिमामय व्यवहार के बारे में एक और उदाहरण है| जब किसी ने रावण से कहा कि तुम लोग तो रूप बदलना जानते ही हो यदि सीता तुम्हारी बातों से नहीं मानती हैं ;तो तुम राम का रूप धरके सीता के पास जाओ वह तुम्हें राम समझ कर अपना लेंगी | इस समय जो रावण ने कहा उस कथानक को सुनकर हम इस बात का आभास लगा सकते हैं कि श्री राम का चरित्र और उनके आदर्श कैसे थे और कैसे उनके चरित्र के आगे सभी चरित्र गौण हो जाते हैं| रावण ने कहा अरे मैंने राम के रूप को भी

धारण करके देख लिया परंतु क्या करूं जब भी मैं राम का रूप धारण करता हूं, तो मुझे हर स्त्री में माता बहन और बेटी दिखाई देने लगती है। राम आप एक अद्वितीय, अनुपम और अनोखे पुरुष थे और सच में ही मर्यादा पुरुषोत्तम थे।

२.४- साधारण जनमानस के राम:

श्री राम एक प्रमुख विशेषता के स्वामी थे और वो थी जनमानस की चेतना में उनका वास लेकिन यह आसान नहीं है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को संतुष्ट करना नितांत ही कठिन कार्य है बाल्यकाल से लेकर जीवन के अंतिम पड़ाव तक वे लोकप्रिय राजा रहे उनकी प्रजा का उन पर विश्वास को मिले निषाद वनवासी और वानर समाज सबका विश्वास जीतना तथा उनको यह विश्वास दिलाना कि उनकी समाज में प्रमुखता है श्री राम की जीवन में उनका प्रमुख स्थान है प्रत्येक की सोच को समझते हुए उससे व्यवहार करना यह सिर्फ श्रीराम ही कर सकते हैं लड़कपन में ऋषि विश्वामित्र के साथ वन जाना तथा वहां वनवासियों का रक्षण करते हुए उनका प्रेम प्राप्त करना विवाह आयोजन के समय भी मिथला वासियों को अपने व्यवहार से मोहित कर लेना वनवास के समय सभी के साथ प्रगाढ़ता के संबंध का निर्वाह करना|

अयोध्यावासियों का विरह दृश्य चित्रकूट तथा वन्य क्षेत्र जहाँ -जहाँ उनका वास हुआ वहाँ के लोगों से आत्मीयता, वानरों का सानिध्य यह सब प्रदर्शित करता है कि वे जन-जन के राम थे शत्रु रावण की नगरी लंका में भी श्री राम की उदारता की चर्चा होती थी| कुंभकरण, विभीषण, मंदोदरी आदि अनेक लंकावासी श्री राम के गुणों के प्रशंसक थे| तभी वे रावण को समझाते रहते थे कि राम उदार हैं तुम्हारे इस कृत्य को भी क्षमा कर देंगे अन्यथा क्या शत्रु पक्ष का कोई भी व्यक्ति किसी से इतना प्रभावित हो सकता है| जिसकी लोकप्रियता शत्रु पक्ष में भी हो वह स्वजनों के बीच कितना लोकप्रिय होगा इसका तो हम अनुमान ही लगा सकते हैं| कुछ तथ्य तथा घटनाक्रम इस और साफ संकेत करते हैं जिनका वर्णन नितांत आवश्यक है| पुस्तक रक्षक राम के अनुसार वन गमन के समय बड़ी सादगी से निकले राजा दशरथ अभी तक मूर्छित ही थे माता कौशल्या और माता सुमित्रा तथा और महिला का रो-रोकर बुरा हाल था| लक्ष्मण बड़ी मुश्किल से उर्मिला को मनाने में सफल हुए कि वह उनके साथ वन न जाएं लक्ष्मण है और मिला को दोनों दुख से पीड़ित माताओं की सेवा का वास्ता दिया और ऐसे कई कार्यों का बहाना बनाकर एक इसी तरह ही उर्मिला को मना दे राम सीता लक्ष्मण को इस तरह जाते देख महर्षि वशिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र बेहद व्याकुल थे राम ने राज महल से ही पैदल यात्रा प्रारंभ कर दी थी हालांकि दोनों माता और सेनापति मृगाधीष ने उन्हें किसी अच्छे वन तक रथ में जाने हेतु कहा किंतु राम अपने आदर्श पर कोई कलंक तो लगाना चाहते थे| वे अपना कर्तव्य पूरी कर्तव्यनिष्ठता के साथ पूर्ण करना चाहते थे| जैसे ही राज महल से बाहर निकले उन्होंने एक भारी जनसमूह देखा जो अपने साथ बड़ी-बड़ी गठरी लिए बाहर खड़ा था | राम ने एक व्यक्ति को बुलाकर इस जनसमूह का कारण जानना चाहा तब उसने बताया कि यह सभी कौशलवासी हैं और आपकी सेवा करने हेतु आपके आप जाना चाहते हैं | सब इस बात से बेहद दुखी हैं कि इस तरह आप सुख में राजमहल को छोड़कर बाहर वन में रहेंगे इस जन समूह में धोबी, रसोईया, नाई, खटीक, शिकारी सभी शामिल हैं और वे सब आपके साथ जाना चाहते हैं| इनका कहना है कि जिस प्रकार आप अपने पिता के वचनों का सम्मान करने के लिए वन को जा रहे हैं उसी प्रकार हमारा भी यह कर्तव्य है कि हम भी जिससे प्रेम करते हैं जिससे मन से अपना राजा स्वीकार चुके हैं| उसके लिए कुछ करें यह सुनकर सीता जी की आंखों में आंसू आ गए| राम ने उन्हें अपने साथ न चलने के लिए कहा किंतु वे सब माने ही नहीं उन सब का अपने प्रति प्रेम और हट देखकर उन्होंने अपने साथ चलने की अनुमति दे दी सभी देर रात तक चलते रहे और फिर एक छोटी नदी के तट पर रात्रि विश्राम हेतु रुके क्योंकि सभी बेहद थक चुके थे | उनमें कुछ के पैरों में छाले भी पड़ गए थे उस जनसमूह में कुछ बेहद वृद्ध भी शामिल थे | इतनी दूर पैदल चलने के कारण वे बीमार पड़ गए थे लेकिन फिर भी वे सभी बेहद खुश थे आंखें वे अपने रक्षक अपने चहेते राजा के साथ रात्रि बिता रहे थे दूसरे दिन सुबह जब लोगों की आंखें खुली तो राम वहां नहीं थी न सीता जी और न ही लक्ष्मण लोगों ने उन्हें बहुत ढूंढा कहीं ना मिले तब लोगों की समझ में आया कि उनकी रक्षक उन्हें मुसीबत में डालने हेतु उन्हें सोता छोड़ भोर में ही आगे निकल गए सभी विलाप करने लगे और राम सीता लक्ष्मण की रक्षा हेतु ईश्वर से प्रार्थना कर वापस लौट गए।

इसी पुस्तक का एक और कथानक है, जिस समय श्री राम वन में वास कर रहे थे उस समय उनसे मिलने एक विशेष चित्रकूट स्थित उनकी कुटिया में आए उनका नाम अत्री था रे सतना प्रदेश के निवासी थे जहां उनका आश्रम था उनके साथ कुछ अन्य तपस्वी भी वहां रहते थे| वे राम से सहायता मांगने आए| उन्होंने बताया कि पिछले कुछ समय से राक्षसों का प्रभाव सतना प्रदेश में बढ़ता ही जा रहा है |वे दंडकारण्य वन से भारतवर्ष के उत्तरी हिस्से की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं उन्होंने राम के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था अतः उन्होंने राम से अनुरोध किया कि वे राक्षसों के आतंक से उन्हें बचाएं यह सुन राम उनके साथ उनके आश्रम गए और वहां आसपास मौजूद सभी राक्षसों को मार गिराया उनमें कोई भी राक्षस राम के सामने पल भर भी टिक न पाया|

श्री राम ने देखा कि किस तरह राक्षसों ने वहां उत्पात और आतंक मचाया था |राम ने वहां मौजूद सभी तत्वों के अंदर राक्षसों का भय देखा यह देख राम अत्यंत चिंतित हुए| तब ऋषि अत्री ने बताया कि यहां से थोड़ी दूर भारत के दक्षिणी पश्चिमी हिस्से में वह खतरनाक दंडकारण्य वन शुरू होता है| जहां से ये खतरनाक राक्षस आते जाते हैं और आए दिन सैकड़ों ऋषि मुनि तपस्वी बेजुबान जानवरों को राक्षसों के अत्याचार से पीड़ित होना पड़ता है और बताते हैं कि दंडकारण्य जहां खतरनाक सर्प और गांव पक्षी पाए जाते हैं वहां अब राक्षसों का प्रभुत्व बढ़ता ही जा रहा है| वे बेहद क्रूर और अत्याचारी हैं और उनको रोकने वाला कोई भी नहीं है आगे कहते हैं राम आप बेहद योग्य हैं और रक्षक भी हैं इसलिए आपको आगे बढ़ राक्षसों को समाप्त कर ऋषि-मुनियों और अन्य जीवो की प्राणों की रक्षा करनी चाहिए| राक्षसों की क्रूरता देख दुखी थे अतः वापस चित्रकूट गए और लक्ष्मण और सीता को ले निकल पड़े दंडकारण्य वन की ओर जहां वे निवास करते थे और साथ ही राक्षसों से अन्य प्राणियों की रक्षा भी करते थे इस कथानक को पढ़कर हम यह कह सकते हैं यह हम इस चीज को लेकर आश्वस्त हो सकते हैं ,कि श्रीराम अपने जीवन से ज्यादा दूसरों के जीवन को जीते थे और देखते थे साथ ही उनका यह प्रयास रहता था कि चाहे समाज का कोई भी व्यक्ति हो या वन में रहने वाला कोई भी वासी हो हर एक का श्री राम के ऊपर पूर्ण अधिकार है और वे अपने अधिकारों का प्रयोग करने से राम के पास आसानी से आ सकता है| श्री राम के मन में सभी के कि श्रीराम अपने जीवन से ज्यादा दूसरों के जीवन को जीते थे और देखते थे साथ ही उनका यह प्रयास रहता था कि चाहे समाज का कोई भी व्यक्ति हो या वन में रहने वाला कोई भी वासी हो हर एक का श्री राम के ऊपर पूर्ण अधिकार है और वे अपने अधिकारों का प्रयोग करने से राम के पास आसानी से आ सकता है| श्री राम के मन में सभी के लिए, निश्चल प्रेम की अविरल धारा बहती थी कभी भी किसी को हताश या निराश नहीं करते थे| उनके पास से कोई भी व्यक्ति निरुत्तर या खाली हाथ नहीं जाता था जो जिस भावना से उनके पास आता था| श्रीराम उसकी भावना का पूर्ण सम्मान करते हुए उसकी समस्याओं का हल अवश्य करते थे। नरेंद्र कोहली द्वारा लिखित अभ्युदय भाग एक के अनुसार गुरु विश्वामित्र के साथ आश्रम से विदा लेते समय आश्रम का वातावरण भी शोकाकुल हो गया था बीच में गुरु विश्वामित्र थे और उनके दाएं बाएं राम-लक्ष्मण थे और पीछे पीछे गुरु के साथ जाने वाले तपस्वी आश्रम के मुख्य गण तथा कुछ ग्रामों के मुखिया थे मार्ग के दोनों ओर जमालो ग अवरुद्ध कंधों से गुरु तथा राम लक्ष्मण की जय जयकार कर रहे थे उनकी आंखों से अश्रु तथा हथेलियों से पुष्प जा रहे थे पुष्प वर्षा करते हुए हाथ रोक कर अपने अश्रु पूछ लेते थे और पुनः पुष्प वर्षा करने लगते थे बीच-बीच में कोई व्यक्ति आकर कभी गुरु की और कभी राम के चरणों से चिपक जाता उन लोगों की गति थम जाती उस व्यक्ति को उठाकर स्नेह पूर्वक समझाया जाता था और वे लोग फिर आगे बढ़ने लगते सिद्धाश्रम के मुख्य द्वार पर पहुंचकर गुरु तथा राम लक्ष्मण ने सब से विदा ली और वन में प्रवेश करने के लिए मुड़े तभी कोई असाधारण, तेजी से आकर राम के सम्मुख झुका और उसने अपना माथा राम के चरणों पर रख दिया सब रुक गए विदाई के समय अनेक लोगों ने प्रणाम किया था किंतु यह प्रणाम और साधारण था उसको देवी राम ने अत्यंत कोमल वाणी में स्नेह पूर्वक आदेश दिया युवती के ऊपर उठते ही राम ने पहचाना यह वनजा थी उसका सारा मुहँ आँसुओं से भीगा हुआ था और वह सिसकिया लेकर रो रही थी अनेक अन्य युवतियां भी भीड़ से निकल कर उनके पीछे कुछ दूरी पर आकर खड़ी हो गई थी उनमें से अनेकों को राम पहचानते थे कुछ को नहीं भी पहचानते थे कदाचित यह सब अपहृत युवतियां थी|

जिन्हें कल संध्या के समय राक्षस शिविर से मुक्त कराया गया था| राम का मन करुणा विह्वल हो गया | गुरु विश्वामित्र की उपस्थिति में भी वनजा ने अपना माथा उनके चरणों में रखा था क्यों व्याकुल क्यों हो राम का स्वर था| उसने अपने अश्रु झटक कर आंखें स्वच्छ की मुख्य ऊपर उठाकर राम को देखा और रोते हुए

अवरुद्ध तथा अनियंत्रित स्वर में बोली आर्य! मेरे पति को मार कर राक्षस खा चुके हैं मैं अपहृत की गई अबला हूँ, जो समाज के दृष्टि में पतित हो चुकी है । इस समय मैं किस राक्षस का गर्भ वहन कर रही हूं ऐसी अवस्था में आप मुझे किस के भरोसे छोड़कर जा रहे हैं? प्रभु, यदि इस प्रकार निर्मम संसार में प्रार्थना सहने और अपमानित होने के लिए निराश्रित ही छोड़ना था तो हमें आपने मुक्त ही क्यों करवाया? राम की दृष्टि वनजा से हट कर अन्य युवतियों के चेहरे पर भी घूम गई देवियों व्यथा त्यागो अपने भविष्य के निर्माण में अतीत को भूलने का प्रयत्न करो| तुम लोग यद्यपि अपने घरों को वापस नहीं लौट सकती तो भी स्वयं को निराश्रित मत समझो यह आश्रम और जनपद तुम्हारा घर है मैं तुम्हें निराश्रित नहीं छोड़ रहा मैं तुम्हें राम के संरक्षण में छोड़ रहा हूँ| वह तुम में से एक है गगन; वही तुम्हारा अभिभावक है उसके संपर्क से यहां अनेक रामों का निर्माण होगा अपना आत्मविश्वास मत छोड़ो और मुझे दूर मत समझो तुम्हें जब भी मेरी आवश्यकता होगी| मैं आऊंगा बार- बार आऊंगा राम शपथ पूर्वक वचन देता है कि वह तुम्हारे बुलाने पर अवश्य आएगा पर तुम्हें मेरी आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी क्योंकि स्वयं तुम में राम बनने का सामर्थ्य है; स्वयं को हीन तुच्छ और निराश्रित मत जानो| वनजा उठ खड़ी हुई उसकी आंखों में अद्भुत विश्वास है किंतु यह अश्रु व्यथा के न होकर कृतज्ञता के थे| उसने मुस्कुराने का प्रयत्न किया और उस प्रयत्न में पुनः रो पड़ी तब गगन ने आकर अपना माथा धरती पर झुकाया और कहा; राम आपका प्रभाव मैं जान गया| आप जहाँ-जहाँ जाएंगे अनेकों राम का निर्माण करेंगे आपके चरण जिस धरती पर पड़ेंगे| वहीं अत्याचार के विरुद्ध लोग उठ खड़े होंगे रघुवर आपको वचन देता हूं कि इन युवतियों को मैं अपनी भगिनी के समान के साथ रखूंगा आपका दिया दायित्व सफलतापूर्वक पूर्ण कर आप के विश्वास की रक्षा करूँगा।

रामचरितमानस के अनुसार राम के वन जाने का समाचार सुनकर जब लोग राज महल की ओर दौड़े तो वे समस्त जन विरह की अग्नि में जल रही थी लोगों की मति काम नहीं कर रही थी। राजमहल से निकलकर श्री रामचंद्र जी वशिष्ठजी के द्वार पर जा खड़े हुए और देखा कि सब लोग विरह की अग्नि में जल रहे हैं उन्होंने प्रवचन कहकर सबको समझाया| श्री रामचंद्र जी ने ब्राह्मणों की मंडली को बुलाया गुरु जी से कहकर उन सब को वर्ष भर का भोजन और दान देकर आदर मान सम्मान विनय से उन्हें भी वश में कर लिया फिर याचकों को दान और मान देकर संतुष्ट किया तथा मित्रों को पवित्र प्रेम से प्रसन्न किया। ऐसे घड़ी में भी उनको महल के दास दासी यों का बराबर ध्यान था और उनके लिए, भी वह पूरा मान सम्मान चाहते थे तथा उनकी देखभाल उचित प्रकार से होती रहे इसका उन्हें भली-भांति ध्यान था इसलिए उन्होंने गुरु जी को कहा कि -

दासी दास बोलाई बहोरी । गुरु सौंपी बोले कर जोरी |
सबका कै सार संभार गोसाई ।करबी जनक जननी की नाईं ।। ४१

दास-दासियों को बुलाकर उन्हें गुरुजी को सौंपकर, हाथ जोड़कर बोले, हे गुसाईं !इन सबकी माता पिता के समान देखरेख करते रहियेगा। वन गमन के समय भी श्री राम को स्वयं के नहीं अपितु नगर में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की चिंता थी अपने कष्टों को तो वे कभी देखते ही नहीं थे सदैव ही दूसरों को सुखी करने का साधन ढूंढते रहते थे और यह कार्य कोई आसान कार्य नहीं है क्योंकि जब आप संयम भी दुखी हो तो दूसरे के सुख की परिकल्पना भी नहीं कर सकते। श्री राम नगर के प्रत्येक नगरवासी को भली प्रकार समझाते हैं कि वेअपना तथा अयोध्या नगरी का ख्याल रखें और दुखी न हो।

---

४१ -अयोध्या कांड रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ सं ३७०

श्री राम के अयोध्या से चलते ही बड़ा भारी विषाद हो गया ,नगर का हा-हाकार सुना नहीं जाता; अयोध्या में अत्यंत शोक छा गया सबके मन में यही विचार चल रहा था कि श्री राम लक्ष्मण और सीता जी के बिना अयोध्या में कोई सुख नहीं है जहां श्रीराम रहेंगे वही सारा समाज रहेगा| श्री राम के बिना अयोध्या में हम लोगों का कोई भी काम नहीं है ऐसा झुंड विचार करके देवताओं को भी दुर्लभ सुखों से पूर्ण घरों को छोड़कर सबसे राम के साथ चल पड़े जिनको श्रीराम के चरण कमल प्यारे हैं उन्हें क्या कभी विषय भोग अपने वश में कर सकते हैं| बच्चों और बूढ़ों को घरों में छोड़कर सब लोग श्री राम के साथ हो ले पहले दिन रघुनाथ जी ने तमसा नदी के तीर पर निवास किया तो जब प्रेम बस देखकर रघुनाथ के दयालु हृदय में बड़ा ही दुख हुआ प्रभु करुणामय है पराई पीड़ा को भी तुरंत जान जाते हैं युक्त कोमल और सुंदर वचन कह कर श्रीराम ने बहुत प्रकार से लोगों को समझाया और बहुत सारे धर्म संबंधी उपदेश दिए परंतु प्रेमवश भी लोग लौट आए नहीं लौटते शील और स्नेह छोड़ा नहीं जाता रघुनाथ जी असमंजस के अधीन हो गए और परिश्रम के मारे लोग सो गए और कुछ देवताओं की माया से उनकी बुद्धि भी मोहित हो गई जब दोपहर के बाद रात बीत गई तब श्री रामचंद्र ने प्रेम पूर्वक सुमंत से कहा, हे तात! रथ को इस प्रकार चलाएं कि किसी को आवाज भी न आए और रथ के पहियों से ऐसे कोई चिन्ह बिना बने जिससे दिशा का पता चल सके सवेरा होते ही सब लोग जब जागे तो बड़ा ही शोर मचा रघुनाथ जी चले गए कहीं रथ की खोज खबर नहीं पाते हा राम हा राम पुकारते हुए चारों ओर दौड़ रहे हैं जैसे मानव समुद्र में जहाज डूब गया हो जिससे व्यापारियों का समुदाय बहुत ही व्याकुल हो उठा हो एक दूसरे को उपदेश देते हैं कि श्री रामचंद्र जी ने हम लोगों को यह जानकर छोड़ दिया है कि पीछे से नगर में बहुत हानि होगी| वे लोग अपनी निंदा करते हैं और मछलियों की सराहना करते हैं कि वो जल के वियोग में प्राण त्याग देती हैं | वे लोग कहते हैं कि श्री रामचंद्र के बिना हमारे जीने पर धिक्कार है;विधाता ने यदि प्यारे का वियोग ही रचा था तो फिर उसने मांगने पर हमें मृत्यु क्यों नहीं दी? इस प्रकार बहुत से प्रलाप करते हुए, वे संताप भरे अयोध्या जी में वापस आ गए| उन लोगों की दशा का वर्णन नहीं किया जा सकता| चौदह वर्ष की अवधि की आशा से ही अपने प्राणों को रख रहे हैं| श्री पुरुष श्री राम के दर्शन के लिए नियम और व्रत करने लगे| ऐसे दुखी हो गए जैसे चकवा-चकवी चंद्रमा के बिना रात और कमल सूर्य के बिना दिन में हो जाते हैं| सीता जी और मंत्री सहित दोनों भाई श्रृंगवेपुर जा पहुंचे| जहाँ गंगा जी को देख कर रामजी रथ से उतर पड़े और उन्होंने दंडवत प्रणाम किया।

रामदरश हित नेम ब्रत लगे करन नर नारी ।
मनहुं कोक कोकी कमल दीन बिहनी तमारी।। ४२

अयोध्या के निवासियों के मन में श्री राम के प्रति अगाध प्रेम है अन्यथा कौन किसके लिए नेम-व्रत करता है? चौदहवर्ष का समय कोई कम नहीं होता अयोध्यावासियों का श्री राम के प्रति प्रेम और विश्वास ही है| जो वे चौदह वर्ष का एक-एक दिन श्री राम को समर्पित करते हैं और उनकी प्रतीक्षा के लिए खुद को जीवित मानते हैं अन्यथा उनको अपने जीवन से अच्छा मछलियों का जीवन लगता है क्योंकि वे तो जल के बिना जीवित ही नहीं रह पाती और यहां अयोध्या वासियों को श्री राम का वियोग सहन करना पड़ रहा है।

श्री राम का एक और रूप है और वह है गुरुओं के ' प्रिय शिष्य राम' का, एक ऐसा ही प्रसंग मिलता है राजेंद्र अरुण की रचना रघुकुल रीत सदा..... के अध्याय 'अन्य पुरुष कहु महि सुख छाई' में - राज दरबार में

४२-अयोध्याकांड रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी गीता प्रेस गोरखपुर ,पृष्ठ सं ३७४

जनक जी के दूतों के मुख से मिथिला का वृतांत सुनने के बाद राजनयिक शिष्टाचार के अनुसार व्यवहार होता हैं| राजा ने उठकर गुरु वशिष्ठ के पास जाकर उन्हें पत्रिका दी, तो गुरु जी ने सादर दूतों को बुलाकर उन्ही के मुख से सारी कथा सुनवाई राजा को सबसे पहले यह समाचार रनिवास में देना चाहिए था| जहाँ माताएँ भी राम-लक्ष्मण का समाचार जानने के लिए उत्सुक और चिंतित है| शायद दशरथ ने सोचा हो कि भरत-शत्रुघ्न वहाँ खबर दे ही चुके होंगे पर आगे के प्रसंग से पता चलता है कि दोनों भाई खेल में ही मस्त रहें और माताओं के पास नहीं गए कारण क्या था? राजा दशरथ भावना को नहीं, मर्यादा को महत्व देते हैं| वे सबसे पहले गुरु को बताने के लिए उनके पास जाते हैं| जब गुरु ने पत्र पढ़ लिया तो राजा कहते हैं जनकजी के दूत यही हैं | आप उनसे समाचार जानना चाहेंगे? वसिष्ठ जी हाँ कर देते हैं| इसमें एक दो बातें ध्यान देने लायक हैं- जब गुरु ने पत्रिका पढ़ ली, राजा ने उन्हें समाचार बता दिया तो दूतों से मिलने की इच्छा गुरु ने क्यों व्यक्त की ? ये गुरु की आंतरिक प्रेम की अभिव्यक्ति है| जैसे दशरथ जी ने दूतों से प्रेम के कारण राम जी की कुशलक्षेम पूछी वैसे ही वशिष्ठ भी कर रहे हैं| वे भी राम की कीर्तिकथा जीवंतता से सुनना चाहते हैं| उसे सुनकर परम आनंदित होना चाहते हैं| अपने शिष्य की गौरव गाथा सुन पर कौन सा गुरु आनंद नहीं होगा हर गुरु शिष्य को इसी दिन के लिए तैयार करता है माता पिता बालक को जन्म देते हैं |

गुरु जीवन जीने का मंत्र देते हैं जब उस मंत्र के आधार पर चलकर शिष्य सफलता की ऊंचाइयों को छूता है तो स्वाभाविक रूप से गुरू की प्रसन्नता की सीमा ही नहीं रहती योग्य शिष्य को सदैव से गुरु अपना सब कुछ समर्पित करते आए हैं वशिष्ट के पास जो भी श्रेष्ठ था उसे उन्होंने राम को दे दिया था राम ने भी उसे तत्परता से स्वीकार किया था तुलसीदास जी लिखते हैं ।

गुरु गृह गए पढ़न रघुराई अल्पकाल सब विद्या आई । ४३

राम गुरु के घर पढ़ने गए और थोड़े समय में ही सभी विद्याओं के स्वामी हो गए थोड़े समय में सीखने के लिए दो चीजें चाहिए गुरु विषय का अधिकारी और विद्वान हो तथा शिष्य के पास प्रतिभा के साथ साथ सीखने की चाहो राम ने गुरु की शरण में एकाग्रता पूर्वक अभ्यास किया था इसलिए अल्पकाल में ही उन्होंने सब कुछ सीख लिया था और उन्हें सब कुछ मिल गया था ऐसे श्रेष्ठ शिष्य ने जनकपुरी में और कारनामे दिखाए थे उसे सुनने के लिए व्याकुल हो गए सब समाचार सुन अत्यंत सुख पाकर गुरु भोले पुण्यात्मा पुरुष के लिए सुखों से छाई हुई है| वशिष्ठ अपने हृदय की भावना को वाणी दे रहे हैं| राम की अलौकिक कीर्ति-कथा को सुन चुके हैं उनके पास बहुत ठोस प्रमाण है कि वे दशरथ के भाग्य की सराहना करें| वे ज्ञानी हैं| जीवन को पूर्णता में देख सकने में भी सक्षम है अतः मानना पड़ेगा कि वे जो कुछ भी बोल रहे हैं| वो उनके हृदय की भावना की अभिव्यक्ति है| हे राजन् तुम से अधिक पुण्य और किसका होगा?जिसके राम जैसे पुत्र हैं| इस संसार में पिता की कीर्ति पुत्र से होती है पुत्र चाहे तो डूबते हुए पिता को बचा सकता है और चाहे तो पिता को मझदार में डुबो सकता है| उनके पास बहुत ठोस प्रमाण है कि वे दशरथ के भाग्य की सराहना करें विज्ञानी है जीवन को पूर्णता में देख सकने में भी सक्षम है अतः मानना पड़ेगा कि वे जो कुछ भी बोल रहे हैं वह उनके हृदय की भावना की अभिव्यक्ति है| पिता को लोग पुत्र के माध्यम से जानते हैं जैसे वृक्ष को फल के माध्यम से जाना जाता है । ऐसा बेटा, ऐसा शिष्य, ऐसा राजकुमार ऐसा राजा जो सबके मन की बात समझता हो| जो सरल हो, समीप हो, सुगम हो तो क्यों नहीं वह सबके हृदय में वास करेगा क्यों नहीं वह सब का प्रेम होगा उनका चरित्र महान है श्री राम के व्यवहार की सरलता है|

---

४३ - रामचरितमानस, बाल काण्ड, पृ.सं.१७७

इस बात से ही सिद्ध होती है कि उन तक प्रत्येक व्यक्ति पहुंच सकता था इसलिए वे जनसाधारण के राम कहे जाते हैं।राम ने अपने जीवन को कभी व्यक्तिगत नहीं रखा सभी प्राणियों का उन पर पूरा अधिकार था चाहे एवं उनके परिवार का कोई सदस्य हो या उनके राज्य का अथवा किसी अन्य प्रदेश का;किसी अन्य प्रजाति का व्यक्ति या किसी अन्य प्रजाति का जीव वे अपने कर्तव्य का निर्वहन भली प्रकार से करते थे|

किसी भी जन के प्रति श्री राम के जो कर्तव्य रहे श्रीराम ने उनको भली प्रकार से निभाया नगर के प्रत्येक वासी को ऐसा लगता था कि राजा हो तो राम जैसा पुत्र हो तो राम जैसा गुरुओं का ऐसा लगता था शिष्य हो तो राम जैसा मित्रों को लगता था सखा हो तो राम जैसा किसी भी रूप में अगर हम देखना चाहे तो संबंधों को निभाने में राम जैसा कोई नहीं सामने वाले की बात को अपने बात से ऊपर रखना उसको सदैव मान देना| उसको यही आभास करवाना कि वह राम के लिए मुख्य है। राम का आचरण सर्वोच्च है, उत्कृष्ट है वे अपने आसपास रहने वाले सभी व्यक्तियों का मनोविज्ञान भी समझते थे तभी तो राज्य में रहने वाले धोबी को भी उन्होंने यह छूट दी कि वह उनसे उचित अनुचित सामाजिक और सामाजिक मर्यादा और मर्यादा से संबंधित प्रश्न कर सके श्री राम ने उसे जो उत्तर दिया वह शाब्दिक नहीं व्यवहारिक था उसको भी इस बात का ज्ञान हुआ के श्री राम सिर्फ कहने के राजा नहीं है वे सामाजिक व्यवस्था को भली प्रकार समझते हैं सामाजिक व्यवस्था के हर नैतिक अनैतिक स्तर को भली प्रकार समझते हैं जो चीज समाज को स्वीकार्य नहीं थी । श्रीराम ने उसको भी समझा तथा स्वयं के जीवन के द्वारा एक ऐसा उदाहरण स्थापित किया| जिसका कोई विकल्प नहीं ;इतनी सहनशीलता, सरलता, सुगमता और व्यवहारिक दृढ़ता देखने को नहीं मिलती| श्रीराम सरलता से ही सबको जीत लेते थे सबको प्रमुखता देते हुए| वे यह आभास कराते थे कि शालीनता बिना अमुक कार्य संभव ही नहीं है अतः हम यह कह सकते हैं कि वे जन-जन के राम थे| जन-जन के मन में बसने वाले राम थे और अपने व्यवहार प्रेम और सद्भावना से सबका दिल जीतने वाले राम थे| हर कोई उन्हें अपना राम मानता था क्योंकि जो जिस भाव से राम को देखता था उसे राम वैसे ही नजर आते थे|

वे अपने क्रोध का प्रदर्शन कभी नहीं करते थे| इसी कारण विकट से विकट परिस्थितियों में भी हर समस्या का समाधान निकालने में वह सदैव सफल होते थे देव बड़े दूरदर्शी थे| इसलिए भली प्रकार किसी भी कार्य का प्रत्येक पहलू समझ जाते थे और दूसरों को भी समझ बूझ से कार्य करने के लिए प्रेरित करते थे राम सिर्फ एक नाम नहीं है अपितु यह हमारे जीवन का हमारे व्यवहार का और हमारी सोच का आधार है| इस आधार के बिना संतुलित जीवन जीना असंभव है और जीवन में संतुलन लाने के लिए राम का अनुकरण करना आवश्यक है| अतः अगर हम राम के आदर्शों पर चलते हैं तो हमें प्रेम और सद्भावना ही मिलेगी और समाज की संरचना में हमारा भी योगदान होगा| श्रीराम प्रेरणास्रोत-प्रकाशपुंज है| उनके आदर्शों के बिना यह जीवन सोचा भी नहीं जा सकता।संसार में कुछ विशेष लोग कुछ विशेष संबंधों में श्रेष्ठता के आदर्श माने जाते हैं जैसे एक व्यक्ति जो आदर्श भाई हैं आवश्यक नहीं है कि वह आदर्श पुत्र भी हो एक आदर्श मित्र का एक आदर्श भाई होना आवश्यक नहीं है| इसी प्रकार अन्य संबंधों के विषय में भी कहा जा सकता है जैसे भरतजी को एक आदर्श भाई माना जाता है| श्रीराम का उनके प्रति विशेष प्रेम था| उन्हें आदर्श भाई क्यों माना जाता है इसका कारण भी भली-भांति विदित है| जब अयोध्या का राज्य भरत को अधिकार के रूप में प्राप्त हुआ था परंतु उन्होंने ने उसको अस्वीकार कर वनवास स्वीकार किया था| राजा दशरथ से वरदान के रूप में प्राप्त राज्य को असामान्य तरीके से भरत अपने बड़े भाई राम के लिए समर्पित कर देते हैं| इसी प्रकार अन्य संदर्भ में भी हमें ऐसे चरित्र तथा पात्र देखने और सुनने को मिलते हैं| जिन्होंने अपने संबंधों को एक निष्ठा मानते हुए उनका उचित प्रकार से निर्वहन किया था;परंतु श्री राम ही एकमात्र ऐसे पात्र अथवा चरित्र हैं | जिन्हें हम संबंधों के विभिन्न आयामों में संपूर्ण पाते हैं;चाहे वह एक पिता हो, पुत्र हो, भाई हो, पति हो राजा हो, मित्र हो

यहां तक कि एक शत्रु हो तब भी वे प्रत्येक दशा में उत्कृष्ट हैं क्योंकि संबंधों के जिन आयामों को उन्होंने स्पर्श कर लिया ऐसा करना सब के लिए संभव नहीं है|

२.५: श्री राम की व्यावहारिक कुशलता-

राम शब्द संस्कृत की रम कृणायाम धातु से बना है अर्थात प्रत्येक मनुष्य के अंदर रमण करने वाला जो चैतन्य स्वरूप आत्मा का प्रकाश विद्यमान है, वही राम है| राम को शील, सदाचार मंगल- मैत्री, करुणा, क्षमा, सौंदर्य और शक्ति का पर्याय माना गया है| राम राजा दशरथ और रानी कौशल्या के पुत्र थे| संस्कृत में दशरथ का अर्थ है -दस रथों का मालिक अर्थात पांच कर्मेंद्रीय तथा पांच ज्ञानेंद्रियों के स्वामी| कौशल्या का अर्थ है - कुशलता| जब कोई अपनी इंद्रियों को वश में रखते हुए व्यवहार में कुशलता से पूर्ण होता है, तो वह राम कहलाता है| श्री राम का व्यक्तित्व इतना सहज तथा सरल था यह जीवन में घटने वाले प्रतीक घटनाक्रम का मुस्कुराते हुए सामना करते थे| रामचरितमानस के अयोध्या कांड में ऐसा वर्णित है श्री राम की राज्याभिषेक की बात सुनकर सभी स्त्री-पुरुष हृदय में हर्षित हो उठे और विधाता को अपने अनुकूल समझ कर सब सुंदर मंगल साज सजाने लगे| तब राजा ने वशिष्ठ जी को बुलाया और शिक्षा देने के लिए श्री रामचंद्र के महल में भेजा | गुरु का आगमन सुनते ही रघुनाथ जी दरवाजे पर आकर उनकी चरण वंदना करने लगे आदरपूर्वक अर्घ्य देकर उन्हें घर में लाए षोडशोपचार से पूजा करके उनका सम्मान किया फिर सीता जी सहित उनके चरण स्पर्श किए और कमल के समान दोनों हाथों को जोड़कर श्री राम बोले यद्यपि सेवक के घर स्वामी का पधारना, मंगलो का मूल तथा अमंगलो का नाश करने वाला होता है तथापि हे नाथ! उचित तो यही था कि प्रेम पूर्वक दास को ही कार्य के लिए बुला भेजते| ऐसी ही स्वामीनीति है परंतु आपने प्रभुता छोड़कर और स्वयं यहां पधार कर जो स्नेह दिया है | इस कारणवश आज यह घर पवित्र हो गया। हे स्वामी! आज्ञा दीजिए मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। स्वामी की सेवा में ही सेवक का लाभ है प्रेम से सने हुए श्री राम के वचनों को सुनकर मुनि वशिष्ठ ने रघुनाथ जी की प्रशंसा करते हुए कहा कि राम भला आप ऐसा क्यों न कहें? आप सूर्यवंश के भूषण जो हैं| श्री रामचंद्र के गुण और स्वभाव का बखान कर मुनिराज प्रेम से पुलकित होकर बोले हे राम! राजा दशरथ ने तुम्हारा राज्याभिषेक करने की जो बात सूझी है;वह अवश्य ही नीति से युक्त है। श्री राम की व्यवहारिक कुशलता का एक और प्रमाण रामचरितमानस के बालकांड में मिलता है जब परशुराम क्रोधित होकर राजा जनक के महल में प्रवेश करते हैं और उनको देखकर सभी राजा सकुचा जाते हैं।उनके सिर पर जटा है सुंदर मुख चंद्र क्रोध के कारण कुछ लाल हो गया है आंखें क्रोध से लाल हैं सहज ही देखते हैं तो भी ऐसा जान पड़ता है कि मानो क्रोध कर रहे हैं बैल के समान ऊंचे और पुष्ट कंधे हैं| छाती और भुजाएं विशाल हैं सुंदर यज्ञोपवीत धारण किए हैं माला पहने और कमर में मुनियों के वस्त्र और दो तरकस बंधे हैं| हाथों में धनुष और सुंदर कंधे पर धनुष से सुसज्जित, शांत वेश है परंतु करनी बहुत कठोर है स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता| मान्यवर! ऋषि-मुनि का शरीर धारण करके जहां सब राजा लोग हैं वहां आ गया हूँ| परशुराम जी का भयानक वेश देखकर सब राजा भय से व्याकुल उठ खड़े हुए और पिता सहित अपना नाम कह-कह कर दंडवत प्रणाम करने लगे| परशुराम जी हित समझ कर भी सहज ही जिसकी ओर देख लेते हैं वह समझता है कि मेरी आयु पूरी हो गई है फिर जनक जी ने आकर सिर नवाया;सीता जी को बुलाकर प्रणाम करवाया| परशुराम जी ने सीता जी को आशीर्वाद दिया सखियां हर्षित हुई और सीता जी वापस अपनी सखियों की मंडली में चली गई|

फिर विश्वामित्र जी आकर मिले उन्होंने दोनों भाइयों को उनके चरण कमलों पर गिराया यह राम और लक्ष्मण राजा दशरथ के पुत्र हैं उनकी सुंदर जोड़ी देखकर परशुराम जी ने आशीर्वाद दिया |श्री रामचंद्र जी के अपार रूप को देखकर उनके नेतृत्व हो रहे फिर सब देखकर जानते हुए भी अनजान की तरह जनक जी से पूछते हैं कि कहो यह बड़ी भारी भीड़ कैसी है? उनके शरीर में क्रोध आ गया जनक के वचन सुनकर;परशुराम ने दूसरी तरफ देखा तो धनुष के टुकड़े पृथ्वी पर पड़े हुए दिखाई दिए अत्यंत क्रोध में भरकर वे कठोर वचन बोले, जनक! बता धनुष किसने तोड़ा? उसे शीघ्र दिखा नहीं तो आज मैं जहां तक तेरा राज्य है वहां तक कि पृथ्वी उलट दूँगा| राजा को अत्यंत डर लगा जिसके कारण उत्तर नहीं दे पा रहे थे यह देख कर अत्यंत कुटिल राजा मन में बड़े प्रसन्न हुए देवता मुनि नागौर नगर के स्त्री-पुरुष सभी सोच करने लगे| सभी के हृदय में बड़ा भय है सीता जी के माता मन में पछता रही है कि हाय विधाता ने अब बनी बनाई बात बिगड़ती परशुराम का स्वभाव सुनकर सीताजी को आधा शहर विकल्प के समान लगने लगा शिव के धनुष टूटने की बात सुनकर क्रोधी मुनि बोले कि किसने इतना दुस्साहस किया तब श्री राम जी सब लोगों को भयभीत देख कर बोले उनके हृदय में न कुछ हर्ष था न विषाद -

नाथ संभुधनु भंजनिहारा | होइहि केउ एक दास तुम्हारा ||
आयुस काह कहिअ किन मोही | सुनि रिसाई बोले मुनि कोही || ४४

अर्थात हे नाथ! शिवजी के धनुष को तोड़ने वाला आपका कोई एक दास ही होगा क्या आज्ञा है| मुझसे क्यों नहीं कहते;यह सुनकर क्रोधी मुनि बोले सेवक वह है; जो सेवा का काम करें शत्रु का काम करके तो लड़ाई ही करनी चाहिए| हे राम! सुनो जिसने शिवजी के धनुष को तोड़ा है, वह सहस्त्रबाहु के समान मेरा शत्रु है | वह इस समाज को छोड़कर अलग हो जाए नहीं तो सभी राजा मारे जाएंगे| मुनि के वचन सुनकर लक्ष्मण जी मुस्कुराए और परशुराम जी का अपमान करते हुए बोले, हे गोसाईं! लड़कपन में हमने भी बहुत ही धनुही तोड़ डाली किंतु आपने ऐसा क्रोध कभी नहीं किया| इसी धनुष पर इतनी ममता किस कारण से है? यह सुनकर भृगुवंश की ध्वजा स्वरूप परशुराम जी कुपित होकर कहने लगे अरे राजपूत्र काल के वश में होकर तू ऐसा बोल रहा है तुझे कुछ भी होश नहीं सारे संसार में विख्यात शिवजी का धनुष धनुही के समान है ?लक्ष्मण जी ने हँसकर कहा हे देव! सुनिए हमारे ज्ञान में तो सभी धनुष एक जैसे ही हैं और फिर पुराने धनुष को तोड़ने में क्या लाभ क्या हानि? श्री रामचंद्र जी ने तो इससे नवीन के धोखे से देखा था फिर यह तो छूट गया इसमें रघुनाथ जी का भी कोई दोष नहीं;मुनि आप बिना कारण ही क्रोध करते हैं|

परशुराम जी अपने फरसे की ओर देखकर बोले, तूने मेरा स्वभाव नहीं सुना तुझे बालक जानकर नहीं मारता हूँ| अरे मूर्ख! क्या तू मुझे नहीं जानता है? मैं बाल ब्रह्मचारी और अत्यंत क्रोधी हूँ| क्षत्रिय कुल का नाश करने के लिए तो विश्व भर मे प्रसिद्ध हूँ। मैंने पृथ्वी को कई बार राजाओं से रहित कर दिया और बहुत बार उसे ब्राह्मणों को दे डाला है। राजकुमार सहस्त्रबाहु की भुजाओं को काटने वाले मेरे इस फरसे को देखो| परशुराम के क्रोध को देखकर श्री राम ने उन्हें बारंबार मुनि और विप्रवर कहकर पुकारा इस बात को सुनकर वे क्रोधित हो गए और बोले तू मुझे निरा ब्राह्मण ही समझता है, मैं जैसा भी हूँ;तुझे सुनाता हूँ धनुष को स्त्रुवा, बाण को आहुति और मेरे क्रोध को भयंकर अग्नि जानो | बड़- बड़े राजा मेरी क्रोध की अग्नि में जल चुके हैं| जिनको मैंने इसी फरसे से काटकर उनकी बलि दी है| ऐसे करोड़ो रक्त युक्त रण-यज्ञ मैंने किए हैं| मेरा प्रभाव तुझे

---

४४ - बालकाण्ड,रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी, गीता प्रेस गोरखपुर, पृ.सं.२२९

मालूम नहीं है; इसी से तू ब्राह्मण के धोखे में मेरा निरादर करके बोल रहा है| किस कारण से अभिमान कर रहा है? यह धनुष तोड़ डाला इससे तेरा घमंड बहुत बढ़ गया है| ऐसा अहंकार मानो संसार जीत कर खड़ा है। परशुराम के कुपित वचन सुनकर श्री राम बोले हे मुनि! कृपया विचार कर बोलिए आपका क्रोध बहुत बड़ा है और मेरी भूल बहुत छोटी है| धनुष पुराना था इसलिए छूते ही टूट गया मुझे घमंड क्यों होगा? यदि हम सचमुच ब्राह्मण कहकर निरादर करते हैं तो यह सत्य सुनिए फिर संसार में ऐसा कौन सा योद्धा है जिससे हम डर के मारे मस्तक नवायें? देवता राजा या और बहुत से योद्धा चाहे बल में हमारे बराबर हो चाहे अधिक बलवान हो। यदि रण में हमें कोई भी ललकारे तो हम उससे सुख पूर्वक लड़ेंगे चाहे काल ही क्यों न हो| क्षत्रिय का शरीर धरकर जो युद्ध में डर गया उस नीच ने अपने कुल पर कलंक लगा दिया। स्वभाव से ही कहता हूं कुल की प्रशंसा करके नहीं कि रघुवंशी रण में काल से भी नहीं डरते, ब्राह्मण वंश की ऐसे ही महिमा है कि जो आप से डरता है| वह सबसे निर्भय हो जाता है अर्थात जो भय रहित होता है वह भी आप से डरता है ।श्री रघुनाथ जी के कोमल और रहस्य पूर्ण वचन सुनकर परशुराम जी की बुद्धि के पर्दे खुल गए धनुष परशुराम जी के बड़ा आश्चर्य हुआ। मनुष्य कई बार परिस्थिति वश अपने व्यवहार को संयमित नहीं रख पाता और दबाव में आकर भावुक होकर या क्रोधित होकर वह या तो आवेग में आ जाता है या दुखी हो जाता है;परंतु श्रीराम का स्वभाव इन से विपरीत शांत और संयमित था वह प्रत्येक स्थिति में स्वयं अनुशासित और संयमित रहते थे श्री राम ना तो किसी स्थिति में अत्यधिक हर्षित होते थे और न ही उदासीन वह सदैव कर्मशील और तत्पर रहते थे हर समस्या का हल कर्म में ही देखते थे| देवी शक्तियां होने के बाद भी वह अपने कर्म सदैव एक साधारण मनुष्य की तरह ही करते थे उनके प्रयास सतत होते थे| वह निरंतरता में विश्वास रखते थे वन आगमन के समय भी उन्होंने ही सब को संभालने का काम किया है चाहे वो राजा दशरथ हो या प्रजाजन उन्होंने कहीं भी यह प्रदर्शित नहीं होने दिया कि एक बहुत कठिन निर्णय है और न ही वन में आने वाली बाधाओं के बारे में विचार करके उदासीन हुए| वनवास की अवधि में भी वह अपने कुशल व्यवहार से लक्ष्मण तथा सीता जी को संभालते थे सीता हरण के पश्चात भी उन्होंने स्वयं पर संयम रखते हुए उन्हें वापस लाने की योजना बनानी प्रारंभ कि उनके व्यवहार को समझ कर ऐसा लगता है कि बहुत अधिक हर्ष शोक प्रकट करके हम अपनी उर्जा का ह्रास करते हैं साथ ही अपने सोचने समझने की शक्ति का हनन भी करते हैं अगर श्री राम के इस गुण का हम अनुकरण करते हैं तो यह हमारे लिए अति हितकारी होगा क्योंकि जो विशेषता श्रीराम के व्यवहार में प्रदर्शित होती है वह हमें श्रेष्ठता की ओर लेकर जाती है|

सुधीर निगम द्वारा रचित धर्मात्मा विभीषण का एक प्रसंग जब राम और रावण का युद्ध चल रहा था तो विभीषण ने श्रीराम से कहा प्रभु रावण का अंत आज निश्चित है मेरे मन में एक जिज्ञासा है आर्य संस्कृति में ब्राह्मण का वध निश्चित है रावण वेद पाठी ब्राह्मण है क्या उसकी वध से आप दोष के भागी नहीं होंगे ? तब श्री राम ने उत्तर दिया दुष्टों की हिंसा भी अहिंसा की श्रेणी में आती है क्योंकि एक हिंसा से शब्द शस्त्रों की हिंसा रूकती है| रावण पर मेरी विजय मेरी नहीं प्रत्यूष विकार पर विवेक की वासना पर उपासना की विजय होगी फिर मुझे दोष कैसा ? युद्ध में रावण के घायल होकर मूर्छित हो जाने पर मंदोदरी के स्पर्श करने पर जब रावण में चेतना का संचार हुआ उसने चारों ओर एक असहाय दृष्टि डाली और मृत्यु पूर्व की प्रखर वाणी में बोला महाप्रतापी और शक्तिमान यह रावण भी कुछ क्षणों में शब्द की संज्ञा से अभिहित हो जाएगा मैं स्वयं को अभिजीत मानता रहा परंतु शक्ति संतुलन के अश्वमेध में मैं विवश हो गया पराजित हो गया मैंने श्रेष्ठता के उच्चतम शिखर को मुट्ठी में बंद करना चाहा कुछ सीमा तक सफल भी हो गया इससे मेरे मन में यह भ्रम पल्लवित हो गया कि मैं आप्तकाम हो गया हूं और श्रेष्ठा सत्य मेरे कारागार के स्थायी अतिथि हैं मेरे यह भाव विभीषण के रूप में कब मुझे त्याग कर चले गए मैं जान ही नहीं पाया|

रावण कुछ देर तक इधर-देखता रहा जैसे चेतना के अंतिम स्फुल्लिंग को वाणी देना चाहता हो| अपने नेत्र राम पर स्थिर करके बोला श्री राम तुम सत्य और धर्म के पथ पर अग्रसर थे इसीलिए धर्मात्मा विभीषण ने तुम्हारे अनुगमन का प्रशस्त ध्येय चुना| अतः उसे कोई भ्रातृद्रोही या कुलद्रोही न कहे अन्यथा हर सत्यान्वेषण के यही विशेषण होंगे लंका विभीषण के किसी भेद से नहीं मेरे व्यवहार से ढही है|

रावण का स्वर मंद पड़ गया रावण चुप होकर विभीषण की ओर देखने लगा राम उसके मनोभाव समझ गए और उन्होंने कोमल कंठ से कहा हे लंकेश्वर! मुझे तो यह प्रतीत होता है कि लंका मृत्य मान्यताओं और क्षीणप्राय परंपराओं का देश बन कर रह गया था| इस चिंता के आवरण को हटाने के लिए सत्य को फिर दृढ़ता से स्थापित करने के लिए मानव अस्तित्व की गहराइयों में पड़ी चिरंतन संभावनाओं का संधान करने के लिए और सब कुछ समर्थ संरक्षण देने के लिए आपके भ्राता विभीषण प्रतिश्रुत है | प्रजा और पूरे परिवार का स्नेहिल सहयोग ,अटल आश्वासन,वरेण्य विश्वास यदि इन्हें मिला तो निश्चय जानिए लंका के पुनर्निर्माण का पथ अकंटक हो जाएगा तब वे लंका की प्रजा का पालन करेंगे पालन में लालन भी सम्मिलित होता है| प्रेम से पालन होता है तथा नियम से शासन विभीषण शासन को पालन का रूप देकर नूतन लंका का निर्माण करेंगे तब आज की श्रीलंका तैयार हो जाएगी | जिसमें लोकमंगल जन-कल्याण, परमार्थ त्याग धर्म धाराएं समाहित होंगी मैं तो समझता हूँ कि लंका का पुण्य उदय हुआ है। तेजस्विता, वृत्ति दक्षिता ,सामर्थ्य ,विनायक ,विक्रम और बुद्धि नामक दस गुणों से युक्त विभीषण में एक नया दशग्रीव साकार होगा ।कृतघ्न पुरुष जैसे सौहार्द को त्याग देते हैं| वैसे ही अंत समय में आप संताप को त्याग दें| धीरे धीरे वातावरण शांत और सुखांत बनने लगा राम के दिव्य तेजोमय मुख की ओर देखते हुए रावण ने क्षीण स्वर में कहा “शौर्य से अलंकृत विजयी राम, आपकी सीता अशोक वन में अक्षत और सुरक्षित रहीं हैं | सत्य के स्वरूप सीतापति मेरे अंतिम प्राण ले- हे राम|” रावण के प्राण उसके शरीर को छोड़ते हैं मंदोदरी भयानक क्रदन कर उठी जिसे सुनकर सबके दिल दहल गए | ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह कर्म शोक संगीत का उच्चालाप ले रही हो वहां उपस्थित सभी श्रोता उसके दुख के भोक्ता और भागी बन गए राम ने विभीषण से मंदोदरी एवं अन्य स्त्रियों को शांत कराने को कहा पर विभीषण तक खड़े रहे तब राम ने स्वयं मंदोदरी को सांत्वना देते हुए कहा राज्य महेश्वर्य धारण करें आपके शुभ से यहां उपस्थित हर व्यक्ति व्यथित है विचलित है यह संसार शुभाशुभ कर्म करने और उसका फल फल भोगने की लीला भूमि है जो जैसा होता है वैसा ही काटता है करता को अधर्म के फल का भी भागी बनना पड़ता है जैसे फल की अंतिम तिथि जन्मे हुए मनुष्य की अंतिम मृत्यु है जिस प्रकार महासागर में बहते हुए भी एक दूसरे से मिल जाते हैं और कुछ समय बाद ही अलग हो जाते हैं उसी प्रकार स्त्री पुरुष पुत्र कुटुंब धन आदि सभी मिलकर हो जाते अवश्यंभावी है प्राणियों के जन्म और मृत्यु का कोई निश्चित समय नहीं होता ऐसा नहीं करना चाहिए शुभ कर्मों से संपूर्ण इंद्रियों के साथ अपने मन को रखें श्री राम की बातें सुनकर मंदोदरी ने आंसू पोंछ डाले| विभीषण कुछ दूर पड़ी एक शिला पर बैठे थे| उन्होंने अपना मन शांत कर लिया था राम उनके पास पहुंचे और बोले रावण की अंत्येष्टि की सामग्री लाने के लिए मैंने आपके नाना मालेवार को नगर भेज दिया है| आप अपने अग्रज की अंत्येष्टि क्रिया करेंगे तो तेरह दिन तक मरना शौच रहेगा और आप का राज्याभिषेक इस अवधि में नहीं हो पाएगा| अतः राज्य अभिषेक उसके पूर्व ही हो जाना चाहि | मैं नगर में नहीं जा सकता अतः आप का राज्य अभिषेक यही करुंगा|आप के मंत्री इस हेतु उपयुक्त वस्तुएँ लाने नगर चले गए हैं| विभीषण ने विनय पूर्वक कहा जिसने धर्म और सदाचार का त्याग कर दिया था| जो क्रूर, निर्दयी और असत्यवादी था| पराई स्त्री से संसर्ग करने वाला था| उसका दाह संस्कार मैं अपने हाथों से कैसे करूं? स्वयं के हित में संलग्न रहने वाला रावण अग्रज के रूप में मेरा शत्रु था, यद्यपि अग्रज होने के कारण वह मेरा पूज्य था तथापि वह मुझसे सत्कार पाने के योग्य नहीं है|

अतः में उसका अंतिम संस्कार नहीं कर सकता मेरी यह बात सुनकर अवश्य मुझे क्रूर कहेंगे परंतु जब रावण के दुर्गुणों को सुनेंगे तो सभी मेरे इस विचार को उचित मानेंगे विभीषण के विचार सुनकर श्रीराम स्तब्ध रह गए| उन्होंने प्रेम से समझाते हुए कहा, देखो वैर मृत्यु तक ही सीमित रहता है| अब हमारा प्रयोजन सिद्ध हो चुका है, तो इस समय जैसे यह तुम्हारा भाई है वैसे ही मेरा भी भाई है| आपके पिता ऋषि विश्रवा और पितामह महर्षि पुलस्त्य आर्य थे | मेरे कुल के इक्ष्वाकु वंशीय कन्या विश्रवा की माता और आप दोनों की पितामही थी | ऐसी स्थिति में नस्ल से रावण आर्य और चरित्र से राक्षस था| विभीषण राम की कथनी के माध्यम की से समझ गए कि यदि रावण का संस्कार नहीं किया तो राम स्वयं ही कर डालेंगे | ऐसी स्थिति में वे कहीं मुँह दिखाने योग्य नहीं रह जाएंगे विभीषण ने अंतिम संस्कार करने के लिए अपनी स्वीकृति दे दी इस सारे कथानक को पढ़ने वह इनका ग़हन अध्ययन करने के उपरांत मैं इस निष्कर्ष पर पहुंची हूँ कि श्री राम का व्यवहार बहुत ही संतुलित था| जो भावना उनके मन में अपने मित्र या किसी रिश्तेदार या किसी हितैषी के लिए होती| वही सारी भावनाएं उनके मन में शत्रु के लिए भी थी जैसे मित्र वस्तुतः मनुष्य है वैसे ही शत्रु भी वस्तुतः मनुष्य ही है| श्री राम ऐसा ही सोचते थे। जहां व्यक्ति अपने शत्रु को कोई मान-सम्मान आदर नहीं देता वहां श्री राम विभीषण को एक प्रश्न धमकी देते हैं कि अगर तुम अपने भाई का अंतिम संस्कार नहीं करोगे तो मैं यह कर सकता हूं ऐसी सोच रखना अपने आप में ही शब्द के व्यवहार को दर्शाता है इन व्यवहारिक विशेषताओं के कारण अपना मानसिक और आत्मिक संतुलन बनाए रखते हुए हम स्वयं भी प्रगतिशील रहते हुए अच्छी कार्य कर सकते हैं तथा वह दूसरों के लिए प्रेरणा भी बन सकते हैं इस प्रकार के व्यवहार द्वारा हम उचित समय में उचित निर्णय ले सकते हैं जो दूरदर्शी सिद्ध होते हैं संयमित व्यवहार से कई बार असंभव लगने वाला कार्य भी संभव हो जाता है। असंभव कार्य को भी संयमित व्यवहार के द्वारा संभव किया जा सकता है ।बस एक सरल सहज और संयमित दृष्टिकोण होना चाहिए|

श्रीराम की व्यावहारिकता में इस तथ्य को भी समाहित किया जा सकता है कि वे सरल के साथ सरल नैतिक के साथ नैतिक तथा अनैतिक के साथ अनैतिक रहे परंतु किसी की हानि नहीं होने दी बाली जिस ने रावण को भी युद्ध में परास्त कर दिया था| उसको भी उसके अनैतिक होने का दंड दिया अन्यथा वह उनका कोई वैरी नहीं था| सिर्फ अपने व्यवहार कुशलता के बल पर रावण को यह बताना चाहते थे इस जनसाधारण की शक्ति को कम करके ना के अपार शक्ति संसाधन होने के बाद भी उन्होंने केवल उन्हें साथ लिया जो दक्षिण पथ के वासी थे और जो लंका के राक्षसों के अनाचार अत्याचार और उनकी चतुराई से अवगत थे जो उपेक्षित है किंतु जिन में अपार संगठन शक्ति थी उनका विश्वास जागृत करने अपने प्रति आस्था उत्पन्न करने और रावण को और पराजय न समझने का साहस देने के लिए उन्होंने बालि के आतंक को अनैतिकता को ललकारना आवश्यक समझा और बालि का वध करके जहां कर्नाटक क्षेत्र के आदिवासीजनों को उन्होंने अपने पक्ष में कर लिया वहीं प्रकारांतर राहुल को भी यह जता दिया कि वह बहुत साधारण प्रतिरोधी के रूप में उनका आकलन न करें बल्कि बालि जिससे स्वयं रावण भी प्राप्त हो चुका था| ऐसे बलशाली को मारने वाली किसी हस्ती के रूप में उन्हें स्वीकार करें सुग्रीव से मित्रता होने के घटनाक्रम में भी हम उनका संयमित संतुलित व्यवहार तथा मित्र के प्रति समर्पण देख सकते हैं| सीता हरण के पश्चात श्री राम तथा लक्ष्मण वन सीता माता को ढूंढ रहे थे इसी क्रम में वे किष्किंधा पहुंचे| जहां पर वानर राज सुग्रीव का वास था | सुग्रीव का पता चलने पर सीता जी को आकाश मार्ग से जाते देखा था राम का नाम पुकारते हुए सीता जी ने वस्त्र गिरा दिया था| सुग्रीव द्वारा श्री राम को वह वस्त्र दिया गया| उसको पहचान आने के बाद श्री राम सोच में पड़ गए तब सुग्रीव ने कहा हे रघुवीर! सोचना छोड़ दीजिए मन में धीरज लाइए| इस प्रकार से आपकी सेवा करूँगा इस उपाय से जानकी जी आकर आपको मिले सुग्रीव के यह वचन सुनकर राम हर्षित हुए और बोले मुझे बताओ तुम यहाँ किस कारण रहते हो?

बालि और मैं तो भाई हैं| हम दोनों में ऐसी प्रीति थी जिसका वर्णन नहीं किया जा सकताहै| एक दानव पुत्र था जिसका नाम मायावी था और वह हमारे गांव में आया उसने आधी रात को नगर के फाटक पर आकर बालि को ललकारा और बालि उस ललकार को सह न सका उसे मारने दौड़ा बाली को आता देख मायावी भागने लगा मैं भी भाई के संग चला गया वह मायावी एक पर्वत की गुफा में जा घुसा बाली ने मुझे समझा कर कहा|

तुम एक पखवाड़े तक मेरी बाट देखना यदि मैं एक पखवाड़े में न आया,तो जान लेना कि मैं मर गया| मैं वहां महीने भर तक रुका और अपने भाई को पुकारता रहा और एक दिन उस गुफा में से रक्त की बड़ी भारी धारा निकली| मैंने समझा कि मायावी ने बालि को मार डाला और अगर मुझे भी मारेगा| इसलिए मैं वहां एक शिला लगा कर भाग आया मंत्रियों ने नगर को बिना राजा के देखा तो जबरदस्ती मुझे राज्य दे दिया| मायावी की हत्या कर जब बालि वापिस आया और उसने मुझे राज सिंहासन पर देखकर बहुत क्रोध किया| उसने समझा कि राज्य के लोभ से ही मैं गुफा के द्वार पर शिला रख कर आ गया था | जिससे वह बाहर निकल सके और मैं यहां आकर राजा बन जाऊँ| उसने मुझे शत्रु समझ कर बहुत मारा मेरा सर्वस्व तथा मेरी स्त्री को भी छीन लिया| हे कृपालु रघुवीर! मैं उसके भय से समस्त लोकों में बेहाल होकर फिरता रहा| वह शाप के कारण यहां नहीं आ सकता तो भी मैं मन में भयभीत रहता हूं सुग्रीव का दुख सुनकर रघुनाथ कि दोनों विशाल भुजाएं फड़क उठी और उन्होंने कहा कि हे सुग्रीव! में एक ही बाण से बालि को मार डालूँगा| ब्रह्मा और रूद्र की शरण में जाने पर भी उसके प्राण न बचेंगे|

जो लोग मित्र के दुख से दुखी नहीं होते उन्हें देखने से ही पड़ा पाप लगता है अपने पर्वत के समान दुख को राई समान और मित्र के राई के समान दुख को पर्वत के समान जाना चाहिए| जिन्हें स्वभाव से ही ऐसी बुद्धि प्राप्त नहीं वे मूर्ख हठ करके क्यों किसी से मित्रता करते हैं ? मित्र का धर्म है कि वह अपने मित्र को बुरे मार्ग पर जाने से रोक कर अच्छे मार्ग पर चलाए| उसके अवगुणों को छिपाएं और गुणों को प्रकट करें; लेने- देने में मन में शंका न रखें अपने बल के अनुसार सदा ही हित करता रहे| विपत्ति के समय में सदा सौ गुना स्नेह करे वेद कहते हैं कि श्रेष्ठ मित्र के यही लक्षण हैं| जो सामने तो बना-बना कर कोमल वचन कहता है और पीठ पीछे बुराई करता है तथा मन में कुटिलता रखता है| जिसका मन सांप की चाल के समान टेढ़ा है ऐसे को मित्र को त्यागने में ही भलाई है| मूर्ख सेवक कंजूस राजा और कपटी मित्र यह शूल के समान पीड़ा देने वाले हैं| हे मित्र! मेरे बल पर अब तुम चिंता करनी छोड़ दो, मैं सब प्रकार से तुम्हारी सहायता करूंगा| सुग्रीव ने कहा, हे रघुवीर ! सुनिए बालि महान बलवान और अत्यंत रणधीर है फिर सुग्रीव ने राम जी को दुदुंभि राक्षस की हड्डियां तथा ताल के वृक्ष दिखाएं श्री रघुनाथ जी ने उन्हें आसानी से ढहा दिया श्री राम जी का अपरिमित बल देखकर सुग्रीव की प्रीति बढ़ गई और उन्हें विश्वास हो गया कि श्री राम बाली का वध अवश्य करेंगे अतः वे बार-बार श्रीराम के चरणो में सिर नवाने लगे और बोले हे नाथ आपकी कृपा से अब मेरा मन स्थिर हो गया है सुख संपत्ति परिवार और बड़प्पन सब को त्याग की सेवा करूंगा हे राम बाली तो मेरा परम हितकारी है जिसकी कृपा से मुझे आप मिले श्रीराम मुस्कुरा कर बोले तुमने जो कुछ कहा वह सत्य है परंतु मेरा वचन मिथ्या नहीं होता तदनंतर सुग्रीव को साथ लेकर हाथों में धनुष बाण लेकर रामजी चले | श्री राम का साथ पाकर सुग्रीव हर्षित होकर युद्ध करने के लिए चले श्री राम का बल पाकर बाली के निकट जाकर सुग्रीव कर दे उनका गर्जन सुनकर बाली क्रोध में वेग से दौड़ा उसकी स्त्री तारा उसे समझाया किस सुग्रीव दिन से मिले हैं वह दोनों भाई तेज और बल की सीमा है| बालि ने कहा सुनो, श्री रघुनाथ जी समदर्शी हैं | वे स्वयं मेरे नेत्रों के आगे आ गए हैं| इससे बढ़कर सहयोग क्या होगा ऐसा कह कर वह सुग्रीव को धमकाने लगा और घूसा मार कर बड़े जोर से बोला कि तू मुझसे युद्ध करेगा घायल होने के कारण सुग्रीव व्याकुल होकर भागा और घूंसे की चोट उन्हें वज्र के समान लगी|

घायल होने पर सुग्रीव ने कहा हे रघुवीर! मैंने आपसे यह पहले ही कहा था कि बाली मेरा भाई नहीं काल है|| यह सुन श्री राम बोले तुम दोनों भाइयों का रूप एक जैसा है इसी से भ्रम उत्पन्न हो गया फिर उन्होंने सुग्रीव के गले में फूलों की माला डाल दी और उसे अपना बल देकर भेजा दोनों में पुनः अनेक प्रकार से युद्ध हुआ| श्रीराम वृक्ष की आड़ से देख रहे थे सुग्रीव ने बहुत से छल बल किए किंतु अंत में है मानकर हृदय से हार मान ली तभी श्री राम जी ने टांगरपाली के हृदय में बाण मारा बाण के लगते ही बालि व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा उसने श्री राम से कहा कि आपने तो धर्म की रक्षा का प्रण लिया है और मुझे व्याध की तरह मारा ? मैं वैरी और सुग्रीव प्यारा हे नाथ! इस दोष से आपने मुझे मारा श्री राम ने कहा है मूर्ख सुन छोटे भाई की स्त्री बहन पुत्र की स्त्री और कन्या यह चारों एक समान है इनको जो कोई भी बुरी दृष्टि से देखता है उसे मारने में कोई पाप नहीं होता है वह तुझे अत्यंत अभिमान है तूने अपनी स्त्री की सीख पर भी ध्यान नहीं दिया सुग्रीव को मेरी भुजाओं के बल का आश्रित जानकर भी हे अभिमानी! तूने उसे मारना चाहा मैंने तो सिर्फ धर्म का साथ दिया है और तू जो कर रहा था वह अधर्म है बालि की मृत्यु के बाद तारा को व्याकुल देखकर रघुनाथ ने उसे ज्ञान दिया और कहा पृथ्वी जल अग्नि आकाश और वायु इन पांच तत्वों से यह अत्यंत अधम शरीर रचा गया है यह शरीर तो प्रत्यक्ष रूप से तुम्हारा न हुआ| बहुत जीते हैं फिर तुम किसके लिए रो रही हो? ऐसी बात सुनकर| तारा के मन में ज्ञान उत्पन्न हुआ और उसने श्री राम को प्रणाम किया | इस घटना को भी हम श्री राम की व्यावहारिक कुशलता का प्रमाण मान सकते हैं क्योंकि उन्होंने बड़ी कुशलता के साथ ही धर्म के अनुरूप व्यवहार किया तथा अधर्म का संहार किया धर्म के अनुरूप व्यवहार करना सरल नहीं होता न्याय अन्याय के कई सारे प्रश्न मन में आते रहते हैं लेकिन जो धर्म का पालन करते हैं या धर्म के पथ पर अग्रसर रहते हैं वे हमेशा नीति पूर्वक व्यवहार करते हैं उन्होंने बाली को भी यह समझाया कि मेरी तुमसे कोई दुश्मनी नहीं है तुमने सुग्रीव के साथ छल किया तुम्हें बस उसका ही परिणाम मिला है|

बालि से जीतने के बाद श्री राम ने जब सुग्रीव को वानरों का राजा और अंगद को युवराज घोषित किया सुग्रीव की हार्दिक इच्छा थी कि उनका राज्याभिषेक श्रीराम करें लेकिन श्री राम ने लक्ष्मण को समझा कर कहा कि तुम जाकर सुग्रीव को राज्य दे दो क्योंकि मैं किसी नगर में प्रवेश नहीं कर सकता| सुग्रीव के निरंतर आग्रह पर श्री राम बोले यह वानरपति सुग्रीव! सुनो मैं चौदह वर्ष तक किसी भी बस्ती में नहीं जाऊँगा ग्रीष्म ऋतु के बाद वर्षा ऋतु आ गई है| अतः मैं यहां पास ही पर्वत पर टीका रहूंगा तुम अंगद सहित राज्य करो, मेरे काम का हृदय में सदा ध्यान रखना| तदन्तर तब सुग्रीव जी घर लौट आए तब श्री राम प्रवर्षण पर जा कर टिक गए|

वर्षा ऋतु बीत गई निर्मल शरद ऋतु आ गई परंतु सीता की कोई खबर नहीं मिली ऐसे विचार श्रीराम ने लक्ष्मण के साथ साझा किए उन्होंने कहा एक बार कैसे भी पता पाऊं तो काल को भी जीतकर पल भर में जानकी को ले आऊँ कहीं भी रहे यदि जीती होगी तो, हे तात! यत्न करके मैं उसे अवश्य लाऊंगा लगता है राज्य, खजाने, नगर और स्त्री को पाने के बाद सुग्रीव ने मेरी सुध नहीं ली क्या उसे यह ज्ञात नहीं जिस बाण से मैंने बाली को मारा था उसी बाण से कल उसको भी मार सकता हूं क्रोध आने के बाद भी श्री राम ने लक्ष्मण जी को कहा हे तात! तथा सुग्रीव को केवल भय दिखला कर ले आओ उसे मारने की कोई बात नहीं है लक्ष्मण जाने की तैयारी कर रहे थे | उस समय हनुमान जी ने विचार किया सुग्रीव द्वारा श्री राम के कार्य को भुला दिया गया है उन्होंने सुग्रीव से बात कर कर विचारों नीतियों को कहकर समझाया यह सब सुनकर सुग्रीव को अपनी गलती का आभास हो गया और उन्होंने सभी बड़ों को बुलाकर यह निर्देश दिया कि एक पखवाड़े में सीता जी का कोई न कोई समाचार अवश्य मिलना चाहिए| जो जिस दिशा में जाना चाहता है जाए जहाँ -जहाँ वानरों राज्य हैं|

वहां के दूतों को यह समाचार भेजा गया लक्ष्मण और क्रोध दिखाने पर ही सुग्रीव हाथ जोड़कर लक्ष्मण जी के पास पहुंचे तो लक्ष्मण जी ने उनको अभय किया और कहां डरो मत मैं तुमसे उस कार्य की याद दिलाने आया हूं; जिसे तुम भूल गए हो सुग्रीम के माफी मांगने के बाद और यह वचन देने के बाद ही उनका कार्य अवश्य होगा अंगद आदि वानरों को साथ लेकर लक्ष्मण जी को आगे कर सुग्रीव हर्षित होकर वहां आए जहां रघुनाथ थे सुग्रीव ने हाथ जोड़कर रघुनाथ जी से माफी मांगी और कहा हे नाथ मुझे कुछ भी दोष नहीं है यह सब प्रभु की माया है जोकि अत्यंत ही प्रबल है| हे स्वामी ! देवता मनुष्य और मुनि भी विषयों के वश में है फिर मैं तो पामर पशु और पशुओं में भी वानर हूँ| हे रघुनाथ ! मुझसे जो गलती हुई है उसके लिए मुझे क्षमा करें मैंने अपने सभी दूत भेज दिए हैं| एक पखवाड़े के अंदर सीता जी का पता लग जाएगा|

जब ज्ञान का सौंदर्य व्यक्ति के जीवन में उतरने लगता है तो उसका प्रसन्न मुख मंडल और उसके व्यवहार कुशलता सतह से उसके आंतरिक ज्ञान का परिचय देते हैं उस व्यक्ति विशेष का यही परिचय दूसरों को भी प्रभावित कर सकता है यह हम कह सकते हैं प्रभावित करता है एक बात महत्वपूर्ण है कि इस व्यावहारिक पक्ष में देखते दिन-प्रतिदिन उत्तर उत्तर उन्नति करता है ऐसे ज्ञान का कोई विशेष लाभ नहीं है जिसका प्रभाव आपके आचरण पर ना पड़े ज्ञान की गुणवत्ता हमारे जीवन में उतर रही है या नहीं इसकी पहचान व्यवहार से ही होती है और श्री राम के हृदय में कितना प्रेम है और मस्तिष्क में कितना ज्ञान इसका परिचय उनका कुशल व्यवहार देता है। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि व्यावहारिक कुशलता में व्यक्ति की ज्ञान का परिचय होता है अर्थात परिस्थिति काल तथा आपके समक्ष खड़ा व्यक्ति और उसकी मनोदशा जब इन बातों को समझते हुए व्यवहार किया जाता है, तो उसे व्यावहारिक कुशलता की श्रेणी में रखा जाता है व्यक्ति जब अपने अंतर्मन से ज्ञान रूपी दर्पण में झांकता है तो वह सदा ही अपनी कमियों या अपने दोषों से अवगत होता है अपने दोषों का आभास होने पर उसको सुधारना यह भी व्यावहारिक कुशलता में आता है अगर हम अपनी कमियों को सुधारने का प्रयास करते हैं तो हमें उस महान कृपा का अनुभव होता है ऐसा लगता है कि असंभव कार्य भी संभव होते जा रहे हैं इन बातों को जारी रखते हुए हमें अवश्य कह सकते हैं कि अयोध्या नगरी से चौदह वर्ष का वनवास मिलने के बाद भी अगर श्री राम रावण जैसे महान योद्धा से युद्ध करने के लिए दक्षिणवासी वानरों भालू और व्यक्तियों का सहारा लेते हैं और वह भी निश्चिंत भाव से श्री राम का साथ देते हैं तो कहीं ना कहीं इसके पीछे श्री राम के व्यावहारिक कुशलता का प्रदर्शन होता है।

कंब रामायण के एक दृश्य में यह बात बतलाई गई है जय श्री राम अपने भाइयों के साथ जब अपनी शिक्षा दीक्षा पूर्ण करके नगर की तरफ लौट आते तो उस समय उनका स्वागत करने वाले नागरिक जन आनंद के कारण मेघों के आगमन से व्यथित होने वाले शशि के समान दिखाई देते थे वेदों के लिए गुर्जर और अन्य सामान श्री राम और उनके साथ सदा रहने वाले लक्ष्मण को आते देख उपमा देते हुए कहते थे मानव नील समुद्र या कालमेघ उज्जवल विकसित कमल कुंज से शोभायमान हो उत्तर दिशा में स्थित मेरु पर्वत के साथ आ रहा हो लोगों को देखकर अपने समक्ष आने वाले प्रत्येक नागरिक से वह पूछते तुम्हारा क्या नाम है कोई कष्ट तो नहीं तुम्हें तुम लोगों की दुल्हनिया एवं ज्ञानवान संतति और सुखी और स्वस्थ है न? नगरनिवासी उत्तर देते समय हम बड़े भाग्यवान हैं आपके समान राजा को पाने पर हमें किस बात का अपना हो सकता है हमारी तो यही कामना है कि जब तक हम जीवित रहे तब तक आप हमारी आत्माओं पर और सब के दीप विशिष्ट भूतल पर शासन करते रहे इस प्रकार के वचनों को कहना और सुनना कोई सरल कार्य नहीं हैं नगर का प्रत्येक वासी श्री राम के मन तथा व्यवहार में स्वयं के लिए सम्मान व प्रेम पता था इसी कारणवश श्री राम सबके प्रिय रहे उन्होंने सदैव ही सबको प्रेम दिया और उसके बदले में प्रेम ही प्राप्त किया उनके ऊपर किसी भी घटना या विपत्ति का ऐसा प्रभाव नहीं पड़ता था कि उनके व्यवहार में परिवर्तन आ जाए|

वे सदैव ही सबके साथ एक समान व्यवहार करते थे तथा सामने वाले की मनोदशा को समझते हुए उसके प्रति प्रेम आदर का प्रदर्शन करते थे। प्रेमभरे वार्तालाप नागरिकों के साथ तब भी होते थे| जब श्री राम राजकुमार थे उन्होंने अपने व्यवहार से कभी भी स्वयं को विशेष या विशिष्ट दिखाने की चेष्टा नहीं की अतः हम यह कह सकते हैं कि सद्व्यवहार मनुष्य का वह गुण है जो पग- पग पर मनुष्य की अस्मिता की रक्षा करता है मनुष्य के व्यवहार कुशलता ही अन्य मनुष्यों के हृदय पर छाप छोड़ती है| जिसके कारण ही अन्य व्यक्ति उसकी ओर आकर्षित होते हैं| जिस प्रकार वाटिका में सुंदर तथा सुगंधित पुष्प खिलता है परंतु वह कभी स्वयं की प्रशंसा नहीं करता अपितु उसकी सुंदरता तथा सुगंध उसका परिचय स्वयं देती है| ठीक इसी प्रकार से व्यवहार कुशल व्यक्ति की प्रमुखता उसका आचरण ही होता है;उसे स्वयं का कोई विशेष परिचय नहीं देना होता|

श्री राम का मानसिक उत्तेजनाओ जैसे - क्रोध ,लोभ, अहंकार ,काम और मोह आदि पर पूर्णरूपेण नियंत्रण था| राम तथा सीता ने अपना संपूर्ण दांपत्य जीवन बहुत ही संयम और प्रेम से जिया| किसी भी तरह का भाव अथवा इच्छा श्री राम के संयमित व्यवहार को उद्वेलित नहीं कर सकती थी| उनका व्यवहार स्थितियों के नियंत्रण में नहीं होता था अपितु श्रीराम अपने व्यवहार के द्वारा स्थितियों को नियंत्रित कर लेते थे| किसी भी तरह की विवशता, कामना, लालच आदि का भाव उनको स्पर्श करके भी नहीं गया था| वे संयमित व्यक्तित्व के स्वामी थे| एक बेटे के रूप में उनके क्या कर्तव्य थे;एक जन नायक के रूप में उनके क्या कर्तव्य थे;वे भली-भांति जानते थे| उनका व्यवहार दायित्व निर्वहन करने की क्षमता विपरीत परिस्थितियों में भी अनुकूल वातावरण का निर्माण यही तो उनकी विशेषता थी|

एक राम राजा दशरथ का बेटा
एक राम घर- घर में बैठा
एक राम का सकल पसारा
एक राम सारे जग से न्यारा ||

प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ गुण या कोई न कोई विशेषता अवश्य होती है लेकिन कोई न कोई दुर्बलता भी सब के व्यक्तित्व में होती है;परंतु श्री राम के व्यवहार में कोई त्रुटि नहीं रही, न ही स्वभावगत कोई दुर्बलता विशेषताओं के समुच्चय को ही व्यक्ति का व्यक्तित्व कहते हैं| जनसाधारण की भाषा में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के वाक्य रूप से लिया जाता है परंतु मनोविज्ञान में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के गुणों की समष्टि से है और प्रभु श्री राम व्यक्तित्व तथा मनोविज्ञान दोनों के ही ज्ञाता थे| उनका व्यवहार किसी के प्रति विशेष स्नेह पूर्ण तथा किसी के प्रति विशेष क्रोध पूर्ण नहीं था| वे प्रत्येक परिस्थिति में उदार तथा नीति पूर्ण व्यवहार करते थे| वे स्वयं समस्त परिस्थितियों का आकलन करते थे तथा अर्थ पूर्ण व्यवहार करते हुए ही किसी भी समस्या का निराकरण करते थे| अवांछित विधि से कभी क्रोध का प्रदर्शन उन्होंने नहीं किया राम कथा के राम के चक्रवर्ती सम्राट के घर से विश्वामित्र के आश्रम तक किष्किंधा से लेकर लंका तक बल्कि उसके बाद भी शत्रुघ्न को भेजकर लवण राज के वध तक की संघर्षशील यात्रा आतातायियों, सामंतों, राक्षसों से लड़ने युद्ध करने की ज्वलंत परंपरा को कायम करती है;जो आज के समय की सापेक्षता भी है और शायद कल भी होगी| अत: शाश्वत संघर्ष अन्याय के विरुद्ध शोषण की नीति से मुक्ति और विषमता के विरुद्ध एक प्रकाश पुंज हैं समाज के समस्त वर्गों की आवाज है| रामचरितमानस के उत्तरकांड में हनुमान जी की जिज्ञासा शांत करते हुए संवादों के कुछ अंश इस प्रकार हैं-श्री राम के आदर्श व्यवहार को देखते हुए भरत लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न के मन में एक प्रश्न आता है और वे सभी इस प्रश्न का उत्तर श्री राम के मुख से सुनना चाहते हैं लेकिन सब

भाई प्रश्न पूछने पर सब जाते हैं और वह सब हनुमान जी की तरह दिखते हैं हनुमान जी के द्वारा पूछा जाता है कि हे रघुनाथ! जी वेद पुराणों ने संतों की महिमा का बहुत प्रकार से वर्णन किया है| हमने आपके श्री मुख से भी उनकी बड़ाई सुनी है और उनके प्रति आपका बहुत प्रेम है;प्रभु में उनके लक्षण सुनना चाहता हूँ| संत और असंत शब्द के भेद अलग अलग करके समझाकर कहिए अपने व्यावहारिक ज्ञान के द्वारा श्री राम इस अंतर को स्पष्ट करते हैं| संतो के लक्षण असंख्य है जो वेद और पुराणों में प्रसिद्ध हैं| संत और असंतों की करनी ऐसी है जैसे कुल्हाड़ी और चंदन का आचरण होता है कुल्हाड़ी चंदन को काटती है क्योंकि उसका स्वभाव वृक्षों को काटना है किंतु चंदन अपना गुण उस कुल्हाड़ी को सुगंध से सुवासित कर देता है| गुणों के ही कारण चंदन देवताओं के सिर ऊपर चढ़ता है और जगत का प्रिय होता है और कुल्हाड़ी के मुंह को यह दंड मिलता है कि उसको आग में जलाकर फिर घन से पीटते हैं| संत विषयों में लिप्त नहीं होते शील और सद्गुणों की खान होते हैं| उन्हें पराया दुख देख कर दुख और सुख देख कर सुख होता है| समता का भाव रखते हैं उनके मन में किसी के प्रति बैर नहीं होता और न ही उनका कोई शत्रु होता है| मोह से रहित और वैराग्यवान होते हैं तथा लोभ-क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किए हुए रहते हैं| उनका चित्त बड़ा कोमल होता है| वे सबके ऊपर दया करते हैं तथा मन वचन और कर्म से विशुद्ध भक्ति करते हैं, सब को सम्मान देते हैं स्वयं मान रहित होते हैं| वे प्राणी अर्थात संतजन मेरे प्राणों के समान उनको कोई कामना नहीं होती| वे शांति-वैराग्य, विनय और प्रसन्नता के घर होते हैं| उनमें शीतलता सरलता सब के प्रति मित्र भाव होता है यह सब लक्षण जिसके हृदय में बसते हैं उसको सच्चा संत समझना जो शम दम नियम और नीति से कभी विचलित न हो मुख से कभी कठोर वचन न बोले जिन्हें निंदा और स्तुति दोनों समान है| वह गुणों के धाम और सुख शांति से परिपूर्ण संतजन मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं| अब दुष्टों का स्वभाव सुनो, कभी भूल कर भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिए उनका संग सदा दुख देने वाला होता है जैसे हरहाई गाय, कपिला गाय को अपने संग से नष्ट कर डालती है| असंतों के हृदय में बहुत अधिक संताप रहता है| वे पराई संपत्ति और सुख को देखकर सदा ही जलते रहते हैं| वह जहां कहीं दूसरों की निंदा सुन पाते हैं, वहाँ ऐसे हर्षित होते हैं जैसे रास्ते में पड़ी निधि पा गए हो| वे काम-क्रोध मद और लोभ के परायण निर्दयी-कपटी, कुटिल तथा पापों के घर होते हैं| जो भलाई करता है उसके साथ भी बुराई करते हैं| उनका झूठ ही लेना और झूठ ही देना होता है झूठ ही भोजन होता है और झूठ ही चबेना होता है| दूसरों का अधिकार मार लेते हैं तथा झूठी शान दिखाते हैं मतलब यह है कि वे सभी बातों में झूठ ही बोला करते हैं और उनका जीवन दिखावे से भरा हुआ होता है वे दूसरों से द्रोह करते हैं पराया धन पराई निंदा में आसक्त रहते हैं| वे पामर और पापमय मनुष्य नर शरीर धारण किए हुए राक्षस ही हैं| लोभ ही उनका ओढ़ना और बिछौना होता है, ऐसे लोग जब किसी को भी विपत्ति में देखते हैं तब ऐसे खुश होते हैं मानो जैसे जगत भर का राज पा गए हों| वे स्वार्थ परायण; परिवार वालों के विरोधी, काम और लोभ के कारण अंधे रहते हैं| वे माता-पिता गुरु और ब्राह्मण किसी को नहीं मानते स्वयं तो नष्ट हुए ही रहते हैं साथ ही अपने संग से दूसरों को भी नष्ट कर देते हैं मोह वश दूसरों से द्रोह करते हैं | उन्हें न संतो का संग अच्छा लगता है और न ही भगवान की कथा सुहाती है| श्री राम कहते हैं, हे भाई! दूसरों की भलाई के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को दुख पहुंचाने के समान कोई पाप नहीं है| हे तात! समस्त पुराणों और वेदों का यह निर्णय या निश्चित सिद्धांत मैं तुमसे कह रहा हूँ| इस बात को सभी विद्वान लोग जानते हैं मनुष्य का शरीर धारण करके जो लोग दूसरों को दुख पहुंचाते हैं| उनको जन्म मृत्यु के महान संकट सहने पड़ते हैं| मनुष्य मोह वश स्वार्थ-परायण होकर अनेकों पाप करते हैं इसी से उनका परलोक नष्ट हुआ रहता है। व्यवहार कुशलता के कारण ही श्री राम सबके चहेते और लाडले रहे| समय, परिस्थिति तथा व्यक्ति की अनुकूलता के अनुरूप ही व्यवहार करते थे|

उनके समक्ष खड़ा समाज के किसी भी वर्ग किसी भी आयु किसी भी लिंग का व्यक्ति हो श्री राम का व्यवहार व्यक्ति विशेष के अनुरूप ही होता था| उनके व्यवहार में नैतिकता तथा धर्म की छवि स्पष्ट दिखती थी | उन्होंने अपनी भूमिका का निर्वहन पूर्ण कुशलता के साथ किया| उनके व्यवहार को हम धर्म शास्त्र के रूप में देख सकते हैं, जोकि सदाचरण और नैतिकता की शिक्षा देता हैं| उनका व्यवहार करुणा, प्रेम और सहानुभूति से भरा हुआ था|अपनी व्यवहार कुशलता द्वारा श्रीराम ने असंभव से लगने वाले कार्यों को भी संभव कर दिखाया समाज में उन्नति हेतु किसी न किसी आदर्श की आवश्यकता होती है और ऐसे ही एक आदर्श एवं प्रेरणा स्रोत बने श्री राम अपने व्यवहार को कुशल बनाने हेतु हमें अपने अंतर्मन में निहित शक्तियों को पहचानना होता है तथा इंद्रियों को अपने वश में रखना होता है ऐसा करना सरल नहीं है या आसान शब्दों में कहें तो लगभग असंभव है इस असंभव शब्द के कारण है व्यवहार में उछलता नहीं आती क्योंकि हम किसी ना किसी भावना से ग्रस्त होते हैं वर्तमान में होने वाले घटनाक्रमों को भूतकाल में हुए घटनाक्रमों से जोड़कर देखते हैं और परिणाम में जो प्राप्त होता है वह होता है | ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि जहाँ इन का समावेश होता है वहाँ हमारा व्यवहार कुशल कैसे रह सकता है ,परंतु श्री राम अपने व्यवहार में इतने कुशल सिर्फ इसलिए थे क्योंकि वह वर्तमान घटनाक्रम को ही देखते और समझते थे और उसी को कार्यान्वित करते थे किसी के प्रति कोई दुर्भावना नहीं रखते थे ना ही किसी से कोई अपेक्षा करते थे उनका व्यवहार अपेक्षा रहित होता था कोई भी दुर्भावना या द्वेष नहीं पता था और उनका व्यवहार समस्त प्राणियों के साथ सौहार्द पूर्ण होता था न ही वे किसी प्रकार के पूर्वाग्रह से ग्रस्त होते थे वह व्यक्ति की वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते थे और उसी के अनुरूप व्यवहार करते थे उनके लिए कोई भी बुरा व्यक्ति नहीं था क्योंकि वे इस बात में विश्वास रखते थे कि मनुष्य का व्यवहार या उसकी सो घटनाक्रमों के साथ परिवर्तित होती रहती है ,कोई भी व्यक्ति हृदय से बुरा नहीं होता सिर्फ उसका समय या उसकी सोचने की स्थिति परिवर्तित होती श्री राम किसी के भी दोष को बड़ी सरलता से क्षमा कर देते थे| रामचरितमानस के अतिरिक्त भी हम जितने भी पुस्तकों का अध्ययन करते हैं जिनमें श्री राम के बारे में थोड़ा बहुत भी बताया गया है उनको पढ़ने के बाद यही सत्यापित होता है कि श्री राम का व्यवहार और श्रीराम का व्यक्तित्व दोनों ही धर्म अनुसार थे वे न्याय का साक्षात् स्वरूप और उन्होंने अपने व्यवहार और जीवन के द्वारा यह सिखाने का प्रयास किया कि हमें अपना जीवन कैसे जीना चाहिए सबसे अच्छी बात यह है कि या बोले तो सबसे ज्यादा आश्चर्यचकित करने वाला तथ्य यह है कि उन्होंने कभी किसी को कुछ करने के लिए नहीं कहा या अपने व्यवहार को परिवर्तित करने के लिए नहीं उन्होंने स्वयं भी धर्म के अनुसार ही व्यवहार किया और जहां आवश्यकता पड़ी वहां धर्म के अनुसार व्यवहार करने का परामर्श दिया और स्वयं विभिन्न घटनाक्रमों में न्यायोचित व्यवहार करते हुए हम सबके आगे उदाहरण प्रस्तुत किया उन्होंने कभी किसी से कुछ कह कर नहीं करवाया| रामचरितमानस में श्री राम के सहज व्यवहार का या उनकी व्यवहारिक कुशलता का चित्रण बड़ी सुगमता के साथ किया गया ऐसा व्यवहार जो सबको अपनी तरफ आकर्षित करता है और उनके जैसा बनने के लिए प्रेरित करता है| जब कभी हम स्वयं को जीवन के दुष्कर परिस्थितियों में घिरा पाते हैं तो तुलसी के राम के व्यवहार और उनके जीवन से प्रेरणा लेते हुए हम स्वयं के प्रश्नों का उत्तर सरलता से दे सकते हैं तथा अपने कर्तव्यों का निर्वहन भी सुचारु रुप से कर सकते हैं|

२.६ श्री राम के जीवन का सार :-

:गोस्वामी तुलसीदास ने श्री राम को जीवन तथा व्यावहारिकता का केंद्र बिंदु माना है | उनके राम जीवन का आधार है और राम का जीवन अनुकरणीय है| आदि कवि वाल्मीकि ने संपूर्ण राम कथा में राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रतिपादित किया सरयू नदी के किनारे बसी अयोध्या नगरी सुंदर-सुंदर फल देने वाले वृक्षों

से सजे राजमार्ग तरह-तरह के बाग बगीचों से सजी हुई नगरी देवराज इंद्र की अमरावती नगरी के समान लगती थी| महामुनि वशिष्ठ तथा वामदेव जसे ऋषि मुनि न्याय धर्म और व्यवस्था के कारण अयोध्या नगरी का विशेष स्थान था| गुणवान मंत्रियों और संपूर्ण धर्म को जानने वाले महाराजा दशरथ नगरी का कार्यभार देखते थे अयोध्या में धर्म-कर्म का विशेष महत्व था| ऐसी धर्म नगरी का नरेश अत्यंत ही दुखी रहता था क्योंकि एक कुशल राज्य था पर राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में कोई भी पुत्र नहीं था| महाराज दशरथ के इस दुख को दूर करने के लिए ऋषियों ने यज्ञ किया मुनि वशिष्ठ और शृंग ऋषि के यज्ञ द्वारा उन्हें चार पुत्रों की प्राप्ति होना| नामकरण संस्कार में पुत्रों के नाम क्रमशः राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न रखना एक चिर प्रतिक्षा को विराम देता है| पुत्र सुख को अभी ठीक से जाना भी नहीं था कि बाल्यावस्था में ही अपने दो पुत्रों राम तथा लक्ष्मण को ऋषि विश्वामित्र के साथ उनकी सहायता हेतु भेजना पड़ा यह भी राजा की एक विवशता थी क्योंकि ऋषि विश्वामित्र को न तो राजा दशरथ चाहिए थे और न ही उनके सेना उन्हें तो सिर्फ अपनी और ऋषि समाज की सहायता हेतु राम चाहिए थे राजा दशरथ के अनुनय विनय को सुनकर जब ऋषि विश्वामित्र ने कहा
हे राजन ! अगर नहीं करनी हो तो वह भी बता दें| जब श्री राम ने अपने पिता को एक राजा की मर्यादा का ध्यान करवाया था साथ ही अपने पिता को यह आश्वासन दिया कि वे शीघ्र ही कार्य को संपन्न करके सकुशल वापस आ जाएंगे चूँकि लक्ष्मण को श्री राम की परछाई के रूप में देखा जाता है इसलिए लक्ष्मण भी उनके साथ गए अपने ब्रह्मचर्य जीवन का यथावत पालन करते हुए अस्त्र-शस्त्र वेद पुराण आदि की शिक्षा ली उनके स्वभाव में ठहराव था वे सदैव न्यायोचित बातें ही करते थे उनके लिए उनका कर्तव्य ही उनका धर्म था और उनका धर्म उनके लिए सर्वोपरि था उन्होंने आजीवन अपने परिजनों और वरिष्ठ लोगों की आज्ञा का मान रखा कभी भी किसी पद की लालसा नहीं की उनके अनुसार आप चाहे किसी भी पद पर हों लेकिन अगर आप गरिमा में रहकर कार्य करते हैं तो हर तरफ लोग आपको प्रेम करते हैं आप अपने तथा अपने परिवार से ऊपर उठकर देश तथा समाज के लिए कार्य करें अपने जीवन को मर्यादित रूप से बिताने का अभ्यास करें राम तो सभी के लिए समान भाव रखते हैं तभी उनके अपने हैं तथा वे सभी का भला चाहते हैं| राम का चित्त सदा शांत एवं आनंदित रहता था| वे सदैव दूसरों की सहायता को अपने जीवन का लक्ष्य मानकर चलते थे उनके वचन सीधे-साधे तथा मधुर होते थे जो सामने वाले व्यक्ति के मन को शीतलता प्रदान करते थे | प्रत्येक व्यक्ति उनके सानिध्य के लिए लालायित रहता था| वे अपनी भावनाओं से ज्यादा दूसरों की भावनाओं को वरीयता देते थे वे किसी भी वस्तु या किसी भी सुख के आसक्त नहीं थे उन्हें किसी भी चीज से मोह नहीं था और मोह का त्याग ही आपको एक उत्कृष्ट मनुष्य बनाता है मानव जीवन में छः वस्तुएं मनुष्य को प्रभावित करती हैं| जिनमें संशय, मोह, भ्रम, अज्ञान दुर्भाग्य और मानसिक रोग हैं यह सभी विकृतियां मनुष्य के ऊपर अपना दुष्प्रभाव छोड़ती हैं और यह सारी विकृतियां मनुष्य के मोह से ही जुड़ी हुई हैं और श्रीराम के जीवन में हमें यही देखने को मिलता है कि उन्होंने राज पाठ धन वैभव सत्ता आधी किसी चीज का मोह या लोभ नहीं किया उनके स्वभाव में विरक्ति थी ऐसी विरक्ति जो सदैव ही दूसरों को प्रभावित करती रहे उनके जीवन को देखकर ऐसा लगता है कि व्यक्ति का भी अपना ही आनंद है| आप किसी मोहपाश में जकड़े नहीं रहते, स्वेच्छा से निर्णय ले सकते हैं और आपके ऊपर किसी भी प्रकार का मानसिक दबाव नहीं होता है | श्री राम का व्यक्तित्व इतना प्रखर था और जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण सकारात्मकता से भरा हुआ था|

श्री राम ने अपने जीवन में जिन जिन कठिनाइयों का सामना किया तथा बड़ी दृढ़ता के साथ उन से उभर कर सामने आए अनेक प्रकार की परिस्थितियों में मानसिक द्वंद के बीच फंसे होने के बाद भी एक विजेता की तरह निकले जिससे उनका व्यक्तित्व महान बन गया| श्री राम ने कभी भी सुमित्रा और कैकेयी को माता

कौशल्या से कम सम्मान नहीं दिया| राजा दशरथ के अथाह प्रेम और तीनों माताओं के ममता की छांव में श्री राम का बचपन बीता सभी भाइयों से बराबर प्रेम करते थे और सभी को रघुकुल का तथा माता-पिता का सम्मान करने की सीख देते थे| वह सीख मौखिक नहीं; उदाहरण के रूप में देते थे जैसा कि वह स्वयं करते थे उन्होंने बहुत ही विषम परिस्थितियों में लक्ष्मण तथा भरत को अपने क्रोध पर काबू करने की सलाह दी तथा किसी भी परिजन या अन्य व्यक्ति को वेरी के रूप में न देखने का परामर्श दिया| वे निरंतर कर्म में विश्वास रखते थे और दूसरों को भी यही करने के लिए प्रेरित करते थे| श्री राम के आचरण में एक ऐसा ठहराव कारण वे कभी भी व्यग्र नहीं होते थे| आचरण एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हम स्वयं के साथ-साथ दूसरों को भी अच्छा वातावरण दे सकते हैं जीवन में कुछ भी स्थाई नहीं सिवाय व्यक्तित्व और उसका प्रभाव के | जीवन में आचरण के द्वारा ही हमारे व्यक्तित्व की छाप दूसरों पर पड़ती है क्योंकि वह अमर होती है और वह हमारे उसी छवि के अनुरूप उनसे आशा रखता है तथा हमारी छवि के अनुरूप ही हमसे व्यवहार भी करता है श्री राम ने जिस तरह से पहले दूसरों के बारे में सोचा तथा अपने कर्तव्य निभाएं वह अपने आप में ही उदाहरण कर्तव्यनिष्ठा धर्म परायण श्री राम की विशेषता थी उन्होंने अपने जीवन को सही मायनों में जिया क्योंकि श्वास लेते हुए जीना ही जीवन नहीं अपने लिए हम जो कुछ भी चाहते हैं वही व्यवहार वही दृष्टिकोण अन्य लोगों के लिए भी होना चाहिए यदि हम लोगों की भावनाओं को ध्यान में रखकर उसके अनुरूप जीवन जीते हैं तो ऐसा जीवन श्रेयस्कर होगा और श्रीराम का जीवन श्रेष्ठ था | प्रसिद्धि से दूर रहने वाले व्यक्ति थे उन्होंने अपने द्वारा किए गए किसी भी कार्य का प्रचार-प्रसार नहीं होने दिया वनवास अवधि के अंतर्गत जैसे ही उन्हें यह प्रतीत होता की वनवासी उन्हें जानने लग गए हैं या उनके प्रति विशेष भाव रखने लग गए हैं वह अपना आवास क्षेत्र बदल देते थे वनवास के समय भी उन्होंने अपने लिए कुछ ऐसे कठोर नियम बनाए जिसका पालन कोई साधारण इंसान नहीं कर सकता वे किसी भी कार्य के लिए किसी पर आश्रित नहीं मांगते नहीं थे अपितु भोजन की व्यवस्था स्वयं करते अपने सीता जी और लक्ष्मण जी के लिए जिन खाद्यान्नों की आवश्यकता पड़ती थी उनकी खेती वे स्वयं करते थे चौदह तक वर्ष किस धातु को भी स्पर्श नहीं किया ना ही किसी तरह का कोई भी ऐसा साधन प्रयोग किया जिससे क्षण मात्र के लिए भी बनवास के नियमों का उल्लंघन हो | उन्होंने अपने जीवन के सिद्धांतों से कभी समझौता नहीं किया चाहे उसके परिणाम कितने भी दुष्कर क्यों न हो अपने स्वजनों मित्रों और समाज के अन्य लोगों को भी अपने आचरण के द्वारा यही सीख दी कि ;हमें अपने जीवन में सदैव ही अनुकूल तथा प्रतिकूल दोनों परिस्थितियों के लिए तैयार रहना चाहिए अनुकूल स्थिति आने पर अत्यधिक प्रसन्न नहीं होना चाहिए ठीक उसी प्रकार प्रतिकूल स्थिति में व्यथित नहीं होना चाहिए अपितु उस व्यथा से निकलने का प्रयास करना चाहिए चाहिए| श्री राम अपने जीवन में आने वाले उतार-चढ़ाव को सहर्ष झेलते हुए जीवन को इतनी पूर्णता के साथ जीते थे कि अनायास ही ऐसा विचार आता है कि क्या कोई इतना कठिन जीवन इतनी सरलता से जी सकता है? उनके जीवन में चाहे जितने भी कष्ट आए उन्होंने कभी भी इसकी शिकायत नहीं की कभी-कभी अपने पिता का स्मरण करते हुए वनवास का समय बिताया| लक्ष्मण के लिए किसी-किसी प्रकरण में दुखी दिखाई देते हैं लेकिन उनका जीवन ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि उन्हें सर्वाधिक प्यारा अगर कुछ था तो वह था 'धर्म' उसकी पालना के लिए वे कुछ भी त्याग सकते थे | उनके शब्दानुसार

" राजा के रूप में ;जनता मेरी देवता है, मेरी उपासना है और इसके लिए मैं कुछ भी कर सकता हूँ| प्रेम करुणा,प्रसन्नता यहाँ तक कि सीता को भी त्याग सकता हूँ |"

राम अपने जीवन में आए कठिन से कठिन क्षणों में भी धर्म से विमुख नहीं हुए और उन्होंने धर्म का पालन करने हेतु अपने जीवन में अनेक ऐसे निर्णय लिए जिनको लेना आसान नहीं है और उन निर्णयों के साथ जीवन

भी जिया| उनके शत्रु भी इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि राम शत्रुता को भी धर्म के दायरे में ही निभाएंगे| शत्रुता निभाने के लिए कभी भी अधर्म का सहारा नहीं इसी कारण उनके शत्रु है उनका आदर करते क्योंकि कहीं न कहीं वे भी अपने मन ही मन में जानते थे कि राम धर्म के साथ खड़े हैं और यह युद्ध साधारण युद्ध नहीं धर्म युद्ध है जिसमें अंत में अधर्म पर धर्म की जीत ही होगी क्योंकि धर्म के साथ कोई और नहीं श्री राम है| सीताहरण के पश्चात जब रावण के भाई विभीषण ने रावण को यह समझाया कि वह सीता को सहर्ष वापस करते हुए श्री राम के साथ संधि कर ले तो उसकी इस बात से सहमत होने वाला रावण का एक बुद्धिमान मंत्री माल्यवान भी था | यहां तक कि रावण के संबंधी मारीच को भी इस बात का ज्ञान था कि राम जी सदैव ही धर्म का पालन करते हैं| राक्षस प्रजाति के अनेकों ऐसे राक्षस थे जो श्री राम के धर्मपूर्ण आचरण के प्रति आदर व्यक्त करते थे| मित्रों के मित्र थे राम, निषादराज, केवट, सुग्रीव, विभीषण, अंगद, जामवंत आदि अनेकों ऐसे चरित्र मिलते हैं| जो श्री राम की मित्रता की महिमा को भली प्रकार जानते हैं| उनके अनुसार जो व्यक्ति अपने मित्र के दुख हो पर्वत के समान विशालकाय समझते हुए सदैव ही अपने मित्र की सहायता में तत्पर रहता है वही सच्चा मित्र है| मित्र को दुखी अवस्था में छोड़ना;अधर्म कहलाता है और ऐसा व्यक्ति जो अपने मित्र के दुख से दुखी नहीं होता अथवा उसके दुख को दूर करने का प्रयास नहीं करता;

वह पाप का भागी होता है| अपने मित्र से विश्वासघात करना भी पाप होता है| वे मित्रों के अतिरिक्त भी साधारण मनुष्यों का भली प्रकार से ध्यान रखते थे| श्री राम ने धर्म तथा और धर्म के बीच के भेद को अपने व्यवहार के द्वारा ही व्यक्त किया उनके जीवन में भावों तथा कर्मों की प्रधानता रही| छात्र से लेकर नरेश तक के रूप में उन्होंने सदैव ही उचित विकल्प को चुना और नीतिअनुसार ही कार्य किया| अपने परिजनों को भी धर्म के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरित किया| राजा दशरथ द्वारा जब ऋषि विश्वामित्र को राम लक्ष्मण को न ले जाने की विनती की गई,तब श्री राम ने राजा दशरथ को एक राजा के धर्म के बारे में समझाते हुए कहा कि यह विनती हमारी कुल की परंपरा के विरुद्ध है क्योंकि हमारे कुल में सदैव ही ऋषि मुनि ब्राह्मणों आदि का आदर करते हुए उनकी इच्छाओं का पालन किया गया है| अतः आप ऋषि विश्वामित्र को मना न करें| मुझे और लक्ष्मण को जाने दे| उनके जीवन में कई बार ऐसे अवसर आए,जहाँ वे अकेले ही कार्य की पूर्ति हेतु जाना चाहते थे लेकिन लक्ष्मण के द्वारा जिद करने पर तथा लक्ष्मण के द्वारा जब उनको एक भाई के कर्तव्य बताए जाते तब वे शांत मन से लक्ष्मण के जिद मान लेते क्योंकि वे जानते थे कि लक्ष्मण सही कह रहे हैं| एक भाई का यह परम कर्तव्य होता है कि किसी भी दशा और दिशा में अपने भाई का साथ न छोड़े इसलिए सदैव ही वे जहां भी जाते लक्ष्मण के साथ जाते थे| इसी प्रकार वनवास मिलने पर भी जब राजा दशरथ ने उनसे यह कहा कि पुत्र वचन के द्वारा मैं बंधा हुआ हूँ;तुम नहीं, तुम चाहो तो यह वचन तोड़ सकते हो क्योंकि मैं नहीं चाहता कि तुम वन के लिए जाओ तुम्हारे लिए करना कठिन नहीं होगा और न ही तुम पर कोई आरोप आएगा तब श्री राम ने उनसे कहा कि

मंगल समय सनेह बस सोच परिहरिअ तात |
आयुस देइअ हरषि हियँ कहि पुलके प्रभु गात || ४५

हे पिताजी ! इस मंगल इस समय स्नेह के वश होकर सोचना छोड़ दीजिए और हृदय में प्रसन्न होकर मुझे वन जाने की आज्ञा दीजिए| ऐसा कहते ही श्रीराम के सर्वांग पुलकित हो गए फिर उन्होंने कहा कि इस पृथ्वी तल

---

४५ - अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदास जी, गीता प्रेस गोरखपुर ,पृ.सं.३७४

पर उनका जन्म धन्य है| जिनके चरित्र को सुनकर उनके पिता को परम आनंद हो जिसको माता-पिता प्राणों के समान प्रिय हैं| चारों पदार्थ धर्म अर्थ काम मोक्ष उसकी मुट्ठी में रहते हैं आपकी आज्ञा का पालन करके और इस जन्म का फल पाकर मैं जल्द ही लौट आऊँगा| इस घटनाक्रम में भी हम यह देखते हैं कि कैकेयी द्वारा वनवास की बात सुनकर भी श्री राम तनिक भी विचलित नहीं होते, उनके मन में कैकेयी के लिए अब भी वही श्रद्धा भाव है और अपने पिता राजा दशरथ को भी वह समझाते हुए कहते हैं कि वनवास ऐसी कोई बड़ी आपदा नहीं है कि उसके लिए इतना सोचा जाए जैसा कि राजा दशरथ सोच रहे थे| श्री राम के लिए उस समय उनका धर्म यही आज्ञा देता था कि माता-पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके वन के लिए प्रस्थान करें और उन्होंने उस समय यही किया वनवास की अवधि में उन्होंने उन सारे नियमों का पालन किया जो वनवास के लिए बने थे| एक क्षण के लिए भी उन्होंने स्वयं को यह नहीं भूलने दिया कि वह वनवास का पालन कर रहे हैं अपनी दैनिक दिनचर्या में भी वे शारीरिक श्रम स्वयं करते थे किसी की भी सहायता नहीं लेते थे लक्ष्मण और सीता की रक्षा की जिम्मेदारी भी उन पर ही थी| जिसको वह भली प्रकार निभा रहे इसी कारण जब सीता का हरण होता है तो वह इस बात पर बहुत पछताते हैं कि वह अपने इस कार्य में असफल रहे एक पिता की तरह लक्ष्मण का लालन पालन करते रहे युद्ध के समय जब लक्ष्मण मूर्छित हो जाते हैं तो राम सिर्फ इस बात का संताप करते हैं| अब मैं किस मुँह से वापस जाऊंगा अगर युद्ध जीत भी गया तो ऐसे राजपाट का क्या करूंगा और किस मुँह से सीता को यहां से लेकर जाऊंगा? माता सुमित्रा को क्या जवाब दूँगा कि मैं उनके पुत्र की बलि देकर आया हूं? अगर तुम्हारी मृत्यु के बाद मुझे सीता और राज्य मिलते भी हैं तो मैं उन दोनों का त्याग कर दूँगा क्योंकि मुझे ऐसा जीवन नहीं चाहिए ऐसा राज्य नहीं चाहिए;जिसे मैं तुम्हारी बलि देकर प्राप्त करूँ क्योंकि वह जानते थे कि लक्ष्मण की रक्षा करना उनका परमधर्म है| लक्ष्मण अपने कर्तव्य का पालन कर रहे थे और राम अपने कर्तव्य का पालन कर रहे| उन्होंने लक्ष्मण के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की और स्वयं के प्राण देने के लिए भी तैयार हो गए| जीवन के प्रत्येक क्षण में हर एक व्यक्ति को सही कार्य करने के लिए प्रेरित किया और सभी को उनके द्वारा किए गए कार्यों के लिए उचित सराहना देते हुए ऐसा निरंतर करते रहने के लिए प्रोत्साहित किया अपने जीवन में आए प्रत्येक व्यक्ति के योगदान को उन्होंने मान सम्मान दिया शबरी की भक्ति-भाव को भी पहचाना और केवट के भक्ति भाव को भी निषादराज को अपने भाई के समान माना जामवंत सुग्रीव अंगद हनुमान इनको भी पूरा मान-सम्मान दिया और इनके द्वारा बताई गई नीतियों के अनुसार कई बार उन्होंने युद्ध के समय निर्णय लिया जिस किसी पर भी विश्वास करते थे वह उस विश्वास को पूरा करने के लिए लग जाता था क्योंकि जिस भाव से विश्वास करते थे कोई भी उस भाव को आहत करना नहीं चाहता था|

श्री राम ने अपने जीवन में किसी के भी सामने ऐसी कोई इच्छा व्यक्त नहीं की जिससे ऐसा प्रतीत हो कि वह स्वयं के लिए भी कुछ चाहते ही नहीं थे दूसरों की इच्छाओं का पालन उन्होंने धर्म समझकर किया कि यह एक शिष्य का धर्म है यह एक पुत्र का धर्म है यह एक राजा का धर्म है यह एक भाई का धर्म है यह एक पिता का धर्म है यह एक मित्र का धर्म है यहां तक कि शत्रुता को भी धर्म की तरह निभाते रहे शत्रुता में भी किसी भी प्रकार का अनैतिक कार्य नहीं किया और न ही किसी के साथ व्यक्तिगत शत्रुता की अधर्म को सही मार्ग दिखाने के लिए ही उन्होंने अपने हथियार उठाए|उनकी उपस्थिति मात्र से ही लोग भय और चिंता से मुक्त हो जाते थे ऋषि विश्वामित्र जब श्री राम और लक्ष्मण को लेकर वन जा रहे थे | रास्ते में ही उन्होंने ताड़का का वध किया रघुनाथ जी ने मुनि से कहा आप जाकर निडर होकर यज्ञ कीजिए| मैं स्वयं यज्ञ की रखवाली करूंगा यज्ञ में बाधा डालने के कारण उन्होंने मारीच को फलवाला बाण मारा जिससे वह सौ योजन के विस्तार वाले समुद्र के पास जा गिरा फिर सुबह को अग्नि बाण मारा और लक्ष्मण जी ने राक्षसों की सेना

का संहार किया रामजी ने राक्षसों को मार दिया अपनी आगे की यात्रा पर निकले तो जहां कोई भी पशु पक्षी जीव जंतु नहीं था बस पत्थर की एक शिला;जिसको देखकर श्री राम ने उसके बारे में पूछा तब मुनि ने उस शिलारूपी अहिल्या की सारी कथा सुनाई| श्री राम के पवित्र और शोक को नष्ट करने वाले चरणों का स्पर्श पाते ही सचमुच वह तपो मूर्ति अहिल्या प्रकट हो गई| यहां पर भी हमसे राम को लोगों के दुख तथा शोक का नाश करने वाले दयालु मनुष्य के रूप में देखते हैं| उनके जीवन में वे जिस किसी का भी भला कर सकते थे उन्होंने किया क्योंकि वह स्वभाव से ही परोपकारी थे वे मानवता को ही अपना धर्म मानते थे उनके समक्ष कोई भी व्यक्ति दुखी नहीं रह सकता था और न ही दुविधा में क्योंकि किसी ने किसी भाति वह उसके दुख का कारण जानकर उसका निवारण अवश्य कर देते थे वह अदम्य साहस के धनी थे| विचारों से सुकुमार और कर्तव्य में दृढ़ थे उनके विचारों और प्रेम से भरे संवादों को सुनकर हम कदापि यह आकलन नहीं कर सकते हैं कि युद्ध क्षेत्र में या किसी भी अनैतिक कार्य को देखकर दे उसका इतनी दृढ़ता से विरोध कर सकते हैं और धर्म की रक्षा हेतु हथियार भी उठा सकते हैं| अपने द्वारा किए गए सराहनीय कार्यों का कोई भी लेखा-जोखा नहीं रखा उसका किसी भी प्रकार उल्लेख होने दिया क्योंकि वह तो स्वभाव वश ही सबका दिल जीत लेते थे वे किसी भी व्यक्ति की संवेदना को उसके मन की गहराई से समझ लेते थे और अपनी प्यारभरी वाणी से उसका हृदय जीत लेते थे उसके विश्वास को बनाए रखते हुए हर यथासंभव विधि से उसकी कठिनाई को सुलझाने का प्रयास करते थे दूसरे के जीवन को सुखमय बनाने के लिए प्रजा की इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए पिता के आदेश का पालन करने के लिए भाइयों की रक्षा करने के लिए तथा मित्रों का साथ देने के लिए उन्होंने स्वयं के अस्तित्व को भी नगण्य कर लिया| उनके अनुसार ऐसे मनुष्य का अस्तित्व होना या न होना दोनों ही बराबर है जो अपने कर्तव्य से विमुख होता है कर्तव्य की पूर्ति हेतु अगर कष्ट भी उठाना पड़े तो उसके लिए सहर्ष तैयार होना चाहिए|

लक्ष्मण और सीता जी के साथ श्री राम वन के लिए जाने लगे तो श्री राम तथा लक्ष्मण जी के द्वारा बड़ के दूध की सहायता से जब जटाएँ बनाई जाने लगी तो यह दृश्य देखकर सुमंत्र जी के नेत्रों में जल भर गया उनका मुख उदास हो गया हाथ जोड़कर श्रीराम से बोले की हे तात!मुझे कौशल नरेश दशरथ जी ने ऐसी आज्ञा दी थी कि तुम रथ लेकर राम के साथ जाओ वन दिखाकर गंगा स्नान कराकर तुम दोनों भाइयों को तुरंत लौटा लाना समस्त संशय और संकोच को दूर करके लक्ष्मण राम और सीता को घूमा -फिरा लाना महाराज ने ऐसा कहा था कि अब आप जैसा कहें मैं वैसा ही करूं मैं आपकी बलिहारी हूं इस प्रकार विनती कर के देश श्री राम के चरणों में गिर पड़े और बालकों की तरह रो दिए और बोले कृपा करके वही कीजिए जिससे अयोध्या नगरी अनाथ न हो तब बड़े प्रेम से श्री राम ने उन्हें उठाते हुए कहा हे तात ! आपने तो धर्म के सभी सिद्धांतों को छान डाला है शिबि, दधीचि, राजा हरिश्चंद्र ने धर्म के लिए अनेकों कष्ट सहे बुद्धिमान राजा रंतिदेव तथा बलि बहुत से संकट सहकर भी धर्म का परित्याग नहीं किया वेद शास्त्र पुराणों में कहा गया है कि सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं है मैंने उस धर्म को सहज ही पा लिया है अगर इस सत्य रूपी धर्म का मैं त्याग करता हूँ तो तीनों लोकों में क्या सन्देश जाएगा ? प्रतिष्ठित पुरुष के लिए अनिष्ट की प्राप्ति करोड़ों मृत्यु के समान भीषण संताप देने वाली हैं| हे तात! मैं आप से अधिक क्या कहूं लौटकर उत्तर देने में भी मैं पाप का भागी होता हूँ| आप भी पिताजी के समान मेरे बड़े हितैषी हैं मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूं कि आपका भी सब प्रकार से वही कर्तव्य है जिसमें पिताजी हम लोगों की सोच में दुख न पावे |जीवन में हम ऐसे कितने लोगों को जानते हैं जिनके हाथ में सत्ता आते-आते रह जाए? अथवा वे किसी अधिकार के मिलने से पहले ही उस अधिकार से विहीन हो जाए? परंतु खुद के कुछ खो जाने का दुख न करते हुए इस बात का ध्यान करें के इस सारे घटनाक्रम में किस किसको दुख हुआ और किस प्रकार इस दुख को कम किया जा सकता है?

स्वयं को खाली कर दूसरे को वरीयता देना, उसकी भावनाओं का ध्यान रखना और इस सोच में लगे रहना कि किस प्रकार से उस व्यक्ति के दुख को कम किया जा सकता है| यहां तो व्यक्ति सत्ता के जाने के दुख में या अधिकार विहीन होने पर इतना दुखी और कुंठित हो जाता है कि वह अपने दुख के आगे किसी और के दुख को समझ ही नहीं पाता कहां एक रात पहले श्री राम के राज्याभिषेक की तैयारियां चल रही थी| कुलगुरु वशिष्ठ श्री राम कथा सीता के द्वारा राज्य अभिषेक से पहले होने वाली रीतियों का पालन करवा रहे थे और कहां दूसरे दिन प्रातः काल इस तरह का समाचार मिलना फिर भी माथे पर किसी शिकन का न होना चिंतामुक्त होना सरल होना सहज होना और परिस्थिति को सहर्ष स्वीकार कर लेना यही तो राम है; तो कैसे न माना जाए कि उनका जीवन सदैव ही दूसरों के लिए था| प्रत्येक विकट परिस्थिति में दूसरों के मनोभावों का ध्यान रखना बालि के वध के बाद उनकी पत्नी तारा तथा पुत्र अंगद को यथोचित सम्मान दिलवाना तथा उनके दुख को कम करने का भरसक प्रयास करना| रावण के साथ युद्ध होने पर उसके परिजनों के मान-सम्मान का पूरा ध्यान रखना मंदोदरी को लोक-परलोक का ज्ञान देना| रावण को लक्ष्मण के द्वारा सम्मान दिलवाना और किसी के भी प्रति वैर-भाव न रखना यह दर्शाता है कि श्री राम के अतुलनीय व्यवहार का कोई दूसरा उदाहरण नहीं हो सकता|

ऐसा लगता है कि राम का जन्म ही दूसरों के लिए हुआ |राजा दशरथ सहित रानियों को प्रसन्नता देने के लिए,वनवासी तथा ऋषि-मुनियों को सुरक्षा देने के लिए, प्रजाजनों को सम्मान देने के लिए भाइयों को सानिध्य देने के लिए, पतितों को मुक्त करने के लिए और इस संसार में एक अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए श्री राम के जीवन के सार को समझने के लिए सबसे पहले हमें श्री राम को समझना पड़ेगा| उनके द्वारा किए गए प्रत्येक संवाद और व्यवहार को समझना होगा उनके द्वारा पालन किए गए धर्म को समझना पड़ेगा उनके द्वारा मान्यता दी गई नीतियों और नीतियों को समझना पड़ेगा| व्यवहार को समझने हेतु अर्थात हमें कब कैसे और किसके साथ कैसा व्यवहार करना है? इस ज्ञान हेतु किसी गुरुकुल की आवश्यकता नहीं है, संवेदनाओं के आधार पर हम सदैव ही उचित व्यवहार करते हैं और श्रीराम तो अपने आप में ही एक सतत एवं समग्र विचारधारा है| जिससे यह सीखा जा सकता है कि जीवन कैसे जीना चाहिए? क्योंकि जीवन एक निरंतर बहने वाली नदी के समान है जिस पर एक ऐसा बांध अवश्य होना चाहिए, जो हमारी भावनाओं को बांधकर रखे व्यग्रता उत्तेजना अगर विचारों में आ जाए तो निश्चय ही जीवन में और विचारों में बाढ़ आने की संभावना रहती है श्री राम के जीवन को अगर देखें तो वह एक ऐसी शीतल सरल और निश्छल नदी के समान है जो एक उचित बहाव के साथ बहती है न तो उसका वेग बहुत तीव्र है और न ही बहुत मंद |सीताहरण के पश्चात जिससे और जहां तक हो सके यथासंभव सहायता की आशा करते हुए जब हम उनको देखते हैं दोगे एक साधारण मनुष्य की भारती दूसरों से भी सहयोग की अपेक्षा रखते हैं जो कि किसी भी सामाजिक व्यवस्था का आधार है सहयोग देना तथा सहयोग लेना यह जीवन का एक ऐसा चक्र है जो निरंतर चलता रहता है जिस कारण सारी सामाजिक व्यवस्थाएं बनती है| रामचरितमानस के सुंदरकांड में जब विभीषण, अंगद, हनुमान, सुग्रीव आदि के साथ बैठकर समुद्र को पार करने की नीति बना रहे होते हैं| तब ऐसा वे दूसरों को मान-सम्मान देते हुए उनके विचार जानने की चेष्टा करते हैं| श्री राम जी नीति की रक्षा करने वाले वचन बोलते हैं-

सुनु कपीस लंकापति बीरा | केहि बिधि तरिअ गम्भीरा || ४६

अर्थात हे वीर! वानरराज सुग्रीव तथा लंकापति विभीषण इस गहरे समुद्र को किस प्रकार पार किया जाए? अनेक जाति के मगरमच्छ सांप और मछलियों से भरा हुआ यह समुद्र अत्यंत अथाह है, जिसे पार करना

---

४६ - सुंदरकांड, रामचरितमानस पृष्ठ सं० ६९८

सब प्रकार से कठिन है| ऐसी बात सुनकर विभीषण जी कहते हैं हे रघुनाथ! यद्यपि आपका एक बार ही इस समुद्र को सोख सकता है तथापि नीति ऐसी कहीं गई है की पहली जाकर समुद्र से प्रार्थना की जाए वे स्वयं ही विचार कर कोई ना कोई उपाय बतला देंगे| यह बात सुनकर श्री राम कहते हैं तुमने यह बहुत अच्छा उपाय बताया यही किया जाए यदि दैव सहायक हो यह उपाय लक्ष्मण जी के मन को अच्छा नहीं लगा राम जी के वचन सुनकर उन्होंने बहुत ही दुख पाया और कहा हे नाथ !दैव का कौन सा भरोसा मन में क्रोध का भाव लाइए और समुद्र को सुखा डालिए यह दैव ओ मन की कायरता को छुपाने का एक आधार है अर्थात स्वयं को तसल्ली देने का एक तरीका है आलसी लोग ही दैव -दैव पुकारा करते हैं लक्ष्मण की बात सुनकर रघुवीर हंसकर बोले ऐसे ही करेंगे मन में धीरज रखो ऐसा कहकर छोटे भाई को समझाया और समुद्र के समीप गए सिर झुका कर प्रणाम किया फिर किनारे पर कुश बिछाकर बैठ गए| जहां पर हम श्री राम के मन की सरलता को बड़ी ही आसानी से देख सकते हैं अपनी दूरदर्शिता एवं अस्त्र शस्त्रों के उत्तम ज्ञान के बावजूद भी वे सदा दूसरों से विचार-विमर्श करते रहते थे और साथ ही उनके द्वारा दिए गए विचारों का सम्मान करते हुए उसको क्रियान्वित भी करते थे; उन्होंने सदैव ही प्रेम तथा सम्मान को सर्वोपरि स्थान दिया वह सब में प्रेम बांटते थे और सब से प्रेम पाते थे|

रामचरितमानस के उत्तरकांड में एक ऐसा प्रसंग मिलता है; जहां एक बार श्री रघुनाथ जी के आमंत्रण पर गुरु वशिष्ठ ब्राह्मण और अन्य सब नगरवासी सभा में आए जब गुरु, मुनि,ब्राह्मण तथा अन्य सज्जन यथायोग्य स्थान पर बैठ गए| तब श्री राम जी ने कहा समस्त नगरवासियों मेरी बात सुनिए यह बात में हृदय में कुछ ममता लाकर नहीं कहता हूँ न अनीति की बात करता हूं और न इसमें कुछ प्रभुता ही है इसलिए संकोच आदि को छोड़कर मेरी बात सुनो अगर वह आपको अच्छी लगे तो अपने विचार दें| बड़े भाग्य से हमे यह मनुष्य शरीर मिलता है; इस शरीर के प्राप्त होने का फल विषय भोग नहीं है,इसके आगे स्वर्ग का भोग भी बहुत थोड़ा है और भोग का अंत दुख देने वाला ही है| अतः जो लोग मनुष्य शरीर पाकर उसे विषयों में लिप्त कर देते हैं| वे मूर्ख अमृत को बदल कर विष ले लेते हैं| जो पारस मणि को खोकर बदले में घुँघची ले लेता है उसको कभी कोई बुद्धिमान नहीं कह सकता यह अविनाशी जीव चारों खानों और चौरासी लाख योनियों में चक्कर लगाता रहता है| मनुष्य का शरीर भवसागर के लिए एक जहाज़ है, जो मनुष्य ऐसे साधन को पाकर भी भवसागर से न तरे तो उसकी बुद्धि के बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता|

इस प्रसंग में श्री राम ने धर्म तथा सत्संग की महत्ता को बताया है यदि हम अपने जीवन को धर्म के अनुसार जीते हैं| अपने कर्तव्यों को पूर्ण करते हैं;संसार के सभी जीवो को और उनकी भावनाओं को अपना समझते हैं;तो हम सच्चे मानव कहलाने के लायक हैं| श्री राम का आचरण उनकी दूरदर्शिता मृदुल स्वभाव चित्त को शीतलता देने वाली वाणी तथा सदैव दूसरों की सहायता के लिए तत्पर रहने का गुण अपने आप में अद्वितीय है और यही गुण श्रीराम के जीवन का सार भी हैं| श्री राम का जीवन हमें निरंतर प्रयत्नशील रहने के लिए प्रेरित करता है और इसका सबसे सशक्त उदाहरण रामसेतु है| जिसमें छोटे से लेकर बड़े सभी जीवो का पूर्ण सहयोग रहा है| यह रामसेतु हमें जीवन में कभी भी हार न मानने के लिए प्रेरित करता है| सुविधाओं के अभाव में भी हम अगर अपना ध्यान केंद्रित करके सतत कर्म करते रहते हैं, तो अपने लक्ष्य तक पहुंचना कदापि असंभव नहीं है| विषम परिस्थितियों में भी संभावनाओं के साथ जीवन को जीना तथा अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु समाज के सभी वर्गों से सहयोग लेना और देना यह बतलाता है श्री राम एक सुदृढ़ समाज की आधारशिला रखने में सफल हुए इसी तरह की भावना हम उनके राज्य के लोगों में तथा उनके आसपास रहने वाले उनके परिजनों तथा मित्र-गणों में भी देखते हैं| श्री राम के जीवन के सार को समझने के लिए अगर एक शब्द का प्रयोग किया जाए तो वह है 'रामराज्य' जिसकी परिकल्पना जिसकी इच्छा और जिस की कामना आज के समय में भी की जाती है|

श्रीराम जितने सरल रहे हैं उनका जीवन उतना ही कठिन और उनका जीवन हमें कठिनाइयों से लड़ने की उनसे जूझने की प्रेरणा देता है| जिसमें हम अपना मन शांत रखते हुए सब के प्रति अच्छी भावना और सहयोग भरा व्यवहार रखते हुए अपने जीवन को सुगमता से जी सकें| श्री राम का जीवन आज के संदर्भ में भी उतना ही सफल है जितना पहले था| उनका जीवन आज भी हमारे लिए एक उत्कृष्ट उदाहरण है| अपने मनोबल को बनाए रखने के लिए एक उत्साहवर्धक संजीवनी है, जो हमारे जीवन की निरंतरता को बनाए रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है |

तृतीय अध्याय: पारिवारिक तथा सामाजिक-चेतना के प्रणेता श्री राम

३.१-पारिवारिक सद्भाव के निर्माता :-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और परिवार समाज की इकाई; अर्थात परिवार के बिना हम समाज के कल्पना नहीं कर सकते| किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में समाज की अहम भूमिका होती है| परिवार से मिलने वाले संस्कार मनुष्य के व्यवहार का निर्माण करते हैं| मनुष्य के सोचने समझने की और व्यवहार करने की आधारशिला परिवार ही होता है| श्रीराम का जन्म एक ऐसे वंश में हुआ था जिसका अपना ही स्वर्णिम इतिहास रहा है;उनके पूर्वजों ने सदैव ही लोक कल्याण हेतु कार्य किया| महाराज इक्ष्वाकु, पृथु, सगर, भागीरथ, रघु, अज ,दशरथ सभी राजा अपने राज्यों को भली प्रकार संभालते थे| श्रीराम की वंशावली ने समाज के लोगों के साथ-साथ अपने परिजनों के लिए भी अनेकों प्रकार का जप और तप करके यह सिद्ध किया है कि परिवार के रूप में आपको एक अमूल्य निधि मिली है, जिसकी रखरखाव का उत्तरदायित्व हमारे ऊपर है| हमें उस उत्तरदायित्व को उचित प्रकार से निभाना चाहिए|राजा भगीरथ अपने पूर्वजों को उतारने के लिए तप के द्वारा गंगा नदी को पृथ्वी पर ले आए थे| श्री राम के पिता महाराज दशरथ ने भी अपने पूर्वजों की परंपरा को बनाए रखा| श्री राम के वियोग में अपने प्राण देकर राम के प्रति अपने प्रेम को निभाया तो वहीं दूसरी तरफ कैकेई को दिए गए वचन को पूरा करके धर्म को भी निभाया| अयोध्या नरेश दशरथ के सामने बड़ी विकट समस्या थी उन्हें वचन भी निभाना था और प्रेम भी दोनों एक दूसरे के विरोधी थे, वचन निभाने का अर्थ था;अपने पुत्र राम के प्रति प्रेम को हृदय से निकाल फेंकना और प्रेम निभाने का अर्थ था वचन के सत्य संकल्प से चूक जाना उन्होंने पुत्र प्रेम तथा धर्म प्रेम दोनों का ही मान रखा दशरथ ने अपने वचनों को पूरा करके अपने चरित्र को तो गरिमा दी है साथ ही साथ श्री राम को भी गरिमा युक्त आचरण करने हेतु प्रेरित किया राजा दशरथ ने क्षुद्रता दिखाई होती तो श्री राम का भी उन आदर्शों पर चलना कठिन हो जाता| उन्होंने दोनों को भली प्रकार निभाया कैकेयी को दिए गए वचन को भी निभाया और श्री राम के वियोग में प्राण त्याग कर प्रेम को भी निभाया| वचन को निभाना श्री राम के परिवार की परंपरा में था| श्री राम ने अपने परिवार में अपने से छोटों तथा बड़ों का मान सम्मान किया माता पिता तथा गुरुजनों आज इतना मान सम्मान श्रीराम ने किया वह अपने आप में ही एक अनुपम उदाहरण है| एक बार जब प्रभु श्री राम लक्ष्मण सीता चित्रकूट पर्वत की ओर जा रहे थे,तो वहां की राह बहुत पथरीली तथा कंटीली थी| श्रीराम के चरणो में एक कांटा चुभ गया परिणाम स्वरूप न ही वे रुष्ट हुए और न ही क्रोधित हुए बल्कि हाथ जोड़कर धरती माता से एक अनुरोध करने लगे वे कहते हैं कि हे मां! मेरी एक विनम्र प्रार्थना है क्या उसे स्वीकार करेंगे ? धरती माता ने कहा एक प्रार्थना नहीं आदेश दें , इस पर श्री राम कहते हैं कि मां मेरी बस यही विनती है कि जब भरत मेरी खोज में इस पद से गुजरे तो तुम नरम हो जाना कुछ पल के लिए अपने आंचल के यह पत्थर और कांटे छुपा लेना मुझे कांटा चुभा परंतु मेरे भरत के पांव में आधात मत होने देना| श्री राम को यूं व्यग्र देखकर धरा दंग रह गई और उन्होंने पूछा भगवान धृष्टता न हो पर क्या भरत आप से भी अधिक सुकुमार हैं;जब आप इतनी सहजता से सब सहन कर गए तो क्या भरत नहीं कर पाएंगे फिर उनको लेकर आपके चित्त में ऐसी व्याकुलता क्यों है? श्री राम बोले नहीं माता आप मेरे कहने का अभिप्राय नहीं समझी| यदि भरत को यदि कांटा चुभा तो वह उसके पांव को नहीं मेरे हृदय को विदीर्ण कर देगा वह अपनी पीड़ा से नहीं बल्कि कंटकाकीर्ण राह से मेरे भाई राम गुजरे होंगे और यह शूल उनके पदों में भी चुभे होंगे? मेरा भरत कल्पना में भी मेरी पीड़ा सहन नहीं कर सकता इसलिए उसकी उपस्थिति में आप फूलों की पंखुड़ियों सी कोमल बन जा इस घटना से हमें आभास होता है कि श्री राम का उनके भाइयों के प्रति

कितना आत्मीय प्रेम था और कितनी गहरी अनुभूति थी स्वयं के साथ होने वाली हर अच्छी बुरी घटना के आधार पर इस बात का आकलन कर लेते थे अगर यही स्थिति मेरे भाइयों के साथ होगी तो उसका उन पर क्या प्रभाव पड़ेगा? वे अपने परिजनों विशेषकर अपने भाइयों की मन:स्थिति से भली प्रकार भिज्ञ थे| जब भरत माताओं तथा मंत्रियों गुरुओं के साथ श्री राम से मिलने वन के लिए जाते हैं वह पूरा क्षेत्र निर्जन है यात्रा करते हुए जैसे-जैसे वे आगे बढ़ते जाते हैं उन्हें एक कुटिया दिखाई देती है और अनुमान लगाते हैं कि यहां श्रीराम रहते होंगे और समूह की अगुवाई निषाद राज कर रहे होते हैं| श्रीराम से मिलने के बाद भरत उनके दर्शन करके भाव विह्वल तो होते ही हैं, परंतु जब वे श्री राम लक्ष्मण और सीता जी को वल्कल वस्त्रों में देखते हैं तो उनके दुख की कोई सीमा नहीं रहती,उनकी जटाओं को देखते है; तो भरत के हृदय को बहुत ही आघात पहुंचता है| वे उन तीनों की इस दशा के लिए स्वयं को कोसने लगते हैं की उनकी माता ने उन्हे राजगद्दी दिलवाने के लालच में श्री राम, लक्ष्मण और सीता जी को इतना कठोर एवं कष्टमय जीवन दे दिया उनके हृदय की व्यथा शब्दों में बयान नहीं की जा सकती|श्री राम जब सबको मिलन के लिए व्याकुल देखते हैं, तो वे गुरु वशिष्ठ को प्रणाम करके सबसे उसी भाव से मिलते हैं| जिससे उन्हें आनंद की प्राप्ति हो; जो जिस भाव से मिलने का अभिलाषी था| उसकी रूचि के अनुसार उससे मिलन किया उन्होंने सबके दुख और कठिन संताप को दूर कर दिया| समस्त पुरवा से प्रेम में उमंग कर केवट से मिलकर उसके भाग्य की सराहना करते हैं श्री रामचंद्र जी ने सब माताओं को दुखी देखा मानुष सुंदर लताओं की पंक्तियों को पाला मार गया हो सबसे पहले रामजी कैकेई से मिले और अपने सरल स्वभाव तथा भक्ति से उसकी बुद्धि को उत्तर कर दिया फिर चरणों में गिरकर काल कर्म और विधाता केसर दोष मढ़कर श्री राम जी ने उनको सांत्वना दी श्री रघुनाथ सभी माताओं से मिले उन्हें समझा-बुझाकर संतोष करवाया कि हे माता! यह जगत ईश्वर के अधीन है फिर दोनों भाइयों ने ब्राह्मणों की स्त्रियों सहित जो भरत जी के साथ आई थीं | गुरु जी की पत्नी अरुंधति जी के चरणों की वंदना की उन सब का गंगा जी तथा गौरी जी के समान सम्मान किया| सबसे मिलन के उपरांत जब उनको यह ज्ञात हुआ कि राजा दशरथ स्वर्ग सिधार चुके हैं;तो श्री राम को गहरा आघात लगता है, अपने प्रति उनके स्नेह को उनके मरने का कारण विचार कर श्री रामचंद्र जी अत्यंत व्याकुल हो गए ब्रज के समान कठोर कड़वी वाणी सुनकर लक्ष्मण जी सीता जी और सब रानियां विलाप करने लगे सारा समाज शोक से अत्यंत व्याकुल हो गया मानो राजा आज ही स्वर्ग सिधारे हों | श्रेष्ठ वशिष्ठ जी ने राम जी को समझाया और उन्हें समाज सहित मंदाकिनी जी में स्नान करने का विचार दिया| उस दिन श्री राम जी ने निर्जल व्रत किया और मुनि वशिष्ठ के कहने पर किसी ने भी जल ग्रहण नहीं किया जैसा कि वेदों में कहा गया है| उसी के अनुसार पिता की क्रिया करके पाप रूपी अंधकार को नष्ट करने वाले सूर्यरूप श्री रामचंद्र जी शुद्ध हुए अपने पिता की आत्मा की शांति के लिए उन्होंने तर्पण किया श्री रामचंद्र बड़ी प्रीति के साथ गुरु जी से बोले हे नाथ! सब लोग यहां अत्यंत दुखी हो रहे हैं| कंदमूल फल और जल का ही आहार करते हैं| भाई शत्रुघ्न सहित भरत को मंत्रियों को और सब माताओं को देखकर मुझे एक एक पल युग के समान लग रहा है| अतः सबके साथ आप अयोध्यापुरी को पधारिए आप यहां हैं और राजा दशरथ स्वर्ग में हैं; अयोध्या सूनी है अगर मैंने कुछ ज्यादा ही कह डाला हो तो मुझे क्षमा करें।

इस प्रकरण में भी हमें श्रीराम का उनके परिवार के प्रति प्रेम समर्पण देखने को मिलता है वे अपने परिवार के साथ राजा दशरथ के स्वर्ग सुधारने का शोक मनाते हुए भी इस बात को समझ पाते हैं कि उनका परिवार और समाज जो उनसे मिलने आया है वह जंगल में रहने का आदी नहीं है, न ही कंदमूल खाने का न ही सुख वैभव

के बगैर जीवन जीने का अपने परिजनों को वन में इस अवस्था में रहते देख श्रीराम अत्यंत ही दुखी होते हैं और अपने एकांत और कष्ट में जीवन का ध्यान न करते हुए वे गुरु से प्रार्थना करते हैं कि जल्द से जल्द सब को लेकर अयोध्या लौट जाए ताकि सभी लोग अपना जीवन नगर के जीवन के अनुरूप जी सकें वनवासी के अनुरूप नहीं। श्री राम का अपनी विमाताओं के प्रति प्रेम तथा अपने भाइयों के प्रति सद्भाव परिवार के अन्य लोगों को भी पारिवारिक प्रेम को और सुदृढ़ करने की प्रेरणा देता है। इसी क्रम में हम भारत तथा कौशल्या के संवाद तथा उनके प्रेम को देख सकते हैं जब भरत को यह पता चलता है कि उनकी माता कैकई ने श्री राम को वनवास दे दिया है और भरत के लिए सिंहासन मांगा है तो वह अपनी माता पर बड़े क्रोधित होते हैं| इस पर कौशल्या जी उनको यह सीख देती हैं कि जो भी घटनाक्रम हुआ है उसको विधि का विधान समझें| विधान में ऐसा ही लिखा था दुखी होने की जगह वह अपने राजधर्म का पालन करें क्योंकि न तो राज्य में दशरथ हैं और न ही राम जो कि प्रजा की देखभाल कर सकें| ऐसे कठिन समय में भी अपने पुत्र को वनवास मिलने के बाद भी कौशल्या कैकेई को सूचना देते हुए भरत को ही समझाते हैं कि अपनी माता का प्रतिरोध न करते हुए अपने राजधर्म का पालन करें सारी विधियां और सारे राजकाज को भली प्रकार समझते हुए राजगद्दी ग्रहण करें यह एक ऐसा संवाद है और ऐसा व्यवहार है जो कि साधारण व्यक्ति सोच भी नहीं सकता| श्रीराम ने कभी भी अपने वनवास के लिए कैकई को दोषी नहीं माना तथा पिता को दिए हुए वचन का पूरी दृढ़ता से पालन किया और एक उत्कृष्ट पारिवारिक वातावरण देने में सदैव सफल रहे उनके व्यवहार का अनुकरण करते हुए परिवार के अन्य सदस्य भी एक दूसरे के प्रति प्रेम का समर्पण का भाव रखते थे।

३.२ समस्त दायित्वों के कुशल निर्वाहक:

श्री राम को जिस भी आयु में जो भी दायित्व मिला उन्होंने उसका कुशलता पूर्वक निर्वहन किया बाल्यकाल से लेकर अयोध्या नरेश बनने तक के जीवन में अनेकों ऐसी परिस्थितियां आई जब समय उनको कर्तव्यनिष्ठता की कसौटी पर कसता रहा और श्री राम हर कसौटी पर खरे उतरे उनके जीवन में अधिकतम समय प्रतिकूल ही रहा अभी श्रीराम ने इस प्रतिकूलता को अनुकूलता में बदलते हुए निर्विकार भाव से परिस्थितियों का सामना किया और समय के अनुरूप जो भी दायित्व मिलता गया उसको बिना किसी प्रश्न के बिना किसी चिंता के निभाते चले गए। वे सदैव ही एक कुशल प्रबंधक के रूप में अपने जीवन का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करते रहे उन्होंने अपने जीवन के सभी फलों को सुनियोजित प्रकार से जिया अभी तो उनके जीवन में घटने वाली सभी घटनाएँ अकस्मात थी फिर भी उन्होंने अकस्मात होने वाले उन घटनाओं को भी सहर्ष स्वीकार किया और उन्हीं के अनुरूप अपने कार्य को सुनियोजित किया एक बालक के रूप से लेकर छात्र रूप तक राजकुमार से लेकर पति के रूप तक भाई के रूप से लेकर पिता के रूप तक पुत्र के रूप से लेकर नरेश के रूप तक हम उनको सभी चरित्रों में श्रेष्ठ पाते हैं| उनका व्यवहार सभी के साथ प्रेम पूर्वक था तथा संबंध आत्मीय थे| एक बालक के रूप में वे माता-पिता को आनंदित करते हैं| एक क्षत्रिय राजकुमार के रूप में वे ऋषि विश्वामित्र के वनस्पन को भयमुक्त करते हैं| एक वीर राजकुमार के रूप में वे सीता का स्वयंवर जीतते हैं | एक भावी नरेश के रूप में वे राजकाज को संभालने की तैयारी करते हैं| एक पुत्र के रूप में पिता के वचन को निभाते हैं एक वनवासी के रूप में वन की परिधि का पालन करते हैं| एक मित्र के रूप में उसके हुए अपमान का प्रतिशोध लेते हैं तथा उसको उसका राज्य वापस करते हैं एक वियोगी पति के रूप में अपने पत्नी को वापस लाने का प्रयत्न करते हैं,

फिर वह चाहे रीछ- वानरों की सेना को एकत्र करने के रूप में हो राम सेतु बनाने के रूप में हो, या फिर एक नरेश के रूप में राज्य को उत्कृष्ट उपहार रामराज्य देने के रूप में हो हम उन्हें सभी प्रकार के चरित्रों में सर्वश्रेष्ठ मानते हैं क्योंकि उनका आचरण सदैव ही इस संसार के लिए सर्वश्रेष्ठ रहा है | आशुतोष राणा द्वारा लिखित : रामराज्य के एक भाग के अनुसार चित्रकूट से लौटते समय भरत नंदीग्राम में ही रुक गए ,उन्होंने निर्णय दिया था कि श्री राम के अयोध्या वापस लौटने तक उनके चरण पादुका ए रघुवंश के सिंहासन पर रखी जाएंगी और स्वयं राजकुमार भरत नगर में रहते हुए भी निर्वासित जीवन जिएंगे संपूर्ण प्रजा और राज परिवार को शत्रुघ्न के साथ अयोध्या लौटा दिया गया था अयोध्या के इतिहास में यह पहला अवसर था जब उसके गौरवशाली सिंहासन पर कोई पुरुष नहीं किसी प्रति को प्रतिष्ठित किया गया था अनाथ हुई अयोध्या अपने इस दुर्भाग्य के लिए महारानी कैकेयी को दोष दे रहे थेजिसने अपने तुच्छ इच्छा की पूर्ति के लिए अयोध्या को कुंठित करके छोड़ दिया था| कैकेयी के मन में राम के प्रति जो प्रेम था उसको सोचते हुए राजा दशरथ को भी इस बात पर तनिक भी विश्वास नहीं हुआ था कि वो स्वयं राम के लिए वनवास मांग रही हैं; राम के वनवास के बाद कैकई को कई अवसरों पर लज्जित होना पड़ा और उनके लिए मात्र धिक्कार के स्वर ही उठते थे और क्यों न उठे कि इस बात को बहुत अच्छी तरह से जानती थी कि कैकई का नाम उनका सम्मान उनका प्राण प्रिय पुत्र राम ही है इसलिए जब तक राम थे तब तक कैकई का मान था अब जब राम ही अयोध्या में नहीं है तो मान कहां से होगा | माता कैकेयी पानी होने के साथ-साथ चारों राजकुमारों के जीवन में एक गुरु का स्थान भी रखती थी वे उन्हें जीवन और उसे जुड़े कई तथ्यों का ज्ञान भी करवाती थी ऐसा ही एक संस्मरण उपरोक्त पंक्तियों के आधार पर उल्लेखित है| कैकई को वे दिन अनायास ही याद आ गए जब वो राम और भरत को बाण संधान की प्रारंभिक शिक्षा दे रही थी| एक डाल पर बैठे हुए कपूर की तरफ देखकर कैकई ने उस पर निशाना साधने के लिए कहा तो भावुक भरत ने अपने धनुष और बाण नीचे रख दिए और उन्होंने कहा मैं किसी का जीवन लेने पर यदि मेरी दक्षता निर्भर है तो मुझे दक्ष नहीं होना| मैं इस निर्दोष पक्षी को अपना लक्ष्य नहीं बना सकता उसने क्या बिगाड़ा है मेरा जो उसे मेरे लक्ष्य की प्रवीणता के लिए अपने प्राण गंवाने पड़े कि बालक भरत के हृदय में चल रहे भावों को बहुत अच्छे से समझ रहे थे यह बालक बिल्कुल यथा गुण तथा नाम ही है भावों से भरा हुआ जिसके हृदय में प्रेम सदैव विद्यमान रहता है | तब कैकई ने राम से कहा पुत्र उस पर लक्ष्य साधो और राम ने एक क्षण भी नहीं लगाया और उसका कपोत को भेद कर रख दिया राम के सधे हुए निशाने से प्रश्न कैकई ने राम से पूछा पुत्र तुमने उचित अनुचित का विचार नहीं किया | तुम्हें उस पक्षी पर तनिक भी दया ना आई सामने बड़े भोलेपन से कहा था मां मेरे जीवन में अधिक महत्वपूर्ण मेरी मां की आज्ञा है उचित अनुचित का विचार करना यह मां का काम है मां का संकल्प उसकी इच्छा उसके आदेशों को पूरा करना ही मेरा लक्ष्य है आप मुझे सिखा रहे हैं और दिखा भी रहे हैं आप हमारी मां ही नहीं दो ही हैं यह किसी भी पुत्र और शिष्य का कर्तव्य होता है कि वह अपने गुरु और अपनी मां के दिखाए गए मार्ग पर निर्विकार निर्भीकता से आगे बढ़े अन्यथा गुरु का सिखाना और दिखाना सब व्यर्थ हो जाएगा | कैकेयी ने आह्लादित होते हुए राम को अपने अंक में भर लिया था| दोनों बच्चों को लेकर राम के द्वारा गिराए गए कपोत के पास पहुँच गईं| भरत आश्चर्य से उस पक्षी को देख रहे थे जिसे राम ने अपने पहले ही प्रयास में मार गिराया था पक्षी के वक्ष में बाण घुसे होने के बाद भी उन्हें रक्त की एक भी बूंद दिखाई नहीं दे रही थी | भरत ने उस पक्षी को हाथ में लेते हुए कहा मां यह क्या यह तो खिलौना है आपने कितना सुंदर प्रति रूप बनाया इस पक्षी का मुझे तो यह सच का और जीवित पक्षी प्रतीत हुआ था तभी मैं इसकी प्रति दया के भाव से भर गया था माया के वशीभूत होकर मैंने आपकी आज्ञा का उल्लंघन किया इसके लिए क्षमा प्रार्थी हूं तब कैकयी ने ममता से भरे हुए कहा था पुत्रों मैं तुम्हारी माँ हूँ, मैं तुम्हें बाण का संधान सिखा रही हूँ;

वध का विधान नहीं क्योंकि वीर लक्ष्य भेदने में प्रवीण होते ही स्वयं जान जाता है कि किसका वध करना आवश्यक है और कौन अवध है किंतु भान रहे जो दिखाई देता है आवश्यक नहीं कि वह वास्तविकता हो और यह भी आवश्यक नहीं कि जो वास्तविकता हो वह तुम्हें दिखाई दे कुछ जीवन संसार के मृत्यु के कारण होते हैं तो कुछ मृत्यु संसार के लिए जीवनदायी होती हैं| भरत ने पूछा था मां आपकी इस कथन का अर्थ समझ में नहीं आया हमें कैसे पता चलेगा कि जीवन के पीछे मृत्यु है या इस मृत्यु के पीछे छुपा हुआ है? वृक्ष के नीचे बैठी हुई एक दृष्टि राम और भरत पर डाली उन्होंने देखा कि दोनों बालक धरती पर बैठे हुए बहुत धैर्य से उनके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं|धैर्य-विश्वासी चरित्र का प्रमाण होता है और अधीरता अविश्वासीचरित्र की| माता की चेतना को आनंद मिला कि उनके बच्चे विश्वासी चरित्र वाले हैं उन्होंने बताया था और सार में सार को ढूंढना और सार में से असार को अलग कर देना ही संसार है| असार में सार देखना प्रेम दृष्टि है; तो सार में से असार को अलग कर देना ज्ञान दृष्टि; पुत्र भरत तुम्हारा चित्त प्रेमी का चित्त है और पुत्र राम तुम्हारा चित्त, ज्ञानी का चित्त है क्योंकि तुम हृदय में छुपे हुए भाव को स्पष्ट देख लेते हो राम ने उत्सुकता से पूछा मां प्रेम और ज्ञान में क्या अंतर होता है मां बोली अंतर होता है संतान जीवन में माता-पिता की प्रवृत्ति का आधार होती हैं इसलिए उनमें व्याप्त गुणों के आधार पर नाम रखते हैं यथा नाम तथा गुण भाइयों में ज्ञान भक्ति वैराग्य सदैव राम के मार्ग पर उनके अनुसार उसे धारण करते हुए चलना क्योंकि वह ज्ञान ही होता है जो हमारी प्रवृत्तियों का सदुपयोग करते हुए हमारे निवृत्ति का हेतु होता है| श्री राम माता कौशल्या से भी अधिक प्रेम और विश्वास का प्रदर्शन माता कैकेयी के प्रति करते थे| कैकेयी भी श्रीरामके प्रति विशेष लगाव रखती थी |श्री राम केवल कौशल्या नंदन की भांति जब हार नहीं करते थे माता कैकेयी तथा माता सुमित्रा के भी लाडले थे| राजा दशरथ के तो उनमें प्राण ही बसते थे; इस प्रकार यह कह सकते हैं श्री राम पुत्र के रूप में आनंद देने वाले थे| माता- पिता की आज्ञा को सर्वोपरि मानने वाले आदर्श पुत्र के उदाहरण के रूप विद्यमान हैं|
एक भ्राता के रूप में श्री राम की भूमिका अत्यधिक अनुकरणीय है|उन्होंने समस्त दायित्वों का निर्वहन हुए अपने छोटे भाइयों को अपने कृतित्व के द्वारा जीवन की सीख दी | श्रीराम के तीनो भाई लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न कहने को तो सौतेली मां के पुत्र थे लेकिन उन्होंने सभी भाइयों के प्रति सगे भाई से भी बढ़कर त्याग और समर्पण का भाव और उन्हें भरपूर स्नेह दिया| श्री राम का आश्रम सदैव ही उनके अन्य भाइयों के लिए अनुकरणीय होता था प्रातः काल उठकर माता पिता और गुरु को प्रणाम करते हैं और उनकी आज्ञा लेकर नगर के काम करते हैं उनका इस प्रकार का चरित्र छोटे भाइयों के लिए पाठ के समान है|

वेद पुराण सुनहिं मन लाई आपु कहहि अनुजन्ह समझाई || ४७

अर्थात श्री राम मन लगाकर वेद और पुराण सुनते हैं और फिर स्वयं छोटे भाइयों को समझा कर उसी के अनुसार आचरण करने की प्रेरणा देते हैं| यही कारण यह था कि ननिहाल से वापस आने पर जब भरत शत्रुघ्न को राम के वनवास का समाचार मिला तो वे अत्यंत दुखी हो गएउन्हें इस बात का बहुत दुख हुआ कि उनकी माता ने राजपाट के लालच में श्री राम और लक्ष्मण सरीखे भाइयों को वनवास दिला दिया और दशरथ भी परलोक सिधार गए| वे अपने आप को अभागा मानते हुए कहने लगे कि जो पाप माता पिता और पुत्र के मारने से होता है और जो गौशाला और ब्राह्मणों के नगर जलाने से होता है| जो पाप स्त्री और बालक की हत्या करने से होता है और जो मित्र और राजा को जहर देने से होता है| कर्म, वचन और मन से होने वाले जितने

---

४७ - बालकाण्ड, रामचरितमानस, पृष्ठ सं० १७६,

छोटे-बड़े पाप हैं, वे सब पाप मुझे लगें| भरत द्वारा श्रीराम के प्रेम और वियोग में कही गई ये बातें उनके प्रेम के भाव और प्रेम की गहराई को स्पष्ट करती हैं भरत को दुखी देखकर माता कौशल्या उन्हें समझाते हुए कहती हैं -

"मातुभरत के बचन सुनी साँचे सरल सुभाय |
कहति राम प्रिय तात तुम्ह तुम सदा वचन मन काय" || ४८

भरत जी के सच्चे स्वभाव और सरल वचनों को सुनकर माता कौशल्या कहती हैं तुम तो मन वचन और शरीर से सदा ही श्री रामचंद्र के प्यारे हो| श्री राम का अपने भाइयों के प्रेम और स्नेह था उस पर कोई शंका नहीं कर सकता था जिस प्रकार श्री राम अपने भाइयों को प्रेम करते थे फिर उसी प्रकार उनके भाई भी राम जी से प्रेम करते थे| श्री राम के त्याग तथा प्रेम को देखते हुए;उससे सीख लेते हुए तीनो भाई परस्पर सहयोग तथा समर्थन के लिए तैयार रहते थे कोई भी भाई यह नहीं चाहता था कि उनकी वजह से अन्य भाइयों को दुख पहुंचे| भरत तथा कौशल्या माता के संवाद में कौशल्या माता आगे कहती हैं कि-

" राम प्रानहु तें प्रान तुम्हारे | तुम्ह रघुपति प्रानहु ते प्यारे || ४९

अर्थात श्री राम तुम्हारे लिए प्राणों से भी बढ़कर प्रिय हैं और तुम भी श्री रघुनाथ को प्राणों से भी अधिक प्रिय हो| चंद्रमा चाहे विष चुआने लगे और पाला आग बरसाने लगे ; जलचर जीव जल से विरक्त हो जाएं और ज्ञान हो जाने पर भी चाहे मोह न मिटे;परंतु तुम श्री रामचंद्र के प्रतिकूल कभी नहीं हो सकते| इसमें तुम्हारी सम्मति है जग में जो कोई ऐसा कहते हैं कि तुम श्री राम का बुरा चाहते हो वह स्वप्न में भी सुख और शुभ गति नहीं पाएंगे|

रामचरितमानस के लंका कांड में श्री राम और रावण के मध्य चलने वाले युद्ध में लक्ष्मण जी, मेघनाद द्वारा चलाई गई वीरघातिनी शक्ति लगने से मूर्छित हो जाते हैं| तब हनुमान जी उन्हें लेकर आते हैं छोटे भाई की इस दशा को देखकर श्रीराम अत्यधिक दुखी होते हैं| जामवंत के यह बताने पर कि लंका में वैद्य सुषेण रहते हैं अगर उनको ले आया जाए तो कोई न कोई उपाय अवश्य बताएंगे और उनके द्वारा किए गए उपचार से लक्ष्मण जी ठीक हो जाएंगे| हनुमान जी छोटा रूप धरकर सुषेण वैद्य को उनके घर समेत तुरंत ही उठा लाए| हनुमान जी संजीवनी लेकर वापस लौट रहे थे उड़ते हुए से अयोध्या नगरी के ऊपर पहुंचे| भरत जी ने आकाश में जब अत्यंत विशाल स्वरूप देखा और मन में अनुमान किया कि यह कोई राक्षस है;तो उन्होंने खींच कर बिना फल का एक बाण मारा| हनुमान जी, राम-राम रघुपति का उच्चारण करते हुए मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े| अपने प्रिय वचन अर्थात राम का नाम सुनकर वे हनुमान जी के पास आए हनुमान जी को व्याकुल देखकर उन्हें हृदय से लगा लिया मन उदास हो गया और बड़े दुखी हुए| विषाद के आँसू भर कर बोले जिस विधाता ने मुझे श्रीराम से विमुख किया| उसी ने फिर यह भयानक दुःख भी दिया| यदि मन वचन और शरीर से श्रीराम के चरण कमलों में मेरा निष्कपट प्रेम हो और यदि श्री रघुनाथ जी मुझ पर प्रसन्न हो तो यह वानर थकावट और पीड़ा से रहित हो जाए| यह वचन सुनते ही कपिराज हनुमान जी कौशलपति श्री रामचंद्र जी की जय हो जय हो करते हुए उठ गए| भरत जी ने हनुमान जी को हृदय से लगा लिया उनका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रों में आनंद तथा प्रेम के अश्रु भर गए| रघुकुल तिलक श्री रामचंद्र जी का स्मरण करके भरत जी

---

४८ ,४९ - अयोध्या काण्ड रामचरितमानस, पृष्ठ सं० ४३९

के हृदय में प्रीत समाती न थी भरत जी बोले हे तात ! छोटे भाई लक्ष्मण तथा माता जानकी सहित सुख निधान श्री राम कुशल तो हैं ? हनुमान जी ने संक्षेप में सब कथा कहीं यह सुनकर भरत जी बहुत दुखी हुए और मन में पछताने लगे हे जगत में क्यों जन्मा प्रभु के एक भी काम न आया फिर सर जानकर मन में धीरज धरकर बलवीर भरत जी हनुमान से बोले तुमको जाने में देर हो रही होगी और सवेरा होते ही काम बिगड़ जाएगा | अतः तुम पर्वत सहित मेरे बाण पर चढ़ जाओ मैं तुमको वहां भेज दूं | जहां कृपा के धाम श्री राम जी हैं श्री राम को मन ही मन याद करके हनुमान जी ने भरत के चरणों की वंदना करके हाथ जोड़कर भोलेनाथ के प्रभु मैं आपका प्रताप हृदय में रख कर तुरंत चला जाऊंगा| ऐसा के आज्ञा पाकर भर जी के चरणों की वंदना करके हनुमान जी चले|

रामचरितमानस के इस प्रसंग में आई प्रत्येक पंक्ति में भरत जी का श्री राम के प्रति अगाध प्रेम और श्री राम जी को होने वाले प्रत्येक कष्ट के लिए स्वयं को दोष देते हुए भरत को पाते हैं| अर्थात श्री राम को मिलने वाले हर कष्ट हर दुख के लिए वे स्वयं को दोषी मानते हैं ऐसी ही पंक्ति आगे वर्णित है| जिसमें श्री भरत का श्री राम के प्रति प्रेम और उन को होने वाले कष्ट के लिए स्वयं को दोषी मानना तथा स्वयं के कारण हनुमान जी द्वारा किए जा रहे प्रयास में विलंब होने का दोष भी स्वयं को देते हैं -

"जेहि बिधि राम बिमुख मोहि कीन्हा | तेहि पुनि तेरी यह दारुण दुख दीन्हा ||
जो मोरे मन बच अरु काया | प्रीति राम पद कमल अमाया" || ५०

भरत जी के बाहुबल, गुण और श्री राम के चरणों में अपार प्रेम के मन ही मन बारंबार सराहना करते हुए हनुमान जी चले जा रहे हैं| भरत जी के कृतित्व से हनुमान जी उनके श्री राम के प्रति प्रेम का आकलन करने में सफल हुए दोनों भाइयों के बीच इतना प्रेम देखकर हनुमान जी भी भावविभोर हो गए -

भरत बाहुबल सील गुण प्रभु पद प्रीती अपार |
मन महुँ जात सराहत पुनी-पुनी पवन कुमार || ५१

वहां हनुमान जी की प्रतीक्षा में श्री राम अधीर हैं और वे लक्ष्मण जी को देखकर बोलते हैं आधी रात बीत चुकी हनुमान नहीं आए ऐसा कहते हुए वे छोटे भाई लक्ष्मण को हृदय से लगा लेते हैं -

उहाँ राम लछिनमहि निहारी | बोले बचन मनुज अनुसारी ||
अर्ध रात्रि गइ कपि नहीं आयउ | राम उठाई अनुज उर लायहु || ५२

दुखी मन से श्री राम अपने मूर्छित भाई लक्ष्मण को देखकर कहते हैं| हे भाई ! तुमने मुझे कभी दुख नहीं दिया मुझे दुखी देख ही नहीं सकते थे तुम्हारा स्वभाव सदा से ही कोमल था| मेरे हित के लिए तुमने माता पिता को भी छोड़ दिया और वन में ग्रीष्म, शीत और वर्षा सभी को सहन किया| भाई! वह प्रेम अब कहां है मेरे व्याकुलता पूर्ण वचन सुनकर तुम क्यों नहीं उठते? यदि मैं जानता कि वन में भाई का बिछोह होगा तो मैं पिताजी का वचन, जिसका पालन करना मेरे लिए सर्वोपरि था उसे भी नहीं मानता| पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार यह जगत में बारंबार आते हैं और जाते हैं परंतु भाई बार-बार नहीं मिलता| ऐसा विचार करके जागो जैसे पंख बिना पक्षी, मणि बिना सर्प और बिना हाथी अत्यंत दीन हो जाता है वैसे ही;यदि कहीं देव मुझे

५०, ५१ ,५२ - लंकाकाण्ड, रामचरितमानस, पृष्ठसं० ७५९

जीवित रखें तो तुम्हारे बिना मेरा जीवन भी ऐसा ही होगा| अयोध्या के लिए प्यारे भाई को खोकर मैं कौन सा मुंह लेकर जाऊंगा? मैं जगत में बदनामी भले ही लेता कि राम को कुछ भी पता नहीं है जो स्त्री को ही खो बैठे| स्त्री की हानि से कोई विशेष हानि नहीं थी | अब तो हे पुत्र ! मेरा निष्ठुर और कठोर हृदय यह अपयश और तुम्हारा शोक दोनों ही सहन करेगा| हे तात! तुम अपनी माता के पुत्र और उसके प्राण आधार हो| सब प्रकार से सुख देने वाला और परम हितकारी जानकर उन्होंने तुम्हें मेरे हाथ में सौंपा था मैं अब जाकर उन्हें क्या उत्तर दूँगा ? हे भाई !तुम उठ कर मुझे कुछ समझाते क्यों नहीं ? श्री राम बहुत प्रकार से विचार कर रहे हैं उनके नेत्रों से विषाद के आँसू बह रहे हैं| प्रभु के प्रलाप को सुनकर वानरों के समूह भी व्याकुल हो गए| तभी हनुमान जी आ गए और ऐसा लगा जैसे करुण रस के प्रसंग में वीर रस आ गया हो | श्रीराम अत्यंत हर्षित होकर हनुमान जी को गले लगाकर मिले और उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की वैद्य सुषेण ने तुरंत उपचार किया| जिससे लक्ष्मणजी हर्षित होकर उठ बैठे फिर राम को हृदय से लगाकर मिले वानरों और भालुओं के समूह सभी हर्षित हो गए|

श्री राम के वनवास के समय लक्ष्मण उनके साथ वन को गए और राम की अनुपस्थिति में राजपाट मिलने के उपरांत भरत का उस राजपाट को स्वीकार न करना और स्वयं को करोड़ों करोड़ों दोष देना श्री राम से मिलने पंचवटी जाना और उनके समझाने पर अपनी यह शर्त रखना कि वे उनकी चरण पादुका को श्रीराम का प्रतीक मानकर राज सिंहासन पर विराजित करेंगे| भरत का श्रीराम के मूल्यों को ध्यान में रखकर राज सिंहासन पर उनके चरण पादुका रख जनता की सेवा करना अपने आप में ही भाइयों के प्रेम का अनूठा उदाहरण है| अतः हम इस बात का आकलन कर सकते हैं| श्री राम का अपने भाइयों के प्रति प्रेम और विश्वास अतुलनीय था और वे स्वयं को एक अच्छे भाई के रूप में स्थापित करने में सफल रहे|

श्री राम विश्वासपात्र मित्र के अनुपम उदाहरण हैं मित्रों के महत्व तथा जीवन में उनके स्थान को यदि समझना हो तो श्रीराम से बढ़कर कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलेगा उनकी मित्रता में उनकी मित्रता में किसी जाति या वर्ग के लिए विशेष स्थान नहीं था उनके लिए उनका हर मित्र उनके भाई की तरह ही था रामचरितमानस के उत्तरकांड में श्रीराम द्वारा निषाद राज के लिए कहा गया

तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता | सदा रहेहु पुर आवत जाता ||
बचन सनत उपजा सुख भारी | परेउ चरण भरि लोचन बारी || ५३

श्री राम जी ने निषादराज को बुलाया और उन्हें भूषण वस्त्र प्रसाद में देते हुए कहा अब तुम भी घर जाओ वहां अपने मित्र को याद करते रहना और मन वचन तथा कर्म से और भरत के समान भाई हो अयोध्या में सदा आते जाते रहना यह वचन सुनते ही निषादराज को बहुत सुख मिला और उनके नेत्रों में आनंद और प्रेम के आंसू भर आए| क्या जय श्री राम को याद करते हुए याद करते हुए अपने घर आए और अपने सभी कुटुंबियों को उन्होंने श्रीराम का स्वभाव कह सुनाया| श्री रघुनाथ जी का यह चरित्र सुनकर अवधपुरवासी बार-बार कहते हैं कि सुख की राशि श्री रामचंद्र जी धन्य हैं| श्री राम के राज्य में प्रतिष्ठित होने पर तीनों लोक हर्षित हो गए उनके सारे शोक जाते रहे कोई किसी से बैर नहीं करता श्री रामचंद्र जी के प्रताप से सब के आंतरिक भेदभाव मिट गए| इसी प्रकार सुग्रीव तथा विभीषण के साथ उन्होंने अपनी मित्रता को बड़े सरल और सहज रूप से निभाया| जिस प्रकार वे स्वयं भी धर्मानुसार आचरण करते थे ठीक उसी प्रकार वे अपने मित्रों को भी धर्म पर चढ़ने का परामर्श दिया प्रत्यक्ष तथा नीति के अनुकूल राजकाज चलाने के सीख देते थे| हमारे शास्त्रों में भी

---

५३ उत्तरकांड ,रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या ८५३

बताया गया है मित्र वही होता है जो आपको धर्म तथा नैतिकता का पाठ पढ़ाएं अगर जीवन में कभी आप विधर्मी हो रहे हो तो आपको सही मार्ग दिखाएं और श्रीराम ने अपने मित्र होने का उत्तर दायित्व भली प्रकार से निभाया| उनको जब भी श्री राम के सहायता एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता हुई| श्रीराम ने सदैव ही उनकी सहायता की; हम श्रीराम को एक उत्तम मित्र के रूप में परिभाषित कर सकते हैं|

विभीषण तथा सुग्रीव के साथ भी श्री राम ने अपनी मित्रता को न्यायपूर्ण तरीके से निभाया उनको भी सदा नैतिकता का पाठ पढ़ाया और स्वयं भी इस तरह के कार्य किए जिससे उनके मित्र उनके भाई तथा उनके प्रति अपार श्रद्धा रखने वाले जनसाधारण भी उनके जीवन से प्रेरित होते हुए अपने जीवन में भी उन्हें सद्गुणों का सम्मिश्रण करते हुए धर्म के प्रति आस्था रखते हुए नैतिकता के भाव के साथ अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकें| श्री राम ने मित्रता को निभाने के लिए कभी भी और अधर्म का सहारा नहीं लिया और किसी भी विधर्मी से मित्रता नहीं की यह किसी के भी विधर्मी व्यवहार को कदापि सहन नहीं करते थे और सदैव वही व्यवहार करते थे, जो न्यायोचित ऐसे ही वे प्रत्येक व्यक्ति को परस्पर प्रेम का संदेश देते थे बिना विचार किए हुए किसी कार्य को करने में विश्वास नहीं रखते थे अगर परिस्थिति वश कोई व्यक्ति कभी गलत निर्णय ले लेता था तो वे उस पर शीघ्र ही अपनी कोई प्रतिक्रिया नहीं देते थे सोचने विचारने के बाद ही वे किसी विषय पर अपनी प्रतिक्रिया देते थे और सब को भी परस्पर विश्वास को निभाते हुए आपसी वैमनस्य को भुलाने का संदेश देते थे| वे पारिवारिक- सामाजिक और राजनैतिक एकता के संवाहक थे| सीता जी की खोज के लिए लगे हुए सभी वानरों भालू तथा आदिवासी जनजातियों के प्रति भी उनका व्यवहार मित्रता पूर्ण था वह सदैव है अपने दल में कार्य करने वाले छोटे से छोटे कार्यकर्ता के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुए उसके महत्व को बनाए रखते थे यह एक ऐसा गुण है| जिससे हम सब को सीख लेनी चाहिए| एक पति के रूप में श्रीराम ने सीता जी का सदैव सम्मान किया|

बालकांड में जब वे सीता जी को प्रथम बार देखते हैं तब वे अपनी सखियों के साथ गिरिजा जी के मंदिर में पूजन हेतु जा रही होती हैं| पूजन करने के बाद जब वे फुलवारी में भ्रमण कर रहे होते हैं| तब उनकी सखियां उनको आकर बताती हैं| दो राजकुमार बाग देखने आए हैं किशोरावस्था के हैं और सब प्रकार से सुंदर हैं| वे साँवले और गोरे रंग के हैं उनके सौंदर्य को बताया नहीं जा सकता उनका बखान कैसे किया जाए? वाणी बिना नेत्र की है और नेत्रों की वाणी नहीं है| राजकुमार है जो कल मुनि विश्वामित्र के साथ आए हैं और नगर में उन्हें देखने वाले सभी लोग उनकी छवि का वर्णन कर रहे हैं तो चलकर हमें अवश्य ही उन्हें देखना चाहिए उनके वचन सुनकर सीताजी अपनी सखियों के साथ श्री राम और लक्ष्मण के दर्शन हेतु जाते हैं और श्री राम हाथों के कंगन के शब्द सुनकर उनके देखते हैं तो उनके सुंदर हो जाते हैं सीता जी के राम जी बहुत सुख पाते हैं| उनकी सराहना करते हैं किंतु से वचन नहीं निकालते मुक्त हो जाती हैं सीता जी को देख आता है सीता जी की सुंदरता तो सुंदरता को भी मात देने वाली है;ऐसा लगता है मानो सुंदरता रही हो उठा कर रखा है श्री सीता जी की किससे उपमा धूम सीता जी चकित होकर चारों ओर देख रही हैं इस बात की चिंता कर रहा है कि राजकुमार कहां चले गए लता की ओट में सुंदर श्याम और गौर कुमारों को दिखाया उनके रूप को देखकर नेत्र निश्चल हो गए पलकों भी गिरना छोड़ दिया नेत्रों के रास्ते श्रीराम को हृदय मिलाकर चतुर शिरोमणि श्री राम का ध्यान करने लगीश्री राम के रूप को देखकर एक ओर तो सीता जी प्रफुल्लित होती हैं लेकिन जैसे ही उन्हें अपने पिता के द्वारा लिए गए प्राण का स्मरण आता है; वे क्षुब्ध हो जाती हैं| वे मन ही मन श्रीराम का चयन अपने पति के रूप में कर लेती हैं लेकिन साथ ही सशंकित रहती हैं कि पिता द्वारा लिए गए परंतु अगर श्रीराम पूरा नहीं कर पाए तो जिसका दुष्परिणाम क्या होगा?

इस प्रकरण के उपरांत वह अवसर भी आता है जब सीता जी और राम जी का एक दूसरे से आमना सामना होता है और स्वयंवर आयोजन में जब वे राम के समक्ष आती है और सीता जी सकुचाते हुए श्री राम को देखने लगती हैं परंतु गुरुजनों की लाज से और बहुत बड़े समाज को देखकर सीता जी को लज्जा आ जाती हैं| श्री राम को हृदय में लाकर सखियों की ओर देखने लगती है| श्री राम को सीता जी के अनुरूप जानकर वहां के लोग भी मन ही मन भगवान से यह प्रार्थना करते हैं कि, हे भगवान! आप किसी प्रकार जनक की मूर्खता को शीघ्र हर लीजिए और उन्हें ऐसी सुंदर बुद्धि दीजिए| जिससे बिना ही विचार किए राजा अपना प्रण छोड़कर सीता जी का विवाह राम जी से कर दें संसार उन्हें भला क्या कहेगा क्योंकि यह बात सब किसी को अच्छी लगती है हठ करने से अंत में हृदय जलेगा सब लोग इसी लालसा में मगन होते हैं कि जानकी जी के लिए तो सुयोग्य वर यह सांवला सलोना ही है| स्वयंवर के अंतर्गत जबेरा धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने में सफल हो जाते हैं और बल लगने के कारण धनुष टूट जाता है;तो सीता जी मन ही मन खुश होते हुए विधाता को इस बात के लिए धन्यवाद देतीं हैं कि जिसे उन्होंने अपने पति के रूप में अपने हृदय में स्थान दिया स्वयंवर को जीतने में सफल रहा श्री राम और सीता जी का विवाह बड़ी धूमधाम से होता है और दे पति-पत्नी के रूप में और अयोध्या के भावी सम्राट और साम्राज्ञी के रूप में एक हो जाते हैं|

तदोपरांत श्री राम राजा दशरथ के दिए हुए वचन की पूर्णता के लिए वनवास को सहर्ष एवं सहृदय चुनते हैं | तब सीता जी भी उनके साथ जाने का निश्चय करती हैं तथा परिवार के अन्य लोग इस बात से सहमत नहीं होते हैं कि, अगर श्रीराम अपने पिता को दिए हुए वचन को पूरा करने के लिए जा रहे हैं तो सीता भी उनके साथ जाएँ| सीता जी अपनी सास कौशल्या जी से अनुमति मांगतीं हैं| श्रीराम के साथ वन के लिए जाने की बात सुनकर कौशल्या जी व्याकुल हो जाती हैं और पति के साथ प्रेम करने वाली सीता जी सोच रही हैं कि यदि वे श्री राम के साथ वन के लिए जाती हैं;तो शरीर और प्राण दोनों साथ ही जाएंगे नही तो केवल प्राण ही से इनका साथ होगा| विधाता की करनी कुछ जानी नहीं जाती| कौशल्या श्री राम को बहुत विधि से समझाते हैं कि सीता जी सुकुमारी हैं और बहुत लाड-प्यार से इनका पालन-पोषण हुआ है| इन्होंने तो कभी धरती पर भी नहीं रखा;तो वन का जीवन तो अत्यधिक कठिन होता है| ये कैसे जिएंगी? उनको समझाते हुए स्त्रियाँ कहती हैं कि तपस्वियों की स्त्रियां वन में रहने के योग्य हैं क्योंकि उन्होंने तपस्या के लिए सारे भोग तज दिए हैं और हम ऐसा चाहते हैं कि सीता जी घर पर ही रहे इससे घर में भी सब को बहुत सहारा हो जाएगा कौशल्या जी भांति भांति के जतन करके सीता जी को यह समझाने का प्रयास करती हैं कि वन का जीवन उनके लिए उचित नहीं है| अतःवे श्री राम को अकेले ही जाने दें साथ ही वे श्रीराम को यह कहती हैं कि किसी भी प्रकार सीता जी को इस बात के लिए मनाया जाए कि;वे वन नहीं जाएंगी माता के वचन सुनकर श्री राम जनक पुत्री सीता जी को समझाते हुए कहते हैं कि जो अपना और मेरा भला चाहती हो; तो मेरा वचन मानकर घर पर ही रहो; भामिनी! यही मेरी आज्ञा का पालन होगा सास की सेवा करनी पड़ेगी| घर रहने में सभी प्रकार से भलाई है जब-जब माता मुझे याद करेंगी प्रेम से व्याकुल होकर खुद को भी भूल जाएंगी| उस समय में उनको संभालने के लिए तुम्हारा घर पर रहना ही उचित है| मैं भी पिता के वचन को सत्य कर शीघ्र ही लौट आऊँगा| चौदह वर्ष जाते देर नहीं लगती मांन जाओ अगर हठ करोगी तो इसके परिणाम में दुख पाओगी| वन और वहां की धूप और हवा सभी बड़े भयानक हैं| रास्ते में कांटे और बहुत से कंकड़ हैं बिना पादुका के पैदल ही चलना होगा और तुम्हारे चरणकमल कोमल और सुंदर हैं और रास्ते में बड़े-बड़े दुर्गम पर्वत हैं पर्वतों की गुफाएं, नदियां ऐसे भयानक और गहरे हैं कि उनकी तरफ देखा भी नहीं जा सकता;बहुत ही हिंसक एवं भयानक जीवो से भरे होते हैं| जंगल में जमीन पर सोना, पेड़ों की छाल के वस्त्र पहनना और कंदमूल, फूल-फल आदि का भोजन करना होगा और वे भी क्या सब दिन मिलेंगे?

सब कुछ अपने समय के अनुकूल ही मिल सकेगा? मनुष्यों को खाने वाले राक्षस वहां घूमते रहते हैं| वे करोड़ों प्रकार के कपट रूप धारण करते है| वन की विपत्ति बखानी नहीं जा सकती| वन में भीषण स्तर पर भयानक पक्षी और स्त्री-पुरुषों को चुराने वाले राक्षसों के झुंड रहते हैं| उनकी याद आने मात्र से धीरपुरुष भी डर जाते हैं फिर तुम तो स्वभाव से ही मृग के समान हो| श्री राम के वचन सुनकर सीता जी सुंदर सजल नेत्रों से श्रीराम की तरफ देखती हैं| उनसे कोई उत्तर देते नहीं बनता वे यह सोचकर व्याकुल हो उठती हैं कि मेरेस्वामी मुझे छोड़कर जाना चाहते हैं| नेत्रों के जल जबरदस्ती रोक कर;पृथ्वी की कन्या सीता जी हृदय में धीरज धरकर सास के पैर लगकर हाथ जोड़कर कहने लगी| हे देवी! मेरी इस बड़ी ढिठाई को क्षमा कीजिए| मुझे प्राणपति ने वही सीख दी है, जिससे मेरा परम हित हो परंतु मैंने मन में समझ कर देख लिया है कि पति के वियोग के समान जगत में कोई दुख नहीं है|

हे प्राणनाथ !हे दया के धाम ! हे सुंदर और सुखों को देने वाले सुजान! आपके बिना स्वर्ग भी मेरे लिए नर्क के समान है| माता-पिता, बहन-भाई, परिवार-मित्रों का समुदाय, सास-ससुर, गुरु, स्वज- सहायक और सुंदर सुशील सुख देने वाला पुत्र जहाँ तक स्नेह और नाते हैं;पति के बिना स्त्री को सभी सूर्य से बढ़कर जलाने वाले हैं| शरीर धन-धान्य पृथ्वी नगर और राज्य पति के बिना स्त्री के लिए यह सब दुख का सामान है;रोग के समान है| गहने भार स्वरूप हैं और संसार यम-यातना के समान है| आपके बिना जगत में मेरे लिए कुछ भी सुखदाई नहीं है| जैसे बिना जीव के देह और बिना जल की नदी; ऐसे ही हे नाथ! बिना पुरुष के स्त्री है| आपके साथ रहकर आपका शरदपूर्णिमा के चंद्रमा के समान मुख देखकर मुझे समस्त सुख प्राप्त होंगे| हे नाथ! आपके साथ पक्षी पशु ही मेरे कुटुम्बी होंगे और वृक्षों की छाल ही मेरे निर्मल वस्त्र होंगे ही;स्वर्ग के समान सुखों की मूल होगी, वनदेवी और वनदेवता ही मेरे सास-ससुर के समान मेरी सार-संभार करेंगे| कुश और पत्तों की सुंदर सेज ही प्रभु के साथ मनोहर सुख देने वाली होगी| कंदमूल और फल ही अमृत के समान आहार होंगे;पहाड़ ही अयोध्या के सैकड़ों राजमहल के समान होंगे| क्षण-क्षण में प्रभु के चरण कमलों को देखकर मैं ऐसे आनंदित होती रहूंगी| आपने वन में मिलने वाले बहुत से भय, विशाल-संताप आदि कहे परंतु वे सब मिलकर भी आपके वियोग से होने वाले दुख का सामना नहीं कर सकते;ऐसा जी में जान करके सुजान शिरोमणि! मुझे अपने साथ ले लीजिए यहां न छोड़िए स्वामी, मैं अधिक विनती क्या करूं आप करुणामय हैं और सबके हृदय की बात जानने वाले आपके चरण कमलों को देखते रहने से ही मुझे मार्ग में चलने में थकावट नहीं होगी| सभी प्रकार से आपकी सेवा करूंगी मार्ग में होने वाली सारी थकावट को दूर कर दूंगी आपके पैर धोकर पेड़ों की छाया में बैठकर मन में प्रसन्न होकर हवा करूंगी| श्याम शरीर के दर्शन करते हुए दुख के लिए मुझे अवकाश ही कहा रहेगा? समतल भूमि पर घास और पेड़ों के पत्ते बिछाकर यह दासी रात भर आपके चरण दबावेगी बार-बार आपकी कोमल मूर्ति को देख कर मुझे गर्म हवा भी नहीं लगेगी| मेरी ओर आंख उठाकर देखने वाला कौन है? यदि आपने अपने लिए तपस्या को चुना है तो मैं यहां पर रहकर भोग विलास कैसे कर सकती हूँ? ऐसे कठोर वचन सुनकर भी मेरा हृदय न फटा| हे प्रभु! ये प्राण आपके वियोग का भीषण दुख सहेंगे ऐसा कहकर सीता जी बहुत ही व्याकुल हो गई यह वचन वियोग को भी न संभाल सके उनकी यह दशा देखकर श्री रघुनाथ जी ने अपने हृदय जान लिया ये अपने प्राणों त्याग देंगी| श्रीराम ने कहा कि सोच छोड़कर मेरे साथ वन को चलिए आज विषाद करने का अवसर नहीं है तुरंत वन चलने की तैयारी कीजिए| रामचरितमानस के अरण्यकांड में जब रावण मुनि का रूप धरकर सीता जी का हरण करके ले जाता है तो वे लक्ष्मण से प्रश्न करते हैं| हे भाई तुमने जानकी को अकेला छोड़ दिया और मेरी आज्ञा का उल्लंघन करके यहां चले आए! तब श्री राम एक साधारण मनुष्य की तरह बहुत दुखी होते हैं और सीता जी को वन में चारों दिशाओं में ढूंढते हुए कहते हैं हाँ गुणों की खान जानकी रूप-शील व्रत और नियमों में पवित्र हे सीते ! तुम कहां हो? लक्ष्मण जी के ढांढस बधाने

पर वे लताओं और वृक्षों के पंक्तियों से पूछते हुए चलते हैं| मार्ग में आने वाले सभी प्रकार के वृक्ष पशु पक्षी तथा प्रकृति के अन्य प्रकल्पों से पूछते चलते हैं कि क्या किसी ने सीता जी को देखा है? श्री राम व्याकुल हैं व्यथित हैं एक अनेक प्रकार के भावों से घिरे हुए हैं|

किसी भी प्रकार वे सीता जी को ढूंढ लेना चाहते हैं किसी भी प्रकार के अनिष्ट की आशंका से बचाव चाहते हैं सीताजी को सुरक्षित देखना चाहते हैं|

हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी | तुम्ह देखी सीता मृगनैनी ||
खंजन सुख कपूत मृग मीना | मधुप निकर कोकिला प्रवीणा || ५४

तभी वन में उन्हें घायल जटायु दिखते हैं जो श्रीराम को मन ही मन स्मरण कर रहे थे श्री रघुवीर अपने कर कमलों से जटायु के सिर का स्पर्श करते हैं और उनके शरीर और मन में जो पीड़ा है| उसको भरने का प्रयास करते हैं तब धीरज धरकर जटायु कहते हैं| श्री राम रावण ने मेरी यह दशा की है उसी दुष्ट ने जानकी जी को हर लिया है और वह उन्हें लेकर दक्षिण दिशा को गया है;सीता जी अत्यंत विलाप कर रही थी मैंने आपके दर्शन के लिए प्राण रोक रखे थे अब यह चलना चाहते हैं| श्री राम कहते हैं हे तात! इस शरीर को बनाए रखिए तब उसने मुस्कुराते हुए यह बात कही मरते समय जिनका नाम हृदय में आ जाने से महान पापी भी मुक्त हो जाते हैं| वह मेरे नेत्रों के सामने खड़े हैं अब मैं किस पूर्ति के लिए इस देश को रखू सीता जी के रावण द्वारा अपहरण और दक्षिण दिशा का संकेत मिलने पर, श्री राम सीता जी को ढूंढते हुए लक्ष्मण के साथ उसी ओर चल पड़ते हैं और रास्ते में उन्हें हनुमान जी मिलते हैं जिनके माध्यम से उनके मित्रता सुग्रीव से होती है और सुग्रीव के द्वारा वानरों भालू तथा आदिवासी जनजातियों एक समूह एकत्र करके श्रीराम उसे सेना का रूप देते हैं और सीता जी को वापस लाने के लिए लंका की ओर कूच करते हैं यह तथ्य हमें इस बात का निश्चित ज्ञान करवाते हैं कि श्री राम का सीता जी के प्रति अगाध प्रेम था| एक पति के रूप में अपने समस्त दायित्वों का निर्वहन करते हैं|

एक पिता, पुत्र, शिष्य, मित्र, भाई, पति आदि के रूप में वे संबंधों को बड़ी कुशलता के साथ निभाते रहे लेकिन श्रीराम के लिए समस्त दायित्व तथा समस्त संबंधों में सबसे उच्च श्रेणी का दायित्व और संबंध का यदि हम आकलन करें तो वह दायित्व है| एक राजा का, धर्म है राज धर्म और वह संबंध है एक सेवक का क्योंकि वे एक राजा की तरह राजकाज नहीं चलाते थे वह एक सेवक की तरह अपनी प्रजा को सुनते थे समझते थे और उचित निर्णय लेते हुए हैं अपने किसी भी कार्य की रूपरेखा बनाते थे जिसमें सदैव ही उनकी प्रजा का हित होता था। श्री राम प्रसाद को हर तरफ से सुखी एवं प्रसन्न रखना राजा का परम कर्तव्य मानते थे उनकी धारणा थी कि जिस राजा के शासन में प्रजा दुखी रहती है; वह नृप अवश्य ही नरक का भागी होता है| जनकल्याण की भावना से ही उन्होंने राज्य का संचालन किया जिससे प्रजा धनधान्य से पूर्ण सुखी धर्मशील एवं निरामय हो गई।

तुलसीदास जी ने भी रामराज्य की वृहद चर्चा की है| लोकानुरंजन के लिए वे अपने सर्वस्व का त्याग करने के लिए तत्पर रहते थे| इसी से भवभूति ने उनके मुख से कहलाया है कि यदि आवश्यकता हुई तो जानकी तक का परित्याग मैं कर सकता हूं| प्रजानुरंजन के लिए इतना बड़ा त्याग करने पर उन्हें कितने, मर्मांतक व्यथा हुई सीता बिरह से कातर होकर किस तरह मुमूर्षुवत हो गए| इसका अत्यंत करुणोत्पादक चित्रण महाकवि भवभूति की कुशल लेखनी ने उत्तररामचरित में किया है। उन्होंने अपना जीवन एक पराक्रमी योद्धा के रूप में जिया

---

५४ - अरण्यकांड रामचरितमानस पृष्ठ संख्या ६०६

बाल्यकाल से लेकर सीता हरण तक अपने समक्ष आने वाली प्रत्येक चुनौती का डटकर सामना किया, कभी भी किसी भी परिस्थिति में स्वयं के ऊपर से संयम समाप्त नहीं होने दिया विकट से विकट परिस्थिति में भी अपने सोचने समझने की शक्ति को यथावत बनाए रखना| किसी महा पराक्रमी योद्धा के लिए या गुण होना अत्यंत आवश्यक है| वे रणभूमि में ही नहीं अपितु, अपने पारिवारिक-सामाजिक जीवन में भी एक युद्ध की तरह ही रणभूमि में सदैव विजयी होते रहे पारिवारिक -सामाजिक संदर्भ में अंतर यह था कि परिस्थिति के अनुसार सही निर्णय लेने की क्षमता उनमें सदैव ही थी;धर्म के मार्ग पर चलने हेतु न्याय संगत व्यवहार करने हेतु उन्होंने अपने प्रियजनों के परित्याग का मोह भी नहीं किया तथा प्रत्येक परिस्थिति से सदैव ही विजयी होकर निकले। पिता को दिए गए वचन का पूरी निष्ठा से पालन किया चौदह वर्ष तक किसी भी नगर या गांव की सीमा को नहीं लांघा और भाई भरत को दिए गए वचन को पूरा करने की व्याकुलता भी थी क्योंकि भरत ने उनसे सहृदय यह प्रार्थना की थी कि आपके समझाने पर मैं अयोध्या का राज पाट संभालने तो जा रहा हूं लेकिन वनवास की अवधि पूरी होने पर अगर एक दिन भी ऊपर हुआ तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगा| इस बात का स्मरण भी श्री राम को था अतः वनवास की अवधि बीतने में केवल एक दिन शेष रहने पर भारत की दशा का स्मरण कर राम अत्यंत व्याकुल हो उठे और उन्होंने विभीषण से पुष्पक विमान की याचना की जिससे वे यथासमय अयोध्या पहुंच सकें।अतः हम यह कह सकते हैं कि श्रीराम ने अपने समस्त दायित्वों का चाहे वह पारिवारिक हो राजनैतिक हो सामाजिक हो किसी भी प्रकार का हो उन सभी दायित्वों का अत्यंत कुशलता के साथ निर्वहन किया और समाज को यह संदेश दिया कि यदि हम धर्म के अनुसार आचरण करते हैं तो कोई भी हमें हमारे मार्ग से हटा नहीं सकता हम हर उस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं | श्री राम समस्त दायित्वों की कुशल निर्वाहक के रूप में अद्‌वितीय हैं।

३.३ समाज के प्रत्येक स्तर हेतु क्रियाशील :-

भारतीय संस्कृति में अगर कोई पहला समाजवादी हुआ है तो;वे श्रीराम ही हैं| समाज में समानता के भाव को दशा और दिशा उन्होंने ही दी;समाज के सभी वर्गों को समानता की दृष्टि से देखते हुए समाज को उन्नत करने का कार्य किया| गुरुकुल में रहते हुए स्वयं को कभी कुलश्रेष्ठ नहीं माना, गुरु तथा गुरु माता की सेवा करना गुरु विश्वामित्र के साथ वन के लिए जाना तथा आश्रम को भयमुक्त वातावरण देना निषादराज से अटूट मित्रता बिना किसी भेदभाव के श्रीराम को उनका अपने भाई के समान मानना| राजा दशरथ के परिवार में निषादराज के पिता तीर्थराज निषाद का सम्मान किया जाता था वनवास के समय नदी पार कराने वाले केवट को भी श्रीराम ने पूर्ण सम्मान दिया नदी पार करके पारिश्रमिक देने की इच्छा प्रकट कर रहे थे तब केवट ने सविनय कहा कि जब आप वापस राज्य भार संभालेंगे तब मैं अवश्य पारिश्रमिक लूंगा इस बात को भी श्री राम ने चौदह उपरांत तक याद रखा जब उनका राज्याभिषेक हुआ तो किसी कारणवश केवट वहां नहीं आ सके तब श्री राम ने निषादराज के हाथों केवट के लिए अमूल्य उपहार भेजे उनके लिए सदैव मनुष्य की प्रमुखता रहे अवसर कि नहीं क्योंकि उनका मानना था कि अवसर तो आते जाते रहते हैं| उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान दिया वे अपने प्रत्येक वचन को पूरी तरह निभाते थे| समाज का जो वर्ग जंगलों में रहता था तथा समाज की मूल धारा से दूर था श्रीराम ने उनको भी आत्मसात किया| शबरी, निषादराज, केवट, वानर-भालू आदि जनजातियों से भेंट की तथा उन्हें अपने जीवन का महत्वपूर्ण भाग बनाया| समाज को एकता का संदेश दिया उन्नत समाज का मूल मंत्र दिया जहां प्रत्येक वर्ग समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है| आज जब समाजवाद को लेकर बड़े-बड़े आंदोलन होते हैं तो हमें यह अवश्य सोचना चाहिए की समाजवाद के आधार में अगर किसी ने इसके लिए

सबसे ज्यादा कार्य किया;वह भी एक नरेश होकर तो वे श्रीराम ही थे|
बाल्यावस्था में जब भी गुरु आश्रममें शिक्षा प्राप्त करते थे तब से ही वे अपने साथ पढ़ने वाले अन्य विद्यार्थियों का भी पूरी तरह मान सम्मान करते हुए उनका ध्यान रखते थे भोजन करते समय तथा क्रीड़ा के समय स्वयं ही जाकर सबको बुलाते थे ताकि कोई भी विद्यार्थी भोजन से वंचित न रह जाए खेल के समय भी उनकी तरफ से यही प्रयास होता था कि समस्त छात्र समानता की भावना के साथ अर्थात वर्ग रहित होकर क्रीडा में भाग ले सकें| नगर के लोगों का जिसमें हित हो श्री राम वही कार्य करते थे| रामचरितमानस के बालकांड में इसी संदर्भ में एक पंक्ति कही गई है -

जेहि बिधि सुखी होहि पुर लोगा | करहिं कृपानिधि सोई संजोंगा || ५५

जिस प्रकार से नगर के लोग सुखी हो कृपा निधान श्री राम वही सहयोग करते हैं धर्म के मार्ग पर चलते हुए श्रीराम सदैव ही परोपकारी तथा पर हितकारी कार्य करने में संलग्न रहते थे समाज में रहने वाले सभी वर्गों के प्रति उनका विशेष प्रेम था जहां एक तरफ वे ऋषि मुनि तथा ब्राह्मण समाज को पूरा मान सम्मान देते थे वह स्वयं क्षत्रिय होते हुए भी अगर किसी अन्य छतरी को हितकारी तथा दोषी समझते थे, तो उसे दंड भी अवश्य देते थे इसी प्रकार महल में सेवा करने वाले सेवकों के प्रति भी उनका विशेष अनुराग था वे सभी को सम्मान देते थे उन्होंने कभी भी इस प्रकार का आचरण नहीं किया जिससे यह प्रतीत हो कि वह चक्रवर्ती सम्राट दशरथ के पुत्र हैं साथ ही वे अपना कार्य स्वयं करना रुचिकर मानते थे गुरुकुल में रहते हुए वे प्रत्येक कार्य को समान भाव से करते थे तथा आश्रम में रहने वाले अन्य छात्रों की तरह ही साधारण से साधारण काम हर्षोल्लास के साथ करते थे गुरु तथा गुरु माता की यथोचित सेवा करने में वे कभी भी पीछे नहीं रहे|
मानस के बालकांड में जब वे विश्वामित्र जी के कार्य हेतु वन के लिए लक्ष्मण सहित गए तब भी उन्होंने स्वयं को एक रक्षक के रूप में ही प्रदर्शित किया एक राजकुमार के रूप में नहीं; श्रीराम की विचारधारा में सबके लिए समान न्याय था चाहे वह किसी भी वर्ग का हो स्त्री हो पुरुष हो सबके लिए उनकी सोच समान थी देवी अहिल्या के उद्धार के उपरांत बालकांड में प्रयुक्त एक दोहे के द्वारा हम इस बात को आसानी से समझ सकते हैं कि उन्हें दयालु और दीनबंधु बताया गया है जो किसी का भी उद्धार या सहयोग बिना किसी भाव के या हम यह भी कह सकते हैं कि बिना किसी भेदभाव के वे सभी का सहयोग किया करते थे

अस प्रभु दीनबंधु हरी कारन रहित दयाल | ५६

ऋषि विश्वामित्र के साथ उनकी सहायता हेतु वे सहर्ष तैयार हो गए| उन्होंने एक बार भी ऐसा विचार नहीं किया कि वन में भयंकर राक्षसों से युद्ध करने के लिए जाना क्या श्रेयस्कर होगा? क्योंकि दशरथ जी ने ऋषि के आगे यह प्रस्ताव रखा था कि राम की जगह मैं चला जाता हूं या आपको अपनी संपूर्ण सेना दे देता हूं वह अवश्य ही राक्षसों को पराजित कर आपकी रक्षा करने में सफल होंगे| परंतु श्रीराम पर विश्वास रखते हुए ही ऋषि विश्वामित्र ने उनसे राम और लक्ष्मण को भेजने की मांग की जहां राजा दशरथ अपने पुत्रों को वन में राक्षसों के सामने भेजने के लिए तैयार नहीं हो रहे थे उनका मन विचलित हो रहा था वही श्री राम ने ऋषि विश्वामित्र के साथ जाना बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार कर लिया| उनके अंदर सहयोग की भावना सदैव ही विद्यमान रहती थी उन्हें अपने वंश की मान मर्यादा का सदैव ही ध्यान रहता था कि कोई भी याचक उनके

५५,५६ - बालकांड, रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या १७६

पास से खाली हाथ नहीं जाना चाहिए फिर चाहे वह आर्थिक सहायता हो राजनैतिक सहायता या किसी भी तरह की सहायता को वे सभी को समान अधिकार देने के पक्षधर थे| राजा दशरथ के द्वारा दिए गए वचन को पूर्ण करने हेतु श्री राम ने सहर्ष ही चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार कर लिया| यह वज्र के समान घातक बात जब प्रजा को पता चली तो वह भी चुप हो गई परंतु प्रत्येक स्त्री-पुरुष, बालक हर कोई राम के साथ वनवास जाना जाना चाहता था क्योंकि श्री रामके प्रति उनका प्रेम अगाध था| वे राम के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते थे यह प्रेम ऐसे तो नहीं उपजा होगा| श्री राम ने प्रजा के सामने उचित व्यवहार का उदाहरण रखा होगा सभी को यह विश्वास दिलाया होगा उनके प्रजा में रहने वाला एक बालक से लेकर एक वृद्ध व्यक्ति भी श्री राम के लिए बहुत महत्व रखता है| वनवास जैसे दुखदाई क्षण में भी जब प्रजा हट करते हुए उनके साथ जाने को आतुर रहती है तो वे प्रजा के भावनाओं का मान रखते हुए उन्हें कुछ समय तो अपने साथ ही रहने देते हैं और जैसे ही लोग थक हार कर सो जाते हैं;श्रीराम महामंत्री सुमंत से कहकर लोगों को सोता हुआ छोड़कर वन की तरफ प्रस्थान करते हैं| वे जब लोगों को सोता हुआ छोड़कर जाते हैं;तब भी उनके मन में यही विचार था की वनवास तो मुझे अकेले को मिला है| ये सभी मेरे दुख के भागी क्यों बने और उन सब की कुशलता की कामना करते हुए हैं उनको वहां सोता छोड़कर आगे की ओर चले जाते हैं | वे समाज के प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति से बड़ी है सुरुचि से मिलते थे तथा उसके मन की बात को समझने का प्रयास करते थे और उसके जीवन में घट रही घटनाओं व संभावित समस्याओं का निराकरण करने में उनका सहयोग करते थे| रामचरितमानस में ऋषि विश्वामित्र, श्रृङ्गवेरपुर के निषादराज, केवट, कोल- किरात, सुग्रीव, जटायु, शबरी आदि न जाने ऐसे कितने चरित्र देखने-सुनने और पढ़ने के लिए मिलते हैं| जिनसे श्रीराम ने उन्हीं की अवस्था एवं स्थिति के अनुसार वार्तालाप तथा व्यवहार किया यह श्रीराम के व्यवहार की विशेषता ही थी|

की हर कोई स्वयं को उनके साथ जुड़ा हुआ पाता था वह राजपुरुष होने के नाते नहीं अपितु लोकप्रिय जननायक होने के नाते ही सब में प्रिय थे क्योंकि उनका आचरण किसी व्यक्ति विशेष के लिए विशेषकर नहीं होता था अपितु वे सभी के साथ समान व्यवहार करते थे सदैव ही सब को उसके महत्व का भान करवाते थे| उनके विचार में समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की विचारधारा का समान रूप से सम्मान होना चाहिए तथा उसके मनोभावों को समझने का प्रयास होना चाहिए ताकि हम दूसरों के दृष्टिकोण से अवगत हो सकें उनके व्यवहार में कहीं भी राजकुमार या राजपुरुष होने का मान नहीं दिखता है| प्रजा के प्रति उनका व्यवहार सम्माजनक था और वे प्रजा की बातों को सुनकर ही अपने नेतृत्व की क्षमताका विस्तार करते रहे,क्योंकि उनके अनुसार जब तक समाज का प्रत्येक वर्ग तथा व्यक्ति नेतृत्व से संतुष्ट नहीं है तब तक उस नेतृत्व को कुशल नेतृत्व नहीं कहा जा सकता और व्यक्ति को भी कुशल व्यक्ति तब तक नहीं कहा जा सकता जब तक वह अपने आसपास के वातावरण को अपने व्यवहार द्वारा सकारात्मक उर्जा न प्रदान करता हो| राम कभी भी निराशावादी नहीं रहे उनके जीवन से और जीवन जीने की विधि से सभी लोग प्रभावित हैं फिर चाहे वह कोई राजकुमार हो या साधारण जनमानस राजा बनने के उपरांत भी उनके व्यवहार में किंचित मात्र भी परिवर्तन नहीं आया वे सदैव ही इस बात का ध्यान रखते थे उनके राज्य में कोई भी दुखी भूखा या असंतुष्ट न हो इसी वजह से उन्होंने प्रजा को कोई ऐसा सुनिश्चित समय नहीं दिया था कि इस अवधि या इस शहर में ही उनसे मिलना संभव है वे हर घड़ी हर समय की समस्या का समाधान करने हेतु तत्पर रहते थे और नरेश वही बन सकता है; जो कि एक कुशल व्यक्ति भी हो क्योंकि एक नरेश की कुशलता उसके व्यवहार पर निर्भर करती है| उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करती है| वह प्रजा से स्वयं को इस सीमा तक जोड़े रखता है| एक व्यक्ति के रूप में श्री राम सबकी सोच का सम्मान करने वाले तथा प्रत्येक जीव के मान सम्मान को समझने वाले कुशल व्यक्ति रहे| श्रीराम के इसी सरल स्वभाव के कारण वे बड़ी सहजता से लोगों के साथ घुल-मिल जाते थे|

सहयोग देना और किसी कार्य के लिए दूसरे व्यक्ति से परामर्श और सहयोग लेना उनके लिए कभी किसी प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं रहा| वे बड़ी सुगमता से प्रत्येक व्यक्ति को धर्म तथा अधर्म में भेद करना तथा धर्म के मार्ग पर चलना अपने स्वभाव से ही सिखा देते थे| अपने दल-बल और सेना में कार्य करने वाले हर छोटे-बड़े सैनिक चाहे वह वानर हो या भालू या मनुष्य सभी के प्रति समरसता का भाव रखते थे| जब भरत श्री राम से मिलने चित्रकूट आए तब वहां श्रीराम ने भरत को राजधर्म सिखाते हुए यह बतलाया कि हमारा व्यवहार सभी के साथ समानता से भरा हो ताकि प्रजा तुम पर विश्वास करते हुए अपने सुख-दुख तुमसे बांट सके क्योंकि अगर तुम्हारे व्यवहार में विषमता होगी,तो तुम एक कुशल प्रशासक नहीं बन सकते हो| एक राजा के लिए यह जानना अति आवश्यक है कि उसकी प्रजा इस स्थिति में रह रही है और यदि व्यवहार में विषमता होगी तो प्रजाजन राजा से अपनी परेशानी नहीं कह पाएंगे| समाज के किसी भी व्यक्ति को तुच्छता का आभास नहीं होना चाहिए उसे यह कदापि नहीं लगना चाहिए या उसका अस्तित्व गौण है| किसी भी व्यक्ति के अंदर हीन भावना नहीं आनी चाहिए| परस्पर सहयोग एवं सामंजस्य से ही एक अच्छे समाज की नींव रखी जा सकती है| राम के अस्तित्व की एक विशेषता यह भी है कि राम के जीवन में उनके द्वारा किया गया व्यवहार ,उनका शारीरिक सौष्ठव, उनकी धार्मिक आस्था, उनका दृढ़ प्रतिज्ञ होना, मित्रवत होना; उनके मानवीय मूल्य तथा जीवन के जितने भी आयाम हम सोच सकते हैं चाहे वह शारीरिक हो, सामाजिक हो, आत्मिक हो उन सब में ही श्री राम को हम सदैव ही श्रेष्ठ रूप में देखते हैं अर्थात उन्होंने सदैव ही अपना श्रेष्ठ देने का प्रयास किया और दूसरों को अपने इसी प्रयास द्वारा यह सीख दी कि हमें ऐसा आचरण करना चाहिए कभी भी किसी से आदेशात्मक व्यवहार नहीं करते थे| हमेशा ही ऐसा व्यवहार करते थे; जिसका अनुकरण किया जा सके अर्थात उनका व्यवहार अनुकरणीय था मानवीयता से भरा हुआ धर्म के मार्ग से लगने वाला तथा भेदभाव से रहित था | वे सदैव ही इस बात के पक्षधर रहे की जो भी व्यक्ति किसी कार्य विशेष को निपुणता से कर सकता है उसे अपने इस कौशल का लाभ समाज को भी देना चाहिए वे दान पुण्य आदि का भी कार्य लोगों की विषमताओं को दूर करने के लिए निरंतर ही करते रहते थे| उन्होंने अपनी सेवाएं शक्ति के रूप में ऋषि-मुनियों को प्रदान की ,वनवासी के रूप में रहते हुए वन के अन्य जीवों के हित का ध्यान रखा. साथ ही अपनी सेना; जिसका संगठन उन्होंने वनवास के समय किया था उसको मार्गदर्शन,सहयोग,पिता तुल्य प्रेम तथा साथ-साथ उनके उत्साहवर्धन हेतु विभिन्न क्रियाकलापों द्वारा प्रोत्साहित करते रहना आदि | अयोध्या नरेश बनने के उपरांत अधिक मात्रा में दान पुण्य कर लोगों की विषमताओं को दूर करने का सदैव ही प्रयास किया| उनका यह मानना था कि उनके द्वार से कोई भी खाली हाथ न जाये| ,एक भाई के रूप में, एक पिता, पुत्र , पति के रूप में उन्होंने अधिकार जताने का प्रयास नहीं किया जहां तक हो सके अपनी सेवाएं देने का प्रयास ही किया ताकि समाज के प्रत्येक वर्ग को क्रियाशील करते हुए एक सुदृढ़ समाज की रचना की जा सके यह कहना उचित होगा कि वह समाज के प्रत्येक स्तर हेतु सदैव क्रियाशील रहे|

श्री राम का चरित्र एक ऐसे रूप में सदियों से हमारे बीच विद्यमान है| जो किसी भी तरह का भेदभाव नहीं मानता स्त्री-पुरुष, जाति -पाति, राजा- रंक, सबल- निर्बल में किसी भी तरह का भेदभाव नहीं करत | स्वयं को उत्कृष्ट तथा अन्य को निकृष्ट समझने से हमारे शक्तियों का ह्रास होता है क्योंकि अपने आप को उत्कृष्ट समझने से दंभ की भावना मानसिक रूप से हमें अन्य लोगों से अलग कर देती है| हमारा व्यवहार और असहज हो जाता है तथा अन्य लोग हमें तुच्छ लगने लगते हैं| ऐसी स्थिति समाज में एकता के अभाव को जन्म देती है| वनवास के दौरान नदी पार करने के लिए उन्होंने केवट के साथ भी एक याचक तथा ग्राहक जैसा ही व्यवहार किया उन्होंने अपने व्यवहार के अनुसार उसको यह जलाया कि उन्हें केवट की सहायता की नितांत आवश्यकता है विनाश की सहायता के नदी पार नहीं कर सकते तथा एक साधारण यात्री की तरह अपनी

निर्भरता केवट के ऊपर दिखाई तथा केवट को यह ज्ञात करवाया कि उसकी सहायता के बिना;उसके पारिश्रमिक को चुकाए बिना; वे अपने ऊपर एक ऋण ले रहे हैं| उन्होंने एक साधारण व्यक्ति की तरह यात्रा का मूल्य चुकाने की बात की तथा केवट द्वारा यह कहने पर कि अभी आपके पास धन नहीं हैं कि आप नदी पार कराने का मूल्य चुका सके;तो जब आप वापस अपने राज्य में आएंगे तब मैं आपसे पारिश्रमिक ले लूंगा| उन्होंने इस बात को चौदह वर्ष तक स्मृति पटल पर रखा इसी प्रकार वनवास के समय भी नारी शबरी की भक्ति को देखते हुए उसके प्रेम में विभोर होते हुए उसके द्वारा चुने गए बेर खाए तथा उसकी भक्ति को मान लिया क्योंकि श्रीराम की दृष्टि में भावनाओं की प्रधानता थी पारिवारिक या सामाजिक स्तर की नहीं अपनी सेना में लड़ने वाले प्रत्येक वानर और तथा भालू को श्रीराम अपने समकक्ष मानते थे| लंका जाने के लिए उन्होंने समुद्र से भी रास्ता मांगने के लिए प्रार्थना की न कि अपने शक्तियों का प्रयोग करते हुए कोई अनुचित व्यवहार किया श्री राम क्रांतिकारी सोच तथा समानता के व्यवहार में विश्वास रखते थे वे सभी के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करते थे| लंका विजय को उनकी इसी समानता के सोच के परिणाम के रूप में देखा जा सकता है वे जीवन के इस सत्य को सत्य मानते थे कि किसी भी क्षण आपको किसी भी प्राणी इस सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है | चाहे वह पद या स्तर में हमारे समकक्ष हो या हम से निम्न वे कर्म जनित स्तर में विश्वास रखते थे तभी तो रावण जैसा महान ज्ञाता किसी के काम नहीं आया जबकि वह सोने की लंका का स्वामी था उसके महल में दास-दासिया थे उसके पास भी प्रजा थी परंतु उसका व्यवहार अपने परिजनों के साथ भी उचित नहीं था वह एकदम दंभी शासक था इसके सभी के अनुसार सोचते तथा कार्य करते थे ताकि सभी को संतुष्टि हो तथा उसे भी अपने आपको हीनता की भावना में न रखते हुए की अपनी समानता की अनुभूति हो|

३.४- संयमित व्यवहार :-

मनुष्य कई बार परिस्थिति वश अपने व्यवहार को संयमित नहीं रख पाता दबाव में आकर भावुक होकर या क्रोधित होकर वह या तो आवेग में आ जाता है या दुखी हो जाता है ;परंतु श्रीराम का स्वभाव इन से विपरीत शांति तथा संयमित था| वे प्रत्येक परिस्थिति में स्वयं अनुशासित तथा संयमित रहते थे; न तो किसी स्थिति में अत्यधिक हर्षित होते थे और न ही उदासीन वह सदैव कर्मशील तथा तत्पर रहते थे| प्रत्येक समस्या का समाधान कर्म में देखते थे शक्तिशाली होने के बाद भी वह अपने कर्म सदैव एक साधारण मनुष्य की तरह ही किया करते थे उनके प्रयास सतत होते थे| वे कर्म की निरंतरता में विश्वास रखते थे;वनागमन के समय भी उन्होंने ही सब को संभालने का काम किया चाहे राजा दशरथ हों, माता कौशल्या हो या प्रजा| उन्होंने कहीं भी यह प्रदर्शित नहीं होने दिया कि यह एक कठिन कार्य है और कठिन निर्णय है और न ही वन में आने वाली बाधाओं के बारे में विचार कर उदासीन हुए वनवास की अवधि में भी वह अपने इसी कुशल व्यवहार से लक्ष्मण तथा सीता जी को संभालते थे| सीता हरण के पश्चात भी उन्होंने स्वयं पर संयम रखते हुए उन्हें वापस लाने की योजना बनानी प्रारंभ की उनके व्यवहार को समझकर ऐसा लगता है कि बहुत अधिक शोक या हर्ष प्रकट करके हम अपनी ऊर्जा का ह्वास करते हैं साथ ही अपने सोचने समझने की शक्ति का हनन भी करते हैं, यदि श्रीराम के इस गुण का हम अनुकरण करते हैं यह हमारे लिए अति हितकारी होगा क्योंकि जो विशेषता श्रीराम के व्यवहार में प्रदर्शित होती है वह हमें श्रेष्ठता की ओर लेकर जाती है | इन व्यवहारिक विशेषताओं के कारण अपना मानसिक तथा आत्मिक संतुलन बनाए रखते हुए हम स्वयं भी प्रगतिशील रहते हुए अच्छे कार्य कर सकते हैं तथा दूसरों के लिए भी प्रेरणादायक बन सकते हैं|

इस प्रकार के व्यवहार द्वारा उचित समय में उचित निर्णय ले सकते हैं जो दूरदर्शी सिद्ध हो सकते हैं| संयमित व्यवहार से कई बार असंभव लगने वाले कार्य भी संभव हो जाते हैं | छल-कपट तथा दुर्भावना से कोसों दूर श्री राम का स्वभाव तथा स्वभाव से जनित संयमित व्यवहार उनका हृदय बहुत सरल था इस सरलता के कारण ही उनके अंदर असाधारण क्षमता थी| वे अत्यंत ज्ञानी थे| श्रीराम अपने शत्रु के साथ भी सरल एवं संयमित हैं|

इसी कारण श्रीराम अपने शत्रुओं को भी प्रिय लगे शत्रुओं ने भी उनका बखान किया घर के लोग बखान करें तो उसमें क्या आश्चर्य है मित्र बखान करें तो उसमें कौन सी बड़ी बात है जिसके व्यवहार की शत्रु तथा अपरिचित लोग भी प्रशंसा करें असल में वही व्यवहार धारण करने योग्य है| श्री राम की संयमित व्यवहार का आधार समानता थी क्योंकि न तो वे किसी को परम प्रिय मानते थे और न ही किसी के प्रति हे दृष्टि रखते थे ऐसे समभाव के कारण है वे अपने व्यवहार को संयमित रखते थे न तो किसी कारणवश उद्वेलित होते थे और न ही उदासीन तथा न ही निराश,उनके सम्मुख आने वाले प्रत्येक परिस्थिति का सामना वे विवेकपूर्ण विधि से करते थे रामचरितमानस सहित जितनी भी रचनाएं उनके जीवन के बारे में बताती हैं उन सब में है एक समानता अवश्य रहे हैं श्रीराम के संयमित व्यवहार को लेकर साथ ही रचनाकारों ने उनके इस व्यवहार को अद्वितीय तथा अनुपम बताया क्योंकि प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कोई न कोई ऐसी घटना अवश्य होती है जिसमें वह व्यक्ति विवेकहीन होकर गलत निर्णय ले लेता है अथवा गलत व्यवहार का प्रदर्शन करता है क्योंकि साधारण परिस्थितियों में तो मनुष्य अपने मनोभावों पर अंकुश लगा सकता है;परंतु विकट परिस्थितियों में भी वह संयमित व्यवहार का प्रदर्शन करेगा ऐसा आवश्यक नहीं है इस कारण दुर्भाग्य मनुष्य से कहीं न कहीं चूक हो ही जाती है| श्री राम एक बार किसी कार्य को करने में जुट जाते थे तो वे उसे पूर्ण करके ही रुकते थे अपने ध्येय को वे स्पष्ट रूप से पहचानते थे तथा उसकी प्राप्ति हेतु वे कोई न कोई मार्ग अवश्य निकाल लेते थे लेकिन वह मार्ग सदर सत्य तथा धर्म का होता था| वे सदैव पक्षपात रहित व्यवहार करते थे जो कि संयमित व्यवहार का ही एक स्तर है| श्रीराम के संयमित व्यवहार का मूल कारण यह रहा कि वे कभी भी किसी के द्वारा किए गए बुरे व्यवहार को याद नहीं करते थे और किसी भी प्राणी के द्वारा की गई अच्छाई को सदैव ही अपने हृदय में स्थान देते थे| रामचरितमानस के समस्त काण्डों में वर्णित अनगिनत घटनाओं में हमसे राम का संयमित व्यवहार देख सकते हैं| साधारण मनुष्य प्रसन्नता के क्षणों में कहीं न कहीं अभिमानी बन जाता है एवं दुख के समय विषयों से गिरते हुए खुद पर से संयम खो देता और इंद्रियों के वश में होते हुए अनेकों बार अमर्यादित व्यवहार प्रदर्शित करता है लेकिन श्री राम ने जीवन में आने वाली अनेक अनेक विषमताओं को बड़ी सहजता एवं संयमित व्यवहार के साथ पार किया|

वृहद श्रीमद् वाल्मीकि रामायण के अयोध्या कांड के सत्रहवें सर्ग में जब श्री राम रथ पर बैठे राजमार्ग के मध्य से चले जा रहे थे और तारानगर ध्वजा पताकाओं से सम-अलंकृत और सो भी तथा चारों ओर धूप की सुगंध व्याप्त थी| नगर में संख्याओं की भीड़ थी;श्वेत बादल सदस्य ग्रहों से शोभा हो रही थी सभी अवरोध विद थे ऊंची नीची दुकाने भोजन सामग्रियों से युक्त थे और नगर के लोग शिवकथा और सुन रहे थे और बड़े हर्षित थे और लोग अपने मन में कामना कर रहे थे| श्री राम शीघ्र ही रात सिंहासन पर बैठे और प्रजा को अपने प्रेम से सिंचित करें रनिवास में पिता के पास पहुंचते उन्होंने देखा कि शुष्कमुख पिता कैकेई सहित एक शुभ आसन पर बैठे हैं विनीत भाव से पहले पिता के चरणों की वंदना कर कैकई के चरणों की वंदना करते हुए उन्होंने पिताजी से उनका हालचाल पूछा उस समय अवस्था में पड़े हुए राजा दशरथ एक बार राम ऐसा कह कर चुप हो गए और इससे आगे कुछ बोल ही नहीं पाए राजा का वह अभूतपूर्व भयंकर रूप देख भयभीत हो गए| श्री राम को बड़ी चिंता हुई वे सोचने लगे आप ही ऐसी क्या बात हुई?

महाराज से प्रसन्न होकर बोल रहे हैं आज मेरी ओर दृष्टिपात करके इतने व्यग्र क्यों हो रहे हैं? ऐसा विचार कर रहा मन में दुखी हुए और उन्होंने पूछा माता मुझसे अनजाने में कोई अपराध तो नहीं हो गया जिससे पिताजी मुझसे रुष्ट हो गए इनका चेहरा उतरा हुआ है और यह बड़े दीन अवस्था में लग रहे हैं कोई शारीरिक व्याधि अथवा मानसिक चिंता तो इन्हें पीड़ित नहीं कर रहे किसी भाई या किसी माता का कोई अनिष्ट तो नहीं हुआ अगर मेरी वजह से मेरे पिता कुपित हैं या मैंने इनकी कोई आज्ञा न मानते हुए इन्हें कुपित किया है | तो मैं एक मुहूर्त भी जीवित नहीं रहना चाहता इस प्रकार पिता को दुखी देखकर राम जी स्वयं को दोष देने लगे अरे प्रश्न करने के बाद कैकई ने धृष्ट वचन बोलते हुए कहा हे राम राजाकुपित नहीं है और न ही इनको कोई दुख है इनकी मनोगत है जिससे वह तुम्हारे भय से नहीं कह रहे हैं | इनकी वाणी नहीं चलती परंतु तुम्हें वही करना चाहिए जो इन्होंने मुझसे प्रतिज्ञा कर मुझे दिया है पहले तो इन्होंने सत्कार पूर्वक मुझे वरदान दे दिया अब यह दूसरे गवार मनुष्य की तरह उसके लिए पश्चाताप कर रहे हैं|

इस धर्ममूलक जगत में सत्पुरुष को सत्य से बढ़कर कोई वस्तु प्रिय नहीं है इसलिए तुम ऐसा ही करो जिसमें तुम्हारे लिए मुझ पर कुपित होकर राजा कहे सत्य को न छोड़ दे शुभ हो या अशुभ राजा जो कुछ कह दे तो वही करो तो मैं तुमसे कहूं ऐसी बात सुनकर राम ने कहा आप मुझसे ऐसा कौन सा वचन कहना चाहती हैं बिना संशय कहें मैं राजा के वचन से अग्नि में भी गिर सकता हूं विश को भी पी सकता हूं और समुद्र में भी डूब सकता हूं हितैषी राजा गुरु और पिता द्वारा जो युक्त होगा मैं उसे करूंगा हे देवी आप वचन कहे राजा का क्या अर्थ है मैं प्रतिज्ञा करता हूं मैं वही करूंगा तब सरल स्वभाव युक्त सत्यवादी राम से कैकई यह दारुण वचन बोली देवासुर संग्राम में जब इन्हें शल्य लगा था मैंने उस शल्य को निकालकर राजा के प्राणों की रक्षा की थी इससे प्रसन्न होकर मुझसे रक्षित तुम्हारे पिता ने मुझे दो वर दिए थे| हे राम! उनमें से मैंने राजा से भरत का अभिषेक और तुम्हारा आज ही दंडकारण्य को जाना मांगा है श्रेष्ठ यदि तुम पिता को और अपने को सत्य प्रतिज्ञा वाला करना चाहते हो तो मेरे इस वाक्य को सुनो तुम पिता की आज्ञा में स्थित रहो जैसा कि इन्होंने प्रतिज्ञा की है;तदनुसार चौदह वर्ष के लिए वन को जाना चाहिए इस कठोर वचन को सुनकर भी राम के हृदय में क्रोध नहीं हुआ परंतु महानुभाव राजा पुत्र वियोग के इस संकट से बड़े ही दुखद हुए शत्रु हंता स्मरण समय प्रवचन को सुनकर ही व्यथित नहीं हुए ऐसा ही होगा, माता मैं यहां से जटा और धारण करके राज प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिए वन को चला जाऊंगा किंतु मैं यह अवश्य जानना चाहूंगा कि महाराज प्रश्न क्यों नहीं है मैं आपके समक्ष कहता हूं कि आप प्रसन्न हो जाए केवल आप ही कह देते तो भी मैं अपने भाई भरत के लिए अपनी पत्नी सीता को राज्यको अपने प्राणों को तथा सारी संपत्ति को भी प्रसन्नता पूर्वक दे सकता हूं और फिर अब तो पिताजी ने आज्ञा दी है तो कैसे मैं इस प्रतिज्ञा का पालन नहीं करुंगा;इसलिए आप राजन को समझाएं कि पृथ्वी की ओर नेत्र किए हुए रुदन क्यों कर रहे हैं राजा ? दूत तीव्र गति के घोड़ों को लेकर अभी जाएं और आज ही भरत को मामा के यहां से बुला ले मैं अभी शीघ्र यहां से बिना विचारे ही पिता जी की आज्ञा से चौदह वर्ष के लिए वनवास को जाता हूँ| कैकई बोली यह नर श्रेष्ठ तुम्हारा विलंब करना मैं ठीक नहीं समझते तुम शीघ्र ही वन को चले जाओ| राजा लज्जावश तुमसे बात नहीं कर रहे हैं और जब तक तुम शीघ्र वन गमन न करोगे तब तक तुम्हारे पिता न स्नान करेंगे और न भोजन एक ही ऐसी बात सुनकर राम बोले मैं धन की इच्छा से इस लोक में वास करने नहीं आया हूं किंतु आप मुझे केवल धर्म में स्थित रिसीव के समान जाने मैं अपने प्राण त्याग कर भी आपके प्रिय योग्य कार्य को पूरा करूंगा इस धर्म आचरण से अधिक और है ही क्या की पिता की सेवा और उनके वचनों का पालन किया जाए के बिना कहे ही चौदह वर्ष निर्जन वन में व्यतीत करूंगा| श्री राम यहां पर भी अपने व्यवहार को संयमित रखते हुए लेशमात्र भी क्रोध या

शोक का भाव प्रकट नहीं करते वे केवल अपने माता-पिता की आज्ञा को ही वरीयता देते हैं| कैकई के मुख से इतने कठोर वचन सुनने के बाद भी श्री राम उसके मुख से निकले हुए शब्दों को सार्थक करने के प्रयास में लग जाते हैं वे स्वयं को मिले वनवास से दुखी नहीं हैं अपितु अपने पिता की स्थिति देखकर वे चिंतित अवश्य हैं और वनवास जाने की बात को उन्होंने कितनी सरलता से लेते हुए अपने व्यवहार को संयमित बनाए रखते हुए; कैकेई से वार्तालाप कियाप्रतिकूल स्थितियों में भी श्री राम ने संयमित व्यवहार का परिचय दिया तथा उस विषम परिस्थिति को भी किसी अन्य परिस्थिति की तरह स्वीकार किया न कोई प्रलाप किया और न ही कुछ और सोचने का प्रयास किया अपनी आंखों के आगे अपने राज्याभिषेक तैयारियां होते हुए देखना और अगले ही पल वनवास की आज्ञा मिलना यह विरोधाभास वाले तथ्य हैं;लेकिन श्रीराम ने बनवास को भी सहर्ष धारण किया | वनवास जाते समय वल्कल वस्त्र और चीर स्वयं कैकई ने राम को लाकर दिए और राम ने उन्हें सहर्ष स्वीकार किया और राज परंपरा के अनुसार पहने गए वस्त्रों को त्याग दिया| श्रीराम का स्वभाव इतना परिपक्व था कोई व्यक्ति या कोई घटना उनके व्यवहार को नियंत्रित नहीं कर सकती थी वेश्यावृत्ति परिस्थिति के लिए तैयार रहते थे और स्वयं का अहित चाहने वाले लोगों से भी पूरे आदर मान सम्मान और प्रेम पूर्वक वार्तालाप तथा व्यवहार करते थे कभी भी किसी घटना का दोष दूसरों के सिर पर नहीं महा अपेक्षा मानकर उसका पालन किया जिस समय राज परिवार तथा नगर के अन्य लोग कैकई को धिक्कार रहे थे वहां सिर्फ श्रीराम ही अकेले ऐसे थे जो कैकेयी से निश्चिंत होकर वार्तालाप कर रहे थे तथा परिवार के अन्य सदस्यों को दुखद घटना से बाहर लाने का प्रयास कर रहे थे|

इसी पुस्तक के अरण्यकांड के सोलहवें सर्ग में **हेमंत ऋतु का वर्णन है जहां पंचवटी में पर्णकुटी निर्माण के उपरांत श्री राम लक्ष्मण और सीता सहित वास** कर रहे हैं शरद ऋतु के व्यतीत होने तथा हेमंत ऋतु आने पर एक दिन प्रातः काल रामचंद्र जी स्नान करने की इच्छा से लक्ष्मण और सीता सहित पवित्र गोदावरी नदी के तट पर गए लक्ष्मण जी ने कहा भ्राता आपकी परम प्रिय हेमंत ऋतु आ गई इससे अलंकृत हो संवत्सर मनोहर हो जाता है|आजकल भगवान भुवन भास्कर के दक्षिण दिशा की ओर हो जाने से उत्तर दिशा बिना सिंदूर के सुंदरी के समान हो गई है| हिमालय पर्वत बर्फ की खान है;इस ऋतु में सूर्य के दूर हो जाने पर वह भी अपना नाम सार्थक कर रहा है आजकल शीत के कारण कोई आश्रम से बाहर शयन नहीं करता गर्मियों में जितना प्रेम लोग चंद्रमा से करते हैं शीत ऋतु में उतना ही प्रेम सूर्य से करने लगते हैं| आजकल राते बड़ी और दिन छोटे हो जाते हैं| हे प्रभु! इस शीतकाल में महात्मा भरत भी राज्य के सुखों को त्याग वनवासियों के समान जीवन बिता रहे होंगे महात्मा भरत सदैव सुख में पले हैं| उनसे कठोर नियम किस प्रकार निमित्य होंगे वह सदैव राजसी ठाठ-बाट से रहने वाले किस प्रकार वल्कल वस्त्र धारण कर पृथ्वी पर शयन करते होंगे मुझे तो आश्चर्य मालूम होता हैकी महाराज दशरथ के समान यशस्वी, धर्मात्मा, शांति स्वरूप सत्यवादी मृदुभाषी शत्रु समतापी महात्मा भरत की माता होते हुए भी केकई इतनी क्रूर हृदय क्यों हो गई यद्यपि यह बात लक्ष्मण जी ने साधारण ही रूप में कहीं तथापि श्री रामचंद्र जी अपनी मझली माता की निंदा सहन ना कर सके उन्होंने कहा भाई तुम्हें मछली मां की निंदा नहीं करनी चाहिए क्योंकि जैसा तुम समझते हो वह वैसी नहीं है यह तो समय और भाग्य का फेर है जो उन्होंने हम लोगों के वनवास जाने का वरदान मांगा उनका हृदय अब भी वैसा ही सरल तथा उदार है वह पछता रही होंगी यद्यपि मैं पिता की आज्ञा के अनुसारवनवास करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हूं तथापि भाई भरत का सच्चा प्रेम अपूर्व अनुराग और महान भक्ति कभी-कभी मेरे हृदय को विचलित सा कर देती है उनकी मधुर प्रिय और मन को प्रसन्न करने वाली अमृतमयी वाणी क्या मुझे कभी भूल सकती है? बारंबार यही इच्छा उठती है कि शत्रुनाशन शत्रुघ्न और महात्मा भरत से कब भेंट होगी? ऐसा विचार करते हुए श्री राम का हृदय शोक संतप्त हो जाता है किंतु वह अपने विचारों को अपने नियंत्रण में करते हुए गोदावरी के किनारे

पहुंचकर स्नान पूजा सर यथाविधि देवताओं और पितरों को कंदमूल आदि समर्पित करते हुए वंदना करते हैं और पर्णशाला में आकर उसी प्रकार शोभायमान होते हैं जैसे मुकुट में मणि;श्रीराम का व्यवहार इतना संयमित है उस पर किसी वेदना या विचार का कोई प्रभाव नहीं पड़ता वह उनका अहित करने वालों को भी सरलता से क्षमा करते हुए उनके बारे में सुविचार रखते हुए अपने कर्मों को निरंतर करते हुए एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं| स्वभाव में व्याकुलता तथा उग्रता श्री राम को कहीं से भी स्पर्श करके नहीं गई थी|
युद्ध में भी शत्रुओं के साथ मानवता पूर्ण व्यवहार करते थे तथा नीति पूर्व आचरण करते थे| शत्रु को अपने समक्ष देख कर भी उनका व्यवहार संयमित ही रहता था क्योंकि वे सदैव धर्म को चित्र में धारण करने वाले थे अत्यधिक धर्म परायण होने के कारण जितेंद्रिय होने के कारण तथा सभी तरह के विषयों और व्यसनों से उचित दूरी बनाए रखने के कारण ही उनका व्यवहार संयमित था| सुख पाकर अत्यधिक सुखी तथा दुख पाकर अत्यधिक दुखी या प्रतिकूल स्थिति पाकर क्रोधित हो जाना;ऐसा श्रीराम के व्यवहार में देखने को नहीं मिलता वे इस संसार की नश्वरता को भली-भांति समझते थे और अपने कुल की मर्यादा को बनाए रखना चाहते थे सामने उपस्थित व्यक्ति को अगर अनैतिक कार्य करते हुए देखते तो उसे भी बड़े संयमित विधि से धर्म तथा नैतिकता का भान अवश्य करवाते| रामचरितमानस के बालकांड में जब श्री राम तथा लक्ष्मण जनकपुर में जाते हैं तो वे ऋषि विश्वामित्र के साथ भोजन,विश्राम आदि कर कर बैठे हैं| उस समय पहर भर दिन रह गया था और लक्ष्मण जी के हृदय में विशेष लालसा थी कि वे जाकर जनकपुर देखे परंतु श्री राम जी का डर है और फिर ऋषि विश्वामित्र से भी कुछ सब कुछ आते हैं| इसलिए प्रकट में कुछ नहीं कहते मन ही मन विचार कर रहे हैं श्री राम अपने छोटे भाई की मन की दशा जान जाते हैं और उनके हृदय में वत्सल ताउम्र आती है| वह गुरु से आज्ञा मांगने जाते हैं और संयमित व्यवहार के अंतर्गत वे गुरु से विनय करते हैं कि-

नाथ लखन पूरू देखना चहही | प्रभु सकोच डर प्रगट न कहही ||
जो राउर आयुष मैं पावौं | नगर दिखाई तुरत लै आवौं || ५७

हे नाथ! लक्ष्मण नगर देखना चाहते हैं किंतु आपके डर और संकोच के कारण स्पष्ट नहीं कहते यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं इनको नगर दिखला कर तुरंत ही ले आऊं| उनके प्रेम युक्त वचन सुनकर मुनीश्वर विश्वामित्र जी जो कि राम के पराक्रम तथा निडरता को भली-भांति पहचानते थे; प्रेम सहित कहते हैं|

सुन मुनिसु कह वचन सप्रीती | कस न राम तुम्ह राखहु नीति ||
धरम सेतु पालक तुम्ह ताता | प्रेम बिबस सेवक सुखदाता || ५८

तुम नीति की रक्षा कैसे न करोगे;तुम धर्म की मर्यादा का पालन करने वाले और प्रेम के वशीभूत होकर सेवक को सुख देने वाले हो| राम व्यवहार के संयम को भलीभांति समझते थे| बड़ों तथा छोटो से इस प्रकार का व्यवहार करना है| इसकी मर्यादा से वे परिचित थे छोटों के मन की बात समझते हुए वे उनकी इच्छा पूर्ण करने हेतु बड़ी शालीनता से अपने बड़ों से आज्ञा ले लेते थे और वही कार्य करते थे जिसमें बड़ों को भी आदर मिले और छोटों को स्नेह अर्थात सबके मान-सम्मान का भली प्रकार से ध्यान करते थे| इसी प्रकरण में जब श्री राम तथा लक्ष्मण नगरी के दर्शन हेतु जाते हैं,तो दोनों भ्राताओं को देखकर जनकपुर के वासी उनके प्रेम-पाश में बंध जाते हैं|

५७,५८ - बालकांड, रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या १८७

आपस में उनके लिए बातें करने लगते हैं| एक दूसरे को उनका परिचय देते हुए कहते हैं;जानकी जी को तो यही वर मिलेगा जिसका श्याम शरीर और सुंदर कमल जैसे नेत्र हैं| जो मारीच और सुबाहु के मत को चूर करने वाले और सुखों की खान हैं; जो हाथ में धनुष बाण लिए हुए हैं, वह कौशल्या जी के पुत्र राम है भ्रमण करते हुए दोनों भाई नगर के पूरब की ओर गए जहां धनुष यज्ञ के लिए रंगभूमि बनाई गई थी बहुत लंबा चौड़ा सुंदर भला हुआ पक्का आंगन था| जिस पर सुंदर और निर्मल वेदी सजाई गई राम और लक्ष्मण की उपस्थिति वहां पा कर जनक नगर के वासी उन्हें कुतूहलवश देखते हैं-

सब सिसु एहि मिस प्रेमबस परसि मनोहर गात |
तनु पुलकहि अति हरशु हिय है देख देख दोउ भ्रात || ५९

अर्थात सब नगरवासी इसी बहाने प्रेम के वश होकर श्रीराम के मनोहर अंगों को छूकर शरीर से पुलकित हो रहे हैं और दोनों भाइयों को देख देख कर उनके हृदय में अत्यंत हर्ष हो रहा है|

सिसु सब राम प्रेम बस जाने । प्रीति समेत निकेत बखाने ॥
निजी निजी रुचि सब लेहि बुलाई । सहित सनेह जाहि दोउ भाई ॥ ६०

श्री रामचंद्र जी ने सब नगरवालों को को प्रेम के वश जानकर यज्ञ-भूमि की प्रेम पूर्वक प्रशंसा की इससे सब का उत्साह आनंद और प्रेम और भी बढ़ गया वे सब अपनी अपनी रूचि के अनुसार उन्हें बुला लेते हैं और दोनों भाई प्रेम सहित उनके पास चले जाते हैं| अपरिचित नगर तथा अपरिचित लोगों के मध्य ऐसा ही व्यवहार करते हैं जैसे न जाने कितने वर्षों से उन्हें जान रहे हो बार-बार सभी बालकों द्वारा उनको बुलाए जाने तथा उनको स्पर्श कर करके उनकी उपस्थिति की अनुभूति करते रहने के कारण भी वे बड़े संयमित ढंग से व्यवहार करते हैं किसी पर भी खींझते नहीं है सबका प्रसन्नता के साथ अभिवादन करते हैं| श्रीराम के जीवन में संयम सदाचार सेवा और मर्यादा सदैव ही इनका महत्व रहा है| उनका स्वयं का आचरण भी इनके अनुसार ही रहा| अपने संयमित आचरण के द्वारा है उन्होंने सबका हृदय जीता एक साधारण वन्यजीव से लेकर अयोध्या नगर के वासी राजा महाराजा तथा शत्रु मित्र अपरिचित अपरिचित समस्त प्राणी गण उनके इस आचरण के कारण ही उनके निकट रहना श्रेयस्कर समझते थे संयमित व्यवहार का आधार है| अपनी इंद्रियों का स्वतः वशीकरण अर्थात् आप की इंद्रियां आपके वश में होनी चाहिए;आप इंद्रियों के वश में नहीं| श्रीराम का व्यवहार अपेक्षात्मक नहीं था| वे स्वयं ही परिस्थितियों को भांपते हुए उनके अनुरूप कार्य करने में विश्वास रखते हैं अपेक्षा न करने के कारण वे मानसिक दुर्बलताओं से कोसों दूर रहते थे| एक सशक्त व्यक्तित्व ही संयमित व्यवहार का प्रदर्शन कर सकता है| श्रीराम का संयमित व्यवहार सदैव ही जनमानस के लिए अनुकरणीय है| 'संयमित व्यवहार के संवाहक श्री राम' मनुष्य के द्वारा समाज का निर्माण इस हेतु किया गया है;जिससे वह परिस्थिति जनित तथा आधारभूत मानवीय आवश्यकताओं का निवारण उचित प्रकार से कर सकें;परंतु जब व्यक्ति विशेष अथवा समाज भूलवश अथवा पूर्व प्रायोजित योजना के अंतर्गत किसी व्यक्ति समाज तथा प्रकृति में विद्यमान जड़ चेतन तत्वों पर अतिक्रमण व शोषण प्रारंभ कर देते हैं तो वह व्यवस्था विकृत हो जाती है स्थिति को नियंत्रण में रखने हेतु व्यक्ति को मर्यादा में रहना संयमित व्यवहार करने का विधान निर्धारित किया गया|

५९, ६० - बालकांड, रामचरितमानस ,पृष्ठ संख्या १९२

श्री राम को उनके कर्तव्यों एवं दायित्वों का भली प्रकार से ज्ञान था| उन्हें नैतिक दायित्व तथा कर्तव्य का बोध होने के साथ-साथ इस तथ्य का वज्ञान था कि यदि वे निर्धारित कर्तव्यों का परित्याग अथवा बहिष्कार करेंगे तो इसके दूरगामी परिणाम सुखद नहीं होंगे; अतः वे अपना व्यवहार सदैव संयमित रखते थे|

चतुर्थ अध्याय : कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक

४.१-विशाल राजनैतिक दृष्टिकोण व निर्णय क्षमता :-

एक कुशल राजनीतिज्ञ समसामयिक पारदर्शी दूरदर्शी तथा एक सुखद व्यक्तित्व वाला होता है| उसके पास उद्देश्य, दर्शन, बलिदान, करुणा और प्रतिबद्धता की भावना होती है| जनमानस के लिए अत्यंत प्रेम और करुणा का भाव नेतृत्व का प्रतिबिंब है| जिस व्यक्ति में ये गुण पाए जाते हैं; वह कुशल नेतृत्व करने में सक्षम होता है| एक राजनीतिज्ञ के समक्ष अनगिनत चुनौतियां होती हैं;उसकी अपनी प्रतिबद्धताएँ होती हैं| समाज में सभी लोग एक जैसे नहीं होते न ही प्रत्येक व्यक्ति को कोई संतुष्ट कर सकता है;परंतु एक कुशल राजनीतिज्ञ को सबको साथ में लेकर चलना एक समान न्याय करना तथा लोगों में अपने प्रति विश्वास पैदा करना जैसे गुण होते हैं नेतृत्व करने वाले व्यक्ति की आलोचना भी होती है; उसे दुर्गम परिस्थितियों का सामना भी करना पड़ता है| जिसमें उसे भावुकता से नहीं मनोवैज्ञानिकता से काम लेना होता है| अपने आलोचकों को भी अपने मित्रों की तरह ही रखना होता है तथा आलोचकों को सुनने का धैर्य भी उत्पन्न करना पड़ता है;उसे अपने समक्ष आई सफलता और सफलता को एक भाव से ही धारण करना होता है| वह सदा परिस्थितियों से सीखने को तत्पर रहता है वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन कुशलता पूर्वक कहता है इसी अन्य पर दोषारोपण नहीं करता अपितु अपने कार्यों द्वारा अपनी सोच का परिचय देता है| एक राजनीति के तथा प्रबंधक के कार्य कुशलता के अनुरूप उसकी प्रशंसा भी होती है और असफल होने पर निंदा भी होती असफलता की तथा निंदा के घटनाक्रम में कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक कभी निराश नहीं होता अपितु वह उन कारणों का मंथन करता है;जिसके कारण उसकी नीतियां या उसके कार्य असफल रहे आगामी प्रयासों में वह अपने पूर्व की त्रुटियों से सीख लेते हुए आगे बढ़ता है| एक कुशल राजनीतिज्ञ आदर्शवाद देता है;व्यावहारिकता के माध्यम से छोटी अवधि वाली आवश्यकताओं के मध्य सामंजस्य स्थापित करता है| आदर्शवाद तथा व्यावहारिकता दोनों को साथ लेकर चलता है| सामान्य विशेष नहीं हो सकता उसे समाज के लोगों के व्यक्तिगत ध्यान एवं समूह समाज तथा राष्ट्र के प्रति सामान्य दृष्टिकोण के मध्य एक संतुलन स्थापित करना होता है| उसके अंदर अपनी दुर्बलताओं को स्वीकार करने का साहस भी होना चाहिए किसी वर्ग या व्यक्ति विशेष के द्वारा किए गए कार्यों का स्वयं उससे उन्हें अवश्य देना चाहिए इस प्रकार दूसरों के योगदान को स्वीकार करते हुए संगठन की शक्ति बढ़ाने चाहिए| एक प्रबंधक के रूप में उसे दूरदर्शी होना चाहिए उसे सिर्फ उसकेपीछे चलने वाले जनसमूह को ही अपना सर्वस्व न समझते हुए समूचे समाज तथा समग्र राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व का संपूर्ण कर्तव्यनिष्ठ था के साथ निर्वहन करना होता है| उसे जनसाधारण के मनोभावों को पढ़ना अच्छी तरह आना चाहिए तथा लोकहित और राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखना चाहिए| मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम ने अपने जीवन में स्वयं तथा परिजनों से अधिक प्रजा तथा जनसाधारण को मान सम्मान दिया सदैव उनके विश्वास का मान रखा चाहे वे तथा उनका परिवार कितने भी कष्ट में रहा हो| वे सदैव प्रजा के हित का ध्यान रखते थे| अपने शोक, हर्ष को कभी महत्व नहीं दिया| सदैव ही लोक हित के लिए कार्य करते रहें फिर वह चाहे महर्षि विश्वामित्र के साथ वन जाना हो या राज्य अभिषेक से थोड़े समय पूर्व ही वनवास मिलना हो,अयोध्या नगरी को तथा प्रजाजनों को छोड़कर वन के लिए प्रस्थान करना हो, प्रजजनों को सरयू के तट से पुनः अयोध्या नगरी की ओर भेज देना हो, सीता का हरण, रावण से युद्ध, अयोध्या नरेश बनना हो| प्रत्येक प्रसंगों तथा घटनाओं में हम सदैव उन्हें एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक के रूप में देखेंगे| स्वयं के लिए वनवास सुनिश्चित होने के उपरांत भी श्रीराम ने वन जाने से पूर्व परिजनों , मंत्रियों तथा गुरु वशिष्ठ के साथ विचार विमर्श करते हुए भरत के आने तक की समस्त गतिविधियों

हेतु संपूर्ण प्रयास किए थे |बिना किसी दुख बिना किसी भाव के वे अपने दायित्वों का निर्वहन करना वे भली प्रकार जानते थे| वनवास के लिए जाते समय समस्त गुरुजनों अनुभवी मंत्रियों आदि को यही निवेदन करते हुए जाते हैं कि भरत के आने तक राज निवास के साथ-साथ प्रजाजनों का भी ख्याल रखा जाए| गुरुजी से विदा लेते समय उन्होंने महल में कार्य करने वाले सभी दास और दसियों को गुरु वशिष्ठ को होते हुए कहा हे गुसाईं इन सब की माता पिता के समान देख रेख करते रहिएगा| अपने समक्ष आने वाले कष्टों के बारे मे न सोचते हुए अपने कर्मों को प्रमुखता देना तथा सबकी देखभाल की सोच ही उन्हे सबसे अलग करती है|

दासीं दास बोलाइ बहोरि | गुरहि सौंपि बोले कर जोरि ||
सब कै सार संभार गोसाई | करबि जनक जननी की नाई || ६१

एक कुशल राजनीतिज्ञ किसी भी स्थिति में अपने उद्देश्यों से नहीं भटकता;उसके मस्तिष्क में राज्य तथा प्रजा की सेवा करने का विचार अत्यंत स्पष्ट होता है वह अपने अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सर्वप्रथम अपने राज्य के बारे में सोचता है इस चीज का सदैव ही ध्यान रखता है कि उसके द्वारा किए गए कर्मों का प्रभाव सदैव ही सकारात्मक हो ताकि किसी भी नकारात्मक उदाहरण के रूप में स्थापित न हो अपितु सकारात्मक उदाहरण के रूप में अपने राज्य तथा समाज में स्थापित हो सके| राम ने बालि तथा सुग्रीव के प्रकरण के उपरांत सुग्रीव को सरलता से राजकाज चलाने की सीख दी वे सदैव ही किसी भी नरेश को प्रजा के हित में कार्य करने की प्रेरणा देते थे| उनके राज्य करने की नीतियाँ पूर्णतया स्पष्ट थी| वे किसी भी कुशल राजनेता से मिलकर प्रसन्न होते थे| श्री राम और रावण के युद्ध के उपरांत जब उन्होंने लंका का साम्राज्य विभीषण को सौंपा तो भी उसे राजनीति की कुशल सीख दी वनवास के समय जब भरत श्री राम से मिलने आए और वे श्री राम को वापस अयोध्या ले जाना चाहते थे| श्रीराम ने उनको एक सच्चे राजनेता के गुण बताएं और उन्हें प्रेरित किया कि वे पिता के वचन को निभाने में श्रीराम का सहयोग देते हुए प्रजा की कुशलता से देखरेख करें किसी भी प्रजाजन को किसी भी प्रकार का दुख या किसी भी प्रकार की कोई चिंता नहीं होनी चाहिए क्योंकि एक राजा तभी विफल होता है जब वह अपनी प्रजा की देखभाल उचित प्रकार से नहीं करता और प्रजा दुखी तथा असंतुष्ट रहती है| इसी कारण रामराज्य को उत्कृष्ट राज्य का अनुपम उदाहरण माना जाता है; सुशासन तथा सुव्यवस्था की तुलना सदैव ही रामराज्य से की जाती है| अपने भ्राता भरत से लेकर निषादराज, सुग्रीव, विभीषण आदि राजाओं को वे सदैव ही प्रजा के हितैषी के रूप में कार्य करने का परामर्श देते थे उनकी नीतियां सदैव ही राज्य तथा प्रजा के पक्ष में होती थी तथा वे सदैव प्रजा के हित में ही निर्णय लेते थे | वे अपनी हानि को तो वहन कर सकते थे; परंतु प्रजा के लिए अहित न तो कभी सोच सकते थे और न ही कभी कर सकते थे|रामचरितमानस के अयोध्या कांड में जब भरत जब श्री राम को वापस अयोध्या ले जाने के लिए आते हैं;तो श्री राम से कहते हैं-

मोर तुम्हारे परम पुरुषार्थु स्वाराथु सूजसु धरमु परमार्थु |
पितु आयसु पालिहि दुहु भाई लोक वेद भल भूप भलाई || ६२

मेरा और तुम्हारा परमपुरुषार्थ,स्वार्थ,सुयश, धर्म और परमार्थ इसी में है कि हम दोनों भाई पिताजी की आज्ञा का पालन करें एक राजा की भलाई अर्थात उसके व्रत की रक्षा से ही लोक और परलोक दोनों में भलाई है|

६१,६२ - अयोध्या कांड ,रामचरितमानस पृष्ठ संख्या ३७० ,५५५

एक राजा अगर अपने राजा धर्म का पालन अपने प्रजा के लिए सदैव हितैषी होते हुए करता है, तो इससे बड़ा भलाई का कार्य एक राजा के लिए कोई दूसरा नहीं है अर्थात एक राजा का सबसे बड़ा धर्म और कर्म प्रजा की सेवा करना है और जो भी राजा अपने इस धर्म रूपी कर और कर्म रूपी धर्म का पालन निष्ठा तथा तन्मयता से करता है वही सच्चा राजा है| राजा का परिचय उसके द्वारा किए जा रहे प्रजापति के कार्य से होता है| प्रजा का स्वामी नहीं अपितु उसका सेवक बनकर उसकी सेवा करे

मुखिया मुखु सो चाहिए खान पान कहूँ एक |
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक || ६३

गोस्वामी जी के अनुसार मुखिया मुख के समान होना चाहिए जो खाने पीने को तो एक अकेला ही दिखता है परंतु विवेक पूर्वक समस्त अंगों का पालन पोषण करता है| राजा,राज्य का मुखिया होता है;जैसे हमारे शरीर में मुख जो भोजन आदि को चबाकर शरीर के समस्त अंगों को पोषण प्रदान करता है तथा पोषक के रूप में शरीर को शुद्ध तथा सशक्त बनाता है और हमारे मुख से ही हमारी पहचान होती है

राजधर्म सरबसु एतनोई | जिमि मन मनोरथ गोई || ६४

राजधर्म का सर्वस्व; सार भी इतना ही है जैसे मन के भीतर मनोरथ छिपा रहता है वैसे ही एक राजा के रूप में मनुष्य की सदैव एक ही इच्छा होनी चाहिए और वह इच्छा है राजधर्म का पालन पूर्ण निष्ठा से करते हुए अपनी प्रजा का ध्यान रखना उसके सुख-दुख में उसका साथ न छोड़ना| प्रजा के दुख को अपना दुख समझना तथा प्रजा के सुख का निमित्त बनना| रामचरितमानस के किष्किंधा कांड में राजा बालि के वध के उपरांत श्री राम जी लक्ष्मण जी से कहते हैं कि तुम जाकर सुग्रीव को राज्य दे दो| उस का राज्याभिषेक करते हुए उसे राजा का सिंहासन प्रदान करो; सुग्रीवको अपने निकट बुलाकर कहते हैं कि हे वानरपति सुग्रीव! मैं चौदह वर्ष तक किसी बस्ती या गांव में नहीं जाऊँगा| तुम अपना राज-काज संभालो और अंगद सहित राज्य करो और वे सुग्रीव को राजा के कर्म और नीति सिखाते हैं

पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बुलाई | बहु प्रकार नृपनीति सिखाई || ६५

एक राजा को किस प्रकार नीति का पालन करना चाहिए| विवेक अनुसार प्रजा के हित में निर्णय लेना चाहिए गलत आचरण के विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए प्रत्येक व्यक्ति को न्याय देना चाहिए| मान-सम्मान का उचित ध्यान रखना चाहिए ऐसे ही न जाने कितनी राजनीतियां है; जिनका श्री राम बखान करते हुए सुग्रीव को एक कुशल राजा के रूप में राज्य करने की युक्ति देते हैं;ठीक इसी प्रकार श्री रामचंद्र जी विभीषण को भी एक कर्मशील राजा बनने की सीख देते हैं क्योंकि उनके अनुसार एक राजा का धर्म-कर्म तथा उसका मुक्ति मार्ग भी उसका राजधर्म है| वह जो कुछ भी प्रजा के लिए करता है;वही उसका धर्म कर्म तथा मोक्ष का मार्ग होता है राजा कभी भी अपने सुख और दुख को नहीं देखता है उसके लिए उसका सुख वही है जो प्रजा का सुख है और दुख भी वही है जो प्रजा का दुख है| वह किसी भी प्रकार स्वयं को प्रजा से दूर नहीं कर सकता चाहे इसके पीछे कारण कोई भी हो| श्री राम अपनी प्रजा की देखभाल अपनी संतान की भांति करते थे और प्रजा के दुख को अपना दुख समझते थे|

६३,६४,६५ - अयोध्या कांड , किष्किंधा काण्ड रामचरितमानस पृष्ठ संख्या - ५५६, ६३८

यह उनका प्रजा-प्रेम ही था;जो वनवास समाप्ति के उपरांत जिस दिन वे अयोध्या लौटे;उस दिन समस्त अयोध्यावासियों ने दीपमालिकाएँ प्रज्वलित कर श्री राम का अयोध्या में स्वागत किया और उनके प्रति प्रेम का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया| श्री राम के अनुसार एक व्यक्ति तभी अच्छा राजा या कुशल राजनेता बन सकता है;जब वह चारों दिशाओं में कार्य करें अर्थात सबसे पहले वह यह जानता हो कि धन कैसे अर्जित किया जा सकता है? दूसरा धन-अर्जन को बढ़ावा कैसे दिया जा सकता है? तीसरा वह जानता हो कि उस धन की रक्षा किस तरह की जा सकती है? चौथा वह उस धन का किस प्रकार प्रयोग करें कि उसकी प्रजा का भविष्य सुखद हो जाए?

श्री राम के अनुसार राजा को न सिर्फ उन लोगों के साथ विनम्र तथा शांत रहना चाहिए, जो उसके लिए काम करते हैं अपितु उन लोगों के साथ भी विनम्र व्यवहार करना चाहिए जो उसके साथ कार्य नहीं करते ऐसा राजा जो बात बात पर क्रोधित होता है या अधिकांश परिस्थितियों में अपना धैर्य खो देता है वह कभी भी अपनी प्रजा से प्रेम या आदर प्राप्त नहीं कर सकता| एक कुशल नेतृत्व को क्षमा करना भी आना चाहिए एक अच्छे राजा को एक कुशल मार्गदर्शक भी होना चाहिए;जो सदैव सभी की सहायता के लिए तत्पर रहें तथा साथ ही अपनी प्रजा की रक्षा किसी भी कीमत पर करें| एक अच्छे राजा को कभी भी अपने दरबार में आए हुए व्यक्ति को निराश नहीं करना चाहिए उसके पास हमेशा अपने प्रजाजनों के दुख और शिकायतें सुनने का समय होना चाहिए;ताकि वह उन्हें सुलझा कर प्रजा को सुखी और संतुष्ट कर सके साथ ही उसे यह भी प्रयास करना चाहिए कि जो लोग राजा के विचारों से सहमत नहीं हैं उनको सहमत किया जाए समझाया जाए ताकि समाज का वातावरण सौहार्दपूर्ण रहे एक अच्छे नेता या शासक को हमेशा अच्छे वचन ही बोलने चाहिए फिर वह वचन चाहे मित्र के लिए हो या शत्रु के लिए; श्री राम कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक के रूप में सभी के लिए एक सशक्त उदाहरण है; वे अपनी प्रजा के लिए प्रत्येक संसाधनों का प्रबंध करना चरणों में विभक्त करके उसको क्रियान्वित करते थे| उनके जीवन का प्रत्येक क्षण अन्न का प्रत्येक कण तथा धन का प्रत्येक स्वर्ण केवल और केवल उनकी प्रजा के लिए था| वे कर्मठ तथा उद्यमी नरेश थे| उनके लिए राजधर्म से बढ़कर कोई धर्म नहीं था प्रजा की सेवा करना ही वे अपना कर्तव्य मानते थे| श्रीराम के जीवन पर आधारित समस्त साहित्य में ऐसा वर्णन मिलता है कि उनके राज्य में प्रत्येक व्यक्ति सुखी तथा संपन्नता का जीवन जीता था| महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित अग्निपुराण के युद्ध कांड की संक्षिप्त कथा में बताया गया है कि श्री राम अपनी प्रजाजनों का पुत्रवत पालन करते थे| उनके राज्य में सभी लोग सम्पन्न थे तथा पृथ्वी पर सब प्रकार की खेती फली-फूली रहती थी| श्री रघुनाथ जी के शासनकाल में किसी की भी अकाल मृत्यु नहीं होती थी अर्थात सभी प्रजाजन शारीरिक तथा मानसिक दोनों रूपों से स्वस्थ, आर्थिक रूप से समृद्ध, आचरण से सदाचारी व्यवहार से विनम्र ,धर्म कार्यों के लिए तत्पर रहते थे और किसी राजा की प्रजा इतनी धर्मभीरु, संपन्न तभी हो सकती है | जब उनका नरेश, उनका नेतृत्व उनका राजा, एक ऐसा जीवन जीता हो या अपने जीवन के द्वारा ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करता हो| जिससे प्रेरित होकर समस्त प्रजाजन व्यवहारिक रूप से इतने सभ्य ,आत्मिक,धार्मिक, कर्तव्य शील हो कि कहा गया है न यथा राजा तथा प्रजा जैसा राजा होता है प्रजा वैसे ही होती है और अपनी प्रजा से प्रेम करने वाला राजा अपने आप में ही वह धनवान तथा शक्तिशाली होता है क्योंकि उसके लिए उसका धर्म और उसकी शक्ति उसकी प्रजा ही होती है और प्रजा भी इस बात का अनुभव भली-भांति करती है कि उसका राजा किस प्रकार का आचरण करता है ? किस प्रकार का व्यवहार करता है?

उसकी निर्णय क्षमता कैसी है ? वह वाणिज्य कृषि कला मनोरंजन आदि सभी क्षेत्रों में किस प्रकार सामंजस्य बिठाते हुए एक की भूमिका निभाता है? सत्ता पर आसीन होना ही कुशल नेतृत्व की पहचान नहीं, अपितु धरातल से जुड़कर कार्य करना ही शीर्ष नेतृत्व को सशक्त बनाता है|

उसे सत्यता की परख होनी चाहिए सूत्र विश्वसनीय होने चाहिए;किसी के ऊपर वैचारिक निर्भरता नहीं होनी चाहिए मस्तिष्क चारों दिशाओं में दौड़ना चाहिए, कोई प्रिय या अप्रिय नहीं होना चाहिए| कोई भी चयनित-अचयनित क्षेत्र नहीं होना चाहिए समस्त जीवों के लिए एक ही भाव होना चाहिए सब के प्रति प्रेम की भावना होनी चाहिए| वैचारिक मतभेदों को समझना चाहिए तथा अपने मत को समझाने की कुशलता होनी चाहिए| विश्वसनीयता भी एक बहुत बड़ा आधार है, एक राजा का उसकी प्रजा पर विश्वास और प्रजा का उसके राजा पर विश्वास होना अति आवश्यक है और श्री राम के संदर्भ में हम इस विश्वास तथा प्रेम को भलीभाति देख सकते हैं| जिस राजा के लिए उसकी प्रजा अपना सर्वस्व निछावर करने के लिए तैयार रहें उस स्थिति में हम विश्वसनीयता का आकलन बड़ी सरलता से लगा सकते हैं| प्रबंधक के रूप में अपनी प्रजा को वरीयता दी अपनी प्रजा को इतनी स्वतंत्रता दी कि निसंकोच अपने राजा से अपने मन की बात कह सके संवाद कर सकें ताकि किसी भी तरह की भ्रामक स्थिति उत्पन्न न हो क्योंकि भ्रम की स्थिति में किसी भी तरह का उन्माद उत्पन्न हो सकता है जो कि विकट परिस्थितियों को जन्म देता है | इन सभी बातों पर नियंत्रण तथा विधर्मियों को उनके कुकृत्यों का दंड अवश्य देते थे;तभी तो राक्षसों का संहार करके उन्होंने उनके समाज में यह संदेश भेजा कि अगर कोई भी अशांति फैलाने का प्रयास करेगा तो उसको दंडित अवश्य किया जाएगा| प्रजा के हित में कोई भी सेंध लगाएगा तो वह दंड का भागी अवश्य बनेगा ऐसा कर्म करने वाला व्यक्ति किसी भी प्रकार की दया की अपेक्षा न रखें उनका व्यवहार निष्पक्ष था| जो राजा निष्पक्ष होकर निर्णय नहीं लेता है तो उसका प्रभाव समाज के ऊपर सकारात्मक नहीं होता है और असंतोष उत्पन्न होता है| सत्य के साथ दृढ़ता से खड़ा रहने वाला राजा धर्म के लिए अधर्म से लड़ने वाला राजा सभी को प्रिय होता है और श्रीराम ऐसे ही प्रिय राजा थे| जिनकी प्रजा उनसे अथाह प्रेम करती थी क्योंकि वह भी अपनी प्रजा से निश्चल प्रेम करते थे | ख्याति मुख से नहीं कर्मों से होती है| एक राजा का यह दायित्व होता है वह प्रजा के लिए उस कार्य को करें जो प्रजा स्वयं के लिए नहीं कर सकती| एक कुशल राजनीतिज्ञ को अपनी व्यक्तिगत सीमाओं से आगे बढ़कर सोचना होता है| अपनी उस सोच को कार्य में परिवर्तित करना होता है| यह एक ऐसा गुण है जिसमें आध्यात्मिक तत्वों में मानवीय अनुभवों का समावेश होता है उसका स्वयं के लिए भौतिकताओं की सीमाओं से परे होना श्री राम के इस रूप में हम कहीं भी उनके लिए स्वयं के बारे में कोई विचार या कोई कार्य नहीं देखते हैं क्योंकि वे इस बात को भली प्रकार समझते थे कि प्रजा के साथ सदैव ही हमारी सोच 'हम' वाली होनी चाहिए 'मैं' वाली नहीं | एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा नेतृत्व को सदैव ही विनम्र रहना चाहिए किसी भी प्रकार की स्वाभाविक कमजोरी नहीं होनी चाहिए उसके विचार तथा आचरण स्पष्ट होने चाहिए हृदय तथा मस्तिष्क सशंकित नहीं होना चाहिए पारिवारिक तथा किसी भी प्रकार की स्वार्थ से दूर रहना चाहिए| श्रीराम ने कभी भी अपने किसी परिजन या स्वयं के लिए भी प्रजा के हित को ताक पर नहीं रखा स्वयं विषम परिस्थितियों में वास करते हुए भी कभी स्वार्थी नहीं हुए| भावनात्मक रूप से वह इतने सुंदर थे कि किसी भी प्रकार का दुख उनकी नेतृत्व की कुशलता पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगा सकता साधारण गुण वाला मनुष्य या राजा ऐसी किसी कमजोरी के कारण बाध्य होते हुए कुछ ऐसे निर्णय भी ले सकता है जो प्रजा के हित में न हो| कोई विवशता उसे प्रजा का अहित करने के लिए भी प्रेरित कर सकती हैं अतः एक कुशल राजनीतिज्ञ का मानसिक रूप से सुदृढ़ होना वैचारिक स्पष्टता होना अति आवश्यक है| श्रीराम के जीवन के उद्देश्य उनके कर्मों द्वारा स्पष्ट दिखते हैं | हम उनके व्यवहार में उनकी कार्यकुशलता में किसी भी प्रकार की अव्यवस्था नहीं देखते हैं| वे अपने आचरण द्वारा कभी भी किसी ऐसे उदाहरण को प्रस्तुत नहीं करते जो उनकी प्रजा के लिए अहितकारी हो;उनकी राजनैतिक दक्षता प्रबंधन कुशलता उन्हें एक ऐसे राजा के रूप में प्रस्तुत करती हैं जो अपनी प्रजा को वरीयता देते हुए उसके सुख को सर्वोपरि मानता है|

अपनी प्रबंधन शैली के द्वारा उसके लिए सारे संसाधनों को सारे स्रोतों को प्रजा के हित के लिए लगाता है ताकि उनकी प्रजा को जीवन यापन करने में किसी भी तरह का कोई कष्ट न हो ,प्रबंध से लेकर सेना के प्रबंध शिक्षा के प्रबंध से लेकर चिकित्सा के प्रबंध आदि न जाने कितने ऐसे कुशल प्रबंध श्रीराम ने किए जिसके कारण हम उनको एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक के रूप में जानते हैं और एक पंक्ति कही जाती है कि राजा हो तो राम जैसा क्योंकि राम को अपनी प्रजा से और प्रजा को अपने राम से अत्यधिक प्रेम था और इससे अच्छा उदाहरण कुछ हो ही नहीं सकता;उनसे अच्छा राजा कोई हो ही नहीं सकता| अपने कर्तव्य परायणता तथा प्रजा प्रेम को ही अपने जीवन का आधार बनाया वे एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे;जो प्रजा पर राज करने की भावना से राजनीति नहीं करते थे बल की नीतियों के माध्यम से राज्य के लिए सुगमता प्राप्त करवाते थे वे एक राजा की तरह नहीं एक सेवक की तरह अपने प्रजा की सेवा करते हैं;जिस प्रकार एक सेवर अपने स्वामी को कष्ट नहीं दे सकता उसके प्रति निष्ठावान रहता है ठीक उसी प्रकार श्रीराम सदैव ही अपनी प्रजा के प्रति निष्ठावान रहे निष्ठा ही उन्हें सर्वोत्तम राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक के रूप में स्थापित करती हैं| श्री राम के प्रबंधन गुणों का सर्वोत्तम उदाहरण है, रामसेतु जिसका निर्माण उन्होंने लंका जाने के लिए करवाया था| वे एक कुशल प्रबंधक के रूप में सभी को वरीयता देते थे, उत्साहित करते थे तथा विश्वास की वह पूंजी देते थे;जिससे व्यक्ति विशेष या जीव विशेष आजीवन श्रीराम का हो जाता था| वे एक कुशल प्रबंधक के रूप में अपने साथ कार्य करने वाले सभी सदस्यों के गुणों से भलीभांति परिचित थे| सब के व्यवहार के सकारात्मक, नकारात्मक पक्षों को जानते थे| सबके सुख -दुख की अनुभूति कर लेते थे| अपने साथ जुड़े सभी लोगों को विशेषता का आभास करवाते थे| एक कुशल प्रबंधक वही हो सकता है जो सबको जोड़ कर रखें सबके अंदर सहयोग की भावना को बनाए रखें| उन्होंने समस्त कार्यों के लिए सभी को धन्यवाद किया| वे सभी से उनकी विशेषता के अनुरूप ही व्यवहार करते थे| रावण से युद्ध के समय वे अपनी सेना को जिस तरह एक सूत्र में बांधकर रखते थे विश्वास तथा प्रेम का इससे उत्तम कोई अन्य उदाहरण नहीं हो सकता| एक कुशल प्रबंधक अपने दल में काम करने वाले सभी सदस्यों के मस्तिष्क को पड़ सकता है वह विचार साझा करने छात्रवृत्ति में विश्वास रखते हुए सभी से परामर्श लेता है ताकि उसके निर्णय तथा कार्य पद्धति में श्रेष्ठता बनी रहे श्री राम के पूरे जीवन काल का अध्ययन करते हुए एक स्पष्ट विचार उनके प्रति बना वह यह है कि वे सदैव ही अपने भाइयों राजगुरु मंत्रियों वानरों की सेना में जामवंत नल नील सुग्रीव हनुमान विभीषण आदि से प्रत्येक विषय में परामर्श लेते रहे उसके उपरांत जो उनको उचित लगता था उसी को क्रियान्वित करते थे जैसे रामचरितमानस के लंका कांड में जब वे लंका जाने के लिए मार्ग के बारे में सोचना प्रारंभ किया ,तो उन्होंने अपने साथ उपस्थित सभी सदस्यों से परामर्श मांगा की समुद्र को किस प्रकार पार किया जाए?

सुनु कपीस लंकापति बीरा | केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा ||
संकुल मकर उरग झष जाती | अति अगाध दुस्तर सब भाँति || ६६

श्री राम जी कहते हैं हे वीर! वानरराज सुग्रीव तथा लंकापति विभीषण इस गहरे समुद्र को किस प्रकार कार्य किया जाए? अनेक जाति के मगरमच्छ सांप और मछली यह अत्यंत अथाह समुद्र पार करने में सब प्रकार से कठिन है| श्री राम के द्वारा पूछने पर विभीषण जी उन्हें परामर्श देते हैं कि आप समुद्र से विनय करिए क्योंकि वह आपके पूर्वज है और आपको कोई न कोई सरल उपाय बता देंगे तब सारी सेना बिना परिश्रम के ही समुद्र के पार उतर जाएगी |

६६,६७ - सुंदरकांड ,रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास ,पृष्ठ संख्या ६९८

सखा कहीं तुम्ह नीक उपा | करिअ दैव दांव जो होइ सहाई ||
न यह लछिमन मन भाया | सुनी राम बचन अति दुख पाया || ६७

श्री राम जी कहते हैं हे सखा! तुमने बहुत अच्छा उपाय बताया यही किया जाए यदि दैव सहायक हों,तोहरि सेना सरलता से समुद्र पार कर जाएगी| यह परामर्श लक्ष्मण जी के मन को अच्छा नहीं लगा| श्री राम जी के वचन को सुनकर उन्होंने बहुत दुख पाया क्योंकि लक्ष्मण जी के अनुसार श्री राम को समुद्र को सूखा देना चाहिए था| उनके अनुसार कायर मनुष्य ही भाग्य के सहारे बैठता है आलसी लोग ही देव -देव पुकारते हैं| लक्ष्मण जी की बात सुनकर श्री राम बोलते हैं तुम चिंतित न हो हम ऐसा ही करेंगे| ऐसा कहते हुए समुद्र के समीप गए और उन्होंने समुद्र को प्रणाम किया और किनारे कुश बिछाकर बैठ गए| श्री राम ने विभीषण की बात का मान रखा और लक्ष्मण की बात का भी इन पंक्तियों के द्वारा श्री राम के प्रबंधन के गुण को भलीभांति समझ सकते हैं एक समूह में कार्य करते हुए हमें सभी के परामर्श की आवश्यकता होती है उसमें से जो श्रेष्ठ लगे जो उचित हो दूसरों का मान रखने वाला हो न्याय संगत हो हमें वही मार्ग चयनित करना चाहिए| श्री राम अपनी क्षमता तो जानते ही थे लेकिन वे यह भी जानते थे कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना मानसिक एवं शारीरिक स्तर होता है| जिसके अनुरूप उसकी इच्छाशक्ति और शारीरिक श्रम करने की स्थिति का आकलन किया जा सकता है; कई बार नेतृत्व के मस्तिष्क में भी वह विचार नहीं आता जो किसी जनसाधारण के मस्तिष्क में आ सकता है| श्री राम एक कुशल प्रबंधक के रूप में मिलने वाले परामर्श को किस प्रकार क्रियान्वित किया जाए इसकी दक्षता रखते थे कुशल प्रबंधक हम उसी को कह सकते हैं जो कार्य करने में दक्ष हो उपरोक्त प्रकरण में श्री राम विभीषण जी के सुझाव का स्वागत करते हैं और साथ ही साथ लक्ष्मण को भी यह कहते हैं कि उनकी बात अवश्य मानी जाएगी अर्थात एक कुशल प्रबंधक अपने दल में सभी के भावनाओं का सम्मान करता है क्योंकि किसी भी सदस्य के उदासीन होने से कार्य क्षमता पर प्रभाव पड़ता है इसलिए एक कुशल प्रबंधक अपने दल में सभी का उत्साहवर्धन करता है सब के विचारों का सम्मान होना चाहिए| एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा प्रबंधक अपने आश्रितों पर पूर्ण विश्वास व्यक्त करते हुए सौहार्द का वातावरण बनाए रखता है | श्री राम ने अपने विवेकपूर्ण निर्णयों द्वारा कभी किसी को निराश नहीं किया अपने जीवन में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उन्होंने इस बात की अनुभूति कराई कि वह उनके लिए महत्वपूर्ण है|अतः श्री राम एक कुशल राजनीतिज्ञ तथा कुशल प्रबंधक के रूप में सदा रहे जनमानस का मार्गदर्शन करते रहेंगे |

4.2 सहज उपलब्धता :-

श्रीराम की विशेषताओं में उनकी सहज उपलब्धता एक मुख्य विशेषता अपने मित्र प्रजाजन तथा परिवार के लिए सहज रूप से उपलब्ध होते थे| किसी के भी सुख-दुख, समस्या-निवारण आदि के लिए सदैव ही उपस्थित रहते थे| बाल्यकाल से लेकर एक राजा के रूप में स्थापित होने तक यह श्रीराम के सर्वोत्तम गुणों में से एक था उन्होंने स्वयं को किसी के समक्ष एक राजकुमार की तरह प्रस्तुत नहीं किया| वे सदा ही सखा-भाव, पुत्र-भाव, भ्रातृ-भाव रखते हुए सबसे मिलते थे| उन्होंने पद के द्वारा नहीं आचरण के द्वारा अपने इस गुण को प्रस्तुत किया और सिद्ध किया| वे सदैव धर्म के मार्ग पर चलने वाले हृदय में सबके प्रति प्रेमभाव रखने वाले एक सरल व्यक्ति के समान ही दूसरों के हृदय के भावों को समझते थे |

---

६७ -सुंदरकांड ,रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास ,पृष्ठ संख्या ६९८

वे अपनी प्रजा को तथा अपने जीवन में मिले सारे संबंधों को धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते थे| उपदेश के द्वारा नहीं अपितु कर्म के द्वारा वह किसी भी कार्य को करने से पहले यह अवश्य जांच लेते थे कि उनके द्वारा किए गए कार्य का उनकी प्रजा तथा समाज पर क्या असर पड़ेगा? तथा उनके बीच में कैसा संदेश जाएगा? यदि किसी को इस बात का आभास होगा की राम विशेष हैं, श्रेष्ठ हैं तो वह उनके सामने असहज हो जाएगा और अपनी व्यथा नहीं बता पाए इसी कारणवश वे अपना जीवन साधारण तरीके से ही जीते थे| जिसमें कोई राजसी-वैभव न हो व्यवहार भी शांत हो, वाणी मृदुल हो सबकी बातों को सुनने का पर्याप्त समय हो ताकि उस व्यक्ति की शंका का निवारण किया जा सके उसको होनेवाले कष्टों का निवारण किया जा सके| किसी व्यक्ति से मिलना एक दुष्कर कार्य हो तो मिलने के प्रयासों में दूसरा व्यक्ति इतना हताश हो जाता है कि मिलने के उपरांत भी वह कई बार अपने दुखों को अपने डर को या अपनी व्यथा को व्यक्त नहीं कर पाता इसलिए एक राजा के रूप में श्री राम ने अपनी प्रजा को न तो कोई ऐसा आदेश दिया और न ही इस तरह का व्यवहार रखा कि उनसे किसी विशेष अवसर पर ही मिला जा सके| वे साधारण व्यक्ति की पहुंच स्वयं तक चाहते थे;अन्य शब्दों में कहें तो वे प्रत्येक साधारण व्यक्ति तक पहुंचना चाहते थे क्योंकि उनका ऐसा विश्वास था कि अगर कोई व्यक्ति अपने आचरण द्वारा अपनी श्रेष्ठता को सिद्ध करता है तो वह इन्हीं प्रयासों में लगा रहता है| अतः कहीं न कहीं उसके मन में अभिमान भी जाग जाता है;जो उसकी प्रजा या सामान्यजनों से उसकी दूरी का कारण होता है|

श्री राम जीवन को बड़ी सरलता से जीते थे तथा सूक्ष्मता से अवलोकन करते थे| उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय वन में ही बिताया वन्यजीवों के जीवन को बड़ी निकटता से देखा उनके जीवन यापन करने की विधि को समझा श्री राम वन के जीवन को देखकर तथा एक वनवासी के जीवन को जी कर जीवन की सच्चाईयों से परिचित हो गए थे| जिसको जानने में लोगों को सदियों लग जाती हैं;वैसे तो उनके व्यवहार में सरलता तथा सहजता बाल्यकाल से ही विद्यमान थी| गुरुकुल में बिताया उनका समय तथा उनका आचरण अन्य छात्रों और छोटे भाइयों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहा| वनवास के समय बने अपने मित्रों बाल्यकाल के अपने मित्र निषादराज, नल-नील,जामवंत,सुग्रीव,अंगद, हनुमानजी आदि सखाओं को उन्होंने जीवन पर्यंत आदर मान सम्मान दिया| वह सदैव ही उस व्यक्ति का स्मरण रखते थे जिसने जीवन में कभी भी उनका कहीं साथ दिया हो उनके प्रति मित्रता निभाई हो उसके लिए वे सदैव ही सहायता हेतु तत्पर रहते थे |श्री राम के आचरण का एक प्रमुख गुण यह भी था कि वे अन्य व्यक्तियों के द्वारा किए गए अपराध को भी बड़ी सरलता से क्षमा कर देते थे मृदुभाषी थे तथा अपने आचरण के द्वारा पड़ने वाले प्रभाव को भलीभांति समझते थे उनके अनुसार एक राजा के रूप में उनका यह दायित्व बनता है अपने पास आए हुए किसी भी व्यक्ति को निरुत्साहित न होने दिया जाए क्योंकि साम्राज्य में यदि एक भी व्यक्ति हताश निराश या निरुत्साहित रहेगा तो उस राजा का शासन अच्छा नहीं माना जा सकता|

रामचरितमानस के बालकांड में जब ऋषि विश्वामित्र के साथ प्रभु श्री राम-लक्ष्मण जी सहित उनके अनुष्ठानों की रक्षा हेतु वन के लिए जाते हैं तो पहुंचते साथ ही वे रात्रि के प्रहर में विश्राम करते हैं और प्रातः काल ही मुनि जी से कहते हैं निडर होकर यज्ञ करिए प्रभु श्री राम का आश्वासन पाकर आश्रम में रहने वाले ऋषि मुनि हवन करने लग जाते हैं और श्री राम जी स्वयं यज्ञ की रखवाली करते हैं| श्री राम अपने प्रति किए गए विश्वास का मान रखते थे| यदि कोई किसी कारण उन पर आश्रित होता था तो वह पूर्ण कर्तव्य परायणता से उस व्यक्ति को सुख की अनुभूति करवाते थे और उस विश्वास को सदैव बनाए रखते थे |

प्रात कहा मुनि सन रघुराई |निर्भय जग्य करहु तुमह जाई ||
होम करन लगे मुनि झारी | आपु रहे मख की रखवारी || ६८

एक राज पुत्र का समस्तजनों के लिए प्रतिपल उपलब्ध रहना सोचने और करने में जितना दुष्कर लगता है श्रीराम के लिए यह उतना ही सरल था क्योंकि उन्होंने स्वयं को कभी राजपुत्र राजकुमार या राजा के रूप में नहीं देखा सदैव ही एक सखा एक भाई एक शिष्य एक सेवक के रूप में अपने मित्र भ्रात्रों गुरु एवं प्रजा जनों का सम्मान करते उनके द्वारा दी हुए कोई आज्ञा सुझाव सदा ही सर्वोत्तम विधि से पालन किया अन्यथा बाल्यावस्था में कोई भी राजकुमार ऋषि मुनियों की रक्षा के लिए वन में नहीं जाता उन्होंने सदैव ही इस बात का प्रयास तथा पालन किया समाज में जब भी किसी को श्रीराम की आवश्यकता हो श्री राम उसके लिए उपलब्ध रहें उनके हृदय में सभी के लिए अगाध प्रेम था|
जो उनको सहज उपलब्धता के लिए प्रेरित करता था|श्री राम के आचरण की सबसे बड़ी शक्ति उनकी नैतिकता थी| जिसका उनके जीवन मूल्यों में प्रमुख स्थान था इसी नैतिकता के कारण उनका यह मानना था कि जो भी व्यक्ति जिसका श्रीराम से चाहे जैसा भी संबंध हो मित्र अथवा रिपु, राजा अथवा पुत्र, शिष्य अथवा अन्य कोई भी; श्री राम का उसके लिए स्वयं उपस्थित रहना अति-आवश्यक है| किसी भी रूप में अगर वे उनसे मिलने वाले व्यक्ति को उपलब्ध नहीं होते हैं कहीं न कहीं यह उनको को स्वयं ही निराश करेगा| वे किसी और के दुख और निराशा को नहीं देख सकते थे| वे विश्वास के महत्व को जानते थे और उसके प्रभाव को भी जानते थे किसी भी व्यक्ति के ऊपर श्री राम का कोई ऐसा प्रभाव पड़े जिससे उनके न्याय प्रिय होने पर किसी भी तरह का कलंक लगे यह श्रीराम सहन नहीं कर सकते थे| श्री राम को जो व्यक्ति जिस रूप में या जिस संदर्भ में अपने निकट चाहता था वे उसी रूप में उसका साथ देते थे| हम श्री राम और भरत मिलन के प्रसंग को देखते हैं तो भरत किसी भी स्थिति में किसी भी मूल्य पर श्री राम को वापस अयोध्या ले जाना चाहते थे लेकिन श्री राम अपने पिता के वचन को पूरा करना ही अपना परम कर्तव्य मानते थे और वे भरत को समझाने का संभवतः प्रयास करते हैं कि वे भी पिता की आज्ञा का मान रखें क्योंकि वे किसी भी हाल में अपने पिता को माता कैकई के आगे लज्जित होता हुआ नहीं देख सकते| वे भारत को बताते हैं कि अपने पिता के द्वारा दिए गए वचनों का पालन करना ही हमारा परम कर्तव्य है| जब भारत नहीं मानते हैं श्री राम उनसे कहते हैं कि रानी कैकई ने राजा दशरथ से वरदान मांगा था और मैंने उसका पालन करना स्वीकार किया और तुम्हें भी उसी वर का पालन करके असत्य के बंधन से पिता की मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त करना चाहिए| कहते हैं पिता पर जो ऋण था वह केकई के प्रति एक भारी नैतिक ऋण था| चाहे वह कितना भी दुष्कर हो मैंने उसे चुकाया है और राजा दशरथ के पुत्र होने के नाते तुम्हें भी इस वचन को पूर्ण करना ही होगा| भरत जी श्री राम के तर्क के आगे हार मान लेते हैं लेकिन कहते हैं कि मुझ में इतनी समझ नहीं है कि मैं इतने विशाल साम्राज्य का संचालन कर सकूँ| मेरी बात कौन मानेगा? सब लोग आप ही की प्रतीक्षा कर रहे हैं और कहते हैं कि हमें श्री राम ही चाहिए| एक राजा के रूप में शासन करना मेरे बस की बात नहीं है यह मेरे सामर्थ्य में नहीं है| मैं कुछ भी न कर पाऊंगा मैं अकेला इस विशाल साम्राज्य की रक्षा नहीं कर सकता| आप में अनुराग रखने वाले इन नगर वासियों को मैं आपके बिना प्रसन्न नहीं रख सकता जैसे वर्षा में जब विलंब हो जाता है तब किसान हाथ उठाकर आकाश की ओर देखते हैं और देवराज इंद्र से प्रार्थना करते हैं उसी प्रकार हमारे बंधु-बांधव, मित्र और प्रजाजन आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं और केवल आपको ही राजा के रूप में देखना चाहते हैं |

---

६८ -बालकांड रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या १८०

भरत ने श्री राम को यह स्वीकार करने पर विवश कर दिया कि स्पष्ट शब्दों में ना सही परंतु अपनी कार्य निधि से अपने प्रेम पूर्वक व्यवहार से वनवासी होते हुए भी श्रीराम हैं राज्य के स्वामी हैं अंत में भारत श्री राम के सांकेतिक रूप अर्थात उनकी चरण पादुका को उन का माध्यम मानते हुए शासन करने को तैयार हुए किसी भी घटना के संदर्भ में श्री राम की चरण पादुका से आज्ञा लेते हुए ही अपना निर्णय देते थे किसी भी तरह की भेट आदि प्राप्त होने पर बे सर्वप्रथम उस भेट को चरण पादुका के सामने समर्पित करते थे फिर राज्य के कोष में रखवा देते थे श्री राम की चरण पादुका को उनका प्रतिबिंब मानते थे और उस चरण पादुका से आज्ञा या विचार विमर्श किए बिना किसी भी निर्णय पर नहीं पहुंचते थे श्रीराम का व्यवहार इतना सहज निर्मल और करुणा से भरा हुआ था उनके समक्ष या उनके बारे में विचार करके भी कोई व्यक्ति कभी किसी गलत कार्य को नहीं कर सकता था विधर्मी नहीं हो सकता था वह मार्ग पर नहीं चल सकता था|
रामचरितमानस के बालकांड में जहां देवी अहिल्या का वर्णन होता है जो कि गौतम मुनि की पत्नी थी उनके बारे में भी श्री राम को विश्वामित्र जी बताते हैं

गौतम नारी श्राप बस उपल देह धरी धीर |
चरण कमल रज चाहति कृपा करहु रघुवीर || ६९

अर्थात श्राप के कारण पत्थर का देह धारण कर गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या आपके चरणों की धूल की प्रतीक्षा कर रही हैं ताकि वे श्राप से मुक्त हो सके अगर इस बात को हम अपने अंतर्मन की गहराइयों से सोचें तो श्रीराम अहिल्या का उद्धार करने स्वयं उस वन तक गए क्योंकि अहिल्या प्रतीक्षा कर रही थीं कि श्रीराम उनका उद्धार करेंगे और उन्होंने इस कार्य को करने में विलंब नहीं किया| श्रीराम के जीवन पर आधारित हमें जितनी भी साहित्यिक रचनाएं मिलती हैं| उन सब में हम श्री राम के इस गुण को विशेष रूप से पाते हैं कि जहां भी जब भी किसी को आवश्यकता होती थी| श्री राम उसका सहयोग करने उसका उद्धार करने उसका मार्गदर्शन करने अवश्य ही पहुंचते थे| वे किसी दुष्कर राजपुरुष की तरह नहीं थे कि जिस तक कोई पहुंच न पाए वे एक सरल सहज एवं सुगम पुरुष की तरह सदैव है उपलब्ध रहते थे उनका सब के प्रति वात्सल्य था किसी को श्रेष्ठ तथा किसी को निकृष्ट भागते नहीं देखते थे| जिस ने जिस रूप में उनका स्मरण किया उनकी सहायता चाही;उनका साथ मांगा उसको उसी रूप में ही श्रीराम ने अपना साथ अपनी मित्रता, अपनत्व प्रदान किया| अरण्यकांड में वर्णित गिद्ध जटायु द्वारा जब रावण से युद्ध किया गया तब रावण ने अपने वार से जटायु को घायल कर दिया| श्री राम जब जटायु को घायल अवस्था में देखते हैं तो अपने कर कमल से उनके सिर को स्पर्श करते हैं और उनसे पूछते हैं कि उनका यह हाल किसने किया तब धीरज धरकर जटायु यह वचन कहते हैं हे नाथ! रावण ने मेरी यह दशा की है उसी दुष्ट ने जानकी जी का हरण किया है| वह उन्हें लेकर दक्षिण दिशा की ओर गया है सीता जी अत्यंत विलाप कर रही थी| मैंने आपके दर्शनों के लिए ही अपने प्राण रोक रखे थे| हे कृपानिधान! अब यह प्राण चलना चाहते हैं| श्रीराम का निर्मल स्वभाव तथा प्रेम से परिपूर्ण वाणी सुनकर जटायु ऐसी अनुभूति करते हैं कि इससे सुखद तो और कुछ हो ही नहीं सकता ऐसी स्थिति में श्रीराम के सम्मुख उनकी ही गोद में लेटे हुए सोचते हैं अगर प्राण जाते हैं तो इससे अच्छी गति और क्या होगी और वे अपनी देह को त्याग देते हैं| जटायु द्वारा देहांत याग्निक के उपरांत श्री राम उनके दाह कर्म आदि सारी क्रियाएं यथा योग्य अपने हाथों से ही करते हैं|

---

६९ -बालकांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या १८१

और उनके सद्गति हेतु एक परिवार के सदस्य की तरह सारी क्रियाओं का निर्वहन करते हैं|

अविरल भगति मागि बर गीध गयउ हरिधाम |
तेही की क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम || ७०

अरण्यकांड में ही मुनि मतंग की शिष्य शबरी का प्रसंग मिलता है;किस प्रकार उसे प्रतीक्षा थी कि एक न एक दिन श्रीराम उससे मिलने अवश्य आएंगे अपने सहज उपलब्धता की गुण के कारण श्रीराम शबरी की कुटिया में पहुंचते हैं| श्री राम से मिलकर शबरी का मन और गुरू मतंग द्वारा बोले गए वचनों को याद कर प्रफुल्लित होती हैं|

सबरी देखि राम गृह आए | मुनि के बचन समुझि जिय भाए || ७१

श्री राम को देखते ही शबरी उनके प्रेम में मग्न हो गई उसके मुख से कोई वचन नहीं निकलता वह मन ही मन इस बात के बारे में विचार कर रहे हैं न जाने कब से उन्हें श्रीराम की प्रतीक्षा थी और देखो आज श्री राम स्वयं उसकी कुटिया में पधारे राम तथा लक्ष्मण जी को आदर पूर्वक सुंदर आसनों पर बिठाती हैं उन्हें ग्रहण करने के लिए जल देती हैं साथ ही अत्यंत रसीले स्वादिष्ट कंदमूल और फल प्रस्तुत करती हैं जिसे श्री राम जी बार-बार प्रशंसा करते हुए प्रेम सहित ग्रहण करते हैं| शबरी का प्रेम देखकर श्री राम उन से अत्यधिक प्रभावित होते हुए उन्हें नवधा भक्ति का वरदान देते हैं| अतःहम कह सकते हैं कि जीवन में जब-जब जिसको -जिसको श्री राम से मिलने की इच्छा हुई श्री राम उन्हें अवश्य ही मिले उनसे मिलने के लिए भाव का होना ही आवश्यक है क्योंकि वे किसी में भेदभाव नहीं करते न किसी के सामाजिक स्तर न आर्थिक स्तर और न बौद्धिक स्तर पर वे किसी को उत्कृष्ट या निकृष्ट श्रेणी में विभाजित करते थे| हर उस व्यक्ति से मिलते थे या उसके जीवन में जिस कार्य हेतु उसे श्रीराम की आवश्यकता है उसे अवश्य ही पूर्ण करते थे|
रामचरितमानस के किष्किंधा कांड में सीता जी के हरण के उपरांत जब श्री राम वनों में भटकते हुए सीता जी की खोज में निकलते हैं तो वे ऋष्यमूक पर्वत के निकट आते हैं| जहां अपने मंत्रियों सहित सुग्रीव रहते थे | राम तथा लक्ष्मण जी को अपनी तरफ आता हुआ देखकर सुग्रीव भयभीत होते हुए हनुमान जी से कहते हैं कि हनुमान सुनो सामने से आते हुए यह दोनों पुरुष अत्यंत बलशाली लग रहे हैं और मुझे किसी अनिष्ट की आशंका लग रही है| अतः तुम अपना रूप बदलकर जाकर देखो कि उनके हृदय में क्या चल रहा है यथार्थवाद जानकर तुम मुझे संकेत देकर समझा देना यदि वे मन के मलिन बालि के भेजे हुए योद्धा हुए तो मैं अभी ही इस पर्वत को छोड़कर भाग जाऊंगा| सुग्रीव की बात सुनकर हनुमानजी ब्राह्मण का वेश धारण कर राम तथा लक्ष्मण जी के सम्मुख जाकर उन्हें प्रणाम करते हुए पूछते हैं| हे वीर! आप दोनों कौन हैं तथा कहां से आए हैं रूप तथा बल के अनुसार तो आप क्षत्रिय लग रहे हैं आप तो रंग रूप से किसी राज्य के राजकुमार लग रहे हैं तो फिर आप इस कठोर वन में विचरण क्यों करते हैं इस प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री रामचंद्र जी कहते हैं कि हम दोनों कौशल राज दशरथ जी के पुत्र हैं और पिता जी का वचन मानकर वन आएँ हैं| हमारे नाम राम तथा लक्ष्मण हैं हम दोनों भाई हैं हमारे साथ सुंदर सुकुमारी स्त्री थी जो कि मेरी पत्नी थी| यहां वन में राक्षस ने मेरी पत्नी जानकी का हरण कर लिया है अतः हे ब्राह्मण हम उसे ही खोजते फिर रहे हैं| अपना परिचय देने के बाद श्रीराम उनसे पूछते हैं कि आप कौन हैं और यहां क्या कर रहे हैं?

७०,७१- बालकांड,अरण्यकांड, रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ६०९, ६१०

श्री राम के अनुकूलित व्यवहार को देखते हुए हनुमान जी उन्हें बताते हैं इस पर्वत पर वानरराज सुग्रीव रहते हैं उन्होंने ही मुझे यहां आपकी मंशा जानने हेतु भेजा है| उनसे मित्रता करें और उन्हें दीन जानकर निर्भय कर दीजिए इसके उपरांत हनुमान जी श्री राम तथा लक्ष्मण को अपने साथ सुग्रीव के पास ले जाते हैं और दोनों पक्षों को एक दूसरे से परिचित करवाते हैं| परिचय के उपरांत श्री राम जी सुग्रीव से पूछते हैं कि मुझे बताओ किस कारण तुम यहां इस वन में रहते हो? सुग्रीव बोले कि मैं और बालि दो भाई हैं हम दोनों में इतना प्रेम था जिसका वर्णन ही नहीं किया जा सकता ऐसा कहते हुए सुग्रीव उन्हें मायावी दानव की सारी कथा सुनाते हैं| किस प्रकार वह दानव नगर के द्वार पर आकर बालि को ललकारने लगा और बालि शत्रु की ललकार को सह न सका तुरंत ही शत्रु को मारने उसके पीछे दौड़ा और मैं भी अपने भाई के साथ साथ चला गया वह मायावी एक पर्वत की गुफा में जा घुसा और उसके पीछे मेरा भाई भी गुफा के अंदर जाने लगा और जाते-जाते मुझसे कह गया कि तुम एक पखवाड़े तक मेरी बाट देखना| यदि मैं इतने दिन में न आए तो जान लेना कि मैं मारा गया महीने भर तक मैं उस गुफा के बाहर अपने भाई की प्रतीक्षा करता रहा एक दिन उस गुफा में से रक्त की बड़ी भारी धारा निकली जिसे देख मैं डर गया और मुझे लगा कि दानव ने बालि को मार डाला और अब आकर मुझे भी मारेगा इसलिए मैं गुफा के द्वार पर एक शिला लगाकर भाग आया वापस नगर को आने पर मंत्रियों ने नगर को बिना राजा का देखा और मुझे ज़बरदस्ती राज्य दे दिया इधर युद्ध में बाली विजय हुआ और राज्य में आकर जब उसने मुझे राज्य सिंहासन पर देखा तो उसके हृदय में मेरे प्रति क्रोध आ गया और उसने समझा कि राज्य के लोभ के कारण ही मैं गुफा के द्वार पर शिला लगाया था ताकि बाली बाहर निकल सके और मैं यहां राजा बन जाऊं उसने मुझे शत्रु के समान बहुत अधिक मारा और मेरा सर्वस्व तथा मेरी स्त्री को भी छीन लिया| हे रघुवीर! मैं उसके भय से समस्त लोकों में बेहाल होकर यहाँ आया| वह शाप के कारण यहां नहीं आ सकता तो भी मैं मन में भयभीत ही रहता हूँ| सुग्रीव का ऐसा दुख सुनकर श्री राम की दोनों विशाल भुजाएं फड़क उठी उन्होंने कहा हे सुग्रीव! सुनो मैं एक ही बाण से बाली को मार डालूंगा| ब्रह्मा और रुद्र की शरण में जाने पर भी उसके प्राण नहीं बचेंगे|

सुनू सुग्रीव मारिहऊँ बलिहि एक ही बान |
ब्रह्म रूद्र शरणागत गए न उबरिहि प्रान || ७२

उपर्युक्त प्रसंग में श्री राम को जैसे ही इस तथ्य का ज्ञान होता है सुग्रीव के भाई बालि ने उसके साथ अन्याय किया तथा अधर्म का मार्ग चुनते हुए सुग्रीव के स्त्री को अपने पास रख लिया श्रीराम तत्काल ही प्रतिज्ञा करते हैं कि वे एक मित्र के रूप में सुग्रीव के प्रति किए गए अन्याय का प्रतिशोध अवश्य लेंगे और अपने मित्र को न्याय दिलाएंगे यहां वे अपने दुख को भूल जाते हैं कि उनकी पत्नी सीता का हरण रावण ने किया है| अपनी विपदा को महत्व न देते हुए एक मित्र के रूप में सुग्रीव के दुख को कम करने का आश्वासन तुरंत देते हैं और प्रतिक्रिया स्वरूप बालि के प्राण को हर लेते हैं और अपने मित्रों को राज्य पत्नी तथा सभी प्रकार के सुख वैभव प्रदान करते हैं| यहां एक मित्र के रूप में उनकी सहज उपलब्धता को चिन्हित किया जा सकता है सहज भाव से ही मित्र बनकर मित्र के दुःख को हरने का सराहनीय कार्य किया | बाली की मृत्यु के उपरांत श्रीराम की उपलब्धता उसकी पत्नी तारा तथा पुत्र अंगद के प्रति भी रही ;उन्होंने महारानी तारा को राजमहल में ससम्मान सुशोभित करवाया साथ ही अंगद को युवराज का पद दिलवाया बालि की मृत्यु के उपरांत के सभी लोग व्याकुल हो गए थे और उनकी स्त्री तारा अनेकों प्रकार से विलाप करने लगी थी|

---

७२ - किष्किंधा कांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ६३१

उसे समय श्रीराम ने उसे ज्ञान दिया और कहा पृथ्वी जल अग्नि आकाश और वायु इन पांच तत्वों से यह शरीर रचा गया है और इसी में मिल जाना है ;फिर आप विलाप क्यों कर रही हैं जीवन मृत्यु का भेद समझाते हुए श्री राम ने उनके दुखों को हरने का प्रयास किया जीवन की सार्थकता बताई तथा यह सुनिश्चित किया की महारानी तारा और उनके पुत्र अंगद को विशेष मान सम्मान दिया जाए इसलिए प्रेम और लगाव को देखते हुए बालि पुत्र अंगद भी श्री राम की सेना में सम्मिलित हो गए |

श्री राम के सहज तथा न्याय प्रिय स्वभाव के कारण जिस किसी से शत्रु भाव नहीं रखते थे वैसे न्याय-अन्याय धर्म-अधर्म का विचार करके ही किसी भी कार्य को करते थे| अधर्मी और अन्यायी को दंडित अवश्य करते थे लेकिन उसके प्रति सहानुभूति भी रखते थे उनका किसी से द्वेष या वैर नहीं था| उनका व्यवहार तथा कर्म दोनों ही सैद्धांतिक होते थे ; हम कह सकते हैं कि श्री राम सामने वाले व्यक्ति के भाव के अनुरूप ही उसे प्रतीत होते थे| श्री राम जिस प्रजाजन, आश्रमवासी, ऋषि-मुनि आदि जिनके भी पक्षधर थे| वे उन्हीं के बीच रहकर उन्हीं के जैसा जीवन बिताते थे ताकि उनसे अपनत्व मिल सके और श्रीराम उनका विश्वास जीत सके उनके जीवन में राज परिवार के लोक-संस्कार का स्थान बिल्कुल नहीं था उनका जीवन-दर्शन मानवतावादी था| वे जिन के पक्ष में अन्याय अनैतिकता तथा शोषण के स्वयंभू शासकों से युद्ध करने के लिए अग्रसर रहते थे उन निर्धन विवश किंतु आचरणशील वनवासियों की तरह उन्होंने भी अपना जीवन जिया राज्य अभिषेक के उपरांत, जिस प्रजा को अपने प्राणों से भी अधिक प्रेम करते थे| उसके हृदय का हाल जानना राम जी का प्रमुख कर्तव्य था। एक सुयोग्य शासक की तरह अपनी प्रजा से जिस भी जीवन पद्धति की आशा रखते थे| वे स्वयं भी उसी जीवन पद्धति का पालन करते थे ताकि उनके शब्दों और कर्मों में समानता है और लोग उन पर अत्यधिक विश्वास करते हुए उनको सदैव ही अपने लिए उपलब्ध समझे हमको ऐसी परिस्थिति में रखना पसंद करते थे स्थिति में समाज रहता है ताकि सबके मन में राम जी के प्रति भी समानता का भाव बना रहे | ऐसा करना उनकी व्यवस्था नहीं थी अपितु उनके संकल्प के लिए उनके विचारों में ऐसा करना ही आवश्यक था| सोने के घोड़े पर बैठकर गांव के गरीबों की लड़ाई लड़ने वाले लोग राजा महाराजा तो अवश्य हो सकते हैं लेकिन उस भीड़ का अंश नहीं। राम सदैव ही पर पीड़ा को समझने के लिए उस व्यक्ति के जीवन का अंश बनते थे ताकि उसके साथ न्यायपूर्ण आचरण किया जा सके| किसी व्यक्ति की समस्या का समाधान करना हो अथवा उसकी पीड़ा को हरना हो श्रीराम सदैव ही सहानुभूति के साथ-साथ आत्मानुभूति का भी प्रदर्शन करते थे| किसी व्यक्ति की समस्या का स्वयं अनुभव करते हुए उसका समाधान ढूंढना प्रत्येक व्यक्ति के स्थिति में खुद को रहते हुए उसके दुख उसकी पीड़ा को समझते हुए उसका निराकरण करते थे इस कारण लोगों का उन पर विश्वास सदैव ही बना रहता था| वे सबके हृदय के निकट थे उनके लिए किसी भी व्यक्ति में किसी भी तरह का भेदभाव नहीं था वे मानवता के सच्चे उपासक थे। उनके विचार हैं उनके वचन थे और उनके वचन सत्यता के परिचायक क्योंकि वे बहुत आत्म चिंतन करने के बाद ही कोई बात कहते थे या किसी भी प्रकार का वक्तव्य देते थे और जो एक बार कह दिया उसे अवश्य ही पूर्ण करते थे, लोगों के हृदय में श्रीराम के लिए विशेष स्थान था क्योंकि वे उनसे अलग नहीं थे उनका चरित्र सदैव ही परिवार के सदस्य के समान रहा जिससे निर्भीक होकर हम अपने दुख पीड़ा आदि को निश्चिंतता से कह सकते हैं क्योंकि कहीं न कहीं हृदय में यह विश्वास होता है कि जहां और जिस व्यक्ति से हम अपने कष्ट बता रहे हैं वहीं से उसका समाधान भी प्राप्त होगा उन्होंने सदैव ही सब कोई आभास कराया कि वह विशेष हैं| साधारण नहीं और प्रत्येक रूप में चाहे वह पुत्र हो, मित्र हो, भाई हो, राजा हो या किसी भी प्रकार का संबंध हो उन्होंने सभी को अपने निकट समझा और उसी के अनुरूप व्यवहार किया इन्हीं कारणों से वे सबके प्रिय रहे|

साधारण से साधारण मनुष्य के लिए भी उनके हृदय में वही प्रेम वही वात्सल्य था जो उनके अपने परिजनों के लिए था|

रामः सत्पुरुषो लोके सत्य: धर्मपरायण : |
साक्षादामाद्विनिर्वृत्तो धर्मश्चापीश्रीया सह ||
धर्मज्ञ: सत्यसन्धश्च शीलवाननसूयक: |
शांत: सान्तवयिता श्लक्ष्ण: कृतज्ञो विजितेंद्रिय : ||
व्यसनेषु मनुष्याणान भृशम भवति दु:खित: ||
उत्सवेषू च सर्वेषु पितेव परित्युष्यति || ७३

श्रीराम जैसा सत्पुरुष जिसके लिए धर्म की पालना करना ही सर्वोच्च कार्य था| सत्य को धारण करने वाले धर्म परायण व्यक्तित्व के स्वामी थे| एक भी क्षण के लिए धर्म की अवहेलना करना उनके व्यवहार में निहित न था |वे दिन की किसी अवधि,किसी काल पर आश्रित नहीं थे;सदैव ही मानवता की सेवा के लिए तत्पर रहते थे| श्रीराम संसार में सत्यवादी सत्य परायण और सत्पुरुष है साक्षात श्री राम ने ही अर्थ के साथ साथ धर्म को भी प्रतिष्ठित किया है| श्री राम धर्मज्ञ, सत्यप्रतिज्ञ, शीलवान, अदोषदर्शी, शांत, निर्बल और दीन दुखियों की सहायता करने वाले,मृदुभाषी ,कृतज्ञ, जितेंद्रिय, कोमल स्वभाव वाले स्थिरबुद्धि, सदा कल्याणकारी समस्त प्राणियों के प्रति प्रिय वचन बोलने वाले और सत्यवादी हैं| नगर में मनुष्यों पर संकट आने पर वे अत्यधिक दुखी हो जाते हैं तथा उन सबके घरों में सब प्रकार के उत्सव होने पर उन्हें पिता की भांति प्रसन्नता होती है क्योंकि उनके लिए उनकी प्रजा दायित्व मात्र नहीं थी अपितु उनकी साधना थी, जिसमें वे किसी भी प्रकार का विघ्न-बाधा नहीं आने देना चाहते थे|

सभी मनुष्यों के सुख की कामना करने वाले कथा अपने दूसरों को सुख देने वाले सदैव ही दूसरों की सहायता हेतु उपलब्ध रहने वाले श्री राम जन-जन के सहायक तथा जन-जन के नायक थे| मानव होते हुए भी वे मानव जनित दोषों से कोसों दूर थे वैसे कुल में जन्मे थे जहां अपने कर्तव्य परायणता के लिए अनेकों बलिदान दिए गए| धन-संपदा, वैभव आदि किसी भी भौतिक वस्तुओं का लोभ नहीं था| मान-मर्यादा, वचन-परंपरा, धर्म-नीति कुल की मर्यादा आदि से अलंकृत उनके पूर्वजों का इतिहास रहा| श्रीराम इन्हीं परंपराओं का निर्वाह करने की इच्छा रखते थे;जिससे कि उनके वंश पर कभी भी किसी प्रकार का कलंक न लग सके| कम साधनों में जीवित रहा जा सकता है परंतु मान-मर्यादा नष्ट होने अथवा अपयश के उपरांत नहीं;इनके बिना वे किसी भी प्रकार जीवन जीने की कल्पना नहीं कर सकते थे| उनके लिए श्रेष्ठतम कर्म यही था कि जो कुछ भी उनके पूर्वजों ने कहा किया उसका सदैव मान रखें उनकी श्रेष्ठता इसी बात से सिद्ध होती है कि विषम से विषम परिस्थितियों में थी उन्होंने वह विधि सदैव ही ढूंढ निकाली जिससे उस परिस्थिति के अनुकूल अपने कर्तव्यों का पालन किया जा सके |

४.३-: जनसेवक :-

श्री राम भारतीय इतिहास में एक ऐसे राजा के रूप में जाने जाते हैं जिनके राज्य को एक उन्नत राज्य की उपाधि दी गई है और इसको एक राजा की कुशलता का मानक माना गया है|

---

७३ - नवं अध्याय राम, रामायण के ज्योति स्तंभ, श्री वी एस श्रीनिवास शास्त्री
अनुवाद श्रीमती सुशीला भटनागर , पृष्ठ संख्या ११६

रामराज्य अर्थात् राम का राज्य असल में सच्चे अर्थों में जनता का राज है क्योंकि श्री राम ने स्वयं को एक जन सेवक के रूप में ही प्रस्तुत किया| त्याग तथा समर्पण राम राज्य के मुख्य तत्व है बल्कि कहे तो राम राज्य के आधार तत्व हैं| राम राज्य में सत्यता एवं विश्वसनीयता अर्थात् जो भी वचन दिया जाए उसका पूर्णरूपेण पालन करना| एक सेवक होने के हेतु से लोगों की अर्थात प्रजाजनों की इच्छा ज्ञात करना वह भी गुप्तचरों की सहायता से नहीं अपितु अपने घनिष्ठ सभासदों परिवारजनों तथा स्वयं उन तथ्यों को जानने का प्रयास करना कि किसी कार्य की लोग निंदा कर रहे हैं या प्रशंसा; निर्णय को लोगों ने सकारात्मक रूप में स्वीकार किया या नकारात्मक रूप में उसका विरोध कर रहे हैं;तो उसके कारणों को जानना लोक-भावनाओं के अनुसार कार्य करते हुए शासन चलाना ताकि प्रत्येक नागरिक को ऐसा लगे की यह राज्य तथा इस राज्य के नियम उसके अनुकूल है| सामान्य नागरिकों का सत्ता में विश्वास बनाए रखना राम राज्य में चरित्र के स्थिति उत्तम थी| श्री राम शासन के प्रत्येक कार्य को सेवा कार्य के रूप में करते थे| वे प्रजा को ही अपना पूज्य समझते थे कहा जाता है कि रामराज्य इतना सुदृढ़ था इतना सरल-सुगम और सहज था कि पर्वतों ने अपने सभी संपत्ति-मणि आदि, सागर ने रत्न-मोती आदि राम राज्य के लिए दे दिए| श्रीराम ने अपने कर्म तथा सेवा के द्वारा जन-जन तक जीवन जीने का आधार मौज मस्ती और लालसा नहीं अपितु कर्तव्य परायणता तथा संतोष है ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया|

रामराज्य बैठे त्रिलोका | हर्षित भए गए सब सोका ||
बयरू न कर काहू सन कोई | राम प्रताप विषमता खोई || ७४

श्री रामचंद्र के राज्य पर प्रतिष्ठित होने पर तीनों लोक हर्षित हो गए उनके सारे शोक जाते रहे;कोई किसी से बैर नहीं करता| श्री रामचंद्र जी के प्रताप से सब के आंतरिक भेदभाव मिट गए| जब श्री रामचंद्र अयोध्या के राजा बने और उन्होंने रामराज्य की स्थापना की सभी के ह्रदय तथा घरों में हर्ष और उल्लास आच्छादित हो गया किसी मन में किसी के प्रति बैर का भाव नहीं रह गया| आपसी मतभेदों को भी कहीं स्थान नहीं मिला और समाज में व्याप्त सारी जटिलताएं समाप्त हो गई| इन पंक्तियों का सूक्ष्मता से अध्ययन करते हैं तो इस बात पर विचार अवश्य करते हैं कि जब किसी के प्रति किसी अन्य के मन में कोई वैभव नहीं था सभी लोग प्रसन्न चित्र थे;सबके दुख संताप आदि समाप्त हो गए सब में समानता का भाव आ गया तो यह सब कैसे संभव हुआ होगा| भारतवर्ष के इतिहास में अनेकों महान राजा हुए परंतु सबसे समुन्नत और उदाहरण के योग्य रामराज्य ही क्यों हैं? तो इसका एक ही उत्तर है राम जी के अथक प्रयास प्रजा के प्रति विशेष लगाव उनके अधिकारों के प्रति सजगता उनकी आवश्यकताओं के प्रति उत्तरदायित्व तथा प्रतिकूल स्थिति को भी अपनी प्रजा के अनुकूल बनाने में अपना सब कुछ समर्पित कर देते थे आमतौर पर देखें तो एक परिवार में हैं परिवारिक सदस्यों के आपस में विचार नहीं मिलते तो यह कैसे संभव है कि उनके राज्य में रह रहे सभी लोगों के बीच में प्रेम तथा सद्भाव था किसी भी प्रकार का प्रयास किए होंगे तब जाकर उनकी प्रजा में संतुष्टि, प्रेम, प्रसन्नता सद्भावना आदि का प्रवाह हुआ होगा| वैमनस्य या मनमुटाव नहीं था| उनके राजा बनने पर सभी जीव जंतु हर्षित हो गए अर्थात अपने प्रजा के लिए उन्होंने केवल सुख की कामना नहीं की अपितु उसको अपने कर्मों में ढाला| राज्य के प्रत्येक व्यक्ति की संतुष्टि का मान रखा होगा|

---

७४ -उत्तरकांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ८५३

किसी के भी मन में असंतोष की भावना न रहे या वह स्वयं को उपेक्षित ना समझे इसलिए सब का महत्व सबका आदर्श सब की आवश्यकता का सदैव ही ध्यान रखते हुए सर्वहितकारी निर्णय कितनी निरंतरता के साथ सतत प्रयासों को करते हुए वे अपने राज्य को इस स्तर तक लेकर आए इस सब के आंतरिक भेदभाव मिट गए और सभी एक दूसरे के प्रति प्रेम की भावना से युक्त हो गए|

दैहिक दैविक भौतिक तापा | रामराज नहहिं कहुहि ब्यापा |
सब नर करहिं परस्पर प्रीति | चलहिं स्वधर्म निरत श्रुत नीति || ७५

अर्थात राम राज्य में लोगों को रोग, प्राकृतिक आपदाएं तथा इच्छाओं की पूर्ति से संबंधित किसी भी प्रकार के शारीरिक, मानसिक ,आत्मिक आदि कष्ट नहीं होते थे | श्री राम के राज्य में रहने वाले लोग परस्पर प्रेम करते थे और वेदों में बताई हुई नीति अर्थात मर्यादा में तत्पर हकर अपने अपने धर्म का पालन करते थे | किसी भी प्रकार के कष्ट से पीड़ित नहीं थे और ना ही किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा से कभी उनका राज्य ग्रसित होता था अर्थात सभी प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग भली-भांति किया जाता था किसी भी साधन या स्रोत का अपव्यय नहीं किया जाता पृथ्वी वायु आकाश जल आदि का उचित अनुपात में प्रयोग किया जाता था किसी भी संसाधन का दोहन प्रकृति के विपरीत नहीं किया था यह नहीं शीत ऋतु में ठंड ग्रीष्म ऋतु में गर्मी और वर्षा ऋतु में गर्मी का उचित मात्रा में प्रभाव था, न तो इतनी ही अधिक गर्मी पड़ती थी इस सब कुछ सूख जाए न तो इतनी ही अधिक वर्षा होती थी इस सब कुछ डूब जाए और न ही इतनी अधिक ठंड पड़ती थी इस सब कुछ जम जाए|

श्री राम सामाजिक ,आर्थिक तथा,राजनैतिक स्थिरता के साथ-साथ अपनी प्रजा को प्राकृतिक उस थे तभी प्रदान करते थे और उन्हें ऐसा ही करने के लिए प्रेरित करते ताकि मनुष्य तथा प्रकृति के बीच में स्थापित संबंध मधुर बना रहे प्रकृति कभी भी कुपित ना हो इसलिए प्रकृति के सभी संसाधनों की पूजा की जाती थी ,उन्हें पूजनीय माना जाता था जैसे नदियों तथा धरती को माँ,वायु को देवता, वृक्ष आदि को भी देवताओं का वासस्थल माना जीव जंतुओं के प्रति लोगों में विशेष प्रेम था दया भाव था उनकी भूख प्यास आदि के प्रति सभी लोग सजग रहते हुए जीव जंतुओं का ध्यान रखते थे राज्य में रहने वाला हर व्यक्ति ऐसी ही सोच रखता था और अच्छी सोच के कारण मानसिक स्थिति भी अच्छी रहती थी सभी राज्य वासियों को अपने धर्म का पालन करना भली-भांति आताप्रत्येक व्यक्ति अपना आकलन स्वयं करता था| वर्ण व्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अपने-अपने धर्म का पूरी सत्य निष्ठा से पालन करते थे किस छात्र को किस प्रकार की शिक्षा देनी है राज्य की सीमाओं को किस प्रकार सुरक्षित करना है किस तरह आर्थिक स्तर को शुद्ध करना है तथा किस प्रकार जन-जन की सेवा हेतु उनको अपना शिल्प अपना कौशल प्रदान करना है ऐसा सोचते हुए ही सभी अपने धर्म का पालन करते थे ताकि समाज सुदृढ़ हो सके ताकि राष्ट्र सशक्त हो सके सभी आपस में प्रेम भाव रखते हुए सहयोग की भावना के साथ कार्य करते थे वहां पर सभी के मन में सभी के लिए अपना बंद राज्य का प्रत्येक नागरिक स्वयं को राज्य की सेवा के लिए समर्पित करता था श्री राम स्वयं सदैव ही राज्य की उन्नति तथा लोगों की भलाई के प्रति प्रतिबद्धता से अपने कर्तव्य का पालन करते किसी को शारीरिक कष्ट किसी भी प्रकार का चर्म रोग मानसिक रोग पक्षाघात आदि छू कर भी नहीं गया सभी धर्म तथा नीति का पालन करते हुए अपने आप को मानसिक रूप से सुदृढ़ बनाते थे|

---

७५ - उत्तरकांड रामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ८५४

अच्छी भावना रखने के कारण सभी के हृदय में प्रेम का दीप प्रज्वलित रहता सभी का मनोबल उत्तम था, शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम था ,धर्म के मार्ग पर चलने वाले थे, प्रकृति से प्रेम करने वाले थे तो किस प्रकार उन्हें किसी भी तरह का कष्ट व्याप सकता था? ऐसा पढ़ने तथा सुनने के उपरांत मन में यही प्रश्न आता है कि क्या यह संभव था? उत्तर में यदि हम विश्व साहित्य के कोष में से श्रीराम के जीवन पर आधारित रचनाओं को पढ़ते हैं;तो यही पाते हैं कि इन में वर्णित रामराज्य सत्य है| जिसमें राजा एक राजा के रूप में शासन नहीं करता अपितु एक सेवक के रूप में प्रजा की सेवा करता है| श्रीराम के अनवरत अथक प्रयासों का सुखद परिणाम है राम राज्य;जहां उन्होंने प्रजा को अपने जीवन का केंद्र बिंदु माना तथा अपनी सारी ऊर्जा और शक्ति का प्रयोग उनके उत्थान के लिए किया, रामराज्य धरती पर अनायास ही नहीं स्थापित हो गया| इसके लिए परिश्रम समर्पण एवं सतत प्रयास किया गया आज आज संपूर्ण मानव समाज इस बात पर एकमत है अगर एक कुशल राज्य की स्थापना के बारे में सोचा जाए तो राम राज्य के अतिरिक्त अन्य कोई उदाहरण मस्तिष्क में नहीं आता है;जहां प्रेम सौहार्द समर्पण ही जीवन का आधार था| श्रीराम ने स्वयं को कभी भी एक राजा के रूप में चिन्हित नहीं किया वे प्रजा के सेवक बनकर उनकी सेवा करना चाहते हैं| अपने राज्य के प्रत्येक नागरिक को लाभान्वित करना चाहते थे;उसमें सद्गुणों का विकास कर उसके जीवन को नैतिकता के जल से सींचना चाहते थे| आचरण की शुद्धता आत्मिक बल तथा मानवता के प्रत्येक स्तर पर अपने प्रत्येक नागरिक को उत्तीर्ण देखना चाहते थे परंतु ऐसा चाहने से कुछ हो जाएगा यह तो संभव नहीं है तो किस प्रकार का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लोगों को व्यावहारिक ज्ञान दिया जाए उनको विशेष होने का अनुभव करवाया जाए;जिससे वह भी रुचि लेते हुए राज्य के सभी प्रबंधन कार्यों में अपना समुचित सहयोग दे सकें| समस्त सद्गुणों एकत्रित कर वे धर्म के अनुसार राज्य करते हुए समस्त नीतियों का पालन करते हुए संयम तथा सदाचार से प्रत्येक प्राणी में परमात्मा का स्वरूप मानते हुए उसकी सेवा करते थे| उनकी दृष्टि में कोई भी धनी- निर्धन, श्रेष्ठ-निकृष्ट नहीं था| जिस प्रकार एक सेवक अपने द्वारा किए गए सेवा कार्यों परिणामों को जानने के लिए आतुर रहता है तथा सेवा कार्यों के बारे में अपने प्रजा के विचार जानना चाहते थे क्योंकि वह अपने किसी भी निर्णय को उन पर थोपना नहीं चाहते थे| वे अपनी प्रजा की इच्छा अनुसार ही नीतियां निर्धारित करते तथा उन्हें लागू करते थे प्रजा के द्वारा अस्वीकार्य किसी भी तथ्य को जानने का प्रयास करते थे क्योंकि उनके प्रजाजनों की प्रसन्नता से बढ़कर और कुछ नहीं था| श्री राम का ऐसा विचार था कि व्यभिचारी राजा की राज्य में ही नहीं तपोनिष्ठ आश्रमों में भी निंदा होने लगती है अर्थात एक राजा को सदैव ही इस बात का विचार करते रहना चाहिए कि उसके किस निर्णय अथवा कर्म के द्वारा प्रजा में उसका मान सम्मान बढ़ता है अथवा कम हो जाता है| एक राजा को सदैव ही सचेत रहना चाहिए क्योंकि बिना विचारे किए गए कार्य;किसी भी राजा के लिए निंदनीय होते हैं और जिस राजा की निंदा होने लगती है उसकी कुख्याति फैलने में भी समय नहीं लगता और वह अपनी प्रजा के लिए अविश्वसनीय हो जाता है| श्री राम के राज्य में लोगों के बीच किसी भी प्रकार का वैमनस्य नहीं था| प्रेम तथा सौहार्द का संबंध था यदि किसी राजा के राज्य में लोगों के मध्य प्रेम-सौहार्द तथा सद्भावना पूर्ण व्यवहार हो तो निश्चित ही इसके पीछे उस देश के राजा का कठोर परिश्रम होगा| किसी राजा के राज्य में प्रजा सुरक्षित एवं संरक्षित हो तो अवश्य ही राजा की नीतियां तथा उसके कार्य सराहनीय है| ऐसा वातावरण उत्पन्न करने के लिए राजा के अंदर स्वयं भी यह गुण होने चाहिए| प्रजा के आर्थिक, सामाजिक तथा आत्मिक उन्नति के लिए श्रीराम ने सदैव ही एक अनुचर की भांति कार्य किया| अपने कर्तव्य परायणता के कारण ही श्रीराम ने अपनी प्रजा को कर्तव्य बोध करवाया जहां कोई किसी को किसी भी प्रकार का निर्देश नहीं देता था| वस्तुतः अपने कर्मों का पालन अपने विवेकानुसार करते थे जिससे किसी को बाधा न हो अपितु सुख की प्राप्ति हो|

इसी भाव के कारण ही तो रामराज्य विश्व प्रसिद्ध है| जहां एक राजा का नहीं अपितु प्रजा का राज हो जहां प्रजा सर्वोपरि है ;के अनुसार ही किसी भी प्रकार का निर्णय लिया जाता हो|

चारिउ चरन धर्म जग माही | पूरि रहा सपनेहूं अघ नाही |
राम भगति रत नर अरु नारी | सकल परम गति के अधिकारी || ७६

धर्म अपने चारों चरणों (सत्य ,शौच ,दया तथा दान) से जगत में परिपूर्ण हो रहा है| स्वप्न में भी कहीं पाप नहीं है| स्त्री तथा पुरुष सभी अपने प्रिय राजा राम की भक्ति में लीन हैं| सभी मोक्ष के अधिकारी हैं| धर्म के चार चरण हैं इनको चरण इसलिए कहा गया है क्योंकि इनका आचरण करने से धर्म की स्थापना होती है शास्त्रों के अनुसार **आचार्:प्रथमो धर्म**: अर्थात् आचरण ही प्रथम धर्म है| जिससे सब की सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, शैक्षणिक सर्व प्रकार की उन्नति हो वही धर्म है| सत्य, धर्म का प्रथम चरण है, तप द्वितीय चरण है; इंद्रियों का निग्रह करके सत्य के पथ को कभी न छोड़ना तपस्या है| शौच यानी पवित्रता जो आंतरिक और बाह्य दोनों रूप से होनी चाहिए| श्री राम के राज्य में लोगों के अंतरमन तथा व्यवहार में धर्म का वास था जागते समय तो छोड़, सोते समय स्वप्न में भी कोई किसी के प्रति किसी तरह की दुर्भावना नहीं रखता था और अपने राजा के व्यवहार तथा स्वभाव को देखते हुए राज्य का प्रत्येक नागरिक अपने राजा के इन गुणों को शिरोधार्य करते हुए उनके सद्गुणों को अपनाने का प्रयास करता था| सत्-कर्मों के कारण ही मोक्ष को प्राप्त करते थे तो क्या इसके पीछे श्री राम की प्रेरणा या उनके प्रयास नहीं थे? प्रजा को सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते थे और यह प्रेरणा स्वयं श्री राम के व्यवहार तथा आचरण के द्वारा ही दी जाती थी| उनकी कथनी और करनी में लेशमात्र भी अंतर नहीं था| वे धर्म के अनुसार ही आचरण करते थे चाहे इसके लिए उन्हें कितने भी कष्ट क्यों न उठाने पड़े और उनके इस आचरण से प्रेरित होकर ही उनके राज्य के सभी निवासी सदाचार एवं धर्म के मार्ग पर चलते थे|

अल्प मृत्यु नहीं कवनउ पीरा | सब सुंदर सब बिरुज सरीरा ||
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना | नहि कोउ अबुध न लच्छन हीना || ७७

रामचरितमानस की प्रस्तुत पंक्तियों के अनुसार श्री राम के राज्य में किसी भी बालक या बालिका की छोटी अवस्था में मृत्यु नहीं होती थी; न ही किसी को किसी भी प्रकार की कोई पीड़ा होती;सभी के शरीर सुंदर और निरोगी है और न कोई दुखी न ही कोई दीन और न ही कोई बुद्धिहीन तथा न कोई भी व्यक्ति शुभ लक्षणों से विहीन था|

श्री राम के राज्य में यदि अल्प आयु में किसी की भी मृत्यु नहीं होती थी तो स्वास्थ्य सेवाएं निश्चित ही सुदृढ़ रही होंगी| किसी भी प्रकार की पीड़ा;किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं था| शारीरिक या मानसिक इसका अर्थ यह है कि वातावरण शुद्ध था| व्यवहार द्वारा कोई भी किसी दूसरे को किसी भी प्रकार से आहत नहीं करता था| चिकित्सा की सुविधा,पौष्टिक भोजन पर प्रत्येक जनमानस का अधिकार था| जिससे प्रत्येक व्यक्ति शारीरिक और मानसिक दोनों रूपों में सशक्त था| यदि इतने उत्तम साधन होंगे तो क्यों किसी की अल्पायु में मृत्यु होगी? सबका शारीरिक स्वास्थ्य सशक्त,सबकी काया निरोगी, सभी देखने में सुंदर अर्थात् अच्छे रहन-सहन और खान-पान के कारण शारीरिक सुंदरता भी परिपूर्ण किसी के भी घर में दरिद्रता का वास नहीं था|

७६,७७ - उत्तरकांड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ८५४

सभी उद्यमी थे क्योंकि प्रत्येक समाज का प्रत्येक व्यक्ति वर्ण व्यवस्था के अनुरूप कार्यरत था, जो कि पैतृक व्यवसाय के रूप में अपनाए जाते थे| सभी अपनी -अपनी कला तथा अपने-अपने क्षेत्र में में पारंगत थे, जिससे समाज की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति भली-भांति हो जाती थी| किसी भी व्यक्ति को किसी भी प्रकार की मानसिक-विक्षिप्तता नहीं थी, अर्थात् सभी कुशाग्र बुद्धि के स्वामी थे| इसका अर्थ यह है कि उचित वातावरण में लालन-पालन तथा विद्या-अध्ययन का कार्य करवाया जाता था; जिससे सभी का मानसिक विकास समुचित रूप से होता था| किसी भी तरह की कुंठा किसी के भी मन- मस्तिष्क में वास नहीं करती थी | सभी को विचारों की स्वच्छंदता प्राप्त थी और इसका सबसे बड़ा उदाहरण रामराज्य ही है| जहां निर्भीक जनता राजा के प्रति भी अपने विचार व्यक्त करने में नहीं डरती क्योंकि उनको यह भली-भांति ज्ञात था कि राम जी उनके विचारों से स्वयं को अवगत करवाते रहते हैं;कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार की मानसिक दबाव में नहीं रहता था| सभी लोग के सुलक्षणों से सुशोभित थे आचरण, मान- मर्यादा, व्यवहार, सामाजिक परंपराएं, स्वच्छता, परिपक्व भाषा शैली, अपने अपने क्षेत्र के अनुसार कार्य दक्षता से लेकर सौंदर्यीकरण आदि न जाने कितने ही ऐसे गुण थे ,जिससे सभी अयोध्यावासी सुसज्जित तथा सुशोभित थे| सभी गरिमापूर्ण व्यवहार करते थे, सभी अपनी रूचि के अनुसार किसी न किसी कला में पारंगत थे |

किसी राज्य पर राज करना तो कोई भी राजवंश अपनी कुंडली में लिखवा कर ही लाता है;परंतु जनता से प्रेम करते हुए उनकी सेवा करते हुए;उनको सुख सुविधा तथा संसाधन उपलब्ध करवाते हुए एक जनसेवक के रूप में अपनी प्रजा को ही अपना स्वामी मानकर उसके सुख समृद्धि का ध्यान रखते हुए यथोचित कार्य करना ही राजा का धर्म है| श्रीराम के जीवन से हमें यह सीख मिलती है कि राजा वही होता है,जो अपनी प्रजा को पुत्रवत पाले न की राजस्व की प्राप्ति हेतु प्रजा को साधन बनाए| एक राजा अपने प्रयासों से प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि करवाता है;ताकि उसके राज्य के नागरिकों का जीवन स्तर ऊंचा हो सके| उन्होंने तो स्वयं के जीवन को भी इस प्रकार संचालित किया की प्रजा सदैव ही उनके जीवन के केंद्र बिंदु में विराजमान थी अर्थात् जो नीति जो नियम या जो परंपराएं प्रजा के विरुद्ध होती थी;वे उनको प्रजा के लिए हितकारी रूप में परिवर्तित कर देते थे, इसीलिए वे सर्वप्रिय राजा थे क्योंकि उनकी प्रजा भी इस बात को लेकर आश्वस्त थी कि श्री राम उनके मन के भावों को समझते हैं तथा उनका कोई भी कार्य प्रजा के मनोभावों के विरुद्ध नहीं हो सकता |

सब निर्दंभ धर्मरत पुनि | नर अरु नारि चतुर सब गुनी || ७८

श्री राम के राज्य में रहने वाले सभी लोग दंभ रहित थे अर्थात किसी भी व्यक्ति में अभिमान नहीं था सभी धर्म के अनुसार अपने-अपने कार्यों में निपुण, धर्मपरायण तथा पुण्यात्मा थे| स्त्री तथा पुरुष सभी चतुर तथा गुणवान थे| अभी गुरु का आदर करने वाले एवं ज्ञानी पंडित थे| सभी दूसरों के किए गए उपकार को मानने वाले एवं कपट-धूर्तता जैसे दुर्गुण किसी में भी नहीं थे| ये समस्तगुण व्यावहारिक कौशल के उदाहरण हैं | एक मनुष्य के व्यवहार में कोई न कोई त्रुटि कोई न कोई दुर्बल पक्ष अवश्य रहता है| व्यवहार में सुगमता एवं सरलता परिपक्वता के चिन्ह है| जिसकी प्राप्ति सरल नहीं है;मनुष्य के व्यवहार में सार्थक-निरर्थक अनेक प्रकार के तत्व होते हैं| जहां सार्थक तत्व मनुष्य को सर्वोत्कृष्ट व्यवहार का स्वामी बनाते हैं| वहीं निरर्थक तत्व उसे निकृष्ट बना देते हैं, इसके लिए व्यवहारिक अभ्यास की आवश्यकता होती है| मनुष्य अपने अनुभव तथा आदर्शों से बहुत कुछ सीखता है |

---

७८ - उत्तरकांड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ८५४

श्री राम के राज्य में प्रजाजनों के लिए सर्वोत्तम व्यवहार का आदर्श श्री राम ही थे| उनके द्वारा लिए गए निर्णय तथा उनके द्वारा किए गए कार्यों से प्रेरित होकर प्रजाजनों ने इस व्यवहारिक अभ्यास को अपनाया | जिस प्रकार वे बड़े-बड़े काम बड़ी सरलता से कर जाते थे| कभी भी किसी राज-पाट, धन-वैभव ,शक्ति आदि किसी भी भौतिक वस्तु का अभिमान उन्होंने नहीं किया| प्रत्येक नर तथा नारी में निर्णय लेने की उचित क्षमता थी अर्थात उनका बौद्धिक स्तर उच्चतम था| अपने जीवन,अपने व्यवसाय तथा अपने व्यवहार के लिए उचित निर्णय ही लेते थे| जिससे किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत सामाजिक पारिवारिक हानि न होती हो| सभी गुणवान तथा विद्वान थे; शिक्षा का उचित प्रबंध था| श्री राम की प्रजा के प्रत्येक बालक- बालिका, नर- नारी सुशिक्षित थे| वे सद्गुणों का आदर करते थे| जीवन में कभी भी किसी के द्वारा किए गए उपकार को आजीवन मानने वाले थे| किसी भी व्यक्ति में धूर्तता नहीं थी अर्थात सरल एवं स्पष्ट रूप से बात करने वाले अपने पक्ष को रखने वाले, दूसरों का मान -सम्मान करते थे| ये नैतिक गुण, नैतिक शिक्षा के बिना नहीं आ सकते जीवन कौशल के सभी पक्ष परिपक्वता के साथ स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होते थे| किसी भी प्रकार की व्यावहारिक दुर्बलता किसी के व्यवहार से प्रदर्शित नहीं होती थी| एक मानव के विकास में औपचारिक -अनौपचारिक दोनों प्रकार के शिक्षा का महत्व होता ,जो उसे संपूर्ण मानव बनाते हैं क्योंकि अगर किसी मानव में मानवोचित गुण नहीं है, तो संरचना से चाहे;वह मानव के रूप में देखता हो, परन्तु गुणों में वह राक्षस भी हो सकता है| श्री राम के राज्य में औपचारिक- अनौपचारिक दोनों प्रकार की शिक्षा का प्रावधान रहा होगा| व्यावहारिक दुर्बलता मनुष्य की प्रगति में बाधक होती है तथा परिवार एवं समाज के विघटन का कारण बनती है| मनुष्य उचित अनुचित का निर्णय नहीं ले पाता है ,सामाजिक पारिवारिक विघटन के साथ अशांति उत्पन्न होती है तथा जिस राज्य में अशांति व्याप्त हो वो सुराज्य नहीं बन सकता| अतः अपने राज्य को राज्य बनाने के लिए, श्री राम ने अथक सतत प्रयास किए होंगे क्योंकि प्रजा में व्याप्त ये समस्त गुण उनके जनसेवक होने का प्रमाण देती हैं| वे नहीं चाहते थे कि किसी भी प्रकार का विघटन उनकी प्रजा की प्रगति को बाधित करें लोग किसी भी तरह की मानसिक तथा व्यवहारिक दुर्बलता हो के अधीन हों| एक प्रजा पालक के रूप में अपनी प्रजा को पिता तुल्य प्रेम करते थे| वे अपनी प्रजा का भरण- पोषण एक पिता के समान ही करते थे जैसे एक पिता सदैव ही अपनी संतान का हितैषी होता है उसे सदैव सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है उसके जीवन की सफलता के शिखर पर देखना चाहता है ठीक यही विचार रखते हुए, वे प्रजा की सेवा तथा उसके भरण -पोषण हेतु क्रियाशील रहते थे|

राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहीं |
काल कर्म सुभाव गुण कृत दुख काहूहि नाहिं || ७९

राम जी के राज्य में जड़-चेतन सारे जगत में काल-कर्म स्वभाव तथा गुणों से उत्पन्न हुए दुख किसी को भी नहीं व्यापते थे अर्थात् काल-कर्म स्वभाव तथा गुण इनके बंधन में कोई भी नहीं था| इन पंक्तियों से हम यह आकलन कर सकते हैं की आत्मिक शक्ति का स्तर भी कितना उच्च था| कोई भी सांसारिक मोह तथा गुणों -अवगुणों के बंधन में बंधा नहीं था| आत्मिक ज्ञान का स्तर इतना उच्च था कि कोई भी किसी के भूत भविष्य वर्तमान काल को लेकर चिंतित नहीं रहना सभी अपने ज्ञान के अनुसार कर्मों में लिप्त थे| किसी के द्वारा बोले गए वचन, किए गए व्यवहार से भी प्रभावित नहीं होते अर्थात उन्हें किसी की बातें बुरी नहीं लगती या अपने ऊपर वह दूसरे की कही गई बातों का प्रभाव नहीं पड़ने देते अपने व्यवहार आचरण भाषा शैली आदि को

७९-उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित ,पृष्ठ संख्या८५४

नैतिकता से पूर्ण ही रखते थे किसी के प्रति द्वेष ईर्ष्या वैमनस्य आदि का भाव नहीं था | निर्विकार रूप से वे अपने भावों तथा आचरण को संचालित करते थे| कोई भी व्यक्ति बड़ी साधना तपस्या के उपरांत ही इस तरह का स्वभाव या जीवन शैली बना सकता है क्योंकि यह साधारण मनुष्य के बस की बात नहीं है| प्रायः हमारे ऊपर या यूं कहें कि हमारे व्यवहार के ऊपर दूसरे व्यक्ति द्वारा किए गए व्यवहार का बहुत प्रभाव होता है अगर किसी व्यक्ति ने हमसे कोई कटु वचन बोल दिया या दुर्व्यवहार कर दिया तो हम भी उसके साथ उसी प्रकार का आचरण करते हैं यह एक साधारण मनुष्य का बौद्धिक स्तर होता है, आत्मज्ञान के उपरांत मनुष्य के ऊपर इन व्यवहारों तथा वचनों का कोई भी प्रभाव नहीं रह जाता| वह समान रूप से ही व्यवहार करता है | किसी और के प्रभाव से प्रभावित हुए बिना ही श्री राम भी आचरण करते थे उनके आचरण को ही हम प्रजा के आचरण का आधार मान सकते हैं इसके अलावा हम यह भी कह सकते हैं कि आत्मिक रूप से भी श्रीराम ने अपनी प्रजा को दुख-सुख, आशा-निराशा को समान भाव से सहन करने में सक्षम बनाया था और यह सब आत्मीय ज्ञान के बिना संभव नहीं है| प्रत्येक प्रकार की शिक्षा के साथ-साथ श्री राम के राज्य में आत्मज्ञान का शिक्षण तथा अभ्यास कार्य प्राप्त करवाया गया होगा अन्यथा मनुष्य का आचरण व्यवहार विकारों से युक्त होता ही है| निर्विकार आचरण तो एक महात्मा का ही पूछता क्योंकि श्री राम यह भली प्रकार जानते थे कि आत्मज्ञान के बिना मनुष्य की उन्नति संभव नहीं; न केवल सांसारिक रूप से अपितु आत्मिक एवं व्यावहारिक रूप से भी मनुष्य को परिपक्व होना चाहिए|

सब उदार सब पर उपकारी| विप्र चरन सेवक नर नारी ||
एकनारी व्रतरत सब झारी | ते मन बचन करम पति हितकारी || ८०

सभी नर-नारी उदार हैं,परोपकारी हैं और सभी ब्राह्मणों की सेवा करने वाले सभी पुरुष एक पत्नीव्रती हैं | इसी प्रकार स्त्रियां भी मन वचन तथा कर्म से पति का हित चाहने वाली है | सबकेहृदय परोपकार की भावना से भरे हुए हैं लोगों की आचरण में सदाचार है व्यभिचार की भावना या इंद्रिय सुख शीर्ष पर ना होकर धर्म अध्यात्म और कर्म की श्रेष्ठता को समझते हुए सभी लोग जीवन का निर्वहन करते हैं पति तथा पत्नी आजीवन एक दूसरे का साथ देने के लिए वचनबद्ध है और यह मुख्य बात एक परिवार की आधारशिला सशक्त करती है| परिवार के सशक्त होने से समाज तथा समाज के सशक्त होने से संपूर्ण राज्य सशक्त होता है क्योंकि परिवार राज्य की सबसे छोटी इकाई होती है अगर उस स्तर पर संतुष्टि है तो राष्ट्रीय स्तर पर संतुष्टि तथा सौहार्द का वातावरण होगा ज्ञानियों का मान- सम्मान करना अपने आप में मानसिक परिपक्वता तथा ज्ञान के महत्व को दर्शाता है| हम सदैव ही ज्ञानी मनुष्य की संगति में रहकर स्वयं को लाभान्वित कर सकते हैं| इस महत्व को वही व्यक्ति समझ सकता है, जो स्वयं विद्वान तथा शिक्षा के महत्व को समझने वाला हो शिक्षा का मानव जीवन में क्या महत्व है| यह हमारे समस्त वेद, पुराण, उपनिषदों आदि में वर्णित रहा है| एक अज्ञानी मनुष्य अपने जीवन को कभी भी सही दशा एवं दिशा नहीं दे सकता;अज्ञानता अनेक विकारों को जन्म देती है और ज्ञान अंधकार में जीवन में प्रकाश लाता है| ज्ञान प्राप्ति के द्वारा ही मनुष्य जीवन के बहुत से भेद जान पाता है और उन भेदों को जानते हुए जीवन जीने की कला को सीखता है क्योंकि केवल श्वास लेना ही जीवन नहीं होता जीवन में धर्म अधर्म नैतिक अनैतिक तथ्यों का ज्ञान अवश्य होना चाहिए| ज्ञानरूपी शस्त्र से सुशोभित मनुष्य जीवन के इस युद्ध में सदैव ही विजयी होते हैं| सदाचार के भावना भरने के लिए श्री

८०-उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित,पृष्ठ संख्या८५४

राम सदा भी तत्पर रहे होंगे उदारता का गुण मनुष्य को मनुष्य से परिभाषित करता है अन्यथा मनुष्य भी एक साधारण जीव ही है श्री रामचंद्र जी के राज्य में उपकार की भावना सर्वोपरि थे स्थितियां जैसी भी हो किसी का आचरण कैसा भी हो परोपकार की भावना के साथ ही कार्य करने को प्रबलता दी जाती थी और यह स्वयं श्री राम के आचरण में भी समाहित था अपने कर्मों द्वारा उन्होंने ऐसेअनेक उदाहरण सिद्ध किए के बिना कहे प्रजाजन इस गुणके महत्व तथा इसके लाभ को समझ कर अपने आचरण में उतारने लगे होंगे| अवश्य ही श्री राम ने आचरण संबंधी ज्ञान, तार्किकता के साथ धर्म के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया होगा| श्री राम के परिवार में स्वयं भी धर्म का पालन करने की परंपरा रही है और प्रजा अपने राजा तथा राज परिवार से बहुत कुछ सीखते हैं|

जहां राजा दशरथ की तीन रानियां थी वही श्रीराम ने अपने आचरण द्वारा एक पत्नीव्रत पर ही जोर दिया ताकि पति पूर्ण निष्ठा के साथ अपनी पत्नी को उसके अधिकार दे सके पत्नी भी पति के बराबर हो सके उन दोनों का एक-दूसरे पर विश्वास बना रहे सीता जी को ढूंढते हुए जब श्रीराम वन वन फिरते रहे उनको लाने के लिए हजारों योजन दूर समुद्र को पार करके लंका नगरी तक गए रावण से युद्ध किया और अपनी पत्नी सीता को पुनःप्राप्त किया यह बताता है कि श्री राम सदैव ही संबंध को एक निष्ठा से निभाने में विश्वास करते थे उनके इस आचरण उनके इस समर्पण तथा उनके इस प्रेम से सभी लोग प्रभावित हुए होंगे और उन्होंने श्रीराम के इस आचरण को अपने अंदर भी धारण किया श्रीराम अपने आप में ही मानवता आचरण सदाचार नैतिकता के जीते जागते विश्वविद्यालय थे| जो भी व्यक्ति उनके जीवन के निकट से भी चला जाता था| उस व्यक्ति में सुधार अवश्यंभावी था| अमराजी की कल्पना करना भी है तरह के विरोधाभास दिखाई लेकिन श्रीराम ने ऐसे राज्य की स्थापना जिसका युगों युगों से उदाहरण दिया जाता है और युगो- युगो तक दिया जाता रहेगा

दंड जतिन्ह कर भेज जह नर्तक नृत्य समाज |
जीतहु मनहिं सुनीअ रामचंद्र के राज || ८१

श्री रामचंद्र जी के राज्य में दंड केवल सन्यासियों के हाथ में है और भेद नृत्य समाज में और गीतों शब्द केवल मन को जीतने के लिए ही सुनाई पड़ता है अर्थात राजनीति में शत्रुओं को जीतने तथा चोर डाकुओं आदि को दंडित करने के लिए उनको दंड देने के लिए साम,दाम, दंड,भेद ये चार उपाय किए जाते हैं| राम राज्य में कोई शत्रु है ही नहीं इसलिए जीतो शब्द केवल और केवल मन को जीतने के लिए ही कहा जाता है| कोई अपराध करता ही नहीं,इसलिए दंड किसी को नहीं मिलता दंड शब्द केवल सन्यासियों के हाथ में रहने वाले दंड के लिए ही रह गया है तथा सभी अनुकूल होने के कारण भेद नीति की आवश्यकता ही नहीं रह गई| भेद, शब्द केवलसु सुर और ताल के भेद के लिए ही काम आता हैं|

सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन में हम किसी व्यक्ति विशेष में सुधार हेतु दंड सुनिश्चित करते हैं इसके पीछे यह आशय होता है कि दंड भुगतने वाला व्यक्ति भविष्य में इस तरह का कोई भी अपराध या अनैतिक कार्य नहीं करता जिसके फलस्वरूप उसको दंड दिया जाए| असंवैधानिक कार्य हेतु दंड देने का प्रावधान रहा है मनुष्य को सुधारने की एक विधा होती है जिसमें व्यक्ति भविष्य में दंड के भय से किसी भी प्रकार का असंवैधानिक कार्य नहीं करता नीति के अनुसार साम दाम दंड भेद यह चार विधाएं हैं| जिनके द्वारा हम किसी मनुष्य तथा किसी कार्य को सिद्ध कर सकते हैं;परंतु यह चारों विधाएं नियंत्रित करने के लिए हैं|

---

८१ - उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ८५५

श्री राम के राज्य में किसी भी मनुष्य तथा उसकी भावनाओं को नियंत्रित नहीं करना पड़ता सभी स्वेच्छाचारी थे| किसी भी तरह के दंड आदि का भय नहीं था| सदाचार का पालन करने वाले नीतियों पर चलने वाले प्रजा जनों के बीच साम, दाम, दंड, भेद का एक अलग ही दृष्टिकोण था| साम का अर्थ होता है;समझाना दाम अर्थात् आर्थिक प्रलोभन देना| दंडका अर्थ बल आदि का प्रयोग करना| भेद, अर्थात् कुटिलता पूर्वक शत्रु की शक्ति को कम करना| मुख्यतः इन चारों को मिलाकर एक नीति बनती है और यह चार चरण है जिसके द्वारा राजनीति की जाती है| श्री राम के राज्य में सब कुछ इतना सरल था कि किसी भी प्रकार के प्रलोभन दंड या किसी को शक्ति विहीन करके शासन करने का प्रश्न ही नहीं बनता था कोई भी व्यक्ति इन चरणों का प्रयोग प्रकल्प का प्रयोग नहीं करता;आपसी सद्भाव एवं सदाचार की भावना के साथ ही कोई भी कार्य किया जाता था | राम राज्य में कोई भी व्यक्ति स्वार्थपरक कार्यों में लिप्त नहीं था| सबका भला हो, सबकी उन्नति हो, सबको सुख वैभव प्राप्त हो, इस भाव के साथ ही सभी प्राणी अपना जीवन जी रहे थे| अपने कर्म कर रहे थे एक दूसरे को किस प्रकार लाभ पहुंचाया जाए ऐसे व्यवहार का अभ्यास करते थे; प्राणी मात्र के मंगल की कामना करते थे |

फुलहिं फरहिं सदा तरु कानन| रहहिं एक संग गज पंचानन ||
खग-मृग सहज बयरु बिसराई | सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई || ८२

वनों में लगे हुए वृक्ष सदा ही फलते और फूलते हैं| हाथी तथा सिंह बैर भूल कर एक साथ रहते हैं| पशु और पक्षी सभी ने स्वाभाविक वैर भुलाकर आपस में प्रेम बढ़ा लिया है| इन पंक्तियों के अनुसार परिस्थितिकी तंत्र के सशक्त होने का पता चलता है निश्चित ही इसके लिए भी श्री राम ने एक सेवक के रूप में अथक प्रयास किए हैं परिस्थितिकी तंत्र के सशक्त होने से सभी जीवो का जीवन सुरक्षित रहता है;प्रकृति का चक्र निर्बाध रूप से घूमता रहता है जिसके कारण किसी भी जीव के अस्तित्व पर किसी भी तरह का दबाव नहीं बन पाता| सभी को संरक्षण मिलता है| सभी अपने पात्र को अच्छी तरह निभाते हैं| वृक्षों का फलो तथा फूलों से लगा रहना यह बताता है कि जलवायु तथा कृषि व्यवस्था दोनों उन्नति के शिखर पर थी अच्छी प्रजाति के वृक्ष होते थे जिन पर अच्छी प्रजाति के फलों का उत्पादन होता था| ऋतु परिवर्तन भौगोलिक अवस्था के अनुरूप उचित दिशा में होती थी जिस ऋतु के लिए जितने अवधि निर्धारित थी वह ऋतु उसी निश्चित अवधि में आती तथा जाती थी पशु-पक्षियों के मध्य प्रेम होने का तात्पर्य है कि सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति अच्छी तरह से हो रही थी किसी को भी भोजन आदि का अभाव नहीं था समस्त जीव सभी प्रकार से तृप्त थे| तृप्ति की अवस्था में कोई भी जीव हिंसक नहीं होता अर्थात नगर की व्यवस्था देखने के साथ-साथ श्री राम वन्यजीवों तथा वन में लगने वाले सभी प्रकार के पेड़-पौधों वनस्पतियों का ध्यान रखते थे| प्रकृति के महत्व को समझते हुए माँ प्रकृति की सेवा करते थे तथा अपने राज्य के लोगों को भी प्रकृति की सेवा करने के लिए प्रेरित करते रहे होंगे;अवश्य ही वे प्राकृतिक-संपदाओं का महत्व समझते हुए,उनके रखरखाव पर समुचित ध्यान देते होंगे| अपने राज्य को प्राकृतिक-संसाधनों में उन्नति के शिखर पर ले गए होंगे| वृक्षों आदि पर कीट-पतंगों का दुष्प्रभाव न हो इसकी भी समुचित व्यवस्था की गई होगी अन्य जीव जंतुओं के खानपान हेतु पर्याप्त मात्रा में सामग्री उपस्थित रही होगी ताकि वे फलों से लदे हुए व्यक्तियों को किसी भी तरह की क्षति न पहुंचा सकें| एक प्रकृति के रूप में कार्य किया होगा प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग तथा रखरखाव हेतु उन्नत रूप से कार्य किया जाता होगा| प्रत्येक नागरिक में प्रकृति के प्रति सजगता रही होगी अर्थात् इस प्रयोजन हेतु भी लोगों को जागरूक किया जाता होगा|

८२- उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित,पृष्ठ संख्या ८५६

राम राज्य में सभी लोग प्रकृति तथा मनुष्य के संबंधों की प्रगाढ़ता को समझते थे कि मानव-जीवन यह समस्त जीव संरचना को समुचित रूप से संचालित करने हेतु प्रकृति का सशक्त रहना अति आवश्यक है| अतः यह बात स्वयं है पुष्ट हो जाते हैं की एक सेवक की तरह कार्य करने वाले श्री राम अपनी प्रजा के जननायक थे |

लता बिटप मांगे मधु चवहीं | मनभावतो धेनु पय स्त्रवहीं ||
ससि संपन्न सदा रह धरनी | त्रेता भइ कृतजुग कै करनी || ८३

उपर्युक्त पंक्तियों के अनुसार श्री राम के राज्य में वृक्ष मांगने से ही मधु टपका देते थे| गाय मनचाहा दूध देती थी| धरती सदैव खेती से हरी-भरी रहती थी; त्रेता युग में सतयुग की स्थिति हो गई थी| खाद्यान्न के मामले में प्रजा बहुत ही धनी थी वृक्षों पर मधुमक्खियों का वास था जिसमें इतना मधु उत्पन्न होता था कि इच्छा भर से अगर हम वृक्ष के नीचे खड़े हो जाए तो मधु प्राप्त कर सकते हैं| गौमाता मन को भाने वाला मधुर दुग्ध प्रदान करती थी| धरती सदा ही खेती से परिपूर्ण थी अर्थात् फसलों का चक्र नियमित रूप से चलता था और खाद आदि प्राप्त होने के कारण, समुचित वर्षा आदि मिलते रहने के कारण अनाज फल फूल सब्जी इत्यादि की उत्पत्ति प्रचुर मात्रा में होती थी चारों दिशाओं में संपन्नता का वास था सभी प्रजाजनों तथा अन्य जीवो के घर खाद्यान्नों से भरे हुए थे| किसी को भी किसी प्रकार की कमी नहीं थी ; सबको वैभव प्राप्त था| कृषि -व्यवस्था पर भी श्री राम जी बहुत परिश्रम करते थे| फसलों का चक्र कभी भी बाधित नहीं होता था सभी प्रकार के सुस्वादु फल मिलते थे| दूध तथा दूध से बने हुए सभी प्रकार के पदार्थों से रसोईघर भरे रहते थे| श्रीराम जानते थे;यदि किसान अथक परिश्रम के उपरांत अपनी खेती में किसी तरह की कमी पाता है अथवा उसकी सोच उसके परिश्रम के अनुरूप फल की प्राप्ति नहीं होती है तो किसान और उससे जुड़े सभी वर्गों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा अवश्य ही किसानों को सभी प्रकार के साधन उपलब्ध करवाते थे| खेतों की सिंचाई हेतु जल व्यवस्था भी सुनिश्चित की होगी| कृषि वर्ग से जुड़े हुए तथा उपयोग में आने वाली वस्तुओं के निर्माण में भी सक्षम होंगे चीजों का पुनर्चक्रण अथवा पुनः प्रयोग करने का विधान होगा| जिससे प्रकृति द्वारा प्राप्त सभी पदार्थों को वापस प्रकृति में मिला देते होंगे| एक पूरा का पूरा कृषि विभाग होगा जिसके अंदर विभिन्न प्रकार के प्रयोग पुनर्चक्रण, जलवायु-निरीक्षण, मृदा-परीक्षण आदि पर कार्य किया जाता होगा तथा इस विभाग का संचालन स्वयं श्री राम ही करते होंगे एक वीर योद्धा होने के साथ-साथ वे एक सेवक के रूप में जनता की सेवा करने के लिए उन को सुंदर बनाने के लिए कृषि तथा उससे जुड़े हुए उद्योगों पर समुचित ध्यान देते होंगे|

प्रगटी गिरिन्ह बिबिधमनी खानी | जगदातमा भूप जग जानी ||
सतारि सकल बहहि बर बारी | सीतल अमल स्वाद सुखकारी || ८४

समस्त जगत की आत्मा भगवान को जगत का राजा जानकर पर्वतों ने अनेक प्रकार की मणियों की खाने प्रकट कर दी हैं| समस्त नदियां श्रेष्ठ शीतल निर्मल एवं सुखप्रद जल से युक्त होकर बहने लगी है|प्राकृतिक संसाधन तथा जल-संसाधन का सदुपयोग अगर मनुष्य अपनी आवश्यकता के अनुरूप करता है तो प्रकृति अपने संसाधनों से मनुष्य को धनी बना देती है| नदियों का जल अगर विषाक्त नहीं होता है तो वह सर्वश्रेष्ठ पेय होता है| जल ही जीवन का आधार फिर चाहे वो जीवन मनुष्य का हो पशु पक्षियों का हो या पेड़ पर उचित जलवायु परिवर्तन तथा प्रकृति के संरक्षण से पृथ्वी की आयु बढ़ती है | पृथ्वी की आयु बढ़ने का अर्थ है,

---

८३,८४ - उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या ८५६

प्रत्येक जीवधारी की आयु बढ़ना उसका स्वस्थ एवं सशक्त होना और जब प्रकृति के दोहन के बिना मनुष्य को तरह-तरह की अमूल्य धातु में तथा रत्न मिल रहे हो तो फिर क्या ही कहना लेकिन प्रकृति से यह सब प्राप्त करने के लिए हमें उसकी देखभाल भी एक माता के रूप में करनी पड़ती है| ऐसा श्री राम अवश्य मानते हैं, तभी तो उनकी प्रजा उनका साम्राज्य धन्य-धान्य, खाद्यान्न-जल, जलवायु आदि में श्रेष्ठतम स्थिति में था| इन सारी स्थितियों के लिए निरंतर प्रयास अनिवार्य है| मनुष्य अपनी सुख-समृद्धि हेतु प्रकृति का सदुपयोग करता है तो लाभान्वित होता है परंतु उसके लिए निरंतर कार्य करते रहना पड़ता है| स्वच्छता से लेकर पुनर्चक्रण सबका ध्यान रखना पड़ता है| सभी संभावनाओं पर विचार करते हुए कार्य करना पड़ता है| अपने साथ-साथ अन्य जीव-जंतुओं का भी ध्यान रखना पड़ता है क्योंकि मां प्रकृति ने मनुष्य को वह क्षमता दी है जिसमें वह अपने भरण-पोषण के साथ-साथ अन्य जीव-जंतुओं का भी ध्यान रख सकता है| ऐसी शिक्षा-दीक्षा ही गुरुकुल में छात्र प्राप्त करते थे;अनावश्यक रूप से पेड़ों को काटना, खाए गए फल आदि के बीज को रोप देना ,पशु-पक्षियों के लिए चारे की उत्तम व्यवस्था करना| प्रकृति द्वारा दिए गए किसी भी संसाधन का अनावश्यक दोहन न करना अपने कार्यों का प्रकृति के ऊपर प्रभाव देखते हुए कार्य करना आदि न जाने कितने ही कार्य हों होंगे; जो श्री राम की प्रजा उनके प्रयासों से करती रही; अपने कर्मों के द्वारा वे अपनी प्रजा को प्रेरित करते रहे होंगे|

सागर निज मरजादा रहही | डारही रत्न तटनहि नर लहहि ||
सरसिज संकुल सकल तड़ागा | अति प्रसन्न दस दिसा विभागा || ८५

समुद्र अपनी मर्यादा में रहते हैं वे लहरों के द्वारा किनारों पर रत्न डाल देते हैं जिन्हें मनुष्य स्वयं ही पा जाते हैं सभी तालाब कमल के फूलों से परिपूर्ण है| दसों दिशाओं के विभाग अर्थात सभी प्रदेशों में अत्यंत प्रसन्नता है समुद्रों का मर्यादा में रहने से तात्पर्य है कि कभी भी किसी भी प्रकार चक्रवात या तूफान तथा किसी भी प्रकार की प्राकृतिक अनियमितता का भय नहीं रहता था| समुद्र को भी अपनी सीमा का ज्ञान था| अपनी परिधि के बाहर नहीं जाता था किसी भी तरह का विध्वंस नहीं होता था| किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा नहीं आती थी| श्रीराम के राज्य में जितने भी तालाब के वे सभी कमल के फूलों से भरे हुए थे| देखने के लिए मनोहारी दृश्य प्राकृतिक सताए तथा नैसर्गिक अनुभूति आदि का सुख प्राप्त था;स्पष्ट है कि जब घर परिवार धन-धान्य से परिपूर्ण हो| कृषक पर्याप्त फसलें उगाता हो पशु-पक्षी स्वस्थ हों, भौगोलिक विभिन्नता होते हुए भी सभी प्रकार के सुख प्राप्त थे| पीने के लिए स्वच्छ जल ग्रहण करने के लिए शुद्ध खाद्य तथा शुद्ध वायु प्राप्त हो तो दसों दिशाओं के समस्त विभागों में हर्ष उल्लास तथा प्रसन्नता का ही वास होगा कितना अच्छा लग रहा है? फसल नहीं है एक राजा के रूप में सिंहासन पर बैठना;प्रजा को सभी सुविधाएं तथा उसके अधिकार उपलब्ध करवाना| यह अपने आप में ही चुनौती भरा कार्य सफलतापूर्वक कर ले जाए तो वह अवश्य ही जनसेवक होगा ताजमहल की छांव में बैठकर उपलब्ध नहीं करवाया था । इसके लिए सतत-प्रयास तथा हे निष्ठा होनी चाहिए सभी सभी प्रकार का वैभव सुख सुविधाएं उन्होंने अपनी प्रजा को उपलब्ध करवाएं| अपने सभी दायित्वों का निर्वहन एक सेवक के रूप में सेवा भाव से किया, राजा बनकर आदेश देने से श्रेयस्कर उन्होंने दास बनकर सेवा करना समझा |

---

८५ - उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ८५६

बिधु मही पूर मयूखन्हि रवितप जेतनेही काज ||
मांगे बारिद देहि जल रामचंद्र के राज || ८६

रामचंद्र जी के राज्य में चंद्रमा अपनी किरणों से पृथ्वी को पूर्ण कर देते हैं सूर्य उतना ही तपते हैं जितने की आवश्यकता होती है तथा मेघ मांगने से ही जल दे देते हैं अर्थात जितनी वर्षा होनी चाहिए उतनी ही वर्षा होती है| किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा का सामना राम राज्य में नहीं करना पड़ता था | सब कुछ संयमित था जल की आपूर्ति भी मांग के अनुसार होती थी अर्थात वर्षा न बहुत कम होती थी न बहुत ज्यादा होती थी| सूर्य तथा चंद्रमा से पर्याप्त ऊर्जा मिलती थी| सूर्य की तपिश इतनी नहीं थी कि जीव जंतु जलने लगे वातावरण का तापमान अत्यधिक व्याकुल करने वाला हो जाए तथा चंद्रमा से निकलने वाली किसी भी किरण या प्रकाश का मनुष्य तथा अन्य जीवो पर दुष्प्रभाव पड़े अर्थात सूर्य चंद्रमा मेघ हितकारी रूप से राम राज्य में अपना कार्य करते थे समय के अनुसार वर्षा होती थी समय के अनुसार धूप निकलती थी समय के अनुसार चंद्रमा अपने शीतलता देता था अभी आकार या बाढ़ जैसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ा ऋतु परिवर्तन अपने कालचक्र के अनुसार होता था| प्रत्येक ऋतु के लिए जितनी अवधि सुनिश्चित थी उतनी ही अवधि में ऋतु अपना चक्र पूरा करती थी अर्थात पर्यावरण और वातावरण दोनों ही सुखद रहता होगा प्रकृति से किसी भी प्रकार की छेड़छाड़ नहीं की जाती होगी प्रकृति के नियम के विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया जाता होगा|

जातरूप मनि रचित अटारी | नाना रंग रुचिर गच ढारी ||
पुर चहुं पास कोट अतिसुंदर | रचे कंगूरा रंग रंग बर || ८७

स्वर्ण और रत्नों से बनी हुई अटारिया हैं उनमें अनेक रंगो की फर्शें हैं| नगर के चारों ओर अत्यंत सुंदरपरकोटा बना है| जिस पर सुंदर-सुंदर रंग-बिरंगे कंगूरे बने हैं| पंक्तियों के अनुसार राम जी के राज्य में सभी लोग धन-धान्य से परिपूर्ण थे उनके घर कलात्मकता से भरे हुए थे वास्तु कला का स्तर उत्कृष्ट महलों की सुंदरता तथा नगर के चारों ओर निर्मित सुंदर परकोटे और उन पर की गई कारीगरी देखते ही बनती थी| महलों के तल से लेकर छतों तक सभी में वास्तुकला की दक्षता झलकती थी| धनधान्य की किसी भी प्रकार की कोई कमी नहीं थी| अतःभवनों तथा नगर की चारदीवारी का निर्माण अत्यधिक सुदृढ़ तथा समृद्धशाली था| घरों में सभी प्रकार का वैभव तथा संपन्नता थी| वास्तु कला मे मानचित्र से लेकर सुदृढ़ता तक का ध्यान रखा जाता था | सभी प्रकार से सक्षम कारीगर कार्य करते होंगे अर्थात वास्तुकला के क्षेत्र में भी रामराज्य समुन्नत था कथा रामचंद्र जी द्वारा इसको अवश्य ही प्रोत्साहन मिलता रहा होगा| उत्कृष्ट कलाकृतियों तथा सुदृढ़ निर्माण के द्वारा नगर में सुंदर महल बने, जिनकी वास्तुकला देखने वाली अत्यंत रमणीय हो और ऐसा तभी हो सकता है जब उस राज्य में वास्तु कला को महत्व दिया गया हो इस क्षेत्र में नित नए नए कार्य हों क्योंकि यह प्रत्येक राजा का कर्तव्य होता है कि वो अपने राज्य को सुंदर एवं सशक्त बनाए;वास्तु कला में केवल और केवल सुंदरता ही नहीं बल्कि भवन के सुदृढ़ता का भी ध्यान रखा जाता है| वास्तु कला में एक यह भी आयाम होता है कि किसी तरह का निर्माण प्रकृति के विरुद्ध न हो| प्रकृति के संसाधनों का दोहन करके न हो वही निर्माण उचित निर्माण कहलाता है और यहां तो हम देखते हैं कि श्रीराम के राज्य में प्राकृतिक-संपदा, खान-पान, धन्य-धान बाजार वास्तु कला पर्यावरण शिक्षा अध्यात्मिक शिक्षा सभी पर समान रूप से ध्यान दिया गया तो यह कार्य महल के अंदर बैठे-बैठे तो नहीं हो सकता;इसके लिए श्री राम दिन-रात कार्य करते थे|

८६,८७ -उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित,पृष्ठ संख्या ८५६,८५९

उनकी प्रजा का कोई कोई भी व्यक्ति उनसे कभी भी मिल सकता था;अपने मन की बात कह सकता अर्थात श्रीराम ने प्रजा का विश्वास तथा मान-सम्मान किया अर्जित नहीं तो इतना सरल नहीं होता किसी साधारण जनमानस का कभी भी अपने राज्य के राजा से मिल लेना उससे अपने मन की बात कर लेना|

नव ग्रह निकर अनिक बनाई | जनु घेरी अमरावती आई ||
मही बहु रंग रचित गच काचा | जो बिलोकि मुनीबर मन नाचा || ८८

नवग्रहों ने बड़ी भारी सेना बनाकर अमरावती को आकर घेर लिया हो पृथ्वी पर अनेक दिव्य रंगो के रत्नों की रंगोली बनाई गई है| जिसे देखकर श्रेष्ठ मुनियों के मन भी नाच उठते हैं| दी गई पंक्तियों का भाव यह है कि श्री राम के राज्य की शोभा अतिरमणीय की वास्तु कला घर तथा महलों की संरचना सब कुछ देख कर ऐसा लगता था;जैसे ब्रह्मांड में व्याप्त नौ ग्रह पृथ्वी पर उतर आए हैं, जिनके साथ उनकी बड़ी विशाल सेना भी हैं तथा रंग-बिरंगी वस्तुओं से सुशोभित राम के राज्य को बनाया हो| जिनकी उपस्थिति मात्र से हैं क्षेत्र शोभायमान हो जाता हो अर्थात् संरचना से लेकर रखरखाव सभी कार्य पूर्ण तत्परता से किए जाते हैं| जहां किसी भी प्रकार की त्रुटि की कोई संभावना न हो सदैव उत्तम कार्यों का प्रदर्शन किया जाता होगा |

धवल धाम ऊपर नभ चुंबत | कलश मनहूँ रबि ससि दुति निंदत |
मन बहु रचित झरोखा भ्राजहि | गृह गृह प्रति मनि दीप बिराजही || ८९

उज्जवल महल ऊपर आकाश को चूम रहे हैं| महलों पर बने हुए दिव्य कलश मानो सूर्य चंद्रमा के प्रकाश की भी निंदा कर रहे हैं महलों में बहुत से मणियों से सुसज्जित झरोखे सुशोभित हैं तथा घर घर में मणियों के दीपक शोभा पा रहे हैं| इन पंक्तियों से उत्कृष्ट कलात्मकता का परिचय प्राप्त होता है जहां की चित्रकारी तथा पच्चीकारी विभिन्न प्रकार की मणियों और बहुमूल्य पत्थरों से अलंकृत महल तथा भवनों की उपस्थिति यह बताती है| श्री राम के राज्य में कला का कितना महत्व था कला विहीन जीवन या कला से विरक्त जीवन रंगहीन होता है और जो राजा अपने राज्य में विभिन्न कलाओं को प्रोत्साहन देते हैं उनका राज्य अपने आप में श्रेष्ठ राज्य होता है उसके लिए कलाकारों का आदर मान सम्मान होना उनके प्रयोग में आने वाली वस्तुओं की उपलब्धि प्रायोगिक ज्ञान हेतु प्रयोगशालाओं का तथा समाज के प्रत्येक भाग का एक दूसरे के प्रति सहयोग की भावना होना आदि पहलू हैं जो ये तय करते हैं कि राजा इतने सामंजस्य के साथ नाराज चला रहे हैं क्योंकि किसी एक वर्ग का उत्कृष्ट तथा दूसरे वर्ग का निकृष्ट होना भी राजा के प्रति संदेह की स्थिति उत्पन्न करता है भवनों की ऊंचाई उनका विशाल होना अलंकृत होना सुसज्जित होना झरोखा होना जिससे यह पता चलता है कि महलों में वायु तथा प्रकाश सुगमता से अपना मार्ग तय करते थे| महलों के अंदर प्राकृतिक प्रकाश तथा हवा का आवागमन था, जो कि उत्कृष्ट वास्तु का उदाहरण है|

मनिदीप राजहि भवन भ्राजहि ही देहरी विद्रुम रची |
भीती बिरंचि विरचित कनक मणि मरकत खर्ची ||
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे |
प्रति द्वार द्वार कपाट पूर्ण बनाइ बहु बज्रन्हि खचे || ९०

८८,८९,९० -उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित,पृष्ठ संख्या ८५९

घरों में मणियों के दीपक शोभा दे रहे हैं| मूँगों की बनी हुई देहरिया चमक रही हैं| रत्नों से जड़े हुए खंभे हैं पन्नों से जुड़ी हुई सोने की दीवारें ऐसी सुंदर हैं मानो ब्रह्मा जी ने खासतौर से बनाई हो| महान सुंदर मनोहर तथा विशाल है| उनमें सुंदर स्फटिक के आंगन बने हैं| प्रत्येक द्वार पर बहुत से हीरो से जड़े हुए सोने के किवाड़ हैं| वास्तु कला में भव्यता एवं बहुमूल्य रत्नों का प्रयोग अपने आप में यह बात सिद्ध करता है इसे राम के राज्य में धन-संपदा की किसी भी प्रकार की कमी नहीं थी| समाज के सभी वर्ग अपना -अपना कार्य करते थे| अपनी अपनी आजीविका का प्रबंध करते थे| सामाजिक स्वास्थ्य शिक्षा व्यापार आदि सभी उन्नति पर थे; इसी कारण धन्य धन्य की किसी प्रकार की कमी नहीं थी प्रजाजनों के सुख वैभव तथा उनको मिलने वाले संसाधनों का प्रबंध किया जाता था|

चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बनाइ |
रामचरित जे निरख मुनि ते मन लेही चोराइ || ९१

घर में सुंदर चित्रशालाए हैं जिनमें श्री राम के चरित्र बड़ी सुंदरता के साथ सवार कर अंकित किए हुए हैं जिन्हें मुनि देखते हैं तो वे उनके भी चित्त को चुरा लेते हैं| श्री रामचंद्र जी द्वारा किए गए कार्यों को उनके चरित्र की सुंदरता को उनके राज्य के लोग अपने घरों की दीवारों पर उकेर लेते थे और यह कार्य प्रेम वस्तु किया जा सकता है अर्थात् श्री राम के द्वारा किए गए प्रजाहित के सभी कार्यों को प्रजाजन भली प्रकार से जानते थे तथा उसके लाभ ले रहे थे यह उनका श्री राम के प्रति प्रेम था कि वह उनके चरित्रों का वर्णन अपने घरों की चित्र शालाओं में किया करते थे

सुमन बाटिका सब ही लगाई | विविध भाँति करि जतन बनाई ||
लता ललित बहु जाति सुहाई | फूलहिं सदा बसंत कि नाई || ९२

सभी लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार के पुष्प वाटिका लगा रखे हैं जिनमें बहुत जातियों के सुंदर-सुंदर लताएं जिनमें वसंत की तरह फूल लगे हुए हैं अर्थात् वे सदा ही वसंत की तरह फलती-फूलती रहती हैं| पंक्तियां बताती हैं किस प्रकार सभी लोग पर्यावरण प्रकृति से जुड़े हुए था| उनके राज्य में सभी घरों में छोटे-छोटे बगीचे लगे हुए थे जिसमें विभिन्न प्रकार के फूल और फलों के पेड़ सुसज्जित ऋतु चक्र सुनिश्चित होने के कारण बदलते रहते थे इससे ऐसा प्रतीत होता था वसंतोत्सव चल रहा हो|

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर | मारुति त्रिविध सदा बहु सुंदर |
नाना खग बालकन्ही जिआए | बोलत मधुर उड़ात सुहाए || ९३

भवरे मनोहर स्वर से गुजार करते हैं तथा तीनों प्रकार के सुंदर वायु बहती रहती है बालकों ने बहुत से पक्षी पाल रखे हैं जो मधुर बोली बोलते हैं और उड़ने में सुंदर लगते हैं | मनोहर वाटिका में सुंदर-सुंदर कीट पतंगे जैसे भवरे तितली आदि अपने स्वरों से मंत्रमुग्ध किया करते थे| समय के अनुकूल बहा करती थी पक्षियों को परतंत्र करके नहीं अपितु अपने बगीचे में पाल कर रखा जाता था जिनकी मधुर वाणी वातावरण गुंजायमान होता और बगीचे में इधर से उधर उड़ते हुए रंग-बिरंगे पक्षी देखने में बहुत सुंदर लगते थे|

मोर हंस सारस पारावत | भवननि पर शोभा अति पावत ||
जंह-तंह देखाहि निज परिछाही | बहुविध कूंजही नृत्य कराही || ९४

९१,९२ ,९३ ,९४ - उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी ,पृष्ठ संख्या ८६०

मोर हंस सारस कबूतर घरों के ऊपर बड़ी ही शोभा पाते हैं| विपक्षी जहां-तहां अपनी परछाई देखकर बहुत प्रकार से मधुर बोली बोलते और नृत्य करते हैं| विभिन्न प्रकार के पक्षियों का डेरा घरों की छत हुआ करती थी पक्षी निर्भीक होकर उन छतों पर विचरण किया करते थे| विभिन्न प्रकार से मधुर वाणी में अपने स्वर वातावरण में मिठास के समान खोल देते थे और उनके द्वारा किए जाने वाले सुंदर नृत्य की शोभा देखते ही बनती थी अर्थात श्री राम के राज्य में पशु एवं पक्षियों थे कोई भी अनावश्यक रूप से किसी भी पशु या पक्षी का वध अथवा आखेट नहीं किया करता था सभी पशु पक्षियों को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी| सभी मनुष्य उनकी सेवा किया करते थे उनके लिए भोजन उपलब्ध कराते थे तथा उनकी रक्षा के लिए तत्पर रहते थे इसी कारण निर्भीक होकर नगरों में वास करते थे|

बाजार रुचिर न बनाइ बरनत वस्तु बिनु गथ पाइए |
जहां भूप रमानिवास तह की संपदा किमी गाइए ||
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहूँ कुबेर ते |
सब सुखी सब सच्चरित्र सुंदर नर नारी सिसु जरठ जे || ९५

नगर बहुत सुंदर हैं जिनका वर्णन भी नहीं किया जा सकता | वस्तु बिना मूल्य के ही मिलती हैं अर्थात वस्तुओं का स्तर उनकी गुणवत्ता उत्कृष्ट है उनको खरीदने के लिए जो मोल लगाया गया है; उनकी गुणवत्ता के आगे बहुत कम है बजाज यानी कपड़े का व्यापार करने वाले रुपए पैसे का लेन-देन करने वाले व्यापारी वहां बैठे हुए ऐसे जान पड़ते हैं जैसे अनेक कुबेर बैठे हैं श्री पुरुष बच्चे और बूढ़े जो भी हैं सभी सुखी सदाचारी तथा सुंदर हैं सभी व्यापारी विश्वसनीय तथा पूर्ण धर्म निष्ठा से व्यापार करने वाले थे किसी को भी किसी प्रकार का लोभ या लालसा नहीं थी सभी सामग्रियों की गुणवत्ता उत्कृष्ट थी अर्थात उच्चतम कोटि का सामान तैयार किया जाता उत्कृष्ट होने के बाद भी उन वस्तुओं का मूल्य सामान्य होता था| समाज के प्रत्येक वर्ग की खरीदने की क्षमता को स्वीकार करता था| अब किसी के भी पास किसी चीज की कमी नहीं थी चाहे वह पहनने के लिए वस्त्र या घर के उपयोग में आने वाली वस्तु में श्री राम के राज्य में निवास करने वाले प्रत्येक नागरिक चरित्र से सुंदर थे क्योंकि सदाचार नाम का उन सभी व्यक्तियों में विद्यमान था| एक कुशलशासक अपनी प्रजा के अंतर्मन में विश्वसनीयता कर्तव्यनिष्ठा मानवता आदि गुणों को प्रेषित कर पाए यह उसकी सबसे बड़ी सफलता है और श्री राम ने इसमें बहुत बड़ी सफलता अर्जित की तभी उनके राज्य का उदाहरण सदैव ही दिया जाता है सरल लग रहे हैं| इनको क्रियान्वित करना एवं कठोर परिश्रम हर कार्य संभव है कि श्रीराम के जीवन से हमें यह बात सत्यापित लगती है| एक सेवक अपने स्वामी को समस्त प्रकार के सुख तथा सेवाएं प्रदान करना चाहता है ठीक उसी प्रकार राजा रामचंद्र जी ने अपनी प्रजा को समस्त सुख- वैभव, संपदा, आरोग्य ,रक्षा, शक्ति, शिक्षा आदि सेवाएं प्रदान की |

उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गंभीर |
बांधे घाट मनोहर स्वल्प अंक नहीं तीर || ९६

नगर की उत्तर दिशा में सरयू जी बह रही हैं, जिसका जल निर्मल तथा गहरा है मनोहर घाट बंधे हुए हैं| जिन के किनारों पर जरा भी कीचड़ नहीं है| नगर के उत्तर दिशा में सरयू जी का बहना उनका जल निर्मल तथा गहरा होना अर्थात जल की पारदर्शिता इतनी थी कि जल की गहराइयों को देखा जा सकता था|

---

९५ ,९६ -उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ८६१

जल निर्मल अर्थात पवित्र और नदी के किनारे बने हुए घाट अत्यधिक स्वच्छ है किसी भी प्रकार का किसी भी प्रकार के अपशिष्ट पदार्थों का नदी के घाट के किनारे एकत्र ना होना कीचड़ अथवा किसी भी प्रकार की अस्वच्छता का न होना इस बात को दर्शाता है कि स्वच्छता का बहुत ही महत्व था नदियों के जल का निर्मल होना इस बात को प्रदर्शित करता है कि किसी भी प्रकार का अपशिष्ट पदार्थ नदियों में नहीं प्रवाहित किया जाता था न ही उनके जल का किसी भी प्रकार से दुरुपयोग होता था न ही घाटों पर लोग किसी भी तरह का ऐसा क्रियाकलाप करते थे इससे नदी का जल दूषित हो या घाटों पर स्वच्छता पहले अनिवार्यता के रूप में पारित की जाती होगी जन जागृति तथा स्वेच्छा से स्वच्छता को प्रसारित किया जाता होगा स्वच्छता के महत्व का भी ज्ञान होगा| कोई न कोई विभिन्न कार्यों को श्रीराम के संरक्षण में अवश्य देखता होगा कि सभी नगर वासियों जीव जंतुओं को ग्रहण करने हेतु पत्र निर्मल जल में जल में किसी भी प्रकार का प्रदूषण ना हो जल का किसी भी प्रकार का दुरुपयोग न हो इसके साथ साथ नदी के किनारे बने घाटों की भी स्वच्छता का प्रमुखता से ध्यान दिया जाता होगा ताकि लोगों को असुविधा न हो या किसी भी प्रकार के रोगों का संक्रमण न हो| स्वस्थ रहने के लिए स्वच्छता एक अनिवार्य नियम है जिसका प्रयोग करते हुए हम जीवाणु विषाणु हो को अपने शरीर तथा अपने समाज से दूर रखने में सफल हो सकते हैं और इस प्रकार की जाती होगी और उनके दिनचर्या का एक अनिवार्य अंग रहा होगा|

दूरी फराक रुचिर सो घाटा | जह जल पियही बाजी गज ठाटा ||
पनिघट परम मनोहर नाना | तहाँ न पुरुष करहिं अस नाना || ९७

अलग कुछ दूरी पर वे सुंदर घाट हैं, जहां घोड़ों और हाथियों के समूह जल पिया करते हैं| पानी भरने के लिए बहुत से घाट हैं| जहां केवल स्त्रियां ही जा सकती हैं जो बड़े ही मनोहर हैं| वहाँ पुरुष स्नान के लिए नहीं जाते| सरयू जी के घाटों में विभिन्न प्रकार के घाटों का निर्माण करवाया गया था जहां पर सभी की सुविधा का ध्यान रखा गया था| जानवरों के पानी पीने के लिए ही विशेष घाटों का निर्माण किया गया था विशेष पर यात्रा करने वाले हाथी और घोड़ों के समूह के लिए क्योंकि उस समय हाथी तथा घोड़ों पर ही लोग लंबी यात्रा किया करते थे| ऐसे में उनको जल की आवश्यकता अवश्य होती होगी पशुओं के लिए भी समुचित प्रबंध किए गए थे | स्त्रियों के लिए विशेष घाटों की व्यवस्था की गई थी जो देखने में अत्यंत मनोहर थे ;उनके लिए विशेष साज-सज्जा की व्यवस्था भी की गई होगी, वहाँ पुरुषों का जाना वर्जित था केवल स्त्रियां हैं वहां जाकर स्नान आदि कर सकती थी| इसमें देखने वाली बात यह भी है हर समाज परिवार से दूर एक ऐसे स्थान की भी व्यवस्था की गई थी जहां विशेषकर स्त्रियां मिल बैठकर बातचीत करके अपने मन की कथा कहानी दूसरों के साथ बांट सकते थी| परामर्श ले सकती थी सहायता कर सकती थी| एक दूसरे का मार्गदर्शन कर सकते थे| इसी प्रकार एक दूसरे की खोज खबर भी मिलती रहती होगी नगर में आपस में एक दूसरे के साथ संपर्क स्थापित करने के लिए भी यह एक बड़ा अच्छा प्रबंध किया गया था| जहां स्त्रियां इच्छा से अपना कुछ समय व्यतीत करती होंगी प्रयास कि हम जितने भी सराहना करें वह कम है एक ही स्त्रोत एक ही साधन के लिए अलग-अलग स्तरों पर व्यवस्था करना अपने आप में अनुपम प्रबंध का अद्‌वितीय उदाहरण है रामराज्य|

राजघाट सब बिधि सुंदर बर | मज्जही तहाँ बरन चारिउ नर |
तीर तीर देवन्ह के मंदिर| चहुं दिसी तिन्ह के उप वन सुंदर || ९८

९७,९८ -उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्‌वारा रचित पृष्ठ संख्या ८६१

राजघाट सब प्रकार से सुंदर तथा श्रेष्ठ हैं, जहाँ चारों वर्णों के पुरुष स्नान करते हैं| सरयू जी के किनारे किनारे देवताओं के मंदिर हैं जिनके चारों ओर सुंदर उपवन स्थापित हैं| उपर्युक्त पंक्तियों में ऐसे विशेष घाटों के बारे में बताया गया है जहां चारों वर्णों के पुरुष स्नान करते हैं अर्थात सभी के प्रति समान भाव प्रदर्शित किया गया सामूहिक स्नान तथा आपस में मिलने का एक अच्छा साधन थे, राजघाट| यहां हम समाजवाद की भावना की प्रबलता अनुभूति कर सकते हैं| स्नान आदि के उपरांत किनारे बने शिवजी के मंदिरों में पुरुष समाज पूजा-अर्चना करता था| उन मंदिरों के आस-पास सुंदर भवनों की स्थापना की गई थी| हरे-भरे वृक्ष, लताएं अनेक प्रकार के फलों से फूलों से लदे हुए वृक्षों तथा उनकी टहनियों से वे दृश्य अत्यंत मनोरम लगते होंगे|| शारीरिक शुद्धि पूजा अर्चना के द्वारा आध्यात्मिक वन में विचरण करने के कारण एक प्रकार का आत्मिक सुख जिससे चित्त शांत रहता होगा एकाग्रता बढ़ती होगी| प्रकृति के प्रति प्रेम जागृत होता होगा;अपने दायित्वों का आभास होता होगा| आपस में सौहार्दपूर्ण वातावरण तथा सहयोग की भावना का विकास होता होगा श्री राम जो कि राजा के रूप में अपनी जनता के सेवक हैं| उनके द्वारा किए गए इन अनुपम अद्वितीय प्रबंधों को देखकर;अवश्य ही प्रजाजनों के हृदय में श्री राम के प्रति अनंत प्रेम भाव जागृत होता होगा एक राजा के प्रति आदर का भाव जागृत होना अलग बात है लेकिन एक राजा के प्रति प्रेम का भाग जागृत होना प्रजाजनों के हृदय में में विशेष स्थान की अनुभूति करवाता है|

कहुँ-कहुँ सरिता तीर उदासी | बसहिं ज्ञान मुनि सन्यासी ||
तीर तीर तुलसी सुहाई | वृंद वृंद बहु मुनिन्ह लगाई || ९९

नदी के किनारे कहीं-कहीं विरक्त,ज्ञान-परायण मुनि, सन्यासी निवास करते हैं| मुनियों ने जगह-जगह तुलसी के पौधे लगा रखे हैं।सरयू नदी की भव्यता तथा आध्यात्मिक वातावरण जो मनुष्य को परम सुख की अनुभूति करवाते हैं| सरयू नदी का किनारा अपने आप में एक मोहक स्थान जो नदी के शीतल निर्मल जल से स्वयं को अलंकृत करता है तुलसी के पौधों की उपस्थिति के कारण वातावरण अपने आप में ही पावन हो जाता है| तुलसी के पौधों से चलकर आने वाली शीतल पवन उस घाट को पवित्र कर देती है वहां पर जाकर अवश्य ही ऐसा लगता होगा किसी पावन पवित्र धाम में आ गए हैं प्रकृति तथा अध्यात्म का घनिष्ठ संबंध है अध्यात्म की प्राप्ति हेतु जो मार्ग जाता है वह प्रकृति से होकर ही जाता है| प्रकृति के गुणों को धारण करने के उपरांत मनुष्य परोपकारी एवं सहनशील हो जाता है वातावरण के संसर्ग से स्वयं में इतने सुख एवं शांति की अनुभूति होती होगी इसका अनुमान लगाना इतना भी सरल नहीं है| स्वयं की अनुभूति तथा अभिव्यक्ति ऐसे ही वातावरण में सृजित होती है श्री राम के राज्य में कोई भी व्यवस्था आधारहीन नहीं रही प्रत्येक नदी घाट हुए तालाब आदि से लेकर नगर के भवन आदि विद्या तथा संरचनाएं सुसज्जित एवं सुव्यवस्थित थी श्रीराम अपने प्रजाजनों का ध्यान परिजनों के समान करते थे ताकि पृथ्वी के व्यक्ति को प्रत्येक वर्ण के व्यक्ति को उसका लाभ मिल सके वह सदैव ही प्रयासरत रहते थे अनुशासित एवं सौहार्दपूर्ण राज्य व्यवस्था चलती रहे|

पुर सोभा कछु बरनी ना जाई | बाहेर नगर परम रुचिराई ||
देखत पुरी अखिल अघ भागा | वन उपवन बापिका तड़ागा || १००

नगर की शोभा तो कुछ कहीं नहीं जाती, नगर के बाहर भी परम सुंदरता है श्री अयोध्या पुरी के दर्शन करते ही संपूर्ण पाप भाग जाते हैं वहां वन, उपवन ,बावलिया तथा तालाब सुशोभित हैं |

९९,१०० -उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदासजी ,पृष्ठ संख्या ८६०, ८६१

नगर बड़े ही सुव्यवस्थित प्रकार से सुसज्जित थे नगर में सभी प्रकार की व्यवस्था थी|सभी योजनाएं सुनियोजित रूप से लागू थी श्रीराम के कार्यकाल में नगर को प्रत्येक स्तर पर सशक्त समृत एवंसफल बनाने का अथक प्रयास किया गया सभी व्यवस्थाएं सुचारू रूप से संचालित होती थी| सारे विभागों का आपस में सामंजस्य होगा प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्य में दक्ष होगा आध्यात्मिक ज्ञान से भरे हुए नगरवासी और जहां तक दृष्टि जाते हो वहां तक वन, उपवन उनमें वृक्षों पर बैठते उड़ते पक्षी फलों से लदे हुए वृक्षों की सुंदरता तथा पुष्पों से सुसज्जित पौधे वातावरण को मनोरम बनाते थे| राज्य में रहने वाले लोगों के अतिरिक्त आने जाने वाले लोगों के लिए भी तालाब तथा अन्य जल स्रोतों का प्रबंध था ताकि मनुष्य से लेकर जीव-जंतु तक किसी को किसी भी प्रकार की असुविधा न हो| नगर की आंतरिक एवं बाह्य सज्जा उत्कृष्ट थी नगर के अंदर के दृश्यों के साथ साथ नगर के बाहर के दृश्य भी रमणीय थे तथा यहां वास करके आत्मिक सुख के अनुभूति होती थी| यदि हम राज्य की सुंदरता तथा सुविधा दोनों का आकलन करें तो स्वयं ही आभास हो जाता है कि एक राजा का प्रजा के उत्थान में कितना महत्वपूर्ण स्थान है;जहां स्वयं राजा के रूप में विराजमान श्री राम सेवक बनकर उनके राज्य के प्रत्येक जीवधारी को सभी प्रकार क सुविधाएं देने के लिए सदैव तत्पर रहे|

बापी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोह ही ||
सोपानसुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहही ||
बहुरंग कंज अनेक खग कुजंही मधुप गुंजारही ||
आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारही || १०१

अनुपम बावलिया, तालाब तथा मनोहर एवं विशाल कुँए शोभा दे रहे हैं| जिनकी सुंदर रत्नों सेजड़ी हुई सीढ़ियां तथा निर्मल जल देखकर देवताओं के साथ साथ मुनि भी मोहित हो जाते हैं तालाबों में अनेक रंगों के कमल खिल रहे हैं| अनेक प्रकार के पक्षी कूज रहे हैं भवरे गुंजार कर रहे हैं| परम-रमणीय बगीचे कोयल आदि पक्षियों की मनोहर बोली से राह चलने वालों को भी बुलाते थे| प्रस्तुत पंक्तियों में श्रीराम द्वारा स्थापित बावलियों, तालाबों तथा कुओं के साथ-साथ विशेष सौंदर्य लिए हुए घाटों भी का वर्णन किया गया है| ये सभी उपयोगी स्थापत्य कला के अनुपम उदाहरण मानव के साथ पशु पक्षियों तथा जीव-जंतुओं के लिए बहु उपयोगी रहे हैं | प्रत्येक भवन घाट उपवन तालाब आदि को इस प्रकार निर्मित किया गया कि पर्यावरण का संतुलन बना रहे प्रकृति की प्रतिकृति का अस्तित्व पूर्णत: विद्यमान रहे | अनेक प्रकार के पुष्पों का उपवन में खिलना रंग बिरंगे पक्षियों का सुंदर-सुंदर वृक्षों पर बैठना मधुर वाणी में गीत गाना किसका मन मोह लेते | देवता मनुष्य तो इन कलाकृतियों भवनों आदि पर रीझते ही थे परंतु ऋषि मुनि भी इन संरचनाओं पर मोहित हो जाते थे |प्रत्येक भवन वन उपवन ऐसे लगते थे जैसे स्वयं विश्वकर्मा जी ने स्वयं इनकी रचना की हो| नयनों को विशेष सुख देने वाले पशु पक्षियों को भी सुंदर लगने वाले श्री राम के राज्य में सब कुछ अत्यधिक रमणीय था

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक | कहहु राम रघुपति जन पालक ||
राज दुआर सकल विधि चारू | बिथी चौहट रुचिर बाजारू || १०२

बालक अपने पाले हुए तोता मैना को पाठ पढ़ाते हैं कि कहो- 'राम' 'रघुपति' 'जनपालक' | राजद्वार सब प्रकार से सुंदर है| गलियां चौराहे बाजार सभी अति सुंदर हैं |किसी राजा की श्रेष्ठता , कर्मठता प्रजा की उसके प्रति विश्वसनीयता ,ऐसे गुण हैं जो किसी भी राजा को लोकप्रिय जन-नायक के रूप में परिवर्तित कर देते हैं|

---

१०१ ,१०२ - उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ८६१,८६३

राजा के ये गुण उसका ये विश्वास प्रजा का उसके प्रति अत्यधिक प्रेम होना आदि पारंपरिक धरोहर के रूप में नहीं मिलते अपितु अर्जित किए जाते हैं राजा तथा प्रजा के संबंधों में इतनी प्रगाढ़ता कभी कहीं देखने को नहीं मिली जो राजा अपना जीवन अपना आचरण यहां तक कि अपने परिवार को भी प्रजा के अनुकूल व्यवस्थित रखता हो संचालित करता हो , वह एक जनसेवक ही तो हो सकता है यदि प्रजा के रूप में नन्हे-मुन्ने बालक अपने पालतू पक्षियों को अपने राजा का नाम तो सम्मान लेना सिखाएं तो इस बात को स्वतः ही प्रमाण मिल जाता है जय श्री राम की उनके प्रजा के प्रति किस प्रकार की विचारधारा रही होगी वे कितने लोकप्रिय रहे होंगे कि उनके नाम का स्मरण बालक तो बालक उसके द्वारा पाले गए पक्षी भी करते हैं |

ताकि कहीं न कहीं उनके नाम और उनके कर्म का प्रभाव सब पर पड़ता रहे जो सबके लिए अनुकरणीय हों उनका कार्य उनका समर्पण उनका त्याग बताने के लिए शब्द भी कम पड़ जाते हैं लेकिन उनकी भावनाओं को समझने के लिए जन्म भी कम पड़ जाते हैं मनुष्य कहीं न कहीं किसी न किसी रूप स्वार्थी हो जाता है कहीं ना कहीं विवश हो जाता है कभी ना कभी लाचार हो जाता है और कभी तो परिस्थिति के वर्क गलत निर्णय भी ले लेता लेकिन जो इन सब को पार कर जाए| वह श्री राम एक राजा के रूप में अपने प्रजा के प्रति सर्वस्व न्योछावर करने वाले समर्पित करने एक ऐसे समाज के संरचना करने वाले जहां समरसता की गंगा बहती जहां सद्भाव की शीतल वायु बहती जहां सहयोग की वाणी बोली जाती हो रामराज्य ही हो सकता है और वह जनसेवक केवल श्रीराम हो सकते हैं जीवन की अवधारणा अनुपम उदाहरण है प्रजा को राजा के आदेशानुसार चलना पड़ता है परन्तु हमारे गौरवशाली इतिहास के एकमात्र ऐसे राजा थे जो प्रजा के अनुरूप चलते थे स्वयं को प्रजा के लाभ हानि से जुड़ा देखते थे| वे अपने परिजनों को त्याग के लिए कह सकते थे लेकिन प्रजा को नहीं| जो राजा, प्रजा के खान पान रहन सहन व्यापार सुरक्षा संस्कृति अध्यात्म आदि का मुख्य रुप से ध्यान देता हो| प्रकृति, कृषि, उद्योग धंधे-समाज की कार्यपद्धती न जाने कितने ऐसे विषय हैं; जिनका संचालन श्री राम ने कुशलता पूर्वक किया वे अपनी प्रजा को सभी प्रकार के सुख देना चाहते थे आदर, मान-सम्मान देना चाहते थे आचरण तथा सदाचार के एक उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे|

एहिविधि नगर नारि नर करहीं राम गुन गान |
सानुकूल सब पर रहहिं संत कृपा निधान || १०३

इस प्रकार नगर के स्त्री-पुरुष सभी श्री राम का गुणगान करते हैं कृपा निधान श्रीराम सब पर अत्यंत प्रसन्न रहते हैं| पिता का अर्थ होता है ,अपने परिवार की अपनी संतानों की रक्षा करने वाला उनका भरण-पोषण करने वाला उसी प्रकार एक राजा के लिए उसका अपना परिवार तथा उसकी प्रजा एक समान होते हैं एक राजा सदैव अपने व्यक्तिगत संबंधों तथा स्वार्थों को नकारते हुए राजधर्म का पालन करता है| उसके लिए राजधर्म सर्वोपरि होता है व्यैक्तिक धर्म नहीं संपूर्ण प्रजा के प्रति राजधर्म का पालन तथा राज्य धर्म में एक राजा चाहे वह कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो? उसका धर्म है अपनी प्रजा के दुर्बल नरवर लोगों की बातें सुनना और उनके मान-सम्मान का ध्यान रखना लोक व्यवस्था में संतोष और प्रजा रंजन के लिए इसे अपने व्यक्तिगत सुख का त्याग भी करना पड़े तो एक राजा को पीछे नहीं हटना चाहिए इसी क्रम में हम श्री राम के व्यवहार तथा आचरण को देखते हैं उन्होंने निर्मल व्यक्ति के मन की व्यथा तथा उसके मान सम्मान का ध्यान रखा इसी कारण उनके राज्य में मनुष्य से लेकर पशु-पक्षी तक सभी मान सम्मान के साथ अपने अधिकारों को क्रियान्वित होता हुआ देखते थे उनके लिए श्रीराम के लिए व्यक्तिगत कुछ भी नहीं था| अपने समस्त प्रयास

१०३- उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ८६३

अपनी समस्त शक्ति को केवल और केवल अपनी प्रजा के हित में लगा देते थे| वे अपनी प्रजा की समृद्धि एवं संपन्नता चाहते थे खानपान से लेकर मनुष्य की किसी भी आवश्यकता में किसी भी प्रकार की कमी नहीं रहने देना चाहते थे| सभी क्षेत्रों में उन्नति हेतु कार्य किए; सभी प्रकार के मानवीय गुणों के पक्षधर थे| मनुष्य के अंदर दया, प्रेम, सद्भाव, आध्यात्मिक-गुणवत्ता, मानवीय, संबंध-सहयोग की भावना आदि प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार में समावेश देखना चाहते थे| वे एक ऐसे राजा थे, जो अपनी प्रजा में मनुष्य के अतिरिक्त जीव-जंतु,

पेड़-पौधों विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों आदि का भी ध्यान रखते थे| उनके पालन के लिए भी स्वयं भी प्रतिबंध मानते थे| वे मानवता के गुण को सर्वोपरि रूप में स्थापित कर चुके थे| सभी को समानता के भाव से देखना तथा समान व्यवहार करना यह उनकी कार्य पद्धति का विशेष भाग था| व्यक्तिगत जीवन में भी उन्होंने इसी प्रकार के उदाहरण प्रस्तुत किए प्रत्येक जीव की आवश्यकता के प्रति वे संवेदनशील थे;अनेक प्रकार की कलाकृतियों को बढ़ावा देते थे| उनके राज्य में कलाकारों, विद्वानों, संगीतकारों एवं किसी भी क्षेत्र के विशेषज्ञों का विशेष आदर होता वे वीर पुरुषों की वीरता का सम्मान करते थे | महिलाओं बच्चों में तथा वृद्धों के प्रति विशेष सम्मान रखते थे| उनके स्वयं के आचरण से किसी को कोई कष्ट न हो| इसका उन्होंने आजीवन ध्यान रखा तथा अपने जीवन को एक जनसेवक के रूप में स्थापित किया| उनके राज्य में किसी भी जीव को किसी भी प्रकार का कोई कष्ट नहीं था| जीव-जगत के समस्त प्राणी निश्चिंत होकर अपना जीवन जी रहे थे क्योंकि उन्हें यह ज्ञात था कि श्री राम उन्हें कभी किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने देंगे |

मौर्य समाज के संस्थापक तथा राजनीतिज्ञ चातुर्य के धनी कौटिल्य के अनुसार कुशल राजा वही है;जो सदैव ही अपनी प्रजा के सुख तथा उसकी समृद्धि हेतु वचनबद्ध हो करबद्ध हो

प्रजासुखे सुखं राज्ञ: प्रजानां तु हिते हितं |
नात्मप्रियं हितं राज्ञ: प्रजानां तु प्रियं हितं || १०४

प्रजा के सुख में राजा का सुख निहित है| प्रजा के हित में ही उसे अपना हित दिखना चाहिए| जो स्वयं को प्रिय लगे उसमें राजा का हित नहीं होता उसका हित तो उसी में होता है| जो प्रजा को प्रिय लगे | एक कुशल राजा वही है| जो नित्य प्रति उद्यमशील होकर शासकीय व्यवहार संपन्न करें अर्थात् उद्यमशीलता ही संपन्नता का मूल है| उसके विपरीत उत्तम हीनता अर्थहीनता का कारण है| उद्यमशीलता के अभाव में पहले से जो प्राप्त है एवं भविष्य में जो प्राप्त हो पाता उन दोनों का ही न आज निश्चित है| उत्तम करने से ही वांछित फल प्राप्त होता है तथा उसी से आर्थिक संपन्नता मिलती है| एक कुशल राजा वही होता है, जो सतत उद्यमशीलता होते हुए अपनी प्रजा के सुख, वैभव ,संपन्नता, समस्त प्रकार से उसकी रक्षा आदि विषयों पर कार्य करता रहे| श्री राम इसी विचार के अंतर्गत सदैव उद्यमशील रहे और रामराज्य जैसे साम्राज्य को एक सशक्त उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया|

४.४ कुशल कूटनीतिज्ञ एवं सफल रणनीतिकार :-

श्री राम की कूटनीति एवं रणनीति के दर्शन हमें तभी से हो जाते हैं| जब से विश्वामित्र जी के साथ वन में रहने वाले ऋषि-मुनियों तथा वनवासियों की रक्षा हेतु वन के लिए जाते हैं| उस समय से प्रारंभ हुआ

---

१०४ - कौटिल्य अर्थशास्त्र, प्रथम अधिकरण, अध्याय १८

सफल रणनीति एवं कूटनीति का प्रयोग श्री राम के वन गमन तक चलता है| उनकी राजनीति की विशिष्ट कूटनीति के समक्ष रावण जैसा विज्ञ पंडित भी पराभूत हो जाता है| परंपरा के अनुसार तपस्वी भारत के उत्तर दिशा में अवस्थित हिमालय के सघन वनों में अपनी तपोस्थली बनाया करते हैं; किंतु श्री राम जी तपस्वी के रूप में अयोध्या से निकलकर दक्षिणी प्रदेशों में प्रविष्ट हो जाते हैं| महान कूटनीतिज्ञ रावण उन्हें मात्र एक निर्वासित तपस्वी राजकुमार समझता है; जो कि उसकी दृष्टि में दया एवं सहानुभूति का पात्र हैं| इससे श्री राम को वन्यप्रदेशों में उपस्थित प्रयोगशालाओं में निर्बाध रूप से अपनी गतिविधियों को संचालित करते रहने का स्वर्णिम अवसर प्राप्त हो जाता है| भारतीय संस्कृति के ऋषियों की प्रयोगशाला वनों में ही स्थित होती थी | वे आश्रम में जाते हैं तथा राष्ट्रहित में अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए उनके विशिष्ट ज्ञान एवं नवीनतम शोधों को सूर्य के समान अपने प्रखर तेज से अवशोषित करते हैं| श्रीराम की शक्तियों का आभास रावण को तब होता है| जब वे खर दूषण का वध करते हैं;परंतु तब तक समझने में रावण बहुत ही विलंब कर चुका था | रावण तथा बालि में एक समझौता हुआ था कि एक दूसरे के अधीनस्थ पर वाह्य आक्रमण की स्थिति में दोनों देशों की सेनाएँ सामूहिक रूप से उसका प्रतिकार करेगी | इसी के कारण बालि के रहते वानरों से सहायता प्राप्त करना असंभव था | जिस प्रकार चारों ओर अपने आतंक का साम्राज्य फैला रखा था उसका अंत श्रीराम ने कूटनीति के अंतर्गत ही किया प्रत्येक दिशा में रावण ने सेनापति के रूप में अपने विश्वसनीय दूतों को स्थापित कर दिया था| पूर्व से लेकर पश्चिम तक अपने साम्राज्य के विस्तार के अंतर्गत इस प्रकार के अनेक विश्वासपात्र तथा समान विचारधारा के लोगों की ही नियुक्ति कर रखी थी| जिनके द्वारा वह लोगों को भयभीत कर सके और साथ में यह संदेश भी दे सके कि उसके साम्राज्य का विस्तार इतनी दूर तक है|खर- दूषण, मारीच, विराध, सुबाहु, कालनेमि, कम्बध, अहिरावण ये रावण के दूत तथा राक्षसों के सेनापति थे;जिनको रावण ने विभिन्न देशों में रहने का आदेश दिया;जिससे रावण के आतंक के साम्राज्य का विस्तार हो सके| लोगों के अंदर भय व्याप्त हो सके| श्री राम ने कूटनीति का सहारा लेते हुए रावण के वध से पहले ही अनेक परिस्थितियों में इन सभी दूतों का वध करके रावण के अभिमान को चूर किया| उसके आतंक के साम्राज्य को पंगु किया निरंतर अपने दूतों के वध का समाचार सुनने पर रावण इतना तो समझ ही गया था कि इस बार उसका पाला किसी ऐसे चतुर वीर योद्धा के साथ पड़ा है;जो कुशल रणनीतिकार है अगर यूं कहा जाए श्री राम ने रावण के साथ युद्ध से पहले ही उसके साम्राज्य तथा उसके अभिमान को छीन्न कर दिया था तो अतिशयोक्ति न होगा|

श्रीराम चाहते तो सीता हरण के पश्चात भरत जी तथा जनक जी को संदेश भेजकर उनसे सहायता प्राप्त कर सकते थे;परंतु अपने आत्मनिर्भरता को बनाए रखते हुए उन्होंने वानर अर्थात वन में रहने वाले लोगों को संगठित करके एक ऐसी सेना का निर्माण किया;जिसने प्रकार के शस्त्रों से सुसज्जित रावण की सेना का मर्दन किया| मानवीय-शक्ति, राक्षसी-शक्ति की तुलना में कम थी;जिसके द्वारा रावण का सामना करना असंभव था श्रीराम ने अपने विशिष्ट दूत तथा गुप्तचर हनुमान जी के प्रयासों से सुग्रीव से मित्रता की तथा बालि का वध किया| वानर जाति की सहायता प्राप्त कर रावण जैसे दुर्दांत शत्रु को विजित किया| श्री राम की कूटनीति पूर्ण रूप से सृजनात्मक रही है| किससे सहायता प्राप्त करनी हैं, किसको सहायता देनी है इसका निर्णय अपनी कूटनीति के अंतर्गत करते थे| श्री राम की कूटनीति तथा राजनीति स्वार्थ रहित थी| रावण जैसे वैभवशाली सम्राट पर विजय पाकर भी राम ने अपना कोई स्वार्थ नहीं सिद्ध किया;जो कुछ भी आभूषण-रत्न, अमूल्य वस्त्र आदि लंका की जीत के बाद विभीषण द्वारा उनको समर्पित किए गए| वह सब उन्होंने अपने सैनिकों में वितरित कर दिया तथा लंका का राज्य विभीषण को तथा किष्किंधा के राज्य को सुग्रीव को सौंपकर अपने दिशा की ओर बढ़ गए|

अपनी कूटनीति के अंतर्गत, हानि को कैसे टाला जा सकता है, श्री राम का सारा आकलन उस दिशा में ही होता था |

सुनु लंकापति बीरा | केही बिधि तरिअ जलधी गंभीरा |
संकुल मकर उरग झष जाती | अति अगाध दुस्तर सब भाति || १०५

हे वीर! वानर राज सुग्रीव तथा लंकापति विभीषण सुनो इस गहरे समुद्र को किस प्रकार पार किया जा सकता है ? अनेक जाति के मगरमच्छ ,साँप तथा मछलियों से भरा हुआ यह अत्यंत अथाह समुद्र पार करने में सब प्रकार से कठिन है| उक्त पंक्तियों के द्वारा हम श्री राम की उस नीति से परिचित होते हैं; जहां वे सबको अपने समान समझते हैं तथा सबको साथ लेकर चलने का प्रयास करते हैं क्योंकि वह जिस प्रयोजन को करने जा रहे थे| वह सब की सहभागिता से ही संभव था अतः वे स्वयं अकेले निर्णय लेना उचित नहीं मानते हैं नीति के अनुसार यदि हमें किसी व्यक्ति से उसका श्रेष्ठ प्रदर्शन करवाना हो तो उसको प्रमुखता देना अति आवश्यक है| इस प्रकार मनुष्य अपने महत्व को समझता है और अपनी क्षमता से भी अधिक प्रयास करते हुए कार्य को सफल बनाता है| श्री राम कई अवसरों पर स्वयं को पीछे रख कर दूसरों को स्वयं से श्रेष्ठ बताते तथा समझते हुए कार्य करने में विश्वास रखते थे क्योंकि वे सुग्रीव की सेना की सहायता से युद्ध की तैयारियां कर रहे थे तथा रावण को परास्त करने में उन्हें विभीषण का सहयोग आवश्यक था| अतः वे उनके ज्ञान उनके अनुभव को प्रमुखता देना भली-भांति जानते थे क्योंकि वे दोनों लगभग उसी भौगोलिक क्षेत्र के निवासी थे तो उन्हें वहां की स्थितियां भली-भांति ज्ञात होंगी| वहां किस प्रकार से कार्य किया जा सकता है? क्या उचित होगा क्या अनुचित होगा? किस कार्य को करने से विजयी होने की संभावना अधिक रहेगी? किस विधि से कार्य करने पर कर कार्य सुगम एवं सरल हो जाएगा? इन्हीं नीतियों का पालन करते हुए, वे वानरराज सुग्रीव तथा विभीषण से परामर्श मांगते हैं| उनके द्वारा दिए गए परामर्श से श्रीराम का उद्देश्य मात्र इतना था कि वे उनको; उनकी स्वयं की विशेषताओं तथा दक्षता से परिचित करवा सकें साथ ही; श्रीराम के जीवन में या उनकी योजनाओं में वानरराज सुग्रीव तथा विभीषण क्या महत्व है यह भीबता सकें| वे दूसरों के अनुभवों से अपने जीवन में बहुत कुछ सीखते तथा ग्रहण करते थे|

कह लंकेस सुनहु रघुनायक | कोटि सिंधु सोषक तव सायक ||
जद्यपि तदपि नीति असि गाई | बिनय करिअ सागर सन जाई || १०६

विभीषण जी कहते हैं कि हे रघुनाथ! सुनिए यद्यपि आपका एक बाण ही समुद्र को सखने वाला है; तथापि ऐसी नीति कही गई है कि उचित यही होगा कि पहले जाकर आप समुद्र से प्रार्थना करें| वो अवश्य ही इस विनय आग्रह को स्वीकार करेगा| श्री राम अपने दल तथा उनके बल से भली-भांति परिचित थे| इसके अतिरिक्त उन्होंने ऋषि-मुनियों से अनेक प्रकार के विद्याएँ सीखी थी| वे चाहतें तो समुद्र को रास्ता देने के लिए विवश कर सकते थे| अपनी शक्ति का भान करवाना उनके लिए कदापि कठिन नहीं था| परंतु वे भली-भांति आत्मसम्मान का महत्व जानते थे| वे चाहते तो समुद्र को भय दिखा सकते थे, उसे मार्ग देने के लिए बाध्य कर सकते थे;किंतु उन्होंने ऐसा न करते हुए समुद्र के मान सम्मान को बनाए रखा तथा अपने मित्रों के विश्वास को और सशक्त किया मान-सम्मान तथा विश्वास के महत्व को भलीभांति समझते थे|

---

१०५ ,१०६ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ६९८

अतः वे कोई भी ऐसा कर्म नहीं करते थे; और न ही करना चाहते थे| जिससे उनके वंश तथा उनकी स्वयं की छवि धूमिल हो| वे सब के मान-सम्मान को महत्व देते थे| श्री राम अपने शत्रुओं का भी सम्मान करते थे| वृहद श्रीमद्वाल्मीकि रामायण के अनुसार, श्री राम एवं लक्ष्मण विश्वामित्र जी के साथ तपस्वीयों एवं वनवासियों की रक्षा हेतु वन को गए| तब उनके आचरण से उनके बल-वैभव एवं संयमित व्यवहार से प्रसन्न होकर विश्वामित्र जी ने उन्हें बला तथा अतिबला नामक विद्याएँ प्रदान की थी| जिनके प्रभाव से न तो उन्हें कभी श्रम प्रतीत होता था, न कभी अक्रांत होते थे, न कभी रूप विपर्यय ही होता था | ऋषि विश्वामित्र ने यहां तक कहा कि सोते समय भी राक्षस तुम्हारा कुछ नहीं कर सकेंगे और तुम्हारे बाहुबल की समानता कोई न कर पाएगा| तुम्हारे सौभाग्य दाक्षिण्य, चतुरता को तीनों लोकों में कोई भी चुनौती नहीं दे पाएगा | इन विद्याओं को सीख लेने पर तुम्हारे बराबर किसी बात का उत्तर देने में भी तुम्हारी क्षमता का कोई न होगा इन विद्याओं के प्रभाव से तुम को भूख और प्यास भी नहीं लगेगी| इन विद्याओं को पढ़ लेने से तुम्हारा शौर्य सर्वत्र फैल जाएगा और हम सभी ऋषियों की इच्छा है कि हम तुम्हें ही यह विद्या पढ़ाएं क्योंकि तुम ही इनके सुपात्र हो| इन सारे तत्वों का अध्ययन करने के उपरांत हम श्री राम की क्षमता उनके अतुल्य साहस,अपूर्व वीरता,शौर्य तथा पराक्रम को भलीभांति समझ सकते हैं| इसके उपरांत भी जनसाधारण तथा नगरीय सभ्यता से दूर रहने वाले लोगों को एकत्रित करना उनको संगठन की शक्ति से परिचित करवाना| उस शक्ति का उपयोग बहुआयामी दृष्टिकोण से करना अपने आप में ही एक सफल कूटनीति का परिचय देता है|

सखा कहीं तुम्ह नीकि उपायई | करिअ देव जो होई सहाई ||
मंत्र न यह लक्ष्मण मन भावा | राम वचन सुन अति दुख पावा || १०७

श्री राम जी ने कहा हे सखा! तुमने यह बहुत अच्छा उपाय बताया; यही किया जाए यदि दैव सहायक हों यह परामर्श लक्ष्मण जी के मन को अच्छा नहीं लगा और श्री राम जी के वचन सुनकर उन्हें बहुत ही दुख हुआ लक्ष्मण जी श्री राम के प्रताप को जानते थे| उनकी विद्या तथा शास्त्र-शास्त्र की निपुणता को पहचानते थे | इस कारण उन्हें विभीषण के द्वारा दिया गया सुझाव व्यर्थ लग रहा था और उन्हें इस बात पर दुख हुआ कि पराक्रमी एवं बलशाली श्री राम, विभीषण के कहने पर समुद्र से निवेदन करने जा रहे हैं| परिपक्वता में कमी के कारण लक्ष्मण जी को इस बात के पीछे का तात्पर्य नहीं पता चल रहा था कि श्री राम विभीषण से परामर्श क्यों ले रहे हैं? परंतु श्री राम अच्छी तरह जानते थे कि वह क्या कर रहे हैं| वे उस समय विभीषण तथा उनके द्वारा दिए गए परामर्श को स्वीकारते हुए एक कुशल कूटनीतिज्ञ की भूमिका निभा रहे थे जो कि उनकी रणनीति में सभी प्रकार से सहायक थी| शत्रु के क्षेत्र में आकर उस से युद्ध करना आसपास के वातावरण को समझना भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेना| यह सब उनकी प्रमुखता थी जिसके लिए विभीषण का उनके साथ रहना; उनकी जीत को सुनिश्चित करता था | वे छल कपट से तो नहीं परंतु साम, दाम, दंड, भेद इन चारों नीतियों का पालन करते हुए रावण तथा उसकी सेना को परास्त करना चाहते थे तथा उनके इस कार्य में विभीषण से अधिक कोई और सहायक नहीं हो सकता था| विभीषण के द्वारा रावण तथा उसकी सेना की शक्तियों के बारे में ज्ञान ले सकते थे और उसका प्रयोग युद्ध क्षेत्र में करके रावण पर सरलता से विजय प्राप्त कर सकते थे| इधर रावण के दूत ने जब श्री राम के द्वारा विभीषण का आदर- सत्कार एवं मान-सम्मान देखा इस बात का वर्णन उसने रावण के सामने किया इस प्रकार श्री राम ने विभीषण को सम्मान सहित अपने दल तथा अपने हृदय में स्थान दिया |

---

१०७ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ६९८

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसे | मानहु कहा क्रोध तजि तैसे ||
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा | जातहिं राम तिलक तेहि सारा || १०८

दूत ने रावण से कहा हे नाथ! आपने जैसे कृपा करके पूछा है, वैसे ही क्रोध छोड़कर मेरा कहा मानिए, मेरी बातों पर विश्वास कीजिए| जब आपका छोटा भाई श्री राम जी से जाकर मिला तब उसके पहुंचते ही, श्री राम जी ने उसका राजतिलक कर दिया| उनके हृदय तथा व्यवहार में कहीं भी विभीषण के लिए शत्रु-भाव नहीं था अपितु श्री राम ने उनको लंका का राज-पाट ही दे दिया| उनके हृदय में कहीं भी विभीषण को लेकर किसी प्रकार की शंका नहीं है| दूत को इस बात का भय है कि रावण उसकी बात सुनकर क्रोधित हो जाएगा|

इस कारण वह दूत डरते-डरते यह बात रावण से कहता है| श्री राम का विभीषण के प्रति प्रेम तथा सम्मान देखकर दूत अत्यंत हर्षित हुआ; वो रावण को समझाने का प्रयास करता है| अपने हृदय से श्री राम के प्रति बैर निकाल दे; जो अपने शत्रु दल से गए हुए व्यक्ति के प्रति इतना मान सम्मान करता हो| उसका हृदय कितना विशाल होगा? श्री राम का विभीषण के प्रति व्यवहार देखकर दूत आश्चर्यचकित भी होता है और अत्यधिक प्रसन्न भी;वह परोक्ष रूप से रावण को यह बताने का प्रयास करता है कि अगर वह अपनी गलती को सुधार लेता है| श्री राम से मित्रता कर लेता है तो किसी का किसी भी प्रकार से नाश नहीं होगा| उसे पता था कि वह एक प्रकार से अविश्वसनीय बात बोल रहा है क्योंकि कोई भी अपने शत्रु दल से इस प्रकार का व्यवहार नहीं करता| अतः वह रावण को विश्वास दिलाने का प्रयास करता है कि जो कुछ भी वह बता रहा है| रावण उस पर विश्वास करें और उसके अनुरूप ही अपनी आगामी योजना बनाएं या उस पर पुनर्विचार करें |

रावन दूत हम सुनि काना | कपिन्ह बांधि दिन्हे दुख नाना ||
श्रवन नासिका काटैं लागे| राम सपथ दीन्हे हम त्यागे || १०९

दूत श्री राम की सेना के वानरों के बारे में बताते हुए कहता है कि जैसे ही उनको पता चला कि मैं आपका दूत हूँ और मैं वहाँ का भेद लेने गया था| वे मेरे नाक-कान काटने के लिए तैयार हो गए उनको श्री राम का नाम लेकर किसी तरह रोका कहने का भाव यह है कि उनके मन में श्री राम के प्रति इतना आदर तथा प्रेम है कि उनका नाम सुनकर ही वह अपने क्रोध को पी जाते हैं और मुझे जैसे शत्रु के दूत पर भी उन्होंने दया दिखाई क्योंकि कहीं न कहीं वह भी अपने नायक के स्वभाव को भलीभांति जानते थे| उनके उदार-व्यवहार तथा कृपालु-आचरण से वे भलीभांति परिचित थे| उन्हें पता था कि श्रीराम के अनुसार इस तरह का कोई भी कृत्य योग्य नहीं है और न ही श्रीराम इस तरह के किसी कृत्य की अनुमति देंगे| वे सदैव ही नीतिपूर्वक व्यवहार करते हैं और इसी तरह के व्यवहार की अपेक्षा रखते हैं| दूध सभी प्रकार से श्री राम जी के व्यवहार की उनके उदारता की सराहना करता है| देखा जाए तो उसके अंतर्मन में भी कहीं न कहीं यह भाव छुपा हुआ है कि लंकेश रावण को भी इसी प्रकार का आचरण करना चाहिए परंतु भयवश वह ये बात रावण को यह बात प्रत्यक्ष रूप से नहीं कह सकता |

पूँछिह नाथ राम कटकाई | बदन कोटि सत बरनि न जाई ||
नाना बरन बानर भालू कपिधारी | बिकटानन बिसाल भयकारी || ११०

१०८,१०९,११०- सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित ,पृष्ठ संख्या ७००,७०१

हे नाथ! श्री राम जी के सेना के बारे में पूछ रहे हैं, तो वह तो सौ करोड़ मुखों से भी वर्णन नहीं की जा सकती अनेक रंगों के भालू तथा वानरों की सेना है; जो भयंकर मुख वाले तथा विशाल शरीर वाले भयानक है| श्री राम यह बात भली प्रकार जानते थे कि रावण तुझसे यह बात जानने का अवश्य प्रयास करेगा थी| उनकी सेना संख्या में कितनी और कैसी है? यह भी एक तरह का मानसिक प्रभाव होता है जो कि कूटनीति का ही एक भाग होता है| जब शत्रु को परोक्ष रूप से आप प्रभावित कर सकते हैं अगर कोई अपने दल-बल के तो कुछ कर सरलता से विश्वास नहीं किया जा सकता किंतु जब विरोधी खेमे का कोई व्यक्ति प्रशंसा करें या आपके पल के बारे में बताएं तो यह कार्य अत्यंत ही सुलभ हो जाता है कहीं न कहीं शत्रु के मनोबल को तोड़ने का कार्य करता है| इसीलिए उस दूत को इतना समय दिया गया कि वह सेना का निरीक्षण -परीक्षण कर सके क्योंकि जब वह श्रीराम सेना के बारे में बताएगा इसका प्रभाव रावण की सोचने विचारने की शक्ति पर अवश्य पड़ेगा|

जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा | सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा ||
अमित नाम भट कठिन कराला | अमित नाग बल बिपुल बिसाला || १११

जिसने नगर को जलाया तथा आपके पुत्र अक्षय कुमार को मारा उसका बल तो इन सभी वानरों से कम था असंख्य नामों वाले बड़े ही कठोर और भयंकर योद्धा हैं उनमें असंख्य हाथियों का बल है और वे बड़े ही विशाल हैं | दूत बताता है कि जिस वानर ने नगर को जलाया था और आपके पुत्र को मारा था उसका बल तो कुछ भी नहीं है उससे भी अधिक बलशाली योद्धा भरे पड़े हैं एक एक योद्धा हाथी के समान बलशाली है और शारीरिक रूप से वे ब ड़े सुदृढ़ एवं विशाल हैं अर्थात किसी भी प्रकार से श्री राम की सेना को कम न समझे उस सेना के बारे में क्या वर्णन किया जाए जिसका एक सैनिक आकर लंका को जला देता है तथा आपके पुत्र को भी मार देता है |

ए कपि सब सुग्रीव समाना | इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना ||
राम कृपा अतुलित बल तिन्हहीं | तृन समान त्रिलोकहि गनहि || ११२

यह सब सैनिक बल में सुग्रीव के समान हैं और इनके जैसे एक, दो नहीं वरन करोड़ों बलशाली योद्धा हैं| जिन्हें कौन गिन सकता है? श्री राम की कृपा से उनमें अतुलनीय बल है और वे तीनों लोकों को तृण के समान समझते हैं| वे किसी भी प्रकार के युद्ध के लिए तैयार हैं मानसिक-शारीरिक दोनों ही प्रकार से ये सेना सुदृढ़ तथा सक्षम है| शार्दुल नाम का दूत, सुग्रीव की पारित वाहिनी सेना का निरीक्षण करके रावण को यह बताता है कि वानर सेना का यह समूह जो लंका के समक्ष खड़ा है| वह समुद्र के समान ही विशाल है| सुग्रीव की सेना का प्रत्येक सैनिक सुग्रीव के समान ही बलशाली है| यहां पर सुग्रीव के बारे में बात इसलिए की गई है क्योंकि रावण, सुग्रीव तथा उसके भाई बालि को भली प्रकार जानता था| वह बालि के पराक्रम से अवगत था | श्री राम की कृपा से उन सब के अंदर युद्ध को जीतने का उत्साह चरम पर है| अपने सामने आने वाले किसी भी शत्रु को एक तिनके के समान मसलने का सामर्थ्य रखते हैं| श्री राम अपनी सेना के प्रत्येक सैनिक का मनोबल बढ़ाते रहते हैं और सब पर विशेष रूप से कृपा करते हैं| भाव यह है कि एक सेनानायक के रूप में श्री राम अपनी सेना के मनोबल को कभी भी टूटने नहीं देते उन पर विश्वास करते हैं तथा उनके लिए जो भी हितकारी हो वह करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं|

१११,११३ -सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ७०१

राम तेज बल बुद्धि बिपुलाई | सेष सहस सत सकहिं न गाई ||
सक सर एकसोषिसतसागर | तव भ्रातहिं पूछेउँ नय नागर || ११३

श्री राम के तेज सामर्थ्य बल तथा बुद्धि की अधिकता को लाखों शेष भी नहीं गा सकते| वह एक ही बार से सैकड़ों समुद्रों को सोखने का सामर्थ्य रखते हैं; परंतु नीति-निपुण श्री राम ने नीति की रक्षा के लिए आपके भाई से ही उपाय पूछा| रावण का दूत श्री राम के नीतियों के बारे में बताता है कि किस प्रकार श्री राम की दृष्टि में शत्रु तथा मित्र एक समान हैं| अपने शत्रुओं के प्रति भी उदार भाव रखते हैं तथा सभी को साथ लेकर चलते हैं| अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण वे सामने वाले के मस्तिष्क में चल रहे विचारों तथा भावों को बड़ी सरलता से पढ़ लेते हैं| इतनी शक्ति, पराक्रम और बल है कि वे किसी को भी जीत सकते हैं| इसके उपरांत भी वे भावनाओं को सर्वोपरि रखते हैं; किसी के साथ अनैतिक व्यवहार नहीं होने देते| इसी कारणवश उन्होंने आपके भाई से ही परामर्श लिया| अपनी सेना अपने दलबल में से किसी और से नहीं पूछा और उनके द्वारा दिए गए परामर्श को सहर्ष स्वीकार किया| इससे उनके स्वभाव की सरलता का पता चलता है कि वीरता, बुद्धिमत्ता, शौर्य, बल होने के बाद भी वे कितने सौम्य कितने विनम्र तथा कितने आत्मीय हैं |

तासु बचन सुनि सागर पाहीं | मागत पंथ कृपा मन माहीं || ११४

आपके भाई के वचन सुनकर श्री राम समुद्र से मार्ग मांग रहे हैं क्योंकि उनके मन में आपके भाई के प्रति दया तथा कृपा भरी हुई है| जो श्री राम स्वयं सामर्थ्यवान हैं,बलशाली हैं| वे आपके भाई के वचनों का मान इसलिए रख रहे हैं क्योंकि उनके हृदय में विभीषण के प्रति सम्मान है|

श्रीराम शत्रु का सम्मान करना भली- भांति जानते हैं| कूटनीति में निपुण होने के कारण विभीषण का उनके पास आने का कारण समझ चुके थे| उन्होंने विभीषण को विशेष प्रेम दर्शाते हुए उनके मान-सम्मान को बचाते हुए, उनके हृदय में अपने लिए विशेष स्थान बनाया| इसका प्रभाव हमें दूत के द्वारा बताई गई बातों से पता चलता है; किस प्रकार श्रीराम ने बड़ी उदारता के साथ शत्रु पक्ष से बिना युद्ध किए हुए ही उस को परास्त करने का प्रबंध कर लिया|

कह सुक नाथ सत्य सब बानी | समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी ||
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा | नाथ सन तजहु बिरोधा || ११५

दूत ने कहा, हे नाथ ! अभिमानी स्वभाव छोड़ कर इस बात को सत्य समझिए; जैसा इस पत्र में भी लिखा गया है| क्रोध को छोड़कर मेरे वचन सुनिए श्री राम जी से जिस तरह का वैर आपने ठान लिया है| उसे त्याग दीजिए| यहां दूत, रावण को यह समझाने का प्रयास करता है कि वह अपने धर्म को त्याग कर उसकी बात को सुनें और लक्ष्मण जी के द्वारा भिजवाए हुए पत्र के अनुसार क्रोध को त्याग कर श्री राम से मित्रता करने की बात पर विचार करें श्री राम से युद्ध किसी भी प्रकार से भला न होगा अपनी प्रजा तथा अपने साम्राज्य को युद्ध से होने वाली क्षति से बचा लीजिए दूत रावण को यह समझाने का प्रयास करता है कि अभिमान के कारण क्रोध की उत्पत्ति होती है तथा क्रोध के कारण बुद्धि नष्ट हो जाती है एवं मनुष्य को अपने भले-बुरे का भान नहीं होता| अतः अभिमान को त्याग कर क्रोध की ज्वाला को बुझा कर शांत चित्त से लक्ष्मण जी के

११३,११४,११५ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित ,पृष्ठ संख्या ७०२ ,७०३

द्वारा भेजे गए संदेश पर विचार करते हुए मित्रता के लिए आगे बढ़े दूत यह जानता है, कि रावण के द्वारा किया गया कृत्य सर्वथा अनुचित है फिर भी वह रावण को समझाने का प्रयास करता है कि लक्ष्मण जी द्वारा भेजे गए संदेश पर विचार करें तथा अपनी गलती को सुधारने का प्रयास करते हुए सीता जी को वापस करके युद्ध की इस भयावह स्थिति से स्वयं भी बचे तथा औरों को भी बचाएं क्योंकि बिना कारण युद्ध करना एक कुशल राजा की पहचान नहीं होती| एक कुशल राजा अच्छा -बुरा, गलत-सही सब कुछ विचार कर ही कार्य करता है| श्री राम के दल-बल तथा व्यवहार का वर्णन करने के उपरांत रावण का दूत उसे परामर्श देना चाहता है कि वह अपनी गलतियों को स्वीकारते हुए यह प्रयास करें कि किसी भी स्थिति में युद्ध न हो| श्री राम के व्यवहार से प्रभावित होकर वह श्रीराम तथा उनकी सेना की प्रशंसा करता है| वह देखता है कि किस प्रकार विभीषण को वहां स्वीकार किया गया अन्यथा कोई भी व्यक्ति शत्रु पक्ष के किसी भी व्यक्ति को स्वीकार नहीं करता विशेषकर जब स्थिति युद्ध की हो क्योंकि वहां सदैव भेद लेने का भय बना रहता है कोई भी पक्ष अपनी युद्ध नीति तथा अपनी किसी भी योजना शत्रु पक्ष को आभास भी नहीं होने देना चाहता| ऐसे समय में श्री राम का विभीषण पर विश्वास करना| उन्हें स्वीकार करना और उनके परामर्श के अनुसार समुद्र से विनय करना यह सब श्री राम को एक कुशल कूटनीतिज्ञ रूप में स्थापित करता है |

जनकसुता रघुनाथहि दीजे| एतना कहा मोर प्रभु कीजे ||
जब तेहिं कहा देन बैदेही | चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही || ११६

जानकी जी, रघुनाथ जी को दे दीजिए प्रभु मेरा इतना कहा मान लीजिए| जब उस दूत ने जानकी जी को देने के लिए कहा तब दुष्ट रावण ने उसको लात मारी| जब दूत ने रावण को विभीषण के यहां से जाने तथा श्रीराम द्वारा उनका राजतिलक करने उन्हें मान-सम्मान देने तथा उनसे परामर्श लेने का संपूर्ण वृतांत कह सुनाया उसके उपरांत उस ने रावण को यह सुझाव दिया कि वह सीता जी को श्री राम को लौटा दे| तब रावण ने अभिमान में अंधे होकर ठीक उसी प्रकार उसके ऊपर चरण-प्रहार किया |जिस प्रकार विभीषण जी को तिरस्कृत करके लंका से निकाला था उस दूत ने यथासंभव प्रयास किया कि किसी प्रकार भी रावण की बुद्धि में यह बात डाली जा सके कि जिस धन-संपदा, सत्ता-वैभव शारीरिकशक्ति के बल पर वह युद्ध करना चाहता था| उसका आधार पाप था| अपनी हठ के कारण रावण इस बात को समझने के लिए कदापि तैयार नहीं था कि उसने गलत काम किया है| यदि अभी भी वह श्रीराम की ओर मित्रता का हाथ बढ़ाता है, तो उसका जीवन उसका परिवार तथा उसकी प्रजा सभी सदा सुखी रहेंगे क्योंकि दूत ने श्रीराम का पराक्रम भली प्रकार से देख लिया था और वह इस बात के लिए आश्वस्त हो गया था कि इस युद्ध में श्रीराम ही विजयी होंगे |

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ | कृपासिंधु रघुनायक जहाँ ||
करि प्रनामु निज कथा सुनाई| राम कृपा आपनि गति पाई || ११७

वह दूत भी विभीषण की भांति रावण के चरणों में सिर नवाकर वहाँ से चला गया गया जहाँ श्री राम थे वहां जाकर उसने अपनी सारी कथा सुनाई और श्री राम के दल-बल में अपनी गति पाई अर्थात श्रीराम ने उसे भी अपनी सेना में, अपने मंडल में स्थान दिया | इस तथ्य के साथ हम यह समझ सकते हैं कि कुछ देर के अवलोकन के बाद ही दूत को यह बात समझ में आ गई थी| श्री राम व्यावहारिक रूप से कितने परिपक्व हैं|

११६,११७ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ७०२

उनकी नीतिपरक बातें तथा संयमित आचरण ने उस दूत को इतना प्रभावित कर दिया कि वह अपने राजा को यह समझाने का साहस कर सका कि, वह जो कुछ भी कर रहा है| वह उचित नहीं शत्रु-पक्ष के किसी भी व्यक्ति की प्रशंसा किसी भी राजा के समक्ष करना प्राणों से हाथ धोने जैसा है| वह भी तब जब वह राजा रावण जैसा हो तब भी उस दूत ने यथासंभव प्रयास किया कि रावण को श्री राम के बारे में सही तथ्य बताया जा सके उसके चक्षुओं को खोला जा सके; उसको उन अपराधों का बोध करवाया जा सके जो रावण ने स्वयं किए हैं|

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति ||
बोले राम सकोप तब भय बिनु होए न प्रीति || ११८

इधर तीन दिन बीत जाने के बाद समुद्र श्री राम के अनुनय-विनय से भी नहीं मानता है| तब श्रीराम क्रोध सहित बोलते हैं कि बिना भय के प्रीति नहीं होती| श्री राम के बुद्धि तथा व्यवहार की विशेषता ही कहेंगे कि वे समय के अनुकूल निर्णय लेने में सक्षम थे| किस स्थान पर किस प्रकार के स्वभाव का प्रदर्शन करना है| यह उनको भली-भांति ज्ञात था| जब समुद्र से प्रार्थना करते हुए श्री राम को तीन दिन बीत जाते हैं और समुद्र के ओर से किसी भी प्रकार का उत्तर नहीं आता है तो , श्रीराम क्रोधित होकर कर लक्ष्मण जी से कहते हैं| निवेदन करते हुए बहुत समय बीत गया नीति के अनुसार या तो प्रेम स्वतः हो जाता है या फिर भय के कारण होता है यहां पर पहली स्थिति तो नहीं लग रही तो हमें दूसरी स्थिति उत्पन्न करने पड़ेगी क्योंकि प्रेम की वाणी भी प्रत्येक को समझ नहीं अति प्रेमपूर्वक निवेदन करना और उसका किसी भी प्रकार का प्रभाव न पड़ना अथवा अनुनय-विनय का किसी भी प्रकार प्रभाव न पड़े वहां करना ही पड़ता है| श्री राम लक्ष्मण जी से बोले, यह तो सागर का अहंकार है; जो वह दर्शन देने भी नहीं आ रहा| शांति, क्षमा, प्रिय वचन तो सज्जनों गुण हैं| तीन दिन तक अनुनय-विनय करने के उपरांत श्रीराम ने जब यह देखा किसका समुद्र के ऊपर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ रहा है तब उन्हें तनिक भी देर नहीं लगी समुद्र का स्वभाव समझने में और फिर उन्होंने उसके व्यवहार के आधार पर निर्णय लिया कि उनको समुद्र के साथ क्या करना है?

लछिमन बान सरासन आनू | सोषौं बारिधि बिसिख कृसानु ||
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीति | सहज कृपन सन सुन्दर नीति || ११९

लक्ष्मण मेरा धनुष लेकर आओ, मैं अग्नि बाण से समुद्र को सोख डालूँगा| मूर्ख से विनय, कुटिल व्यक्ति के साथ प्रेम स्वभाव से, कंजूस व्यक्ति को उदारता का उपदेश देना व्यर्थ है| श्री राम कहते हैं, जो जिस भाव को समझता हो उससे उसी भाव में बात करनी चाहिए| लक्ष्मण आज तुम भी देखो कि मैं बाणों से किस प्रकार समुद्र को सूखा देता हूँ| किसी व्यक्ति के कोमल व्यवहार तथा मधुर वचन को उसकी हीनता नहीं समझनी चाहिए न ही उसे किसी भी प्रकार से दुर्बल समझना चाहिए| यह केवल आचरण ही होता है; जो ज्ञानी पुरुष को किसी के साथ दुर्व्यवहार नहीं करने देता लेकिन यह बात वही जान सकता है| जिसकी भौतिक एवं व्यवहारिक क्षमता कितनी हो अन्यथा बहुत बार तो सामर्थ्यवान व्यक्ति के कोमल वचन एवं अच्छे आचरण को उसकी दुर्बलता मान लेते हैं| आज समुद्र को यह बताना ही पड़ेगा कि अच्छा आचरण, विनम्रता किसी की दुर्बलता का पर्याय नहीं है और वह अब उसी प्रकार से समझा लूंगा जैसे समुद्र को समझ में आ जाए वस्तुतः समुद्र को मेरे द्वारा की जा रही प्रार्थना तथा अनुनय-विनय का अर्थ का मर्म समझ नहीं आ रहा|

११८,११९ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ७०२, ७०४

इसने अब तीर के अलावा कोई और विकल्प नहीं रखा अतः अब मुझे समुद्र को सूखने के लिए तीर का प्रयोग करना ही पड़ेगा |

ममता रत सन ग्यान कहानी | अति लोभी सन बिरति बखानी ||
क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा | ऊसर बीज बए फल जथा || १२०

ममता में फंसे हुए मनुष्य से ज्ञान की बात कहना अत्यंत लो व्यक्ति से वैराग्य का वर्णन क्रोध ही मनुष्य से शांति की बात स्वभाव से काम ही व्यक्ति से भगवान की कथा इनका फल वैसा ही होता है जैसा उसर भूमि में बीज होने से होता है अर्थात ऊसर भूमि में बीज बोने की भांति ही इस प्रकार के सारे ज्ञान व्यर्थ जाते हैं | जिस प्रकार किसी के मुंह में पड़े हुए व्यक्ति को ज्ञान भरी बातें समझ में नहीं आती लालच से भरे हुए व्यक्ति को वैराग्य की बातें समझ नहीं आती स्वभाव से क्रोधी व्यक्ति को शांति की बातें समझ नहीं आती कामवासना में लिप्त व्यक्ति को भगवान की कथा समझ नहीं आती जैसे बंजर पड़ी भूमि में बीज बोने के उपरांत भी कोई फसल नहीं आती यहां से राम नीति शास्त्र के अनुसार बात करते हुए कहते हैं कि हम परिपक्वतावश मानवीय मूल्यों का ध्यान रखते हुए नैतिकता की सीमा में रहकर नियंत्रित व्यवहार करते हैं परंतु इन सारी बातों का कोई भी अर्थ नहीं रह जाता जब सामने वाला व्यक्ति बिलकुल ही विपरीत मानसिकता का हो वह अपने ही धुन में अपने ही विचारों में मग्न हो अपने व्यवहार से विवश हो तो ऐसे व्यक्ति को आप कितनी भी नैतिकता और नीति की बातें समझा ले उस पर किसी भी प्रकार का कोई प्रभाव नहीं होता|

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई | उतरहिं कटकु न मोर बड़ाई ||
प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई | करौं सो बेगि जो तुम्हहि सोहाई || १२१

आपके प्रताप से मैं सूख जाऊंगा और आपकी सेना और उतर जाएगी परंतु इसमें मेरी कोई मर्यादा यह मेरी किसी तरह की बड़ाई नहीं होगी तथापि आपकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया जा सकता जो भी आपको अच्छा लगे वही मैं तुरंत करूंगा| आप तो युद्ध कौशल में पराक्रमी तथा श्रेष्ठ गुरुजनों के द्वारा विशेष कलाओं में निपुण हैं आपके द्वारा किए गए किसी भी कार्य से आपके साथ साथ सभी श्रेष्ठजनों का यह तथा मान बढ़ेगा परंतु इस जगत में मेरा मान सम्मान तथा प्रतिष्ठा धूमिल हो जाएगी मुझ पर आश्रित सभी जीव जंतु इससे प्रभावित होंगे और इसका पाप भी मेरे ही सर आएगा क्योंकि इतिहास में यही बताया जाएगा कि मेरी हठधर्मिता के कारण ही आपको ऐसा करना पड़ा| अतः मेरा आपसे विनम्र निवेदन है कि कृपया मुझ पर को जितना हो एवं मेरे धृष्टता को क्षमा करें मेरा चरित्र कलंकित हो जाएगा क्योंकि जिसने सदैव ही अपने कुल की मर्यादा सहित बड़े- बूढ़ों, गुरुजनों आदि सब का मान सम्मान किया; मैं उसी की प्रार्थना नहीं सुन रहा मेरे लिए यह लज्जा का विषय होगा कृपया मुझे क्षमा कर दें|

इस प्रसंग में समुद्र भली-भांति श्री राम की नीतियों एवं स्वभाव को जानते हुए संवाद करता है| प्रेम,सरलता वाणी में मधुरता यह श्री राम के प्रारंभिक रूप है वे सामने वाले के मन स्थिति एवं स्वभाव को देखते हुए ही अपने कार्यप्रणाली निर्धारित करते हैं |

सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ |
जेहि बिधि उतरे कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ || १२२

१२०,१२१,१२२,- सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ७०४

समुद्र के अत्यंत विनीत वचन सुनकर रामजी ने मुस्कुरा कर कहा तात जिस प्रकार वानरों की सेना पार उतर जाए वह उपाय बताओ |समुद्र द्वारा प्रार्थना न सुने जाने पर तीन दिन के उपरांत जब से राम क्रोधित होते हैं तो समुद्र बड़ी विनम्रता से क्षमा याचना करते हुए आग्रह करता है कि वे अपने क्रोध की अग्नि को शांत करलें इस पर श्री राम तत्काल ही क्रोधाग्नि शांत करके अपनी मनमोहक मुस्कान के साथ समुद्र से ही उसे पार करने का उपाय पूछते हैं| इस व्यवहार में कितनी सरलता है, अन्यथा जब मनुष्य को क्रोध आता है तो उसकी अग्नि इतनी शीघ्रता से शांत नहीं होती| जब तक वह अपने मन में चलने वाले सभी भावों को प्रकट नहीं कर लेता; वह याचक को क्षमा नहीं करता| इन्हीं नीतियों में श्रीराम पारंगत हैं| उनका स्वभाव कितना संयमित है वह सामने वाले मनुष्य के अनुसार कितनी शीघ्रता से स्वयं को परिवर्तित कर लेते हैं| यही उनकी दक्षता है उनके इस स्वभाव का प्रभाव ही सामने वाले व्यक्ति को प्रभावित कर देता था| उनकी वाणी की सहजता अस्मिता का बोध कराती थी किसी के प्रति उनके मन में कोई सुझाव नहीं रहता था| यहां हम उनकी वाकपटुता निर्णय लेने की क्षमता और कूटनीति को बड़े ही स्पष्ट रूप में देख सकते हैं कि कैसे अपना क्षेत्र छोड़ वो शत्रु के क्षेत्र में आने पर भी अपने कार्यों को कितनी सुगमता से कर रहे हैं वहां के लोगों से ही ज्ञान लेना उनकी ही सहायता लेना उनको एकता तथा शक्ति की अनुभूति करवाना| स्वभावगत विशेषताओं से परिचित कराना इन्हीं विशेषताओं के बड़ी सरलता से सकारात्मक रूप में दबाव बना लेते थे और उनके द्वारा बनाए गए इस दबाव को उनके समक्ष खड़ा व्यक्ति सहर्ष स्वीकार करता है क्योंकि उसको यह अनुभूति हो जाती थी कि श्री राम उसका अनर्थ कदापि नहीं करेंगे\ अतः वह बड़े निश्चिंत अभाव से श्री राम के प्रति समर्पित हो जाता था|

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई | लरकाई ऋषि आसिष पाई ||
तिन्ह के परस किए गिरि भारे | तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे || १२३

समुद्र ने कहा हे नाथ और नील दो वानर भाई हैं उन्हें लड़कपन में ऋषि से आशीर्वाद पाया था कि उनके स्पर्श कर लेने मात्र से ही भारी से भारी पहाड़ भी आपकी प्रताप से समुद्र पर तैर जाएंगे| समुद्र द्वारा श्री राम को यह बताया गया कि उनकी सेना में ही ऐसे अभियंता हैं जो बड़ी ही सरलता से ऐसे मार्ग का निर्माण कर देंगे, जिससे उनकी सेना लंका पहुंच जाएगी इसके लिए कहीं और कोई साधन खोजने की आवश्यकता नहीं है| नल और नील को इस प्रकार की दक्षता प्राप्त है कि वह केवल पत्थरों मात्र से ऐसे पुल का निर्माण कर सकते हैं, जो समुद्र के अथाह जल में डूबेगा नहीं | इसे भी तो श्रीराम की कूटनीति का परिणाम ही कहेंगे कि उन्होंने अपने आचार व्यवहार से उन प्रश्नों के उत्तर तथा उनका निवारण बड़ी सुगमता से प्राप्त कर लिया जिसके लिए वे सशंकित थे उनके दल में नल और नील के इस दक्षता का ज्ञान किसी को नहीं था| समुद्र ने इस तथ्य से अवगत करवाया| समुद्र को उसके द्वारा किए गए आचरण के प्रति ग्लानि हुई अतः क्षमा
मांगते हुए उसने श्री राम तथा उनकी सेना की सहायता की क्योंकि वह राम जी के बल तथा नीतियों को भली प्रकार समझ गया था|

एही सर मम उत्तर तट बासी | हतहु नाथ खाल नर अघ रासी ||
सुनि कृपाल सागर मन पीरा | तुरतहिं हरी राम रनधीरा || १२४

१२३,१२४ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ७०५,७०६

इस बाण से मेरे उत्तर तट पर रहने वाले पाप की राशि दुष्ट मनुष्यों का वध की|जिए समुद्र की बात सुनकर रणधीर श्री राम जी ने तुरंत ही इस बाण से उन दुष्टों का वध कर दिया क्योंकि श्री राम ने समुद्र को सो खने के लिए विशेष शक्ति से युक्त बाण प्रयोग हेतु निकाल कर धनुष के ऊपर साध दिया था| उस तीर को वापस नहीं रखा जा सकता था श्री राम ने समुद्र से पूछा तीर को अब मैं वापस नहीं रख सकता इससे कहीं न कहीं किसी न किसी दिशा में चलाना होगा ,तो दिशा बताओ जहां मैं तीर चला हूं तो इसका कोई अपयश ना हो किसी प्रकार की हानि ना हो इस पर समुद्र उत्तर देता है कि मेरे उत्तरी तट पर रहने वाले पाप कर्म करने वाले अत्याचारी मनुष्यों का वध कीजिए इससे मेरा उत्तरी तट पाप मुक्त हो जाएगा| यहां ऐसा भी प्रतीत होता है जैसे परिणाम स्वयं ही यह जानते थे कि समुद्र के उत्तरी तट पर विनाशी प्रवृत्ति के मनुष्य रहते हैं परंतु उन्होंने समुद्र से राय मांग पर उसको इस बात की प्रसन्नता भी दी कि यह निर्णय उसके अनुसार हुआ है यह युक्ति विश्वास बनाए रखने का काम करते हैं किसी की इच्छा को मान देना उस से परामर्श लेकर कार्य करना प्रभावकारी होता है ऐसा करने वाले व्यक्ति का प्रभाव सदैव ही सकारात्मक होता है यहां शक्ति एवं बुद्धि का युक्तिपूर्ण प्रभाव देखने को मिलता है| एक सशक्त युद्ध को अपने पक्ष में देखकर कौन प्रसन्न नहीं होगा ? कौन सा ऐसा व्यक्ति होगा जो निर्बल व्यक्ति के पक्ष में खड़ा होकर स्वयं को सुरक्षित समझेगा ? क्रोधित होने के उपरांत भी श्री राम ने समुद्र से उसका कष्ट पूछा उसके लिए जो हानिकारक अधर्म से भरे हुए अत्याचारी मनुष्य थे उनका नाश करके श्री राम ने समुद्र को उनके द्वारा दिए जा रहे कष्टों से मुक्त किया| अपने नीति युक्त व्यवहार से श्री राम ने लोगों के मन में व्याप्त संदेह को सदैव ही दूर किया तथा उनके विषादों का दमन किया| कूटनीति का एक महत्वपूर्ण बिंदु होता है; पारस्परिक संबंध यह संबंध सुदृढ़ एवं प्रभावी होने चाहिए किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु आपसी निर्भरता बहुत महत्व रखती है विषम परिस्थितियों में भी समताओं की संभावना रखना एवं उनकी प्राप्ति हेतु अपने व्यवहार तथा अपनी सोच को निमित्त बनाना ही कूटनीति कहलाता है| उचित समय पर उचित निर्णय लेना उस निर्णय के सकारात्मक नकारात्मक दोनों पक्षों को भलीभांति समझना उनके लिए माध्यम ढूंढना अर्जित करना परस्पर विरोधी मानसिकता वाले मनुष्यों को एक दल में एक सोच के साथ ले आना एक संगठन के रूप में सबके लिए हितकारी निर्णय लेना| कूटनीतिक संबंधों को बनाए रखने के लिए कभी-कभी थोड़ी हानि भी सहन करनी पढ़ सकती हैं लेकिन उसके बदले में जो विश्वास जो साथ जो समर्थन मिलता है वह अतुलनीय होता है | वैसे ही जैसे श्री राम और रावण के युद्ध में रावण विभीषण पर कुपित होकर बाण चलाता है; तब श्रीराम सोचते हैं विभीषण की रक्षा करना ही मेरा परम कर्तव्य है इसमें अगर मेरी हानि होती है मेरे प्राणों की हानि होती है तो भी कोई बात नहीं क्योंकि कूटनीति का अर्थ स्वार्थ-परायणता नहीं अपितु निपुणता के साथ कार्य करने की दक्षता कार्य योजना बनाने की दक्षता एवं उस योजना को फलीभूत करने की दक्षता है|

आवत देखि सक्ति अति घोरा | प्रनतारति भंजन पन मोरा ||
तुरत विभीषन पाछे मेला | सन्मुखराम सहेउ सोइ सेला || १२५

अत्यंत भयानक शक्ति को आता देख श्री राम अपने मन में यह विचार करते हैं कि मेरा काम विभीषण के दुख का नाश करना है उसको दुख देना नहीं ऐसा विचार करके श्री राम तुरंत ही विभीषण को पीछे कर देते हैं और सामने से आ रही उस घातक शक्ति को स्वयं सहन कर लेते हैं क्योंकि उस समय प्राण की रक्षा करना

---

१२४ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित पृष्ठ संख्या ७०६

अपना कर्तव्य नहीं चाहते थे किसी भी प्रकार विभीषण को रावण की सेना का कोप भाजन बनना पड़े किसी भी प्रकार से विभीषण की रक्षा करना चाहते थे| ये श्री राम का युद्ध था इसका प्रभाव किसी और पर नहीं पड़ने देना चाहते थे| उन्होंने स्वयं विभीषण का राजतिलक लंका के भागी राजा के रूप में किया था और वे अपने किसी भी प्रण किसी भी वचन को कभी खाली नहीं जाने देते थे| रावण ने अपने भाई से एक शत्रु के तरह ही व्यवहार किया वही श्री राम ने विभीषण के साथ मित्रवत व्यवहार किया इस घटना का प्रभाव विशेषण के मन पर कैसा और कितना हुआ होगा वह हम इस बात से समझ सकते हैं कि उस शक्ति से घायल होने के उपरांत जब श्री राम युद्ध भूमि में गिरे तो विभीषण अपने अस्त्र-शस्त्र लेकर रावण से युद्ध करने उसके सामने आ गए| यह बात रावण को भी अचंभित करती होगी कि कैसे आजीवन मेरे साथ रहने वाला मेरा छोटा भाई जिसको मैंने स्वयं संरक्षित किया आज वह किसी अन्य और वह भी रावण के शत्रु के पक्ष में अस्त्र-शस्त्र लेकर मुझ से युद्ध करने को तैयार ठीक इसी प्रकार अंगद के मन में हम श्री राम के प्रति प्रेम तथा उसके स्वयं के पिता बालि के प्रति पिता की छवि से विपरीत एक अन्यायी -पुरुष का भाव रखते हुए देखते हैं यद्यपि श्री राम के द्वारा ही बाली का वध किया गया तथापि अंगद के लिए वह पूजनीय थे क्योंकि जिस प्रकार रामजी ने अंगद तथा उसकी माता तारा को संरक्षण दिया उनके अधिकार दिए युवराज का पद दिया यह बात अपने आप में सिद्ध करती है कि श्री राम एक कुशल नीति कार कूटनीतिज्ञ एवं राजनीतिज्ञ थे | इस बात का भली प्रकार ज्ञान था कि कब कहां कैसे कितना और किससे वार्तालाप करना है संबंध बनाना है तथा उस संबंध को दृढ़ता से निभाना है उनका कोई भी निर्णय अपूर्ण नहीं होता था प्रत्येक स्थिति व्यक्ति तथा उस निर्णय के प्रभाव को सोच समझकर ही क्रियान्वित करते थे| उनकी पारदर्शी तथा मित्रवत व्यवहार के कारण कोई भी उनकी तरफ बड़ी सरलता से आकर्षित हो जाता था क्योंकि उन्हें यह दक्षता थी कि वह प्रतिकूल स्थितियों में भी कार्य कर लेते थे दिशाहीन अवस्था में भी उचित दिशा का ज्ञान कर लेते नकारात्मक तत्वों में से सकारात्मकता ढूंढ लेते थे अन्याय के विरुद्ध ही दोषी को अपने दोष सुधारने का उसे सुनने का उसे समझने का अवसर अवश्य देते थे अपनी कुशल रणनीति के अंतर्गत वे व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ने की कला में पारंगत क्योंकि वे संगठन की शक्ति को जानती थी उनके अंदर सभी प्रकार के दबावों को सहन करने की अद्भुत क्षमता थी कोई भी दुख कोई भी उन्हें मात्र के लिए भी विचलित नहीं कर सकता था अपनी जन्मभूमि अपने कर्तव्य अपनी प्रजा की रक्षा हेतु वे सदैव ही तत्पर रहते थे और यही उनके प्रमुखता थी जन्मभूमि का मान सम्मान तथा उसके प्रति प्रेम एक राजा अथवा एक साधारण पुरुष के रूप में किस प्रकार कार्य किया जा सकता है ताकि उसका लाभ अधिक से अधिक लोगों को मिले और अपनी प्रजा को एक साधक की तरह साधते थे| चौदह वर्ष के अपने वनवास में उन्होंने सबको बहुत सकारात्मक तरीके से आपस में जोड़े रखा धर्म आचार विचार संस्कृति नैतिकता आदि का विस्तार करते रहे यूं ही तो नहीं वे पूरे विश्व में विख्यात हैं अनेकों भाषाओं में उनकी कथाएं गाय कथा सुनाई जाती है; उनका मंचन होता है| अपनी सीमाओं का विस्तार करने के लिए उन्होंने सदैव ही मानवता तथा सद्गुणों का सहारा लिया वे किसी के ऊपर आक्रमण करके उसे जीतने में विश्वास नहीं रखते थे उसे नैतिकता के रास्ते को चलते हुए देखना क्योंकि वे इसका महत्व जानते उनका संपूर्ण जीवन प्रयोगशाला की तरह जिसमें विभिन्न प्रकार के समीकरण तथा विभिन्न प्रकार के उत्तर दिखते हैं जीवन जीने के विभिन्न दृष्टिकोण तथा आयाम मिलते हैं उनकी रणनीति कूटनीति सदैव ही सृजन की पक्षधर रही हैं| वे भारत को एकता एवं अखंडता के सूत्र में बांध देना चाहते थे|

---

१२५ - सुंदरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ७०६

उत्तर भारत के अतिरिक्त तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, केरल, कर्नाटक सहित नेपाल, लाओस कंपूचिया , कंबोडिया, मलेशिया, इंडोनेशिया, भूटान, श्रीलंका, बाली, सुमात्रा तथा थाईलैंड आदि देशों तक आर्यव्रत की सीमाएं हुआ करती थी| तभी तो इन देशों के लोक-संस्कृति एवं लोक ग्रंथों में श्री राम आज भी जीवित हैं| वस्तुतः कूटनीति का आजकल एक और शाब्दिक अर्थ निकल कर आ रहा है और वह है राजनय यदि इस शब्द की भी समीक्षा करते हैं; तो जो तथ्य सामने निकल कर आता है वह यह है कि राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबके बीच में आपसी संबंध को जोड़ना तथा इसको कुशलतापूर्वक निभाना | राजनीति अर्थात राज्य से संबंधित नीति मूल्य तक अपने राजकाज को चलाने के लिए अपने राज्य के लोगों की सेवा तथा उनका पालन पोषण करने के लिए जिन नीतियों का प्रयोग किया जाता है, उसे राजनीति कहते हैं| यह राज्य के स्थायित्व एवं उसकी सत्ता को सुचारू रूप से संचालित करने का एक प्रकार का निर्देशन है| राज्य संबंधित कार्यों के विषय में उचित या अनुचित का ज्ञान कराने वाली नीति है| इस नीति के निर्देशन के अनुचित होने पर राज्य का विनाश होता है तथा उचित होने पर राज्य का स्थायित्व दृढ़ होता है यह राज्य की शक्ति का नियंत्रण तथा आधिपत्य करने की किसी राज्य की या किसी राजा की राजनीति ही इस बात को निर्धारित करती है कि वह राज्य उन्नति के शिखर में है या अवनति के पाताल में नारायण हिंदी शब्द सागर के अनुसार राजनीति का अर्थ है वह नीति जिसका अवलंबन करके राजा अपने राज्य की रक्षा तथा अपने शासन को दृढ़ करता है| इस नीति के प्रमुख भेद हैं, तंत्र तथा प्रजा; श्री राम के राज्य में किसी भी प्रकार का सामंतवाद नहीं उनका अपनी प्रजा के साथ सीधा संवाद होता था सभी प्रकार के रामायण में राजनीति का प्रभाव देखा जा सकता है चाहे वह गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरितमानस हो या वाल्मीकि जी द्वारा रचित रामायण इन सभी में राजनीति एक विशेष विषय के रूप में वर्णित है राजनीति की संरचना के प्रमुख घटक राज्य व्यवस्था राजा न्याय व्यवस्था मंत्रिमंडल राजगुरु राजदूत संगठन आदि हैं कहा जाता है कि जिस राज्य में जितनी अच्छी शासन व्यवस्था होगी उस राज्य का उतना ही अधिक विकास होगा और यह विकास यह शासन व्यवस्था हमें राम राज्य में बड़ी सरलता से देखने को मिलता है जिसमें राजा तथा प्रजा अपने अपने कार्य को सम्यक रूप से करते थे | श्रीराम अपनी प्रजा को अपने संघ और प्रजा का श्री राम के प्रति विश्वास भी ठीक वैसा ही था जैसे एक संतान का अपने पिता के प्रति कि हमारे पिता हमारा अहित कभी नहीं होने देते एक ऐसा विश्वास जिसके लिए कोई विशेष शब्द या विशेष भाग की आवश्यकता नहीं है| श्री राम के राज्य में प्रजा ही राज्य का केंद्र बिंदु थी और राजा का जीवन उसके चारों तरफ घूमता था श्री राम को राजनीति की एक उनके पिता राजा दशरथ से मिली थी क्योंकि वे स्वयं एक चक्रवर्ती सम्राट और उनको इस बात का भान भली-भांति था कि; वही राजा एक कुशल राजा के रूप में स्थापित हो सकता है| जिसकी प्रजा उस पर आंख मूंदकर विश्वास करती हो अर्थात प्रजा के विश्वास को निभाने के लिए राजा को कुछ भी करने के लिए तैयार रहना चाहिए किसी भी चीज परिवार के किसी भी सदस्य अपने किसी भी सुख वैभव का त्याग करने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए लाभ हानि वैभव संपदा तथा अपने आराम को पीछे छोड़ते हुए अपने सुख सुविधाओं का त्याग करते हुए सदैव ही प्रजा की सेवा में तत्पर रहने वाला राजा श्रेष्ठ कहलाता है| श्रीराम के अनुसार जो नरेश अपने राज्य कर्म का निर्वहन न्यायोचितविधि से नहीं करता है वह पाप का भागी होता है| जो अपने कर्म से बचता है जो अपने सुख सुविधा, धन वैभव का त्याग नहीं करता है| उस राजा के जीवन काल तथा शासन काल पर एक ऐसा कलंक लग जाता है जिसे पीढ़ियों के बाद भी मिटाया नहीं जा सकता| उन्हें लक्ष्मण जी तथा सीता जी को वापस लेने आए भरत को भी उन्होंने राजनीति का पाठ पढ़ाया सुग्रीव, विभीषण को भी राजनीति के महत्वपूर्ण बिंदु समझाएं अंगद को राजकुमार के रूप में किस तरह का व्यवहार करना चाहिए कितना संयमित रहना चाहिए यह भी सिखाया अपने आचरण के द्वारा श्रीराम ने इस बात को सिद्ध किया|

कि जिस राज्य में जितना न्यायप्रिय राजा होगा वहां उतनी ही अच्छी न्याय व्यवस्था होगी लोगों का विश्वास बना रहेगा जिससे सामाजिक वातावरण सौहार्दपूर्ण रहेगा जिस राज्य की शासन व्यवस्था सुदृढ़ होगी वहां की सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक स्थिति अपेक्षाकृत सशक्त होती है और यही एक कुशल राजनीतिज्ञ का सर्वोत्तम गुण होता है कि राज्य के लिए बनी उस प्रत्येक नीति का पालन करना; जिससे राज्य उन्नति की राह पर अग्रसर हो सभी वर्गो समानता का दृष्टिकोण तथा धनी - निर्धन, उत्कृष्ट -निकृष्ट किसी में भी किसी प्रकार का व्यावहारिक भेद न करना|

उनकी कुशल राजनीति का सर्वोच्च उदाहरण स्वयं राम राज्य है जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना उस समय हुआ करता था जब वे समाजवाद के पुरोधा बने राजा का उत्तरदायित्व संभाल रहे थे एवं उनकी कूटनीति सदैव ही इस धारणा पर आधारित थी कि जिस विधि से न्यूनतम हानि हो अथवा जिस विधि से हानि ना हो उसी विधि का पालन करते हुए कार्य को संपूर्ण किया जाए अस्त्र शस्त्र तथा बाहुबल के प्रयोग में बहुलता से विश्वास नहीं करते थे बातचीत करके आपसी सामंजस्य से प्रत्येक समस्या का निवारण कर लिया करते थे उनका शत्रु भी उनका प्रशंसक बन जाता था और अनादि काल से हम उनके जीवन से उनकी नीतियों से उनके विचारों से स्वयं को शिक्षित करते चले आ रहे हैं |

४.५ -सशक्त संचार एवं सूचना तंत्र :

राजा की राजनीति एवं कूटनीति का आधार बनते हैं, गुप्तचर| राज्य के कार्यों में गुप्तचर विभाग का महत्वपूर्ण स्थान है और यह गुप्तचर व्यवस्था हम श्रीराम के जीवन में प्रमुखता से देखते चले आ रहे हैं;जब वे ऋषि विश्वामित्र के साथ वनवासियों एवं ऋषि मुनियों की रक्षा करने के लिए वन जाते हैं या चौदह वर्ष के अपने वनवास के समय सीता जी के हरण के उपरांत युद्ध की तैयारियों में तो हम विशेष रूप से यह पढ़ते
हैं कि किस प्रकार श्री राम गुप्तचरो के माध्यम से शत्रु दल के सारी विशेष सूचनाएं प्राप्त कर लेते थे| श्री राम ने अनेक कोल -भील, वानरों आदि को गुप्तचर बनाकर सीता जी के बारे में पता लगवाया| अयोध्या का राजा बनने के उपरांत भी गुप्तचरों के द्वारा प्रजा के विचार तथा हाल-चाल को जानते रहे और उस सूचना को सुनिश्चित करने के लिए वे स्वयं ही भेष बदलकर प्रजा के बीच में जाते थे|`अयोध्या कांड के अनुसार जब श्री राम वनवास को सहर्ष स्वीकारते हुए चित्रकूट में वास करते हैं| तभी अकस्मात् एक दिन वनवासियों के द्वारा उन्हें सूचना मिलती है कि भरत जी बड़े दल बल के साथ अयोध्या के समस्त समाज एवं चतुरंगिणी सेना को साथ लिए चले आ रहे हैं |

तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सकचित रहे |
सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेही अवसर कहे || १२६

अयोध्या से कोसों दूर चित्रकूट में निवास करते हुए भी कोल- भील लोगों के द्वारा उस दिशा में आ रहे सकल समाज समूह की जानकारी श्री राम को उनकी कुटिया में बैठे-बैठे ही मिल गई थी| उस दलबल में कौन-कौन आ रहा है? सेना का विस्तार कितना है उस दल की अगुवाई कौन कर रहा है? जैसे प्रत्येक सूक्ष्म बिंदु की भी जानकारी उन्हें मिल गई थी| उनकी कुटिया की तरफ आने वाले किसी भी व्यक्ति की जानकारी उन्हें मिल जाया करती थी|

---

१२६ - अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ४८५

इसके लिए भी अवश्य ही उन्होंने स्वाभाविक रूप से कुछ न कुछ कार्य किए होंगे| कोई न कोई नीति बनाई होगी कुछ कर्तव्योंका निर्वहन किया होगा;एक विश्वसनीय वातावरण बनाया होगा| वनवासियों अंदर आत्मविश्वास जगाया होगा, सुरक्षा का भाव जागृत कर आपसी सौहार्द एवं सहयोग की व्यवहारिक सीख दी होगी|

वृहद्श्रीमद वाल्मीकीयरामायणभाषारामायण के अनुसार लक्ष्मण जी द्वारा शूर्पणखा अभद्रता करने पर उसके नाक कान काट दिए जाते हैं| तब वह रोती हुई क्रोध से पुकारती हुई रावण के दरबार में जाती हैं और कहती है

करसि पान सोवसि दिनु राति | सुधि नहिं तव सिर पर आराती ||
राजनीति बिनु धन धर्मा | हरहि समर्पे बिनु सतकर्मा || १२७

तेरे शत्रु तेरा विनाश करने के लिए गोदावरी नदी के किनारे आ गए हैं; अभी तक तुझे कोई खबर नहीं है राजनीति तू जानता नहीं है अब तेरा विनाश होने वाला है| तुझे अपने राज्य के आसपास होने वाली किसी भी घटना का कोई भी समाचार नहीं प्राप्त| उपर्युक्त पंक्तियों से यह ज्ञात होता है कि रावण के राज्य में गुप्तचर व्यवस्था सजग एवं सुदृढ़ नहीं थी; इसीलिए उसकी बहन उसे उलाहने देते हुए कहती है कि तू किस प्रकार का राजा है? जिसे राजनीति का ज्ञान ही नहीं है जिसको यही नहीं पता कि उसके आसपास क्या घटित हो रहा है| अपने आमोद-प्रमोद और भोग विलास में लिप्त है| शूर्पणखा कहती है कि तुम यहां मंत्रियों से घिरे बैठे हो इसीलिए तुम्हें किसी भी घटना का कोई समाचार प्राप्त नहीं होता; तुम्हें गुप्तचर नियुक्त करने की कोई सुध नहीं है, इसीलिए तुम्हारे सगे-संबंधी, भाई-बंधु मारे जा रहे हैं और तुम यहां उन परिस्थितियों से अनभिज्ञ आमोद-प्रमोद में व्यस्त हो रावण को चेतावनी देते हुए शूर्पणखा कहती हैं कि जो राजा अपनी तथा अपने राज्य की सुरक्षा-जानकारी के लिए गुप्तचर नियुक्त नहीं करता; उसे प्रजा वैसे ही त्याग देती है जैसे कीचड़ में फंसा हुआ हाथी| जो राजा समय के अनुसार नीति से न चलने वाला हो वह अपनी प्रजा के लिए नष्ट ही हो जाता है प्रजा, कामी एवं प्रजा से न मिलने वाले तथा गुप्तचरो से रहित राजा का त्याग कर देती है| जिस राजा के पास गुप्तचर न हों और कोष भी उसके अधीन न हो उसको राजा कहना भ्रम है| अपनी प्रजा तथा राज्य की सीमाओं की जानकारी रखने वाला राजा दूरदर्शी कहलाता है| महापराक्रमी खर और दूषण अपनी चौदह सहस्त्र सेना सहित एक साधारण मनुष्य रामचंद्र के द्वारा मार डाले गए| दंडकारण्य को निष्कंटक बना,राम ने ऋषि-मुनियों और तपस्वियों को अभय कर दिया है और तुम कान में तेल डाल कर बैठे हो| तुम विषयों के प्रति आसक्त हो चुके हो| सदा निर्भय रहने वाला अपने कर्तव्य से च्युत राजा अवश्य नष्ट हो जाता है| सूखी लकड़ी और मिट्टी तो किसी न किसी समय काम आ ही जाती है परंतु अपनी राज्य से च्युत राजा किसी अर्थ का नहीं रह जाता वह मसली हुई माला एवं उतरे हुए वस्त्र के समान ही निरर्थक हो जाता है| अपनी प्रजा तथा अपने साम्राज्य की जानकारी रखते हुए राज्य धर्म का पालन करने वाला अवश्य ही दीर्घकाल तक राज्य करता है जो राजा सोता हुआ भी नीति रूपी नेत्रों से देखता रहता है जिसकी प्रसन्नता एवं क्रोध व्यर्थ नहीं होते वह अवश्य ही तीनों लोकों में पूजनीय होता है परंतु भाई तुम्हारी बुद्धि तो भ्रष्ट हो गई है, तुम्हारे पास इन साधनों में से एक भी साधन नहीं है तभी तो तुम जनस्थान के समाचारों को नहीं जान पाते|

---

१२७ - तैंतीसवाँ सर्ग ,वृहद्श्रीमद वाल्मीकीयरामायणभाषा,पं० रामलगन पाण्डेय 'विशारद',रूपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन पृष्ठ संख्या ४०६,

इस प्रसंग के द्वारा हमें इस बात का पता चलता है कि एक कुशल राजा का संचार-तंत्र एवं गुप्तचर सेवा सशक्त होनी चाहिए| वही राजा निश्चित कंटक राज्य कर सकता है, जिसे अपने राज्य के प्रत्येक कोने का समाचार प्राप्त हो जो अपने राज्य में घटने वाली छोटी- बड़ी प्रत्येक घटना से अवगत हो|

श्री राम की गुप्तचर व्यवस्था कहीं ज्यादा सशक्त थी, उनकी गुप्तचर-व्यवस्था के प्रमुख थे हनुमान जी; जो कि स्वयं ही एक अद्भुत गुप्तचर थे| किष्किंधा कांड में श्री राम और लक्ष्मण को आते हुए देख हनुमान जी सुग्रीव जी के आदेश पर ब्राह्मण का वेश बनाकर आगंतुकों के बारे में पता करने पहुंच गए वेश बदल लेने की हनुमान जी के इस प्रतिभा को देखकर एक राम ने उन्हें गुप्तचर कार्य संभालने का उत्तरदायित्व दिया| सुग्रीव के राज्याभिषेक के उपरांत श्रीराम उनसे कहते हैं कि हे वानरपति सुग्रीव! सुनो मैं चौदह वर्ष तक किसी गांव किसी बस्ती में नहीं जाऊंगा ग्रीष्म ऋतु बीततकर वर्षा ऋतु आ गई है| अतः मैं यहां पास के ही पर्वत पर अपना निवास रखूंगा तुम अंगद सहित राज्य करो और मेरे काम का सदैव हृदय में ध्यान रखना तदंतर जब सुग्रीव जी अपने राज्य लौट गए तब श्री राम प्रवर्षण पर्वत पर जा टिके | वर्षा ऋतु बीतने के उपरांत जब श्रीराम के मन में यह जिज्ञासा हुई कि सीता जी का पता लगाने के लिए सुग्रीव ने कोई प्रयोजन किया होगा अथवा नहीं इसकी जानकारी हेतु उन्होंने लक्ष्मण जी को भेजा श्री राम के मन की बात को जाने के उपरांत हनुमान जी ने सुग्रीव को यह याद दिलाया कि उन्होंने सीता जी को ढूंढने का वचन दिया है| अपने दिए गए वचन को याद करने पर सुग्रीव कहते हैं कि -

अब मारुतसुत दूत समूहा | पठवहु जह तह वानर जूहा || १२८

हे पवनसुत ! जहां-तहां वानरों के यूथ रहते हैं, वहां दूतों के समूहों को भेजो| किसी भी प्रकार से पता लगाओ कि सीता जी कहां हैं? सुग्रीव जी मैं सभी दूतों एवं गुप्त चोरों को एक पखवाड़े अर्थात पंद्रह दिन का समय दिया कि किसी भी प्रकार से सीता जी की स्थिति का पता चलना ही चाहिए| सभी प्रकार की नीतियों एवं कलाओं से सुसज्जित गुप्तचर अपनी-अपनी दिशाओं की ओर अग्रसर होने के लिए तैयार हो गए| गुप्तचरों के रवाना होने से पहले श्री राम ने प्रत्येक गुप्तचर से उसकी कुशल क्षेम पूछी प्रत्येक गुप्तचर को उत्साहित किया| इस समय में गुप्तचर ही सीता जी का पता लगाने के एकमात्र आधार थे तथा श्री राम उन सब की उपयोगिता को भलीभांति समझते थे| वे जानते थे कि एक सशक्त गुप्तचर व्यवस्था है; उनके कार्य को सफल बना सकती है जैसे ही सुग्रीव ने वानरों को विभिन्न दिशाओं में जाने की आज्ञा दी, वे सारे गुप्तचर एक ही उद्देश्य के साथ अपनी विविध कलाओं में पारंगत कुशलता के परिचायक निकल पड़े| श्री राम के काम को संवारने के लिए एक ऐसे बलशाली योद्धा तथा उसके नगर का पता लगाने के लिए जिसनेसीता जी का हरण किया था और उन्हें अपने राज्य में बंधक बना कर रखा हुआ था |

अस कपि एक न सेना माहीं | राम कुसल जेहि पूछी नाहीं || १२९

श्री राम को अपने प्रत्येक गुप्तचर के प्रति विशेष लगाव था| वे उनका महत्व भली-भांति जानते थे कि गुप्तचर ही एकमात्र स्रोत थे| जिनसे सीता माता का पता लगाया जा सकता था| कुशल गुप्तचर सेवा के कारण ही वे सीता जी का पता लगा सके थे| उनके पास नाना प्रकार की युक्तियां एवं माध्यम थे| जिस को आधार बनाकर वे अपरिचित क्षेत्र में भी परिचय निकालकर माता सीता की स्थिति ज्ञात कर सकते थे| श्रीराम अपने गुप्तचरों

१२८, १२९ -किष्किंधाकांड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या ६४४,६४६

पर उचित रुप से विश्वास करते थे|उनकी सेना का एक- एक गुप्तचर उनके लिए विशेष था| किसी भी कार्य अथवा योजना के विशेष परिणाम की सफलता हेतु उसके प्रत्येक तथ्य की जानकारी होना अति आवश्यक है| किसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उसके प्रत्येक बिंदु को जानना अति आवश्यक है और जब बात युद्ध क्षेत्र की हो तो शत्रु की दशा तथा दिशा इसका ज्ञान होना अति आवश्यक है और गुप्तचर का यही कार्य होता है की शत्रु-दल की स्थिति भली भांति संज्ञान ले सके|

श्रीराम के दल में गुप्तचर कार्य में सर्वाधिक निपुण गुप्तचर हनुमान जी थे| जिनका बदला हुआ रूप ब्राह्मण का वेश सभी कुछ श्रीराम के स्मृति पटल पर भली-भांति अंकित थे| यही कारण है कि श्री राम दूत के रूप में वह लंका में एक गुप्तचर की भांति प्रवेश करते हैं और पूरे नगर का त्वरित सर्वेक्षण कर लेते हैं| अल्प समय अवधि में विभीषण में संपर्क सूत्र बनने की संभावना देखकर उन्हें राम का स्थानिक गुप्तचर बना लेते हैं|

अपनी रणनीति के अनुसार जब हनुमान जी लंका में प्रवेश करते हैं तो सीता माता की खोज में वे प्रत्येक महल की छानबीन करते हैं| इसी क्रम में वे रावण के महल में जाते हैं और वहां जानकी जी को ढूंढने का प्रयास करते हैं तभी ही उन्हें एक सुंदर-सा महल दिखाई देता है| उस महल की विशेषता यह थी कि वहां भगवान का एक अलग सुंदर सा मंदिर बना हुआ था|

रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखिहरष कपिराइ || १३०

वह महल धनुष बाण के चरणों से सुसज्जित था| उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता| वहाँ नवीन नवीन तुलसी के समूहों को देखकर कपिराज हनुमान जी हर्षित हुए| संपूर्ण लंका का राज क्षेत्र भ्रमण करने के उपरांत हनुमान जी को इस भवन में कुछ विशेषता दृष्टिगोचर हुई इसकी सज्जा तथा इसके आसपास का वातावरण बाकी राज निवासों से सर्वथा भिन्न था फिर उन्होंने विभीषण को भगवान के नाम का स्मरण करते हुए देखा और अपने हृदय में उन्हें इस नगरी में एकमात्र सज्जन जानकर हनुमान जी हर्षित हुए और उन्होंने अपने मन में इस विचार को धारण किया कि इस व्यक्ति से तो हठ करके भी परिचय करना होगा क्योंकि साधु से कार्य की हानि नहीं होती अर्थात प्रत्युत लाभ ही होता है | सज्जन व्यक्ति प्रत्येक पक्ष के गुण तथा दोषों को भली-भांति समझता है वह सत्य सत्य के मार्ग का अंतर जानता है हनुमान जी यहां पर पुनः गुप्तचर कला में पारंगत होने का प्रमाण देते हैं कि कैसे एक गुप्तचर के रूप में वे शत्रु पक्ष के किसी विशेष व्यक्ति जो कि राज परिवार से संबंध रखता है उसके हावभाव उसके घर की सज्जा आदि को देखकर ही उसकी मनोवृति का आकलन कर लेते हैं|

बिप्र रूप धरि बचन सुनाएं | सुनत बिभीषन उठि तंह आए ||
करि प्रणाम पुंछि कुसलाई | बिप्र कहहूं निज कथा बुझाई || १३१

हनुमान जी अपने हृदय में चलने वाले भावों तथा विचारों की पुष्टि हेतु ब्राह्मण का रूप धारण करके उन्हें पुकारते हैं| उनकी पुकार सुनकर विभीषण जी उठ कर वहां आते हैं और ब्राह्मण रुपी हनुमान जी को प्रणाम करके उनकी कुशलता पूछते हैं और कहते हैं कि अपनी कथा समझा कर कहिए क्या आप भगवान के भक्तों में से कोई है? क्योंकि आपको देखकर मेरे हृदय में अत्यंत प्रेम उमड़ रहा है|

१३०,१३१- सुंदरकांडरामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी, पृष्ठ संख्या ,६६२

अगर ऐसा है तो मेरे जैसा भाग्यशाली कौन होगा जिसको घर बैठे ही आप अपने दर्शन देने आए हैं | इसके उपरांत हनुमान जी आश्वस्त हो जाते हैं कि वह जो कुछ भी विभीषण के लिए अपने हृदय में सोच रहे थे वह सब सत्य है वह अपना वास्तविक परिचय देते हैं | विभीषण जी से जानना चाहते हैं कि वह कौन है और राक्षसों की इस नगरी में वह किस प्रकार भगवान का स्मरण करते हैं उनके विचार क्या है एवं उनको किन-किन बातों का ज्ञान है विभीषण जी हनुमान जी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहते हैं कि -

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी | जिमि दसननहि महुँ जीभ बिचारी ||
तात कबहुं मोहि जानि अनाथा | करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा || १३२

हे पवनपुत्र ! मैं यहाँ किस प्रकार रहता हूँ? उसका हाल सुने मैं यहाँ वैसे ही रहता हूँ जैसे दाँतों के बीच में बेचारी जीभ रहती है| हे तात ! मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुल के नाथ श्री रामचंद्र जी क्या कभी मुझ पर कृपा करेंगे ? विभीषण जी के अनुसार जिस प्रकार जीभ चारों ओर से दाँतों से घिरी होती है| उसी प्रकार मैं यहां विपरीत स्वभाव वाले लोगों के बीच में घिरा हुआ हूँ| जिस प्रकार जीभ को सदैव ही दाँतों द्वारा काटे जाने का भय रहता है| उसी प्रकार मुझे भी सदैव यह भय लगा रहता है कि न जाने कब मेरे ऊपर प्रभु प्रेम के कारण विपरीत विचारधारा के कारण घात हो जाए| इनके ही परिवार का सदस्य होने के उपरांत भी विरोधाभास के कारण ये मुझे क्षति पहुँचा सकते हैं| सारे वार्तालाप के बीच में ही बातों बातों में हनुमान जी विभीषण जी को अपने विश्वास में लेकर माता सीता का पता पूछते हैं और विभीषण जी भी हनुमान जी पर पूर्ण विश्वास करते हुए| श्री राम के धर्म तथा सत्य के मार्ग पर आरूढ़ होने के कारण पूरा सहयोग देने का भाव रखते हैं|

पुनि सब कथा विभीषन कही | जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही ||
तब हनुमंत कहा सुन भ्राता | देखि चहहु जानकी माता || १३३

फिर विभीषण जी ने श्री जानकी जी जिस प्रकार लंका में रहती थी वह सब कथा सुनाई सारी बात सुनने के उपरांत हनुमान जी ने कहा हे भ्राता! सुनो मैं जानकी माता को देखना चाहता हूँ| हनुमान जी को विभीषण जी पर पूर्ण विश्वास हो गया कि वह अवश्य ही उनकी सहायता करेंगे और वे सब प्रकार से अन्य राक्षसों से भिन्न हैं| तब उन्होंने माता जानकी का हाल-चाल तथा उनका निवास जानना चाहा क्योंकि लंका आने का उनका उद्देश्य यही था कि वह हर उस स्थिति एवं स्थान का आकलन कर सकें कि सीता जी को किस स्थान तथा किस हाल में रखा गया था? उनके इस उद्देश्य को पूर्ण करने में विभीषण जी ने उनकी यथासंभव सहायता की उनको लंका के बारे में साधारण तथा विशेष सभी प्रकार की बातें बताईं|

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई | चलेउ पवनसुत बीदा कराई ||
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ | बन असोक सीता रह जहवाँ || १३४

विभीषण जी ने सीता माता के दर्शन की सभी युक्तियां हनुमान जी को कह सुनाईं| तब हनुमानजी विदा लेकर चले फिर वही मसक के रूप में वहां से विदा हुए एवं अशोक वन के जिस भाग में सीता जी रहती थी वहां पहुँचे| पहले तो लंका का पता लगाना ही अपने आप में एक बहुत बड़ा कार्य था| उसके बाद उस नगरी

१३२,१३३, १३४ - सुन्दरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित ,पृष्ठ संख्या,६६३,६६४

में जाना जहां भयंकर राक्षस रहते हैं, जो विभिन्न प्रकार के तांत्रिक क्रियाओं तथा तंत्र-मंत्र से सुसज्जित हों अति भयानक स्वभाव के स्वामी हों और उस पर से उनका राजा लंकेश हो| ऐसे राज्य में घुसकर सीता माता का पता करना एक प्रकार से असंभव कार्य था परंतु श्रीराम के कुशल गुप्तचर के रूप में हनुमान जी ने इसे संभव कर दिखाया लंका के बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातें पता की जिसके लिए उन्होंने लंकेश के भाई विभीषण को साधन बनाया सीता माता का पता लिया और उनके दर्शन करने पहुंच गए | इतनी जटिल तथा विकट परिस्थितियों में भी श्री राम के पुत्र का वहां पहुंचना सिद्ध करता है उनके पास दक्ष गुप्तचर एवं संचार व्यवस्था थी जिसके द्वारा उन्होंने सीता तक यह संदेश पहुंचाया के श्रीराम उनको लेने आ रहे हैं| लंका में रहते हुए माता सीता को इस बात का आभास हो गया था कि यहां तक पहुंचना दुर्लभ है| उनके आसपास जिस प्रकार का पहरा लगाया गया था उसको देखकर वे सोचती हैं कैसे कोई तक पहुंचेगा या उनका संदेश श्रीराम तक कैसे पहुँचेगा? संपूर्ण युद्ध काल में श्री राम की गुप्तचर एवं संचार व्यवस्था एक सशक्त माध्यम के रूप में दिखती है| रावण के प्रत्येक उपाय एवं मायाका हल श्री राम की सेना में विद्यमान रहा साधारण आदिवासियों तथा बादलों से सुसज्जित देना जिसके पास युद्ध कला एवं पराक्रम के अतिरिक्त कोई और संसाधन उपस्थित नहीं था वह केवल और केवल अपने संचार माध्यम एवं सशक्त गुप्तचर सेवा के कारण शत्रु पक्ष के प्रत्येक दांवपेच को समझने में सफल रहे साथ ही अपनी पहुंच किसी न किसी रूप में शत्रु पक्ष के अंदर रखी रावण के राज्य की गुप्तकला एवं नीतियों को भली प्रकार समझते हुए| वे युद्ध करते रहे इसी क्रम में जब लक्ष्मण जी को शक्ति का वार सहन करना पड़ता है और वे मूर्छित हो जाते हैं तो उनके चिकित्सा किस प्रकार की जाए इसका हल भी जामवंत के द्वारा सुझाया जाता है और यह हल भी लंका से ही निकल कर आता है अन्यथा इस स्थिति में श्री राम की सेना ने लंका के बाहर पड़ाव डाला हुआ था वहां किसी भी संसाधन का उपलब्ध होना असंभव था | वही रावण को श्री राम के दल- बल की किसी प्रकार की दुर्बलता का कोई ज्ञान न था| विभीषण के पीछे उसने जो गुप्तचर भेजें वे भी श्री राम तथा उनकी सेना के बारे में बड़े ही सकारात्मक रूप से वर्णन करते हैं जिससे कहीं न कहीं प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप में रावण के ऊपर मानसिक दबाव बनता है उसे अपनी सोच अपनी नीतियों तथा अपने व्यवहार में हीनभाव का अनुभव होता है| वो अपनी कार्यशैली के बारे मे सोचकर असहज होता है|

जामवंत कह बैद सुषेना | लंका रहइ को पठई लेना ||
धरि लघु रूप गयउ हनुमंता | आनेउ भवन समेत तुरंता || १३५

लक्ष्मण जी के मूर्छित हो जाने के बाद जब चारों तरफ शोक का वातावरण बन गया तब जामवंत जी ने कहा कि लंका में सुषेण नामक वैद्य रहते हैं| उनको लाने के लिए किसी को लंका जाना पड़ेगा| तब हनुमानजी जाने के लिए तैयार हो गए और बहुत छोटा स्वरूप धारण कर वैद्य सुषेण को उसके घर समेत तुरंत ही उठा लाए| सोने की नगरी लंका से उनके नगर वैद्य को घर समेत उठा लाना कोई सरल कार्य नहीं था, परंतु श्री राम को अपने दल गुप्तचर तथा सहयोगियों पर पूर्ण विश्वास था| वे सभी संगठन की शक्ति के साथ जुड़े हुए थे जहां एक दूसरे के प्रति विश्वास समर्पण तथा सहयोग की भावना सर्वोपरि थी|युद्ध प्रारंभ होने से पूर्व रावण ने अपने कई गुप्तचर लंका के बाहर डेरा डाले श्री राम की सेना की शक्ति का अनुमान लगाने के लिए भेजा यह लोग विभिन्न प्रकार के रूप बनाकर राम जी की सेना में घुस गए और अपने कार्य करने लगे|

१३५- लंकाकाण्ड, रामचरितमान, गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ६६४

परंतु सुक और सर नामक दो प्रमुख गुप्तचर विभीषण के द्वारा पहचान लिए और पकड़ के सामने लाए गए| श्रीराम ने इन गुप्तचरों को न केवल क्षमा कर दिया अपितु अपनी सेना की कुछ मुख्य विशेषताएं भी उन्हें बताई ताकि वे रावण को राम की शक्ति का बोध करा सकें| रणभूमि में जब लक्ष्मण जी घायल हो गए तो विभीषण के बताए हुए स्थान से ही लंका जाकर हनुमान जी वैद्य सुषैण को लेकर आए बाद में विभीषण के द्वारा ही दी गई उक्त सूचना कि रावण की नाभि में अमृत है; जो कि उसके जीवन का आधार है| इसी सूचना के आधार पर ही श्री राम रावण का वध कर पाए|

श्री राम गुप्तचर तथा संचार व्यवस्था का महत्व तथा उपयोगिता भली प्रकार समझते थे| राजनीति कूटनीति अथवा संगठन नीति इन सब को सुचारू रूप से संचालित करने हेतु संचार एवं गुप्तचर व्यवस्था का सजग रहना अति आवश्यक है| प्रत्येक स्थान पर नेतृत्व का होना आवश्यक नहीं है क्योंकि उसे केंद्र में रहकर सब कुछ संगठित करना होता है| वह योजनाएं तो बना सकता है परंतु उन योजनाओं को संचार व्यवस्था के द्वारा ही दूरस्थ प्रदेशों एवं स्थानों में संचारित करवा सकता है| गुप्तचरों के द्वारा पक्ष-विपक्ष लोगों के मन की बात जान सकता है, उसके द्वारा लिए गए निर्णयों का क्या प्रभाव पड़ रहा है अथवा पड़ेगा इनके द्वारा ही दूरस्थ स्थानों पर होने वाली क्रिया-प्रतिक्रिया को सरलता से समझा जा सकता है| नीति-विस्तार हेतु संचार एवं गुप्तचर-व्यवस्था का होना अति आवश्यक है| एक कुशल राजा को यह भी ध्यान रखना होता है कि वह गुप्तचर एवं संचार व्यवस्था का किसी भी प्रकार से दुरुपयोग न करें स्वार्थवश इनका प्रयोग करना राजनीति के अंतर्गत उचित नहीं माना जाता था| श्री राम की गुप्तचर सेवा धर्म परायण थी किसी भी प्रकार का अनैतिक कार्य तथा स्वार्थ से कोसों दूर धर्म की स्थापना में तत्पर अनैतिक आचरण के विरुद्ध सजगता धर्म के मार्ग पर चलने का अटल साहस, मर्यादा पालन हेतु वचनबद्ध, शत्रु के प्रति भी मानवता पूर्ण व्यवहार रखना कुशाग्र बुद्धि, त्वरित निर्णय, वाकपटुता तथा स्वामी भक्ति ये उनकी पहचान थी| श्री राम उनके सभी गुणों का मान सम्मान करते थे और उन्हें अपने संगठन का पूरक तत्व मानते थे| वे श्री राम के विश्वासपात्र थे| अपनी व्यवहा रकुशलता के कारण हनुमान जी श्री राम के मन मे ये विश्वास भी स्थापित कर चुके थे कि उनके द्वारा लिए गए निर्णय हितकारी होते हैं|

पंचम अध्याय: लेखकीय परिपेक्ष्य

५.१ तुलसीदास के पुरुषोत्तम राम :-

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरितमानस अवधी भाषा में राम-कथा सात कांडों में विभक्त है| इसके द्वारा तुलसीदास जी ने श्री राम को साधारण जनमानस का राम बना दिया, वस्तुतः रामचरितमानस में श्री राम के जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को दर्शाया गया है| जिसमें वे मानसिक स्थिति को झकझोर देने प्रसंगों में भी बड़ी शालीनता से प्रदर्शन करते हैं| वीरता के साथ-साथ धीरता, गंभीरता एवं कोमलता ये भी श्री राम के विशेष गुण हैं| तुलसीदास के राम शिव, सौंदर्य एवं शक्ति तीनों के गुण सागर हैं| उनमें लोकमंगल की भावना प्रबल है| तुलसीदास की इस भावना का प्रभाव अन्य साहित्यकारों पर भी हुआ और वह इस तथ्य के रूप में बाहर निकल कर आया कि रामचरितमानस के राम सभी नायकों के नायक हैं| सबके शिक्षक अथवा कुशल शासक के रूप में प्रतिष्ठित हैं; उनके यही गुण उनका रामत्व हैं| बाल्यावस्था में जिस प्रसन्नता के साथ श्रीराम ने लक्ष्मण सहित अपना महल छोड़ा एवं विश्वामित्र ऋषि के साथ रहकर अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा प्राप्त की विकारी विकट राक्षसों के साथ युद्ध किया| वह उनके उल्लासपूर्ण साहस का सूचक है; जिसे उत्साह कहते हैं| बाल्यावस्था में ही उन्होंने विकट प्रवास किए| चौदह वर्ष वन में रहकर अनेक कष्टों का सामना करते हुए जगत को रावण के अत्याचार से मुक्त कराया रामचरितमानस के द्वारा हम श्री राम को आज्ञाकारी पुत्र वात्सल्य पूर्ण सहोदर न्याय प्रशासन एक पत्नीव्रता पति सहयोगी मित्र पर्यावरण प्रहरी नीति पालक धर्म के प्रति के रूप में देखते हैं| तुलसीदास जी ने श्री राम की लोक मंगल कामना से प्रेरित होकर सर्व हिताय सर्व सुखाय को केंद्र में रखते हुए रामचरितमानस का प्रसार किया उनके अनुसार राम प्रत्येक घट में वास करने वाले हैं| वे धर्म के मार्ग पर चलते हुए समाज के कल्याण के लिए सदैव तत्पर रहने वाले हैं| रामचरितमानस के राम साधारण मनुष्यों की भांति ही संकोची हैं| गुरु-वंदन कर उन्हें श्रेष्ठता प्रदान करते हुए माता पिता के लिए आज्ञाकारी पुत्र हैं| पत्नी के वियोग में दुखी होने वाले पति हैं| वानरों तथा भालू के साथी बनकर उस मित्रता को निभाने वाले मित्र हैं| रामचरितमानस के प्रत्येक कांड का अपना वैशिष्ट्य है, ज्ञानीजन इसके आध्यात्मिक महत्व को मानते हैं मानव जीवन का आदर्श रूप क्या हो सकता है? इसका विचार जगाती है रामचरितमानस अयोध्या को इस प्रकार वर्णित किया गया है| अयोध्या अर्थात जहां युद्ध नहीं, स्वार्थ भावना नहीं, विषमता नहीं, वही अयोध्या श्री राम के द्वारा उन्होंने मनुष्य को गैर मुक्त होकर शांतिपूर्ण जीवन जीने और दूसरों के सुख के लिए अपने सुखों का त्याग करने की सीख दी है| श्रीराम के आचरण का सबसे सकारात्मक पक्ष यह है कि वे सदैव ही दूसरों को स्वयं से अधिक महत्व देते हैं| दूसरों की भावनाओं को उनके विचारों को आत्मसात करते हुए उनकी इच्छा के अनुरूप ही कार्य करते हैं मान अपमान धर्म-अधर्म ,नीति-अनीति के मध्य का अंतर वे भली प्रकार समझते हैं उन्होंने सदैव ही अपने जीवन में नीति पूरक निर्णय लिए अपने किसी भी निर्णय में सदैव ही दूसरों को भागी बनाया| यह महाकाव्य इस शोध को जागृत करता है कि किसी भी प्रकार की वासना सदैव ही हृदय में अधर्म उत्पन्न करती है| धर्म तथा मैत्रीय का भाव एकांत चिंतन-मनन करने का अभ्यास हमारे आत्मिक बल को शुद्ध करता है| श्री राम का सब कर्मों की ओर झुकाव उनके जीवन को चिंता मुक्त बनाते हुए हमें यह संदेश देता है कि सत्कर्म करने वाला व्यक्ति किसी भी तरह के भाव से भयभीत नहीं हो सकता; निष्काम एवं निस्वार्थ प्रेम समस्त जीवो के प्रति स्नेह का भाव परोपकार जीवन को गति प्रदान करते हैं; प्रेममय जीवन विकारों का नाश करने में सक्षम है ।

रामचरितमानस सामाजिक राजनीतिक धार्मिक अनुशीलन के साथ-साथ उनमें प्रगतिशील तत्वों का समावेश चमत्कृत करने वाला है| सामाजिक प्रतिबद्धता एवं मूल्य बोध की प्रवृत्ति इस महाकाव्य को उद्धत स्वयं प्रदान करती है| सामाजिक-संस्कारों को जागृत करने कुमति पर सुमति की विजय दर्शाने कर्तव्य-बोध कर्म की प्रेरणा देने धर्म के मार्ग पर प्रत्येक जीवन के पथ को प्रशस्त करना ही इसका लक्ष्य है; इसी क्रम में तुलसीदास जी कहते हैं|

सुमति कुमति सब कें उर रहहीं | नाथ पुरान निगम अस कहहीं ||
जहं सुमति तहं सम्मति नाना | जहां कुमति तहं बिपति निदाना || १३६

वेद एवं पुराण ऐसा कहते हैं कि सद्बुद्धि तथा कुबुद्धि सबके हृदय में रहती है जहाँ सुबुद्धि होती है वहाँ विभिन्न प्रकार की संपदाएँ अर्थात सदैव ही सुख की स्थिति रहती हैं| जहाँ कुबुद्धि है वहाँ परिणाम में विपत्ति ही रहती है| श्री राम सदैव ही गहन विचार, चिंतन-मनन के उपरांत ही किसी बात को कहते अथवा किसी कार्य को करते थे| उनके द्वारा लिए गए निर्णय पूर्ण फलीभूत होते थे क्योंकि उनका मन-मस्तिष्क पूरी तरह शांत एवं सत्यनिष्ठाता के बोध से पूर्ण होता था| इसी कारण उनका आचरण अपनेशत्रुओं के प्रति भी विनम्र होता था मन से किसी से भी प्यार नहीं करते केवल अधर्म के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति को समझाने का प्रयास करते हुए ना समझने की स्थिति में दंडित करते थे उनके लिए कोई छोटा बड़ा नहीं था दे समानता के सिद्धांत में विश्वास करते थे अग्रज होते हुए सदैव ही उन कर्मों को किया जिससे उनके अनुज सदाचार को सीख सकें एवं कुल की मर्यादा का पालन कर सकें| किसी भी स्थिति में वे विचलित नहीं होते थे;सदैव ही शांत भाव से कर्मशील रहते थे| उनके स्वभाव में एक विशेष प्रकार की शांति की अनुभूति की जा सकती है| जिसको उनका नाम ही सार्थक करता है| तुलसीदास के राम एक मनमोहक मुस्कान के साथ प्रत्येक समस्या का हाल निकाल लेते थे| तुलसीदास के अनुसार श्री राम जी अपने राम नाम का ही अनुगमन करते हैं उनके नाम को पुकारना ही उनके प्रति आंतरिक एवं वाह्य दोनों रूपों में व्यावहारिक एवं आत्मिक पवित्रता प्रदान करता है| उन्होंने सदा दूसरों के सुख के लिए स्वयं दुख सहन किया| वे जहाँ भी जिस भी परिस्थिति में भी रहे; उसे अपने स्वभाव के प्रभाव के कारण अपना बना लिया| अपने आचरण से सदैव ही दूसरों को प्रेरणा दी; चौदह वर्ष के वनवास के अंतर्गत वनवासियों को कृषि आदि का ज्ञान दिया अध्यात्म तथा शास्त्रों से परिचित करवाया जीवन जीने की एक ऐसी पद्धति का विकास किया; जिससे जंगल में भी मंगल हो गया उनका व्यक्तित्व इतना सकारात्मक था| जहां भी रहते उसके आसपास एक अद्भुत वातावरण तैयार हो जाता| उनके संसर्ग में रहकर कुबुद्धि वाला व्यक्ति भी पावन हो जाता था|

दण्डक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन| जन मन अमित नाम किए पावन || १३७

रामजी ने भयानक दंडक वन को अपनी कर्मशीलता से सुहावना बनाया तथा उनके नाम ने असंख्य हृदय को पवित्र किया किया| यहां तुलसीदास जी कहते हैं कि नाना प्रकार के राक्षसों से भरे दंडक वन को भी श्रीराम ने अपने कर्मों से सुशोभित किया| वनभक्षकों से मुक्त करके वहां पर शांति की स्थापना की वन- प्रदेश में रहने वाले जीव तथा आदिवासियों को सुरक्षा प्रदान की उनके जीवन को परिवर्तित किया| जीवन परिवर्तन के साथ-साथ असंख्य लोगों के हृदय में परिवर्तित हुए क्योंकि वे अपने सामने प्रेरणा स्रोत के रूप में श्री राम को देखते थे|

१३६,१३७ - सुंदरकाण्ड, बालकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामीतुलसीदास जी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या ६९०,२८

और उनके आचरण एवं जीवन से प्रभावित होकर वे स्वयं भी प्रयास करते थे के श्री राम के द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चल सके| बालकांड के एक प्रकरण में वर्णित है कि

रामचरितमानस एहि नामा | सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा ||
मन करि बिषय अनल बनजरई | होइसुखी जौं एहिं सर परई || १३८

श्री राम के जीवन पर आधारित रचना का नाम रामचरितमानस है जिसे सुनते ही शांति मिलती है | मनरूपी हाथी विषय रूपी दावानल में जल रहा है तो यदि वह इस रामचरितमानस रूपी सरोवर में आ पड़े तो सुखी हो जाए| मूलतः रामचरितमानस जीवन को सही अर्थों में जीने की सीख देता है | विषम एवं विकट परिस्थितियों में क्षमतावान एवं संघर्षशील बनने की प्रेरणा देता है| विकट परिस्थितियों में भी हार न मानने की सीख देता है अपने उत्तरदायित्व एवं अपने संबंधों के साथ न्याय पूर्ण व्यवहार करने की शिक्षा देता है| श्री राम को वनवास मिलने के उपरांत जब लक्ष्मण जी ने यह निर्णय लिया कि वे श्री राम के साथ वन जाएंगे ही तो श्रीराम ने उनको समझाया कि उनकी आवश्यकता यहां अयोध्या में अधिक है क्योंकि भरत जी भी यहां नहीं है और भी न जाने कितने प्रकार के उदाहरण नीति आदि से लक्ष्मण जी को समझाने का अथक प्रयास किया परंतु लक्ष्मण जी नहीं माने इसके उपरांत राम जी लक्ष्मण जी की हठ के आगे झुक जाते हैं और लक्ष्मण जी को अपने साथ चलने के लिए कहते हैं| लक्ष्मण जी सुमित्रा से अनुमति लेकर आए माता सुमित्रा से मिलने के उपरांत लक्ष्मण जी सारी बात बताते हैं और अपने बारे में भी बताते हैं कि राम के वनवास के लिए जाना चाहते हैं उनके इस निर्णय पर सुमित्रा जी कहती हैं|

धीरज धरेउ कुअवसर जानी| सहज सुहृद बोली मृदु बानी ||
तात तुम्हार मातु बैदेही | पिता रामु सब भाँति स्नेही || १३९

माता सुमित्रा ने विपरीत समय जानकर धैर्य धारण किया एवं स्वभाव से हित चाहने वाली कोमल वाणी में कहा हे तात! जानकी जी तुम्हारी माता है और सब प्रकार से स्नेह करने वाले रामचंद्र जी तुम्हारे पिता है | इन पंक्तियों में सुमित्रा जी के विश्वास को दर्शाया गया है कि कैसे वे अपने पुत्र को समझाते हैं कि श्री राम लक्ष्मण जी के प्रति पिता तुल्य स्नेहा रखते हैं वे उनके पुत्र हैं और श्रीराम उनके पिता मां जानकी उनकी माता के समान है यहां पर हम सुमित्रा जी का श्री राम के प्रति अटूट विश्वास देखते हैं श्री राम जी का अपने भाई तथा अपनी भी माता के प्रति स्नेह देखते हैं जिसके कारण भी इतनी आश्वस्त हैं सहर्ष लक्ष्मण जी को श्री राम के साथ जाने की अनुमति ही नहीं अपितु निर्देश देती है क्योंकि वे जानते हैं कि श्री राम लक्ष्मण जी का ध्यान स्वयं से भी अधिक रखते हुए उन पर कोई आंच नहीं आने देंगे उनका सभी प्रकार से ध्यान रखें एक पिता के समान उनको लाड करेंगे एक मित्र के समान उनके मन के भाव बाटेंगे और एक मार्गदर्शक के समान उन्हें जीवन की सीख देंगे इसे श्रीराम का प्रेम वात्सल्य अपनापन त्याग की भावना का सर्वोच्च प्रदर्शन नहीं कहेंगे तो और क्या कहेंगे ?

अवध तहां जहँ रामनिवासू | तहँइँ दिवसु जहँ भानु प्रकासु ||
जौं पै सीयरामु बन जहिं | अवध तुम्हार काजू कछु नाहीं || १४०

१३८,१३९,१४०-बालकाण्ड,अयोध्याकाण्ड,रामचरितमानस,गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या ३९,३६५

जहां श्री राम जी का निवास हो वही अयोध्या है जहां सूर्य का प्रकाश को वही दिन है यदि निश्चय ही सीता एवं राम वन को जाते हैं तो अयोध्या में तुम्हारा कुछ भी काम नहीं; मां सुमित्रा कहती हैं कि तुम्हारे लिए
अयोध्या वही है जहाँ श्री राम और जानकी का निवास हो कहने का भाव यह है कि श्री राम जहां भी रहेंगेवे लक्ष्मण के लिए अयोध्या जैसा वातावरण तैयार कर देंगे उन्हें कभी किसी भाव का अभाव नहीं होने देंगे क्योंकि उनके लिए वरीयता लक्ष्मण जी की ही होगी और बचपन से ही मां सुमित्रा राम और लक्ष्मण जी का प्रेम देखती चली आ रही थी अतः वे यह निर्णय नहीं ले सकते थे यह किसी भी प्रकार राम और लक्ष्मण जी को अलग कर दिया जाए वे कहती हैं कि रामबन में है तो तुम्हें उनके साथ वन में ही जाना चाहिए यहां अयोध्या रह गए तुम्हारा कोई काम नहीं है यह जानती थी कि लक्ष्मण जी का मन यहां नहीं लगेगा और वे किसी तरह भी उन्हें बात ही नहीं करना चाहती भाइयों का प्रेम देखकर वे जानते थे कि श्री राम एवं जानकी माता लक्ष्मण को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय मान कर रखेंगे तो यहां रहकर भी लक्ष्मण क्या कर पाएंगे अरे यही होगा कि लक्ष्मण जी श्री राम के साथ वन के लिए जाएं|

गुर पितु मातु बंधू सुर साईं | सेइअहिं सकल प्रान की नाई ||
रामु प्रण प्रिय जीवन जी के | स्वारथ रहित सखा सबहि के || १४१

गुरु, माता-पिता, भाई, देवता तथा स्वामी इन सब की सेवा प्राण के समान करनी चाहिए फिर श्री रामचंद्र जी तो प्राणों के भी प्रिय हैं| हृदय के भी जीवन है और सभी के स्वार्थ रहित सखा हैं| गुरु, माता-पिता, भाई, देवता तथा स्वामी इन सबका संबंधों में एवं जीवन में अधिक महत्व इनकी सेवा इनका साथ व्यक्ति के कार्य तथा उसके जीवन को सफल बना देता है| इनकी प्राणों के समान सेवा करनी चाहिए और उसमें भी जब गुरु, माता-पिता, भाई तथा देवता के रूप में श्री रामचंद्र जी स्वयं हों जो कि सभी के प्राणों के प्रिय हैं और हृदय को भी उनसे जीवन मिलता है; वे स्वभाव से स्वार्थ रहित हैं वे केवल और केवल परमार्थ के गुणों से परिपूर्ण हैं| स्वयं के बारे में न सोचना सदैव ही दूसरों का भला करना सदैव ही दूसरों के मान-सम्मान तथा उनके मन के भावों का मान रखना यह श्रीराम का व्यवहार है और ऐसे व्यवहार वाले व्यक्ति का साथ छोड़ना अपने आप में हैं एक ऐसा कृत्य होगा, जो श्रेयस्कर नहीं होगा किसी भी भाँति किसी भी जतन से श्री राम का साथ मिले तो उसे सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए फिर चाहे वह जंगल हो राज महल हो हिमालय की चोटी हो या समुद्र की तलहटी हो श्री राम के साथ ही अपने ही महिमा है| ऐसे व्यक्ति के साथ रहकर हम अपने दुर्गुणों से दूर जाते हैं सद्गुणों को अपनाते हैं अपने व्यवहार आचरण तथा दृष्टिकोण में परिवर्तन पाते हैं ऐसे व्यक्ति का साथ कभी भी नहीं छोड़ना चाहिए|

पूजनीय प्रिय परम जहाँ तें | सब मानिअहिं राम के नाते ||
अस जियँ जानि संग बन जाहू | लेहु तात जग जीवन लाहू || १४२

जगत में जहां तक पूजनीय एवं परम प्रिय लोग हैं| वे सब राम जी के नाते से ही मानने योग्य हैं| हृदय में ऐसा जानकर उनके साथी बन जाओ तथा जगत में जीने का लाभ उठाओ| श्री राम ने जिनको भी मान-सम्मान दिया| वह स्वयं ही इस संसार में सम्माननीय एवं पूजनीय हो गए अर्थात श्रीराम का जिनके प्रति स्नेह होता है वे लोग सबके प्रिय हो जाते हैं| इस बात के अर्थ को समझते हुए सुमित्रा जी कहती हैं कि तुम सहर्ष श्री राम

१४१,१४२ -अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ३६५,३६६

के साथ वन जाओ तथा इस संसार में आकर उनके साथ रहने का अवसर किसी भी प्रकार से हाथ से जाने मत दो उनके साथ जीवन जीने के लिए जितने भी क्षण मिले उनको सहर्ष स्वीकार करो चाहे परिस्थिति कोई भी हो मूल्यवान केवल और केवल श्रीराम का सानिध्य ही है कुछ और नहीं जो उनके साथ रहता है; उसका जीवन तर जाता है| जो उनके प्रेम उनके वात्सल्य को पा लेता है| उसका जीवन संवर जाता है तो यह अवसर खोने का नहीं पाने का है किसी भी प्रकार से राम का साथ कभी भी मत छोड़ना और जितना हो सके उनके समीप रहकर अपने जीवन को सार्थक बनाओ|

तुम्ह कहूँ बन सब भाँति सूपासू | सं पितु मातु रामु सिय जासू ||
जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू | सूत सोइ करेहु यहइ उपदेसु || १४३

तुमको वन में सब प्रकार से आराम है| जिसके साथ श्री राम और सीता जी के रूप में माता-पिता हैं; उसे किस बात कि चिंता? हे पुत्र! तुम वही करना जिससे श्री राम वन में क्लेश न पावें यही मेरा उद्देश्य है| माँ, लक्ष्मण जी से कहती हैं कि तुम्हें तो वन में भी सभी प्रकार का सुख-वैभव मिलेगा क्योंकि तुम्हारे साथ श्री राम और सीता जी हैं जो कि माता पिता के रूप में तुम्हारा ध्यान रखेंगे, तुम्हें प्रेम करेंगे और तुम्हारे प्रति अपने सारे उत्तरदायित्व को भली-भांति निभाएंगे| अतः तुम्हें किसी भी प्रकार का जतन करने या चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं तुम्हें केवल एक ही बात का ध्यान रखना है कि श्रीराम को किसी भी प्रकार से वन में रहने में कोई असुविधा न हो किसी प्रकार का कोई दुख का भाव उन्हें छू कर न जाए अर्थात माँ सुमित्रा यहां लक्ष्मण जी से यह कहती हैं कि तुम्हें श्री राम को प्रसन्न रखने का उनके मन को लगाए रखने का प्रयत्न करना होगा उन्हें कभी भी घर परिवार की याद न आए उनके मन में कभी भी एक क्षण का दुख न आए कभी भी उन्हें ऐसी कोई चिंता न आए इसका ध्यान रखना होगा; यही पुत्र के रूप में तुम्हारा श्री राम और माता सीता के प्रति कर्तव्य होगा, जिसे तुम्हें निभाना ही होगा|

श्री राम के प्रति अयोध्या नगरी के निवासियों में अत्यधिक प्रेम एवं वात्सल्य भाव श्री राम केवल एक राजकुमार नहीं थे वे जननायक थे सबको अपने समान मानने वाले मानवीय मूल्यों के प्रणेता थे| उनका प्रेम उनका संघर्ष, उनका त्याग सब कुछ दूसरों के लिए था यह कहना भी गलत नहीं होगा कि उनका जीवन ही दूसरों के लिए था किस प्रकार के किस को सुखी कर सकते हैं किस प्रकार में किसका साथ दे सकते हैं ऐसा ही उनके जीवन का आधार और इसी सोच इसी उत्तरदायित्व को आजीवन निभाते रहे उनका यही प्रयास रहा कि कभी भी उनके किसी कानून से किसी को दुख न हो कभी भी ऐसा ना हो कि उनके पास सहायता मांगने के भाव से भी आया व्यक्ति खाली हाथ लौट जाए इतना सब कुछ करने वाला व्यक्ति कैसे सर्वप्रिय नहीं होगा? अयोध्या के निवासियों ने भी श्री राम को बचपन से लेकर युवा अवस्था तक देखा समझा और जाना उनके आचरण उनके व्यवहार का प्रभाव सभी को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता रहा वे केवल और केवल अपनी प्रजा के लिए ही जीते थे उनके कष्टों को हरने के लिए जो कुछ भी करना पड़े उससे पीछे नहीं हटते थे उनका विनम्र व्यवहार सब के प्रति सम्मान तथा प्रत्येक व्यक्ति तक उनकी पहुंच ही उनकी लोकप्रियता का आधार थी ऐसे में जब ऐसा कठोर निर्णय लिया जाता है राजभवन के द्वारा श्री राम को चौदह वर्ष का वनवास मिला है यह बात सुन नगर के लोग कितने व्यथित होते हैं कितने दुखी होते हैं इसका वर्णन हमें रामचरितमानस के अयोध्या कांड में मिल जाता है उनके प्रति लोगों का प्रेम उनके प्रति लोगों का समर्पण ऐसे ही तो नहीं होगा अवश्य ही उन्होंने यह सब कुछ श्रीराम से भी प्राप्त किया होगा अतः तुलसीदास जी बताते हैं कि-

---

१४३ - अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ,३६७

कहहिं परसपर पुरनर नारी | भलि बनाई बिधि बात बिगारी ||
तन कृस मन दुखु बदन मलीने | बिकल मानहु माखी मधु छीने || १४४

नगर के स्त्री पुरुष आपस में कह रहे हैं कि विधाता ने बनाकर बात बिगाड़ी उनके शरीर दुबले मन दुखी एवं मुख उदास हो रहे हैं ऐसे व्याकुल हैं जैसे शहद के छिन जाने पर मधुमक्खियां व्याकुल हो जाती हैं |यह दुख यह भाव यह चिंता यह उदासी श्रीराम के प्रति प्रजा जनों का प्रेम प्रदर्शित कर रही है उनके स्वभावगत अच्छाइयां उनका समर्पण सभी का मन मोह लेती थी वे राजवंश से थे केवल इस कारण ही उनका प्रभाव इतना नहीं था मुख्यतः उनके प्रति लोगों का लगाव उनके स्वभाव के कारण था उनके आचरण के कारण था उनके व्यवहार के कारण था क्योंकि यही वह माध्यम है| जो लंबे समय तक अपना प्रभाव बनाए रखते हैं और अगर आज की तिथि में भी हम श्री राम का स्मरण करते हैं उनके रामराज्य का स्मरण करते हैं; तो उनकी स्वभाव गत विशेषताओं के कारण ही करते हैं कि किस प्रकार उन्होंने अपने परिवार गुरु जन ऋषि-मुनियों वनवासियों प्रजा जनों एवं अन्य राजवंशों के प्रति अपना सरल एवं सुगम व्यवहार प्रदर्शित किया जो कि विनम्रता से पूर्ण था एक राजा के रूप में उन्होंने अपनी प्रजा जनों को पूर्ण स्वतंत्रता दी उनके मन के भावों को प्रकट करने की विचारों के आदान प्रदान करने की सबकी सहभागिता सुनिश्चित किए जिससे किसी को भी ऐसा न लगे कि वह उपेक्षित है |तुलसीदास के राम ऐसे ही हैं सर्वग्राह्य,सर्वमान्य जो भी उनके स्वभाव को समझ जाता है| उसे जीवन जीने का उचित मार्ग मिल जाता रामचरितमानस में हमें ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं जहां श्री राम ने लोगों का मार्गदर्शन पर उन्हें बताया कि किस प्रकार का आचरण करना चाहिए किस प्रकार अपने संबंधों को निभाना चाहिए किस प्रकार व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहिए मानव व्यक्तित्व अनुकूल प्रभाव डालता है इसका वर्णन रामचरितमानस में देख सकते हैं सम्मान देना उसको उसके अधिकारों से वंचित न करना | सदैव एकनिष्ठ एवं ध्येयनिष्ठ रहना| तुलसीदास के राम अपने नाम में ही इतनी शक्ति रखते हैं कि वे अपने प्रतिद्वंदी अपने वैरी का हृदय परिवर्तन करने की क्षमता रखते हैं| किसी की भूल चूक को याद नहीं रखते केवल और केवल उनकी अच्छाई स्मरण रखते हैं | किसी और के स्वभाव तथा उसके विचार का स्वयं पर प्रभाव नहीं पड़ने देते अपितु उसको अपने रंग में रंग लेते हैं सब के प्रतिनिश्चल भाव रखना सदैव सहयोगी की भूमिका निभाना, मार्गदर्शक बनकर जनमानस के जीवन के दुखों को हरना उन्हें सद्मार्ग दिखाना यही तो पराक्रम है श्री राम के नाम का |

अयोध्या कांड में अयोध्या कांड में वनवास मिलने के उपरांत जब श्री राम गंगा नदी के किनारे बसे श्रृंगवेरपुर पहुंचते हैं और वहां पर उनकी भेंट निषादराज गुह से होती है श्री राम के आने का समाचार सुनकर वे बड़े आनंदित होते हैं और श्री राम से मिलने आते हैं इसी प्रसंग में आगे वर्णित है -

यह सुधि गुहँ निषाद जब पाई | मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई ||
लिए फल मूल भेंट भरि भारा| मिलान चलेउ हियँ हरषु अपारा || १४५

निषादराज गुह को श्री राम के आने का समाचार मिला तब वे आनंदित होकर अपने प्रिय जनों एवं भाई बंधुओं को बुलाकर श्री राम को भेंट देने के लिए फल फूल आदि लेकर उन्हें बड़ी बड़ी बहंगियों में भरकर मिलने को चल दिए उनके हृदय में हर्ष का पार नहीं था अर्थात अपार हर्ष था| श्री राम और निषादराज गुह बचपन

१४४,१४५ -अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित, पृष्ठ संख्या ३६५

के मित्र थे| उनके परिवारों के बीच में मैत्री संबंध थे महाराज दशरथ तथा निषादराज गुह के पिता आपस में मित्र थे जिस कारण श्री राम और निषादराज गुह दोनों के मध्य बचपन की मित्रता थी बे गुरुकुल में एक साथ पढ़े हुए है तथा बचपन में निषादराज गुह अपने पिताजी के साथ राजा दशरथ के महल में भी उनसे मिलने जाया करते थे| बचपन के पुराने स्मृतियों को याद करते हुए निषादराज बहुत प्रेम से भर गए और अपने परम प्रिय मित्र का स्वागत करने हेतु अपने भाई बंधुओं एवं समाज के साथ चल पड़े अपने मित्र से मिलने की बात सोचकर वे अपार हर्षित थे उन्हें ऐसा लगा जैसे कोई बहुत बड़ा कोई कोष मिल गया हो| उनके हृदय में श्री राम के प्रति इतना प्रेम है कि वे श्री राम को अपना राजपाट अपनी प्रजा सभी कुछ सौंप देना चाहते हैं क्या करें उन्हें समझ में नहीं आ रहा प्रेम से विह्वल होकर वे श्रीराम से अनुरोध करते हैं कि वह यही श्रृंगवेरपुर में बस जाएं और यहां के प्रजा को अपना सानिध्य दें|

कृपा करिअ पुर धरिअ पाऊ | थापिय जनु सबु लोग सिहाऊ ||
कहेहु सत्य सबु सखा सुजाना | मोहि दीन्ह पितु आयसु आना || १४६

निषादराज कहते हैं कि अब कृपा करके श्रृंगवेरपुर में पधारिए और इस देश की प्रतिष्ठा बताइए जिससे सब लोग मेरे भाग्य की बड़ाई करें यह पृथ्वी धन और घर सब आपका है | आज मेरा श्रृंगवेरपुर धन्य हो गया जो आपके चरण यहां पड़े इस पर श्री राम जी कहते हैं| हे सुजान सखा! तुमने जो कुछ भी कहा वह सत्य है तुम्हारे मन के भाव और प्रेम को मैं भली-भांति समझता हूँ; मुझ में और तुम में किसी प्रकार का भी कोई अंतर नहीं है| जो कुछ भी तुम्हारा है वह मेरा है और जो कुछ भी मेरा है वह तुम्हारा है परंतु मेरे लिए इसे स्वीकारना उचित नहीं होगा क्योंकि पिताजी ने मुझको कुछ और ही आज्ञा दी है|

राज महल में रहने वाला कोई परिजन हो या सुदूर अरण्य में निवास करने वाला कोई आदिवासी श्री राम के प्रति सभी के मन में समान प्रेम था तथा सभी उनको प्रिय थे उनके प्रति किसी भी तरह का नाम रखने वाला व्यक्ति अपने आप को श्रीराम से जुड़ा हुआ पाता था चाहे वह उनको भाई के रूप में देखे मित्र के रूप में देखे स्वामी के रूप में देखे या आराध्य के रूप में देखें रामचरितमानस के प्रत्येक कांड में श्री राम के सद्गुणों की चर्चा की गई उनके स्वभाव गत विशेषताएं बताई गई है किस प्रकार उनके सद्गुण उनके वैरी को भी आकर्षित कर लेते थे उनका सहज-सहयोग का भाव उनके विरोध करने वालों को भी अपना बना लेता था | ये स्वभावगत विशेषताएं ही; श्री राम को तुलसीदास का राम बनाते हैं, जो पूरे विश्व में प्रसिद्ध है| लगभग संपूर्ण जगत में रामलीला का मंचन होता है जिसके द्वारा जन-जन को यह संदेश दिया जाता है कि हमारा आचरण हमारा व्यवहार हमारी सोच हमारी जीवन जीने की शैली श्रीराम के अनुरूप ही होनी चाहिए क्योंकि इस धरती पर वह एकमात्र उदाहरण हैं| जिनको हम मानवता के साथ, न्याय के साथ, शिक्षा के साथ, पर्यावरण संरक्षण के साथ, कृषि, अर्थव्यवस्था, वाणिज्य, कलात्मकता एवं अनन्य कारकों के साथ जोड़कर देखते हैं या सरल भाषा में कहें तो एक ऐसी पाठशाला है; जिसमें सिखाएं जाने वाला प्रत्येक पाठ जीवन को एक नया आयाम देता है एक नई सोच एक नई दिशा देता है| तुलसीदास के राम घट- घट के वासी हैं|भवसागर से पार उतारने वाले हैं वह मर्यादा पुरुषोत्तम हैं धर्म के मार्ग पर चलते हुए समाज के कल्याण के लिए सदैव तत्पर रहते हैं तुलसीदास जी का संपूर्ण काव्य रामचरितमानस राम में धर्म अर्थ काम मोक्ष के निमित्त राम कथा संप्रेषण के कारणों पर भी चर्चा की गई है| तुलसीदास जी के द्वारा यह अथक प्रयास किया गया है कि भारतवर्ष का जनमानस श्री राम जी के गुणों को ग्रहण करें और उनके जैसा बनने का प्रयास करते हुए

---

१४६ - अयोध्याकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचितपृष्ठ संख्या ३६५

उनके पद चिन्हों पर चले जिससे समाज एवं देश का कल्याण हो| श्री राम के नाम की महिमा रामचरितमानस में बताई गई है | सबके हृदय को जीत लेते थे| उनका व्यक्तित्व इतना सरल था कि एक बार उनसे बात करने मात्र से व्यक्ति के मन का संकोच मिट जाता था | तुलसीदास की यह कृति साधारण जनमानस के लिए उपनिषद के समान है | ज्ञान का अपेक्षाकृत अधिक समझ आने वाला स्रोत है यहां से साधारण जनमानस अपने जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव को समझने की क्षमता ग्रहण करता है क्योंकि उसके आदर्श के रूप में श्री राम प्रतिबिंबित होते हैं संकट के क्षणों में वे राम की ओर ही मुड़ते हैं तथा राम के वीर एवं धार्मिक व्यक्तित्व से प्रेरणा लेने का प्रयास करते हैं जिन्होंने अपने इंद्रियों पर विजय पाई थी, राम जिनका नाम स्वयं उनके व्यक्तित्व से भी बड़ा है ,राम जोकि विश्व के प्रत्येक जनमानस हेतु आदर्श के स्वरूप हैं वे आनंद से आत्मा के आंतरिक अनुभव तथा आत्मा के विकास के प्रतीक हैं | तुलसीदास के राम सामाजिक राजनैतिक आर्थिक धार्मिक जैविक आध्यात्मिक सभी रूपों में ग्राह्य हैं उनके सभी पक्षों को रामचरितमानस में भली प्रकार वर्णित किया गया उनका प्रभाव उनकी सोच उनकी कार्यशैली उनकी वाणी उनका आचरण सभी से हमें कुछ ना कुछ सीखने को मिलता है वीर रस में डूबी हुई एक ऐसे मिष्ठान के समान है जिसकी मीठा आपके स्वाद तंत्रों के माध्यम से आपके मन मस्तिष्क तक जाती है उन्होंने अपने जीवन में किसी के साथ अन्याय नहीं किया और उनके जीवन से हम सीखते भी यही हैं कि किसी के भी साथ अन्याय नहीं हो चाहे वह किसी भी समाज से संबंध रखता हो| सबकी सोच स्वतंत्र होनी चाहिए लेकिन उस सोच में न्याय अन्याय धर्म अधर्म का पुट अवश्य होना चाहिए उस व्यक्ति को ज्ञात होना चाहिए कि वह कार्य क्यों कर रहा है और इस कार्य का प्रभाव उसके परिवार उसके समाज उसके देश पर किस प्रकार पड़ेगा क्योंकि श्रीराम में जब भी कोई कार्य किया उसके दूरगामी परिणाम सोचते हुए ही उसकी रणनीति निर्धारित करें और उनके द्वारा किए गए सभी कार्य लोक कल्याण हेतु थे तुलसीदास के राम इसलिए भी लोकप्रिय हैं; क्योंकि वे मर्यादा पुरुषोत्तम थे| उनका जीवन अत्यंत ही मर्यादित एवं संयमित था इसी कारण वे एक उत्कृष्ट आदर्श के रूप में स्थापित हैं तुलसीदास के राम विशेष हैं|

५.२ वाल्मीकि के असाधारण राम :-

शीर्षक के अनुसार असाधारण का अर्थ जादू टोना या तांत्रिक व्यक्तियों का स्वामित्व नहीं है साधारण कर्म द्वारा असाधारण प्रदर्शन है अर्थात कर्म एवं परिस्थिति प्रत्येक व्यक्ति के लिए समय के अनुसार समान ही होती है किंतु उसकी दक्षता सोचने समझने की शक्ति, कार्य को महत्व देने का अभ्यास कर्म को तथा उसके फल को असाधारण बना देता है यही विशेषता वाल्मीकि जी के राम में दिखती है विराम जो अत्यंत ही साधारण मानव की भांति विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों एवं आपदाओं से जूझते रहे संघर्ष करते रहे परंतु अपने ध्येय को कभी भी धूमिल नहीं होने दिया | सदा ही एक साधारण बालक तदोपरांत युवक के रूप में वे अपने दायित्व अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते रहे | समान रूप से साधारण तथा असाधारण स्थितियों का सामना करते रहे कभी भी किससे परिस्थिति में स्वयं को निराश नहीं होने दिया | वाल्मीकि रामायण के राम लोकहित की दृष्टि से कठिनतम निर्णय लेने में भी सक्षम है वे जनकल्याण एवं नीति पालन हेतु दंड के प्रावधान के पक्षधर है वे किसी के द्वारा किए जा रहे दुर्व्यवहार तथा उसके समाज पर पड़ने वाले प्रभाव एक प्रति सजग होकर निर्णय लेने की क्षमता रखते हैं| विरोध करना भी जानते हैं दंड देना भी जानते हैं|

उनके मनोभाव एक साधारण मनुष्य की तरह हैं|जिसे पीड़ा भी होती हैं, क्रोध भी आता है, हर्ष भी होता है तथा शोक भी होता है| वे समानता-असमानता, धर्म-अधर्म, न्याय-अन्याय के बीच के भेद को बड़ी स्पष्टता से ग्रहण करते हैं एवं व्यक्त करते हैं| वाल्मीकि के राम ब्रह्मज्ञानियों, अन्य व्यापारियों विद्या संप्रभुता आदि के निवास स्थलों मेंविशेष आतिथ्य स्वीकार ना करके सामान्य तथा उससे भी निम्न सामाजिक स्तर के लोगों के आथित्य को स्वीकार करते हैं जो सामाजिक जीवन तथा सामाजिक हाथों से दूर होकर जीवन व्यतीत करते हैं उनको ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में जोड़ने का कार्य करते हैं|

श्री वाल्मीकि रामायण में महर्षि वाल्मीकि अपनी समाधि, तप ,अनुष्ठान आदि से अलौकिक कवित्व शक्ति प्राप्त कर चुके;तब उन्हें किसी सर्वोत्कृष्ट विषय का वर्णन इच्छा हुई तो; इस संदर्भ में जब नारद जी उनके पास आते हैं| उनसे संवाद करते हैं तो वाल्मीकि जी पूछते हैं कि हे मुनि! इस समय संसार में गुणवान-धैर्यवान, वीर्यवान-धर्मज्ञ, सत्यवक्ता, दृढ़व्रती-चरित्रवान सभी प्राणियों का हितैषी, विद्वान, समस्त शास्त्रों का ज्ञाता सर्व कार्य समर्थ, एक ही प्रियदर्शन आत्मज्ञ, क्रोध को जीतने वाला, कांतिमान, असूया रहित अर्थात किसी की निंदा न करने वाला ऐसा कौन सा पुरुष है, जिसके रणांगण में क्रोध करने पर देवता भी भयभीत हो जाते हैं?

को त्वस्मिनसांप्रतं लोके गुणवांकश्च वीर्यवान|
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः ||
चारित्रेण च को युक्तःसर्वभूतेषु को हितः |
विद्वांकः कः समर्थश्च काश्चैक प्रियदर्शनः ||
आत्मवान्को जितक्रोधो द्युतिमानकोऽनसूयकः|
कस्य विभ्यति देवश्च जातरोषयस्य संयुगे || १४७

वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ में ही हमें इस बात का वर्णन मिलता हैकि बाल्मीकि एक ऐसे पुरुष के खोज कर र|हे थे जो अनेक प्रकार के गुणों से सुसज्जित हो| वाल्मीकि जी के इस प्रश्न के उत्तर में नारद जी कहते हैं, कि हमने आपने जन्म दुर्लभ गुणों का वर्णन किया है| उन गुणों से युक्त नर को मैं विचार कर कहता हूँ, सुने

इक्ष्वाकु के वंश में एक ऐसे पुरुष का जन्म हुआ जो राम के नाम से विख्यात हैं| वे नित्यात्मा -महावीर्य, द्युतिमान -धृतिमान, जितेंद्रिय-बुद्धिमान, नीतिमान अर्थात मर्यादा का पालन करने वाले, सुंद- वक्ता, शत्रुहंता उन्नत स्कंध वाले, महाबाहु-महाहनु तथा सुंदर ऊँची ठोढी वाले हैं| शत्रुदमन कर्ता, आजानुभुज,धर्म के पालक, धर्म के ज्ञाता, सत्य प्रतिज्ञ , प्रजा के हित में सदैव तत्पर ज्ञानसंपन्न तथा मन को एकाग्र रखने वाले हैं| गंभीरता में समुद्र के समान तथा धैर्य में हिमाचल के समान है| क्रोध में कालाग्नि तथा क्षमा शीलता में पृथ्वी के समान हैं| उनका त्याग कुबेर के समान तथा सत्य भाषण में साक्षात धर्म के समान स्थित हैं| नारद जी कहते हैं-

वहवो दुर्लभाश्चैवये त्वया कीर्तिता गुणाः |
मुने वक्ष्याम्यहं बुद्ध्वा तैर्युक्तः श्रूयतां नरः || १४८

आपने जिन गुणों का बखान किया है; है तो निसंदेह दुर्लभ परंतु हम अपनी समझ से ऐसे गुणों से युक्त एक पुरुष के बारे में बतलाते हैं दुर्लभ गुणों का अर्थ है; ऐसे गुण जो यदा-कदा ही पाए जाते हैं| अथवा जिनके

१४७, १४८-बालकाण्ड,प्रथम: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १

पाए जाने की संभावना लेश मात्र हो| दुर्लभ गुणों का अर्थ है ऐसे गुण जो यदा-कदा ही पाए जाते हैं अथवा जिनके पाए जाने की संभावना अंश मात्र को हो|

इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः |
नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमांधृतिमान वशी || १४९

महाराज इक्ष्वाकु के वंशज में उत्पन्न श्री रामचंद्र जी को जन जानते हैं अर्थात जनश्रुति के अनुसार इक्ष्वाकु वंश के श्री रामचंद्र जी को इन्हीं गुणों के साथ जाना जाता है| वे नियत स्वभाव अर्थात मन को वश में रखने वाले अति बलशाली ओजस्वी तथा आनंद के स्वरूप हैं|ऊर्जा तथा शक्ति का भंडार है अपने इंद्रियों के स्वामी हैं सभी प्रकार की संवेदनाओं के साथ-साथ वीरता तथा साहस के सम्मिश्रण है|

प्रजापतिसमः श्री मान्धाता रिपुनिषूदनः |
रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता ||
रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता |
वेदवेदांगतत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः || १५०

ब्रह्मा के समान प्रजा का रक्षण करने वाले अति शोभ भगवान सबके पोषक शत्रु का नाश करने वाले अर्थात वेद विद्रोही तथा धर्म द्रोही उनके शत्रु हैं| वेद धर्मप्रवर्तक, स्वधर्म अर्थात अपने धर्म यज्ञ, अध्ययन, दान,दंड युद्ध की विशेष रूप से रक्षा करने वाले हैं| ज्ञानीजनों तथा प्रजाजनों के संरक्षक हैं| वेद-वेदांग के तत्वों को जानने वाले तथा धनुर्विद्या में अति प्रवीण हैं|जिन कुशलताओं-प्रवीणताओं के बारे में सोचा जा सकता है या नहीं भी सोचा जा सकता उन सब का एक संतुलित सामंजस्य यदि किसी में दृष्टिगोचर होता है| तो वह श्रीराम हैं| नारद जी ने यहां एक शब्द का प्रयोग किया है; जनश्रुति अर्थात जनों के द्वारा कहा सुना गया| इस का पर्याय है कि श्री राम जनश्रुतियों के अनुसार भी एक कुशल शासक, परमवीरयोद्धा, धर्म तथा नीति को जीवन में सर्वोच्च स्थान देने वाले सब की सब प्रकार से रक्षा करने वाले वीर पुरुष थे|

सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञः स्मृतिमानः प्रतिभानवानः |
सर्वलोकप्रियः साधुरदीनात्मा विलक्षणः || १५१

शास्त्रों के समस्त तत्वों को भली-भांति जानने वाले सशक्त स्मरण शक्ति वाले महा प्रतिभाशाली सर्वप्रिय परम साधु कभी दैत्य प्रदर्शन न करने वाले अर्थात अत्यधिक गंभीर एवं अलौकिक-लौकिक क्रियाओं में कुशल है |उनका व्यवहार साधारण होते हुए भी विलक्षण है; सभी इंद्रियां उनके वश में हैं सभी प्रकार के चरणों में श्रेष्ठ आचरण प्रदर्शित करना सभी प्रकार के मूल्यों और मान्यताओं को साक्षी मानते हुए परम अद्भुत होते हुए भी साधारण रूप में जीवन को जीने वाले जीवन के सार को समझने वाले साधारण होते हुए भी विशेष दिखने वाले तथा विशेषताओं से परिपूर्ण होते हुए भी साधारण दिखने वाले श्रीराम हैं

सर्वदाभिगतः सम्भ्द समुद्र इव सिंधुभिः |
आर्यः सर्वस्मश्चैव सदैव प्रियदर्शनः || १५२

१४९,१५०,१५१,१५२,-बालकाण्ड,प्रथमःसर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १,२,४,५,

जिस प्रकार समस्त नदियां अंततः समुद्र तक ही पहुंचती हैं; ठीक उसी प्रकार समस्त सज्जन जन उन तक पहुंचते हैं अर्थात क्या ध्यान अभ्यास काल , क्या भोजन काल ? अच्छे लोगों के लिए उनके पास जाने की समय की कोई मनाही नहीं है| उनके पास किसी भी वर्ण किसी भी समाज अथवा किसी भी जीव जंतु जो कोई उनका हो अर्थात जो उन्हें अपना मानता हो| वे सबको दृष्टि से देखने वाले तथा सबको समान रूप से मानने वाले हैं| समय कार्य आदि को उचित-अनुचित के वर्ग में न बांटते हुए, वे प्रत्येक उस व्यक्ति से मिलते हैं जो उनसे मिलना चाहता हैं|

धनदेन समसत्यागे सत्ये धर्म इवापर:|
तमेवंगुणसंपन्न्म रामं सत्यपराक्रमं || १५३

वे दानवीर हैं और दान देने में कुबेर के समान अर्थात दान देते समय सोच विचार नहीं करते जब देते हैं तो अच्छी तरह दान देते हैं| जिससे दान प्राप्त करने वाले की सभी प्रकार के तृष्णा मिट जाए उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाए| सत्य भाषण में मानो दूसरे धर्म है अर्थात धर्म का ही पर्याय हैं| धर्म के मार्ग से लेश मात्र भी विमुख नहीं होते धर्म को वाहन करने हेतु कितने भी कष्ट सहने पड़े वे स्वीकार लेते हैं परंतु किसी भी स्थिति में धर्म की अवहेलना नहीं करते सकते हैं वे सत्य भाषी हैं पराक्रमी है सत्य बोलने हेतु तथा धर्म का पालन करने हेतु पराक्रम की आवश्यकता पड़ती है धर्म की रक्षा हेतु वे सदैव तत्पर रहते हैं|
वे अपने गुणों से सबके मन के आनंद को बढ़ाने वाले हैं गंभीरता में समुद्र के समान घर में हिमालय के समान तथा क्रोध में कालाग्नि के समान तथा क्षमा करने में पृथ्वी के समान है| वे सदैव लोक कल्याण की भावना को हृदय में रखकर कार्य करने वाले प्रीति पूर्वक व्यवहार करने वाले संयमित व्यवहार के स्वामी तथा मानवता के सजीव उदाहरण हैं|
श्रीमद् वाल्मीकि रामायण के प्रथम सर्ग में ही हम वाल्मीकि जी को ऐसे पुरुष की खोज में देखते हैं, जिसे विश्व संपूर्ण मानव के रूप में जानना चाहते हैं| उनके हृदय में यह उत्कंठा है; यह जानने की जिज्ञासा है कि क्या इस पृथ्वी पर कोई मनुष्य इतनी गुणों को धारण कर सकता है? जानना चाहते हैं कि क्या कोई ऐसा मनुष्य है| जो सद्गुणों को वहन करता हो तथा उस पर किसी भी दुर्गुण का प्रभाव न हो| क्या कोई इतना धर्माचार्य हो सकता है के अधर्म भी उसके भय से स्थान छोड़ देता हो? नारद जी के द्वारा संपूर्णता से श्री राम के बारे में बताने के उपरांत वाल्मीकि ने योग मुद्रा की सहायता से श्री राम के जीवन को देखा और जाना; योग बल के कारण उन्हें सारी घटनाएं घटनाक्रम तदनुसार दिखने लगे श्रीराम के जीवन का प्रत्येक पल उनके जीवन में आए प्रत्येक कष्ट को वाल्मीकि जी ने अति निकटता से देखा इस प्रकार योगमार्गावलंबी महामति महर्षि ने तत्व से सब कुछ देख कर सुखद राम चरित्र का वर्णन कियातथा अपने अनुसार श्रीराम के जीवन तथा उनके चरित्र की समीक्षा की; वाल्मीकि रामायण के अनुसार यदि हम श्री राम के चरित्र के तथा गुणों के बारे में अध्ययन करना चाहे तो; बालकांड के उन्नीसवें सर्ग में राजा दशरथ तथा महामुनि विश्वामित्र जी के बीच में हुए संवाद से प्रारंभ कर सकते हैं तथा श्री राम के वीरता तथा उनके गुणों के बारे में ज्ञान ले सकते हैं|
ऋषि विश्वामित्र का राजा दशरथ के पास विशेष प्रयोजन से आना राजा दशरथ के पूछने पर ऋषि के द्वारा यह कहना कि मेरी वनस्थली तथा यज्ञ की रक्षा हेतु आप श्री रामचंद्र को मुझे दे दीजिए| मेरे यज्ञ की पूर्ति के लिए कम से कम दस दिन के लिए राजीवलोचन श्री रामचंद्र जी को मुझे यथाशीघ्र दे दीजिए|

---

१५३ -बालकाण्ड,प्रथम: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या ६

जिससे मेरे यज्ञ का समय न निकल जाए कल्याणकारी यज्ञ की पूर्ति हेतु अपना सहयोग दीजिए और सहयोग के रूप में मुझे राजकुमार राम ही चाहिए| उनकी यह बात सुनकर राजा दशरथ निश्चेष्ट हो जाते हैं, सचेष्ट होने पर वे बोलते हैं कि राम तो अभी मात्र पंद्रह वर्ष के ही हैं|उन्हें भला किस प्रकार राक्षसों के साथ युद्ध करने हेतु भेज दूँ? राजा दशरथ को समझाते हुए विश्वामित्र जी कहते हैं कि, वे राम की शक्ति तथा विश्वामित्र के उन पर विश्वास को मान देते हुए श्री राम को उनके साथ जाने की आज्ञा दे दें| अनेक प्रकार से यत्न करते हैं कि राजा, राजकुमार राम को उनके साथ वन जाने की आज्ञा दे दें| अतः श्रीराम के पराक्रम तथा उनके शौर्य का बखान करते हुए उनके पिता को समझाते हैं कि वे राम को कोई साधारण बालक कोई साधारण मनुष्य न समझे; वे एक योद्धा है जो अत्यंत ही वीर ,पराक्रमी ,बुद्धिशाली एवं युक्तिपूर्वक युद्ध करने वाले योद्धा हैं|

न च तौ राममासाद्य शक्तौ स्थातुं कथंचन |
न च तौ राघवद्न्यो हन्तुमुत्सहते पुमान || १५४

इस श्लोक के अर्थ अनुसार विश्वामित्र जी कहते हैं कि श्री राम जी के सामने किसी भी तरह का राक्षस कभी टिक न सकेगा क्योंकि किसी साधारण मनुष्य में इतनी क्षमता नहीं है कि वह उन राक्षसों से युद्ध कर सके और श्रीराम से तो वे बड़ी सरलता से हार जाएंगे अरे राम के सिवाए किसी भी मनुष्य में इतनी क्षमता नहीं थी उन राक्षसों को मार सके| वे दोनों बड़े बलवान तथा पापी राक्षस हैं किंतु अब उनकी मृत्यु का समय निकट आ गया है हे राजन वे श्री रामचंद्र की समानता कभी नहीं कर सकते राजन आप इस समय अपने पुत्र के स्नेह के वश में है और मैं आपको यही परामर्श दूंगा के इस स्नेह से मुक्त हो जाएँ क्योंकि मैं आपसे प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूं कि आप उन राक्षसों को अभी से मरा समझिए | राजा दशरथ को श्री राम के शक्ति समझाते हुए वे कहते हैं क-

अहं वेदिम महात्मां रामं सत्यपराक्रमम |
वसिष्ठोसऽपि माहतेजा ये चेमे तपसि स्थिता: || १५५

मैं तथा महातेजस्वी वशिष्ठ जी यहाँ उपस्थित समस्त तपस्वी महात्मा; सत्य पराक्रमी श्री रामचंद्र जी को भली प्रकार जानते हैं| ऋषि विश्वामित्र के अनुसार महाराज दशरथ श्री राम के शौर्य एवं पराक्रम से परिचित नहीं है उनको विश्वास दिलाना चाहते हैं कि श्री राम को साधारण बालक न समझे उनकी वीरता उनका शारीरिक एवं मानसिक बल साधारण होते हुए भी असाधारण है इसी कारण समस्त तपस्वी समाज कुल गुरु वशिष्ठ तथा स्वयं विश्वामित्र जी श्री राम के बल एवं पराक्रम से भलीभांति परिचित हैं| राजा दशरथ से कहते हैं कि किसी भी प्रकार की चिंता न करते हुए श्री राम को उनके साथ जाने की अनुमति दे दें| श्री राम चाहे अस्त्र विद्या में कुशल हो या न हो राक्षस उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते

कृतास्त्रंकृतास्त्रं वा नैनं शक्ष्यन्ति राक्षसाः|
गुप्तं कुशिकपुत्रेण ज्वलनेनामृतं यथा || १५६

१५४,१५५,१५६ -बालकाण्ड,प्रथम: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १५४

जब मैं, विश्वामित्र स्वयं ही उनका रक्षक हूँ| तब भला कोई श्रीराम का क्या कर सकता है? अमृत की रक्षा जब अग्नि चक्र से होती है तो क्या कोई अमृत को प्राप्त कर सकता है? राजगुरु वशिष्ठ राजा दशरथ को श्री राम के पराक्रम पर विश्वास दिलाते हुए उन्हें इस बात का आश्वासन देते हैं कि स्वयं ऋषि विश्वामित्र उनकी रक्षा हेतु तत्पर रहेंगे|

महर्षि वाल्मीकि के इस विचित्र इच्छा को सुनकर राजा दशरथ अत्यधिक चिंतित होते हैं वह मन ही मन विचार करने लग जाते हैं कि ऐसी क्या आवश्यकता आन पड़ी जो विश्वामित्र जी को सुकुमार राम ही चाहिए? और उनकी बात सुनकर राजा दशरथ भयग्रस्त हो जाते हैं कि कैसे उनके सुकुमार राम वन जाकर बड़े-बड़े मायावी राक्षसों से युद्ध करेंगे? उन्होंने तो ऐसा वातावरण भी कभी नहीं देखा युद्ध करना तो दूर की बात है| अधेड़ अवस्था में पुत्र प्राप्ति के उपरांत राजा दशरथ का मोह वैसे भी पुत्रों के प्रति अधिक था और उसमें भी श्री राम के प्रति वे विशेष प्रेम रखते थे| उनको स्वयं से दूर नहीं करना चाहते थे| अतः उन्होंने विश्वामित्र जी से अनुरोध किया कि ,मैं स्वयं अपनी सेना सहित आपके कार्य को सिद्ध करूँगा परंतु श्रीराम का उनसे युद्ध करना| मैं कदापि सहन नहीं कर सकता आप चाहे तो मेरी सेना मेरा सारा सामर्थ्य अपने वश में कर लें परंतु श्री राम को न मांगे महाराज दशरथ के इन असंगत वचनों को सुन विश्वामित्र जी कुपित हो गए और उन्होंने कोई बात नहीं आप अपने कुल की परंपरा को मानने से मना कर दीजिए मैं जिस मार्ग से आया हूं उसी मार्ग से वापस लौट जाऊंगा इसके उपरांत कुलगुरू वशिष्ठ दशरथ जी से कहते हैं कि आप श्री राम को विश्वामित्र जी के साथ भेज दीजिए श्री राम धर्म की रक्षा हेतु जाएंगे| वे युद्ध विद्या में पारंगत हो अथवा न हो राक्षस उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते क्योंकि उनके रक्षक विश्वामित्र जी हैं| वे स्वयं तप परायण में इस संसार में उच्च कोटि के ऋषियों में से एक हैं| अस्त्र विद्या में वे अद्वितीय हैं वनवास से पहले एक राजा के रूप में राज्य कर रहे थे| तब भी इनके पास अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र थे | ये एक रूप नहीं है जो आप को दिख रहे हैं कि बड़े ही बलवान दीप्तिमान तथा सबको जीतने में समर्थ है दक्ष प्रजापति की दो कन्या जया तथा सुप्रभा ने इनको अनेक अस्त्र-शस्त्र प्रदान किए हैं| सन्यास लेने के कारण वे इनका प्रयोग नहीं कर सकते ऋषि विश्वामित्र में इतनी शक्ति है कि यह स्वयं ही राक्षसों को मार सकते हैं; परंतु यह आपके पुत्र के हितार्थ ही उन्हें आप से मांगने आए हैं| वही ऋषि विश्वामित्र जी के अनुसार जिस प्रकार का अनुष्ठान वे कर रहे हैं उसमें क्रोध करना सर्वथा वर्जित हैं अन्यथा वे उन राक्षसों को श्राप ही दे देते| यज्ञ की रक्षा हेतु एकमात्र विकल्प श्रीराम ही हैं| ऋषि वशिष्ठ के समझाने पर किसी प्रकार राजा दशरथ अपने कुल की परंपरा का निर्वहन करते हुए हृदय पर पत्थर रखकर श्री राम को ऋषि विश्वामित्र के साथ जाने की आज्ञा देते हैं| श्री राम के साथ सदैव परछाई के रूप में चलने वाले लक्ष्मण जी भी उनके पीछे हाथ में धनुष लिए हुए और सिरकेबाल संवारे हुए उनके साथ जाते हैं|

यहां से हम आज्ञाकारी अबोध बालक के रूप में श्री राम को समझेंगे ,जो अपने गुरु की आज्ञा के अनुसार ही कार्य करता है |अयोध्या से छःकोस दूर जाने पर विश्वामित्र जी राम जी और लक्ष्मण जी सरयू नदी के दक्षिण तट पर पहुंचे| तब वहां विश्वामित्र जी ने रामचंद्र जी से कहा हे वत्स! जल से शरीर शुद्ध कर लो अथवा आचमन करो| अब विलंब मत करो शरीर शुद्ध हो जाने पर मैं तुम्हें बला तथा अति बला विद्या दूंगा जिनके प्रभाव से तुम्हें न तो कभी श्रम प्रतीत होगा न ही तुम आक्रांत होगे न कभी रूप विपर्य होगा, सोते समय भी राक्षस लोग तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेंगे| तुम्हारे बाहुबल की समानता कोई न कर पाएगा| इस प्रकार विश्वामित्र जी श्री राम को बला अति बला तथा अन्य प्रकार की विद्याओं से सुसज्जित करते हैं और रात सरयू तट पर तृणों की शैया पर सो कर रात्रि व्यतीत की; इस पूरे प्रवास काल में श्रीराम ने एक ही बात को भली प्रकार से शिरोधार्य किया कि, जो कुछ भी ऋषिवर उनसे कहते है;, वे उसका यथोचित पालन करेंगे|

राक्षसी विशेषकर ताड़का वध की घटना में जब विश्वामित्र उन्हें ताड़का का वध करने की आज्ञा देते हैं तो भी एक बार इस बात को सोचते हैं कि क्या एक स्त्री वह भी यक्षिणी उसका वध करना ठीक होगा या उसको घायल करके या किसी और विधि से उसको भयभीत करके यहां से भेजा जा सकता है ?श्री राम के इस प्रकार के विचार पर विश्वामित्र जी उन्हें क्षत्रियों के धर्म एवं कर्तव्य के बारे में बताते हुए; ताड़का वध हेतु उत्साहित करते हैं| ऋषिवर अनेक प्रकार के उदाहरण देते हुए श्री राम को बिना कोई विचार किए ताड़का के वध का आदेश देते हैं इस पर श्री राम हाथ जोड़कर यह उत्तर देते हैं

पितुवरवरचननिर्देशात्पितुर्वचनगौरवात |
वचनं कौशिकस्येती कर्तव्यमविशंक्या || १५७

दशरथ नंदन श्री रामचंद्र जी ने ऋषिवर विश्वामित्र जी के उत्साहवर्धक वचनों को सुनकर हाथ जोड़कर उत्तर दिया कि मुझे अपने पिता की आज्ञा से और उनकी बात रखने के लिए आपके कथन के अनुसार निशंक होकर कार्य करना है क्योंकि यही मेरा परम कर्तव्य है| श्री राम के लिए उनके पिता कि आज्ञा का क्या मान तथा महत्व था इस बात को उपर्युक्त पंक्तियों के भाव से भली प्रकार समझा जा सकता है|

अनुशिष्टोंस्म्योध्यायां गुरुमध्ये महात्मना |
पित्रा दशरथेनाहं नावज्ञेयं हि तद्वचः || १५८

क्योंकि महाराज ने गुरु वशिष्ट के सामने अयोध्या से प्रस्थान करते समय मुझे यह आज्ञा दी है कि मैं आपके प्रत्येक आदेश का पालन करूंगा अतः मैं उसकी अवहेलना नहीं कर सकता अर्थात जो और जैसा विश्वामित्र जी बोलते श्री राम बिना किसी प्रश्न तथा शंका के वो समस्त कार्य करने को उद्धत थे| चाहे वह युद्ध हो अथवा कुछ और क्योंकि उनके लिए उनके पिता का आदेश ही उनकी जीवनरेखा थी और वो उसके साथ ही चलना चाहते और जानते थे वो उस रेखा को पार नहीं कर सकते थे|

सोऽहं पितुवर्चः श्रुत्वा शासनादब्रह्मवादिनः |
करिष्यामी न सन्देहस्ताटकावधमुत्तम्म || १५९

अतः पिता की आज्ञा के अनुसार आपके कहने मात्र से ही मैं ताड़का का वध अवश्य करुँगा| आपके कथनानुसार मैं निसंदेह ताड़का का वध करूँगा| यहाँ श्री राम ऋषि के हृदय में कोई संशय नहीं रहने देना चाहते है कि श्री राम आयु में कम होने के कारण ताड़का का वध करने में संकोच करेंगे| श्री राम अपने लक्ष्य तथा उद्देश्यों को लेकर एकदम स्पष्ट रहते थे| श्रीराम ऋषि विश्वामित्र के मन में किसी भी प्रकार का कोई संशय नहीं आने देना चाहते न ही अपने रघुकुल की वीरता पर किसी भी प्रकार का संदेह का कोई अवसर उनको देना चाहते हैं इसी कारण वे ऋषि विश्वामित्र को यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि जिस उद्देश्य से जय श्री राम को राजा दशरथ से मांग कर लाए हैं| उस उद्देश्य की पूर्ति हर स्थिति में होगी चाहे राम और लक्ष्मण आयु में भले ही छोटे हैं पर वीरता में उनके समक्ष कोई टिक नहीं सकता| श्री राम इस बात को ऋषि के सामने सत्यापित करना चाहते हैं| वे इस बात को प्रमाणित करना चाहते हैं कि ऋषि विश्वामित्र के द्वारा लिया गया निर्णय पूर्णतः सत्य है|

१५७,१५८,१५९,१६० -बालकाण्ड,षड्विशःसर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १९१,१९२

वे ऋषि विश्वामित्र के विश्वास को बनाए रखना चाहते हैं कि उन्होंने श्री राम और लक्ष्मण को राक्षसों के वध हेतु चयन करके किसी भी प्रकार की कोई त्रुटि नहीं की और उन्हें अपने इस निर्णय पर गर्व होगा|

गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्यास्य सुखाय च |
तव चैवाप्रमेयस्य वचनं कर्तु मुद्यतः || १६०

वे अपने राजधर्म से भलीभांति परिचित थे; वे जानते थे कि उन्हें अपने क्षत्रिय धर्म का पालन करना है राज्य पुत्र होने के नातेप्रजा तथा ऋषि-मुनियों, वन्यजीवों आदि की सुरक्षा उनका ही दायित्व है| प्रत्येक स्थितिमें देशवासियों को सुखी करना चाहता हूँ और इसके लिए मैं समर्पित हूँ| मैं गौ, ब्राह्मण आदि के हित का साधन करुँगा| यहां हम श्री राम को समाज के कल्याण तथा उनकी रक्षा की भावना से ओत-प्रोत देखते हैं किस प्रकार उचित-अनुचित, धर्म -अधर्म का निर्णय बड़ी कुशलता से कर लेते हैं|
श्री राम-सीता के विवाह के उपरांत अयोध्या कांड में जब श्री राम के राज्याभिषेक का निर्णय लिया जाता है| तब मंथरा द्वारा कैकेयी को मति भ्रष्ट करने के उपरांत, वो राजा दशरथ से वरदान स्वरूप श्री राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास एवं भरत के लिए अयोध्या का सिंहासन माँगती हैं, तो राजा दशरथ निरीह पुरुष की तरह निढाल हो जाते हैं| श्री राम के उनके द्वारा महल में बुलाए जाने पर वे आकर राजा का हाल देखते हैं; तो अत्यंत ही दुखी हो जाते हैं क्योंकि दु:ख के कारण अयोध्या नरेश दशरथ श्रीराम से आंखें नहीं मिला पाते; वही श्री राम को लगता है कि शायद उनसे कोई इतनी बड़ी भूल हो गई है कि उनके पिताजी उनकी तरफ देख भी नहीं रहे हैं| ऐसे में वे अपनी माता कैकेयी से पूछते हैं कि अकस्मात ऐसा क्या हो गया कि कल तक प्रसन्न दिखने वाले अयोध्या नरेश आज इतने उदासीन हैं? वे अपनी दृष्टि धरती से उठाकर देख भी नहीं पा रहे| मैं जानना चाहता हूँ कि कौन सा ऐसा दुख है जिसकी वजह से राजा की यह हालत हो गई है?उनके दुख का जो भी कारण होगा उसका मैं निवारण करूँगा|

कच्चिन्मया नापराद्धमज्ञानाद्येन मे पिता |
कुपितस्तनममा चक्ष्व त्वं चैवैनं प्रसादय || १६१

हे माँ ! कृपया मुझे बताएं कि पिताजी को क्या हो गया है इस बात को सुनकर कैकेयी कहती हैं कि इन्होंने पहले तो मुझे सम्मान पूर्वक वरदान दिए और अब यह दूसरे गँवार मनुष्यों की भांति उसके लिए पश्चाताप कर रहे हैं| हे राम !इस धर्ममूलक जगत में पुरुषों को सत्य से बढ़कर कोई वस्तु प्रिय नहीं है इसलिए तुम ऐसा ही करो कि जिस में तुम्हारे लिए मुझ पर कुपित होकर राजा कहीं सत्य को न छोड़ दें| शुभ हो या अशुभ राजा जो कुछ कहें यदि तुम वही करो तो मैं तुमसे बात करूँ यदि ये न कहेंगे तो राजा द्वारा प्रतिज्ञात है; तुम पर विफल न हो जाए तो मैं कहूँ| यहाँ पर हम श्री राम को किसी साधारण पुत्र के रूप में देखते हैं जो किसी तरह भी इस बात को जानने के लिए उत्सुक एवं व्यग्र है कि उसके पिताजी को क्या हो गया है? तथा वह किस प्रकार अपने पिताजी के दुख को कम कर सकता है यदि वे स्वयं उसके दुख का कारण हैं तो वह अपने उस अपराध की क्षमा मांगने अपनी उस गलती को सुधारने के लिए भी तैयार हैं लेकिन वे अपने पिता को इस स्थिति में नहीं देख सकते| इसी कारण कैकेयी के द्वारा बताए जाने पर की राजा अपने द्वारा दिए गए वचन

१६१-अयोध्या काण्ड,,षड्विश:,एकोनविशः सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ,२१०

को लेकर दुखी हैं और कैकई द्वारा यह आश्वासन मांगे जाने पर कि उनके पिता ने जो कुछ भी वचन कैकई को दिया है| श्री राम उसका पालन करेंगे इस बात के उत्तर में श्री राम कहते हैं| देवी आप मुझसे ऐसा वचन कहे यह योग्य नहीं है मैं राजा के वचन की पूर्ति हेतु अग्नि में भी गिर सकता हूँ , विष भी पी सकता हूं और समुद्र में भी डूब सकता हूँ| हितैषी, राजा, गुरु और पिता द्वारा जो नियुक्त होगा| मैं उसे करूंगा इसलिए आप उस वचन को कहें राजा का क्या भविष्य है राजा से आपने ऐसा क्या मांगा जिसको देने के भय के कारण उनकी स्थिति हो गई है| मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं उस कार्य को अवश्य पूर्ण करूंगा जो वचन राजा ने आपको दिया है; उसका निर्वहन अवश्य करूँगा| मैं, राम आपको वचन देता हूँ कि आपके मन की जो भी चलता है उसको दूर कर मैं दो बार किसी बात को नहीं कहता तब सरल स्वभाव युक्त सत्यवादी राम से कह दी है राम मैंने राजा से भारत का राज्य अभिषेक और तुम्हारे लिए दंडकारण्य जाना मांगा है यदि तुम पिता को और अपने को सत्य प्रतिज्ञा वाला सिद्ध करना चाहते हो तो मेरे इस वाक्य को सुनो तुम पिता की आज्ञा में स्थित रहो जैसे कि इन्होंने प्रतिज्ञा की है| तदनुसार तुम्हें चौदह वर्ष के लिए वनवास को जाना पड़ेगा और तुम्हारे राज्याभिषेक के लिए जो भी सामग्री प्रस्तुत की गई है, इससे अब भरत का राज्य अभिषेक होगा | इन्ही दो वरों को देने के कारण राजा का मुख मलिन हो गया है| ये दयावश तुम्हें देखने में असमर्थ हैं| हे राम! राजा के इस वचन को पूर्ण करो श्रीराम के हृदय में तो दुख नहीं हुआ परंतु महानुभाव राजा पुत्र वियोग के संकट से बड़े ही दुखी हुए| राम मरणसम वचन को सुनकर भी व्यथीत नहीं हुए और बोले ऐसा ही होगा| मैं यहां से जटा तथा चीर धारण करके राज्य प्रतिज्ञा को पूर्ण करने हेतु वन के लिए चला जाऊंगा किंतु मैं यह अवश्य जानना चाहूँगा कि शत्रुनाशक राजा प्रसन्न क्यों नहीं है| हितकारी कृतज्ञ पिता गुरु तथा राजा से जो भी आज्ञा प्राप्त हो वह विश्वासपात्र को अवश्य करनी चाहिए तो क्या मैं इनके लिए इनका प्रिय कार्य नहीं कर सकता? परंतु मेरे हृदय को एक ही बात जला रही है कि स्वयं राजा ने मुझे भरत की अभिषेक की बात क्यों नहीं बतलाई| मैं तो केवल आपके कहने से ही अपने भाई भरत के लिए संपूर्ण राज्य सीता यहां तक कि अपने प्राणों तथा अपनी संपत्ति को भी प्रसन्नता पूर्वक दे सकता हूं और उस पर भी यदि महाराज अर्थात मेरे पिता आज्ञा दे, तो मैं उस कार्य को क्यों नहीं करूंगा ?

तदप्रियममित्रघ्नो वचनं मरणोपमं |
श्रुत्वा न विव्यथे राम: कैकेयी चेदमब्रवीत || १६२

इसलिए कृपया आप पिताजी को समझाएं की जिस प्रकार, वे नीचे पृथ्वी की ओर नेत्र किए हुए रुदन कर रहे हैं | यह मुझसे सहन नहीं हो रहा है उन्होंने कहा कि मैं तथा राज्य की इच्छा का पिपासु नहीं हूं| शत्रुहंता श्री राम चंद्र मृत्यु के समान पीड़ादायक कैकेई के कटु वचन सुनकर भी लेश मात्र दुखी नहीं हुए अपितु उन्होने कहा कि मैं अपने प्राण त्याग कर भी अपने पिता के वचनों की पालना करूँगा | इस धर्म आचरण से अधिक और है ही क्या कि पिता की सेवा और उनके वचनों का पालन करने का सौभाग्य मुझे मिला है | मैं पिता के बिना कहे ही चौदह वर्ष निर्जन वन में व्यतीत कर लूँगा| श्री राम से अपने पिता का दुख सहन नहीं हो रहा था और उसको दूर करने क लिए वो कुछ भी करने क लिए सहर्ष तैयार थे|

नाहमर्थपरो देवि लोकमावस्तुमुत्सहे |
विद्धि मामृषिभिस्तूलयं केवलं धर्ममास्थितं || १६३

---

१६२ ,१६३ -अयोध्या काण्ड,एकोनविशः सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या २१७,२२१

वे कहते हैं| हे देवी ! मै धन के लोभ से राज्य पाने की कामना नहीं करता मैं तो राज्य की कामना केवल कर्तव्य पालन के लिए करता था| मुझे तो आप केवल धर्म आश्रित ऋषियों के तुल्य जाने अर्थात जिस प्रकार ऋषि अपने जीवन का लक्ष्य केवल धर्म पालन समझते हैं; उसी प्रकार मेरा भी लक्ष्य इस संसार में केवल और केवल धर्म का पालन करना ही है और पिताजी के द्वारा दिए गए वचनों का पालन करना भी मेरा ही धर्म है अतः आप निश्चिंत रहें सारे कार्य आपकी इच्छा के अनुरूप ही होंगे | उस समय भी उन्हें अपने पिता की संशयपूर्ण स्थिति तथा उस स्थिति का उन पर पड़ने वाला प्रभाव व्यथित कर रहा था | उन्हें अपने पिता के व्यवहार पर अचंभा होता है क्योंकि वह अपनी स्थिति को लेकर कभी भी चिंतित नहीं रहे प्रत्येक स्थिति में स्वयं को ढाल लेना उनकी यही कला उन्हें साधारण से असाधारण बनाती है|

अनुत्कोंअंप्यत्रभवता भवत्या वचनादहम |
वने वत्सयामि विजने वर्षाणीह चतुर्दश || १६४

स्वयं से अधिक अपने भाइयों के प्रति अपने परिजनों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करने वाले श्रीराम को अपने वनवास के बाद एक क्षण के लिए भी नहीं खटकती | वे कैकेयी से कहते हैं कि आपने पिताजी से मेरे जिस समर्थ वाणी में मेरी प्रशंसा की है निश्चय ही मैं उस प्रशंसा के योग्य नहीं | आप निश्चिंत रहें जिस में भी आपकी प्रसन्नता होगी; मैं वह अवश्य करूंगा और सुनाओ राजा यदि मुझसे न भी कहे तो भी मैं आपके कहने से ही चौदह वर्ष जनशून्य वन में वास करूँगा| कैकेयी के वचनों को तथा कैकई से अपने संबंधों को मान देते हुए इस विकट परिस्थिति में भी कैकई के प्रभाव में किसी भी प्रकार की कमी नहीं आने देते | अन्य परिवार जनों से विदा लेने तथा सन्यासी का भेष धारण करने के लिए वहां से प्रस्थान करते हैं | उनके मन में अपने वनवास का कोई दुख नहीं ,है लेकिन यह बात उनको दुखी करती हैं कि उनके भाई के राज्याभिषेक की बात उनसे क्यों छुपाई है? क्या अपने भाई की उन्नति में प्रसन्न नहीं होते क्या वे अपने भाई के राज्य अभिषेक पर हर्षित नहीं होते? वे तो कभी भी किसी राज्य सत्ता को प्राप्त करने के बारे में सोचते भी नहीं उनकी प्रसन्नता तो भरत की प्रसन्नता से जुड़ी हुई है फिर क्यों उनको इस समाचार से दूर रखा गया? इस सारे प्रसंग में श्री राम या तो अपने पिताजी के दुख से दुखी हैं या फिर इस बात से कि उन्हें उनकी भाई की उपलब्धि के समाचार से दूर रखा गया| वे तो सपने में भी ऐसा नहीं सोच सकते की कभी भी अपने भाई या अपने किसी परिजन की उन्नति से उन्हें किसी भी प्रकार का दुख होगा| इस अकल्पनीय घड़ी में भी वे कहते हैं कि राजा की आज्ञा लेकर दूत शीघ्रगामी घोड़ों को लेकर अभी जाए और आज ही भरत को मामा के यहां से बुला लाएं मैं भी शीघ्र यहां से बिना विचारे ही पिता जी की आज्ञा से चौदह वर्ष के लिए वनवास को जाता हूँ| इसके उपरांत महाराजा दशरथ एवं रानी कैकई के प्रदक्षिणा कर उन्हें प्रणाम कर अंतः पुर से निकलकर स्वयं अपने मित्रों से मिले सुमित्रानंदन लक्ष्मण अश्रुपूर्ण नेत्रों से अत्यधिक क्रुद्ध हुए उनके पीछे पीछे चले| राम अभिषेक-भांड की प्रदक्षिणा कर इच्छा सहित तथा स्थिर दृष्टि से सहज ही चले|

न चास्य महती लक्ष्मी राज्यनाशोपकर्षति |
लोककान्तस्य कान्तत्वाच्छीतरश्मेरीव क्षपा || १६५

---

१६४ ,१६५-अयोध्या काण्ड,एकोनविशः सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसादपोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर ,पृष्ठ संख्या २२२

श्री राम ने कैकेयी को आश्वासन दिया कि वह न तो राजपाट का मोह रखते हैं और न ही राज्य अभिषेक के इच्छुक हैं| उनके लिए यदि किसी बात का महत्व है तो अपने पिता की प्रसन्नता का अपने परिवार के मान सम्मान का आपसी एकता का प्रेम का वे किसी भी स्थिति में अपने पिता को दुखी नहीं देख सकते थे उनकी प्रसन्नता के लिए कुछ भी करने को सदैव ही तत्पर रहते थे उनके लिए इस बात का कोई महत्व नहीं कि अगले पल उनके साथ क्या होने वाला है सबका विश्वास सब की आशा तथा अभिलाषा यही थी कि वह श्री राम को अयोध्या नरेश के रूप में देखें परंतु कालचक्र के अनुसार कुछ भी सुनिश्चित नहीं होता अगले ही पल जिस प्रकार उन्हें वनवास की आज्ञा मिली; वे सहर्ष उसके लिए तैयार हो गए बस वे अपने पिता को शांत और स्वस्थ देखना चाहते थे| राज्याभिषेक न होने से श्री रामचंद्र की मुखद्युति में तिल भर भी अंतर न पड़ा वे जैसे पूर्व में थे| वैसे ही कांतिमान बनी रहे क्योंकि उनमें तो स्वाभाविक कांति थी जैसे कृष्ण पक्ष के चंद्रमा की कांति नित्य होने पर भी नहीं घटती|

न वनम गंतुकामस्य त्ज्यतश्च वसुंधराम |
सर्वलोकातिग्स्येव ल्क्ष्यते चित्तविक्रिया || १६६

राम की लोकप्रिय महती शोभा को राज्यपाट या किसी भी प्रकार का लोभ नष्ट न कर सका| वे वन जाने को तैयार थे साथ ही समस्त पृथ्वी का राज्य त्याग रहे थे फिर भी उनके चित्त में लोकातीत जीवनमुक्त महात्मा की भांति कोई विकार नहीं देखा गया| श्रीराम ने छत्र लगाने वाले को मना कर दिया, चँवरडुलाने वाले को भी रोक दिया, रथ को लौटा दिया परिजनों तथा पूरवासियों मनुष्यों को भी विदा कर दिया फिर अपने मन को स्थिर कर| अपनी माता को यह समाचार सुनाने के लिए उनके महल में गए| जो लोग सत्यवादी राम के निकट रहा करते थे| उन्होंने भी उनके मुख पर किसी प्रकार के विकार का चिन्ह नहीं देखा | राम ने अपनी स्वाभाविक प्रसन्नता न त्यागी राम के समान गुण वाले लक्ष्मण जी भी उनका अनुसरण करते हुए उनके पीछे पीछे गए| उधर राम जैसे ही कैकई के महल से बाहर निकले अंतःपुर में रहने वाली राज महिलाओं का महान आर्तनाद सुनाई पड़ने लगा| वे कह रही थीं कि जो अपने पिता से बिना पूछे ही अंतःपुर के सभी कार्यों का प्रबंध कर दिया करते थे, जो हम लोगों के सहायक और रक्षक थे| वे राम ही आज वन को चले जाएंगे; ऐसा सोचने मात्र से ही लोगों के प्राण उनके शरीर को छोड़ने के लिए उद्यत हो रहे थे वह बिना राम के अयोध्या की कल्पना भी नहीं कर सकते थे बिना मांगे ही सब कुछ देने वाले राम बिना बोले ही सब कुछ करने वाले राम हम सब से दूर चले जाएंगे ऐसा सोच कर अयोध्या में निवास करने वाले स्त्री-पुरुष वृद्धि युवा सभी व्याकुल हो रहे थे | अंतः पुर के सभी निवासी तथा कर्मचारी श्री राम को बाल्यकाल से देखते आ रहे हैं उनके लिए यह असहनीय था कि उन सब के लाडले विनम्र तथा प्रेम की मूर्ति श्री राम अब अयोध्या में नहीं रहेंगे | श्री राम के मन में तो किसी भी प्रकार का कोई पीड़ा नहीं थी; परंतु उनको प्रेम करने वाले अयोध्या निवासी अंतःपुर में निवास करने वाले सभी लोग दुख से व्याकुल हो रहे थे इस बात को सोचकर भी व्यथित हो रहे थे कि किस प्रकार यह सुकुमार राजमहल को छोड़कर वन का वासी हो जाएगा जिसको राजा के रुप में देखना हम सबके लिए एक सपना था वह स्वप्न विधाता ने कैसे तोड़ दिया? सभी इतनी पीड़ा में थे कि किसी को किसी की सुध ही नहीं थी |

कृत्येष्वचोदित: पित्रा सर्वस्यानतःपुरस्य च |
गतिर: शरणम चापि स रामोद्य प्रवत्सयति || १६७

१६६,१६७-अयोध्याकाण्ड,एकोनविशःसर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या २२४,२२५

श्री राम अंतर्मन से सभी की आवश्यकता को समझते थे | वे जानते थे किस की क्या अभिलाषा या आवश्यकता है तथा न ही वे किसी कार्य को ऊपरी मन से किया करते थे सब को सम्मान देना तब की आवश्यकता को अपनी आवश्यकता समझना चाहे वह राज् परिवार का कोई व्यक्ति हो या महल में कार्य करने वाला कर्मचारी उनके हृदय में सब के प्रति प्रेम तथा समर्पण की भावना थी स्वयं को पीछे रख किसी के कार्य कैसे सवारे जाते हैं इसका कोई उदाहरण नहीं मिल सकता अपने मन की व्यथा लगाते हुए अपने से बड़ों की आज्ञा का पालन करना अपने बराबर अपने आयु के लोगों के साथ वात्सल्य पूर्ण व्यवहार करना प्रत्येक व्यक्ति को इस बात की अनुभूति कराना कि वह विशेष है यही श्री राम के व्यवहार की विशेषता रही|

कौसल्यायां यथा युक्तो जनन्यां वर्तते सदा |
तथैव वर्ततेऽस्मासु जन्मप्रभृति राघव: || १६८

उनका बाल्यकाल से ही अपनी माता कौशल्या के प्रति जैसा व्यवहार था वैसा ही व्यवहार हमारे साथ भी था ऐसा कहकर वे शोक और संताप से ग्रस्त हो गईं| सभी इतना कि साधारण से असाधारण बनाता है; मात्र राज्य पुत्र नहीं थे वे जन पुत्र थे प्रजा पुत्र थे जिनके लिए पहली प्रमुखता उनके राज्य में रहने वाले लोग तथा उनकी सुख समृद्धि थी | वे जानते थे कि श्री राम अपने से पहले दूसरों के बारे में सोचते हैं ऊपर बताए गए प्रसंग में भी श्री राम वनवास से पहले अंतःपुर की सारी व्यवस्था स्वयं करके वनवास के लिए निकले क्योंकि अपने पिता की जो दशा उन्होंने देखी उसके बाद उनको यह भली-भांति ज्ञात था कि कोई भी इस स्थिति में नहीं है कि वह इन आवश्यक कार्यों को कर पाए उन्होंने अपना दायित्व समझते हुए वन जाने से पहले सभी प्रकार की व्यवस्थाएं की ताकि किसी को भी किसी प्रकार की असुविधा न हो|

स चापि राम: परिपूर्णमानसो महध्द्नन धर्मवलैरूपार्जितम |
नियोजयामास सुहृज्ज्ने चिरा द्यथार्ह सम्मानवच: प्रचोदित: || १६९

श्रम एवं धर्म की कमाई से अर्जित किए हुए धन को बड़े आदर के साथ अपने सुहृदों के साथ बांट देते हैं | उस समय ऐसा कोई ब्राह्मण सुहृद, नौकर, निर्धन तथा भिक्षुक न था जिसका यथा योग्य दान- मान से श्री राम ने सत्कार न किया हो,जीवन के सत्य को भली प्रकार जानते थे अपने अनुभवों से उन्होंने इस बात को सीखा था कि कुछ भी सदैव नहीं है| राजसी ठाठ-बाट को वे प्रजा की सेवा का साधन मात्र समझते थे | राजकोष में धन की वृद्धि होना उनके लिए बस यही अर्थ रखता था कि उनकी प्रजा इस कोष का लाभ उठा सकें| उनकी यथायोग्य सहायता की जाए; उन्हें जिस भी साधन तथा वस्तु की कमी है, उसको पूर्ण किया जाए प्रजा के सुख से ही स्वयं को सुखी मानते थे| प्रजा की संतुष्टि से ही स्वयं को संतुष्ट मानते प्रजा का प्रेम ही उनके लिए सर्वोपरि था तथा प्रजा की प्रसन्नता के लिए अपना सर्वस्व निछावर करने के लिए तैयार रहते हैं| उनका जीवन स्वयं में इसका जीवंत उदाहरण है; अपने कुल की परंपरा में इसी कर्तव्य बोध को देखते आए कि किस प्रकार उनके पूर्वजों ने अपनी प्रजा के सुख तथा उनकी आवश्यकताओं का ध्यान रखा उनकी नजर में राजा होना कोई पद या पदवी नहीं थी एक कर्तव्य बोध था| जिसका सार मात्र इतना था कि प्रजा को कभी भी किसी प्रकार का दुख न हो किसी प्रकार की कोई कमी न हो अन्यथा राजा का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता|

१६८,१६९ -अयोध्याकाण्ड,एकोनविशःसर्गः,विश:सर्गत्रिपंचाश:सर्गःश्री,मद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या २२७

जाते-जाते भी सब की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए सभी को कुछ न कुछ देना चाहते थे उनके व्यवहार से उनकी दान खिलता से किसी भी प्रकार इस बात का भान नहीं हो सकता था की उनको वनवास की आज्ञा दी गई है और उनको शीघ्र ही अयोध्या छोड़नी पड़ेगी | इतने तनाव युक्त वातावरण में सरलता एवं सुगमता से अपने दायित्वों का निर्वहन कौन कर सकता है श्री राम किसी भी स्थिति में और किसी भी स्थान पर अपने चित्त को प्रसन्न रखने वाले व्यक्ति थे वह कभी भी अपने दुख से दुखी नहीं होते थे| मूलतः उन्हें दूसरों के कष्ट से अत्यधिक दुख होता था , वे नहीं चाहते थे कि उनका कोई परिजन या प्रजाजन किसी भी कारण से कष्ट भोगे| राम के सिवा किसी भी साधारण मनुष्य की तरह निश्चित ही एक बार कैकेयी की बात सुनकर उन्हें धक्का लगा होगा परंतु उन्होंने संयम से काम लेते हुए अपने पिता के द्वारा दिए गए वचन को मान देना श्रेयस्कर समझा इस जगत में मेरे पिता का अपमान कोई भी अपमान न कर सके इसलिए उन्होंने वनवास सहर्ष स्वीकार किया और स्वयं इस बात की पुष्टि की थी कि उन्हें धन -संपदा, राज्यपाट इत्यादि को प्राप्त करने की कोई लालसा नहीं थी| वे जनसेवक बनकर प्रजा की सेवा करना चाहते थे| अपना सर्वोत्तम देकर
अपनी प्रजा को प्रसन्न एवं संतुष्ट करना चाहते हैं | एक राजा के रूप में उन्होंने जो भी भावी योजनाएं बनाईं उनको क्रियान्वित करना चाहते थे परन्तु उन्होंने इतना सुनते ही कि कैकेयी ने राजा से वरदान स्वरूप उनका वनवास मांगा है बिना किसी भाव के उसकी तैयारी में तत्पर हो गए|
अयोध्या कांड के तिरपनवे सर्ग में सुमंत्र को वापस अयोध्या भेजने के उपरांत श्री राम कहते हैं कि आज अपने देश से बाहर निकलने के उपरांत यह पहली रात्रि है; आज हमारे साथ सुमंत्र भी नहीं है इसलिए अयोध्या के सुखों की उत्कंठा मत करना |

अद्दयं प्रथमा रात्रिर्याता जनपदाद्वहि: |
या सुमन्त्रेण रहिता तां नोत्कंठीतुमर्हसि || १७०

प्रस्तुत पंक्तियों में श्री राम लक्ष्मण जी को इस बात के लिए मानसिक रूप से तैयार कर रहे हैं कि अब हमें किसी भी प्रकार के राज महल के रहन-सहन तथा व्यवहार को याद भी नहीं करना चाहिए ,अपितु वन में आने वाले सभी प्रकार के संघर्षों के लिए हमें तत्पर रहना होगा | वे लक्ष्मण जी को यह ढांढस बताते हैं कि हम दोनों को एक दूसरे का सदैव ही सहयोग करना होगा ताकि आगामी चौदह वर्षों को सुचारू रूप से पूर्ण किया जा सके प्रत्येक कार्य के लिए स्वावलंबन का ही सहारा लेना होगा और अपने आप को आगामी जीवन के लिए तैयार करना होगा| वन में किसी भी प्रकार की सुख सुविधा नहीं मिलेगी जिसका अभ्यास राजकुमार तथा राजकुमारियों को होता है, कोई भी सहायक तथा सेवक कार्य करने के लिए उपलब्ध नहीं होगा सारे कार्य स्वयं ही करने होंगे चाहे वह कुटिया बनाना हो रसोई पकाना हो जल की व्यवस्था करनी हो लकड़ियों की व्यवस्था करनी है भोजन की व्यवस्था करनी हो| श्री राम यहां लक्ष्मण तथा सीता जी को वन के जीवन के बारे में बता रहे हैं क्योंकि ना तो लक्ष्मण जी और ना ही सीता जी किसी भी प्रकार से अयोध्या में रहने को सहमत हैं| श्रीराम उन्हें वन्य जीवन की वास्तविकता से अवगत कराते हुए यह बताते हैं की जिस प्रकार का जीवन जीने का अभ्यास आप दोनों को है ऐसा कुछ भी वनवास में उपलब्ध नहीं होगा|

---

१७० -अयोध्या काण्ड,एकोनविशः सर्गः,त्रिपंचाश: सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ३५९

जागर्तव्यमतंद्रिभ्यामद्यप्रभृति रात्रिषु ।
योगक्षेम हि सीताया वर्तते लक्ष्मणावयो : || १७१

यहाँ वन्यजीवों का भय तथा ऋतु के अनुसार उनसे बचने की व्यवस्था भी नहीं होगी| यह एक कठिनतम अनुभव होगा जिसके लिए उन्हें मानसिक और शारीरिक रूप से तैयार रहना होगा | ये ना हो कि सिर्फ उत्साह मे या शीघ्रता में निर्णय ले लिया जाए और बाद में उसके लिए पछताना पड़े| सीता जी के प्रति अपने कर्तव्य को याद करते हुए राम जी लक्ष्मण जी से कहते हैं कि हे लक्ष्मण ! आज से लेकर जब तक हमें वन में रहना तब तक हमको और तुमको चाहिए कि हम रात भर जागते रहे ताकि सीता की रक्षा कर सकें| क्योंकि वह सीता जी को अपने दायित्व के रूप में देखते थे और उन्हें एक पति के रूप में अपने इस कर्तव्य का भली-भांति ज्ञान था, कि पत्नी की सुरक्षा करना पति का कर्तव्य है और वह अपने किसी भी कर्तव्य से कभी भी विमुख नहीं हुए| जहां एक तरफ वे लक्ष्मण को ढाढस बंधाते हैं की वन में करने योग्य सभी कार्यों में वे लक्ष्मण जी का बराबर सहयोग करेंगे क्योंकि यहां उनके सहायता करने के लिए कोई अन्य नहीं है; वही वे अपने इस कर्तव्य को भी याद करते हैं कि सीता जी की सुरक्षा और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना उनका दायित्व है| वे सीता जी तथा लक्ष्मण जी को दु:ख या एकांत का आभास नहीं करवाना चाहते थे क्योंकि उन्हें मन ही मन इस बात की अनुभूति थी कि मेरे कारण है यह दोनों वन के लिए आए हैं| अतः वे अपनी तरफ से यथासामर्थ्य दोनों का ध्यान रखना चाहते थे |
वन में होने के उपरांत भी उन्हें अयोध्या तथा अपने परिजनों की चिंता होती है जो कि स्वाभाविक है| वे यह जानते थे की सीता जी तथा लक्ष्मण जी के साथ में अपना चौदह वर्ष का वनवास व्यतीत कर लेंगे परंतु अपने प्रति राजा दशरथ तथा महारानी कौशल्या, सुमित्रा समेत सभी परिजनों तथा प्रजाजनों के प्रेम को जानते हुए उन्हें इस बात की चिंता थी कि वह सब उनके पीछे बहुत दुखी हो रहे होंगे और इस दुख का प्रभाव उनके मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर भी पड़ेगा अयोध्या के राजकाज को लेकर भी चिंतित थे कि कहीं भी किसी कारणवश किसी प्रकार की भी हानि नहीं होनी चाहिए|

रात्रि कथश्च देवेमां सौमित्रे वर्तयामहे |
उपावर्तामहे भूमावास्तीर्य स्वयमर्जिते: ||
ध्रुवमद्य महाराजो दु:ख स्वपिति लक्ष्मण |
कृतकामा तु कैकेयी तुष्टा भवितुमर्हति || १७२

अपने हाथों से ही कुश-पत्रादि लाकर भूमि पर बिछाकर रात बितानी है, भूमि पर बैठते हुए राजा दशरथ तथा अपनी माताओं की चिंता करते हुए श्री राम कहते हैं कि हे लक्ष्मण ! मैं निश्चय करके कहता हूँ कि महाराज दुख से हत चेतन हो सो गए होंगे और सकामा कैकेयी अब संतुष्टि हो गयी होंगी | जो कुछ भी वह चाहती थी सब कुछ वैसा ही हो गया है उनके अनुकूल अब वे निश्चिंत हो गई होंगी परंतु पिताजी अत्यधिक दुखी होंगे| यहां पर हम किसी साधारण पुत्र की तरह है; श्री रामचंद्र को अपने परिजनों के लिए व्यथित होते हुए देख सकते हैं बेशक की कुशल क्षेम चाहते हैं क्योंकि सब की कुशलता में ही उनकी प्रसन्नता है वे अपने किसी भी भाव से किसी को आहत नहीं करना चाहते अपितु सबकी प्रसन्नता हेतु अनंत दुख झेलने के लिए भी तैयार हैं

१७१, १७२ -अयोध्याकाण्ड,एकोनविशः सर्गः,त्रिपंचाश: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ,५५४

सा हि देवी महाराजं कैकेयी राज्यकारणात` |
अपि न च्यावयेत्प्राणान्द्यष्ट्वा भरतमागतम || १७२

कैकयी, भरत के आने पर राज्य के कारण कहीं महाराज के प्राण न नष्ट करा दें वह एक तो अनाथ दूसरे वृद्ध तीसरा उन्हें छोड़ हम भी यहां चले आए ऐसी अवस्था में राजा क्या करेंगे? वे निरंतर अपने पिता की स्तिथि को लेकर चिंतित हैं| वे अपने वनवास को लेकर जरा भी चिंतित नहीं हैं; न किसी प्रकार कि पीड़ा न किसी प्रकार का भय, वे अपने पुत्र होने का दायित्व निभा रहे वे पिता की पीड़ा से ही व्यथित हैं| वे नहीं चाहते कि दशरथ जी किसी षड्यन्त्र में फसे, उनको किसी प्रकार का मानसिक अथवा शारीरिक दुख हो| उन्होंने वनवास को सहर्ष इसलिए ही स्वीकार किया था ताकि पिता जी को कोई आक्षेप न सहन करना पड़े |
उन्हे ये चिंता थी कि सब कुछ स्वीकारने के उपरांत भी यदि उनके पिता जी को पीछे से कोई कष्ट हुआ तो उसका पाप भी श्री राम को ही लगेगा|

मया हि चिरपुष्टेन दु:खसंवर्धितेन च |
विप्रयुज्यता कौसल्या फलकाले धिगस्तु माम || १७३

हमारी माताएँ कौशल्या तथा सुमित्रा पुत्र वियोग में दुखी हो रही होंगी धिक्कार है मुझ पर कि जिस माता ने पाल पोसकर मुझे इतना बड़ा किया| जब उसको सुख देने का समय आया तो मैं सब कुछ छोड़ कर यहाँ वन में बैठा हूँ| पुत्र होने के कारण वो स्वयं को असहाय स्थिति में पाते हैं कि पुत्र होकर भी वो अपनी माताओं के लिए कुछ नहीं कर पा रहे| जबकि युवा पुत्र के होते हुए यदि माँ को कष्ट का भागी बनना पड़े तो एक पुत्र के लिए लज्जा का विषय है| जब पुत्र युवा होते हैं तो वे माँ की सबसे बड़ी शक्ति होते हैं और उसी माँ को वृद्धावस्था में पुत्रों से दूर होना पड़े तो उस माँ कि क्या स्थिति होगी?

मा स्म मत्कारणाद्येवी सुमित्रा दु:खभावसेत |
अयोध्यामित एव त्वं काल्ये प्रविश लक्ष्मण || १७४

श्रीराम दोनों माता कौशल्या तथा सुमित्रा के लिए चिंतित हैं कि पता नहीं उनके दिन हमारे बिना कैसे बीतेंगे? व्यथित होकर श्री राम लक्ष्मण से कहते हैं कि कि तुम वापस अयोध्या लौट जाओ और जाकर माताओं को सनाथ करो| लक्ष्मण जी को वापिस भेजने के लिए आतुर श्री राम के मन में छटपटाहट है कि माताओं का जीवन किस प्रकार बीतेगा? कौन उनको सहारा देगा? वो चाहते हैं कि दोनों माताएं सुरक्षित रहें |अपने अतिरिक्त श्री राम को सबकी चिंता सता रही है वे चाहते हैं कि सभी लोग सुचारू रूप से सुरक्षित भाव से अपना जीवन जी सकें वे जानते हैं कि परिस्थितियां उनके परिवार के अनुकूल नहीं हैं फिर भी यथासंभव वह हर प्रयास करना चाहते हैं जिससे बिगड़ी हुई परिस्थितियों को संभाला जा सके उनके माताओं एवं उनके पिता के जीवन को सुरक्षित एवं संरक्षित किया जा सके| राम के मुख से ऐसे आदेश सुनकर लक्ष्मण जी उनको अपने एवं सीता जी के हृदय के भाग को समझाते हुए तथा श्री राम की उपस्थिति के महत्व को समझाते हुए उनसे आग्रह करते हुए कहते हैं कि आप तो भली-भांति जानते हैं कि हम दोनों आपके बिना एक मुहूर्त भी नहीं

---

१७२ ,१७३ ,१७४ -अयोध्याकाण्ड,,त्रिपंचाश: सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ,५५५ ,५५८, ५५९

जी सकते| मैं आपके बिना दशरथ ,शत्रुघ्न, सुमित्रा तथा स्वर्ग को भी नहीं देखना चाहता| श्री राम जी ने लक्ष्मण की बात सुनकर निर्धारण किया कि दीर्घकाल तक वनवास धर्म का पालन किया जाए| इस सर्ग में हम श्रीराम की विवशता एक पुत्र के रूप में देख सकते हैं, जो अपनी माता के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन न कर पाने के कारण अत्यधिक दुखी है; अपनी वृद्ध माता अकेले ऐसे राज महल में छोड़कर आने के कारण वे व्यथित हैं| जहां कैकेयी का भी वास है| अपने माता-पिता की सुरक्षा को लेकर चिंतित हैं; एक पुत्र के रूप में उन्होंने अपने समस्त कर्तव्यों का पालन किया जिससे उनके पिता का यश इस संसार में न फैले किंतु; वही वे इस बात से दुखी हैं कि उनके कारण लक्ष्मण जी तथा सीता जी को वनवास भोगना पड़ रहा है| यहाँ पर श्रीराम अपने दुख से दुखी नहीं है कि उनको वनवास मिला न ही वे इस बात से दुखी दिखते हैं कि भारत को राज्य मिला वह केवल अपने परिजनों तथा प्रजा जनों के दुख के कारण दुखी हैं क्योंकि उन्हें लगता है| वे अपने दायित्वों का निर्वहन भली प्रकार से नहीं कर पा रहे हैं जैसा कि एक पुत्र तथा एक राजकुमार को करना चाहिए| वे अपनी विवशता के कारण दुखी हैं| सब कुछ जानते हुए भी कुछ न कर पाने के कारण उनका मन पीड़ा से भरा हुआ है परंतु उसमें भी वे अपने मन के भावों तथा अंतर्द्वंद से युद्ध करते हुए अपने कर्तव्य को है प्राथमिकता देते हैं| यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि उनके द्वारा किया गया कोई भी कार्य धर्म से विमुख नहीं है लोक परलोक मैं किसी भी प्रकार का अपयश न फैले उनके रघुवंश की मान मर्यादा को किसी भी प्रकार से ठेस न पहुंचे इसी कार्य में उद्यत रहते हैं|

अनेन वनवासेन मया प्राप्तं फलद्वयं |
पितुश्वा एको ह्याहमवोव्यां च पृथिवि चापि लक्ष्मण |
तरेयमिषुभि: क्रुद्धों ननु वीर्यकारणम ||
अधर्मभयभीतश्च परलोकस्य चानघ |
तेन लक्ष्मण नाद्याहमात्मानमभिषेचये || १७५

क्रोधित होकर वे कहते हैं कि अगर युद्ध करके ही जीतना हो तो मैं अयोध्या को आज ही जीत सकता हूँ | परंतु मैं किसी प्रकार का अधर्म नहीं करना चाहता ऐसा कहते हुए वे चुप हो जाते हैं निर्वेग एवं शांत भाव से बैठ जाते हैं | उनकी ऐसी स्थिति देखकर लक्ष्मण जी कहते हैं कि कृपया आप ऐसा संताप न करें आपको ऐसे देख कर मुझे और सीता जी को दुख होता है |लक्ष्मण जी अपनी तरफ से हर संभव प्रयास करते हैं कि श्री राम का चित्त शांत रह सके| कोई भी भाव उन्हें उत्तेजित न कर सके| वे संयमित रह सकें तथा अपना ध्यान अयोध्या प्रसंग से हटाकर उनके और सीता जी की ओर केंद्रित कर सकें क्योंकि न तो लक्ष्मण जी और न ही सीता जी से राम को दुखी देख सकते हैं और न ही उनके वियोग को सह सकते हैं|

वहुपुष्पफले रम्ये नानाद्विजगणायुते |
विचित्रशिखरे हयस्मिरतवान्स्मि भामिनी || १७६

अयोध्याकांड के चौरानवे सर्ग में चित्रकूट पर्वत पर निवास करते हुए श्री राम एक दिन सीता जी से कहते हैं

---

१७५ ,१७६ -अयोध्या काण्ड,एकोनविशः सर्गः,त्रिपंचाश: सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ,५६०,३५९

इस वनवास से मुझे दो लाभ हुए हैं; एक तो धर्मानुसार पिता की आज्ञा रुपी ऋण को मैं चुका पाया दूसरा भरत का प्रिय हुआ| वे कहते हैं हे भद्रे! अनेक प्रकार के फूलों और फलों से संपन्न अनेक जातियों के पक्षियों से परिपूर्ण और विचित्र शिखरों से युक्त यह रमणीय चित्रकूट मुझे बहुत पसंद है अर्थात चित्रकूट में रहने से मेरा मन कभी भी ऊबेगा नहीं| पर्वतों के चारों ओर अत्यंत ही रमणीय दृश्य दिखाई देते हैं और इन्हें देखते-देखते सभी प्रकार की चिंता तथा दुख विलीन हो जाते हैं| नाना प्रकार के पक्षी घनी छाया वाले सदैव फल और फूलों से भरे रहने वाले भांति-भांति के वृक्ष प्रकृति के सभी सुंदर रूप यहां देखने को मिलते हैं| जिससे मेरा मन शांत एवं हर्षित रहता है| प्रकृति के सानिध्य में श्री राम हृदय को मिलने वाली असीम शांति की अनुभूति करते हैं तथा अपने इस विचार को माता सीता के साथ साझा करते हैं| वे उन्हें भी प्रकृति की सुंदरता से अवगत करवाना चाहते हैं ताकि उनका चित्त भी शांत रह सके नकारात्मक विचारों को त्यागकर सकारात्मक रूप से सोचा जा सके|

सम्पन्नं राज्यमिच्छंस्तु व्यक्तं प्राप्यभिषेचनं |
आवां हंतु समभ्येति कैकेया भरतः सुतः || १७७

सन्तानवे सर्ग में जब भरत जी के सेना सहित चित्रकूट पहुंचने पर उसका आभास पाकर लक्ष्मण अस्थिर होते हैं| उन्हें ऐसा लगता है कि भरत सेना सहित श्रीराम पर आक्रमण करने आए हैं; तो वे श्रीराम से कहते हैं कि आप सीता जी को किसी कंदरा में बिठाकर धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाइए| हमें इस सेना को नष्ट करना होगा क्योंकि निष्कंटक राज्य की इच्छा से भरत हमको मारने के लिए यहां आ रहे हैं| भरत के आने का समाचार सुनकर लक्ष्मण जी अत्यंत क्रोधित हैं और उनके हृदय में यह भाव आता है कि भरत को राज पाठ मिल जाए इसलिए अयोध्या छोड़ कर हम यहां वन में रह रहे हैं भरत और उसकी मां की लोभ-इच्छा के कारण ही हमें अयोध्या से निर्वासित कर दिया गया; अब भला वह उन्हें वन में भी सुख के साथ रहने क्यों नहीं दे रहा यहां आने की उसकी मंशा क्या है? लक्ष्मण जी इसी बात का आकलन कर रहे हैं|

भिंदशत्रुशरीराणि करिध्ये शोणितेक्षितं |
शरैनिर्भीनंहृदयाकुंजरास्तुरंगास्तथा |
श्वापदाः परिकर्षन्तु नरांश्च निहतानम्या || १७८

भरत एक शत्रु के रूप में यहां आ रहे हैं और अपने शत्रु को मारने में कोई पाप नहीं होता|मैं आज ही चित्रकूट वन के पैने बाणों शत्रु के शरीर को काटकर उनके रुधिर से इस धरती को सींच दूँगा| वाणों से चीरे हुए हृदय वाले हाथी घोड़ों को तथा मेरे मारे हुए मनुष्यों को जंगली जानवर घसीटेंगे| लक्ष्मण जी मन ही मन में भरत जी को रामचंद्र जी का शत्रु मान बैठे हैं कहीं न कहीं उनके अंतर्मन में भी यह बात चल रहे थे के वनवास के पीछे भरत का हाथ हो सकता है भरत जी पर तथा कैकई पर पहले से ही काफी अधिक क्रुद्ध थे| वही भरत जी का अपने दल बल के साथ वन के लिए आना लक्ष्मण जी की शंका को और भी बल देता है और अब वे कोई भी अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे भरत जी का और भरत जी के साथ आए हुए सैन्य बल का संहार करके अपने क्रोध की ज्वाला को शांत करके राम कथा सीता जी की रक्षा करना चाहते थे |

१७७,१७८ -अयोध्या काण्ड,चतुर्नवति सर्गः,सप्तनवति सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ,९१८,३५९

वे किसी भी स्थिति में श्री राम जी का अजीत नहीं होने देना चाहते थे क्योंकि अब उन्हें स्पष्ट दिख रहा था कि भरत जी और उनकी माता मिलकर श्रीराम के जीवन से भी खेलना चाहते हैं जो कम से कम लक्ष्मण जी के रहते हुए तो संभव नहीं था |

सुसंरब्धं तु सौमित्रि लक्ष्मणं क्रोधमूर्छितं |
रामस्तु परिसान्त व्याथ वचनं चेदमब्रवीत || १७९

इस प्रकार कुपित और लड़ने के लिए उद्धत लक्ष्मण जी को देखकर उन्हें शांत कराने के लिए श्री राम कहते हैं कि हे लक्ष्मण ! क्या अपने प्रिय भ्राता के प्रति मन में इस तरह के विचार लाना उचित है? श्री राम के मन में यह विश्वास है कि भरत जी कभी भी उनका अहित नहीं चाहेंगे क्योंकि उस समय राज महल में जिस तरह का भी घटनाक्रम हुआ भरत जी वहां उपस्थित नहीं थे और श्री राम मन ही मन में यह भली प्रकार से जानते हैं कि अगर भरत जी वहां होते तो वह कभी भी इन चीजों को स्वीकार नहीं करते क्योंकि न्याय अन्याय और सत्य असत्य का भेद भरत जी भली प्रकार करने के लिए सुप्रसिद्ध हैं उनका अपने भाइयों के प्रति प्रेम कितना है इसको श्री राम समझते थे | वैसे भी श्री राम के स्वभाव के अनुसार वे अकारण ही कभी किसी पर शंका नहीं किया करते थे कारण को जानने के उपरांत ही वे प्रतिक्रिया देना श्रेयस्कर समझते थे|बाल्यकाल से ही चारों भाई एक साथ बड़े हुए तो किसी के मन का कोई भाव किसी से छुपा नहीं था; विशेषकर रामचंद्र जी अपने भाइयों के मन में चलने वाली प्रत्येक भावना को भलीभांति पढ़ने में सक्षम थे|

किमत्र धनुषा कार्यमसिना वा सचर्मणा |
महेध्वासे महाप्राज्ञे भरते स्वयमागते || १८०

श्री राम लक्ष्मण जी से कहते है कि महान उत्साही भरत जब यहां स्वयं ही आ रहे हैं तो हमें धनुष तलवार आदि का क्या प्रयोजन है ? क्यों बिना भरत जी को समझे हुए लक्ष्मण जी एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंच रहे हैं, क्या भरत जी के प्रति इस तरह की भावना रखना उचित है ? मेल मिलाप के लिए आ रहे भरत के प्रति अस्त्र- शस्त्र उठा लेना न्यायोचित है ? मैं लक्ष्मण जी से पुनः विचार करने के लिए कहते हैं क्योंकि श्री राम के मन में भरत जी के प्रति पूर्ण विश्वास है कि वे कोई भी इस प्रकार का कृत्य नहीं करेंगे जिससे किसी भी प्रकार का पारिवारिक अनिष्ट हो मूल्य भरत जी के स्वभाव को भली-भांति जानते हैं कि भरत जी के हृदय में श्री राम के प्रति कितना प्रेम है और वे नहीं चाहते लक्ष्मण भरत जी के साथ किसी भी प्रकार का दुर्व्यवहार करें या किसी भी प्रकार की कटु वचन बोले

पितुः सत्यं प्रतिश्रुत्य हत्वा भरतमागतं |
किं करिष्यामि राज्येन सापवादेन लक्ष्मण || १८१

पिता से वन में रहने की प्रतिज्ञा कर अब भरत को युद्ध में मार राज्य लेकर क्या करेंगे लक्ष्मण?
ऐसे किसी राजपाट या धन -वैभव का होना किस प्रकार से लाभकारी होगा? यदि उसे प्राप्त करने हेतु अपने ही भ्राताओं का वध किया जाए ऐसे साम्राज्य को प्राप्त करने में किस प्रकार का सुख होगा? जो अपने ही लोगों के

१७९,१८०,१८१-अयोध्याकाण्ड,सप्तनवति सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ३५९,,५५४,,९३२

रक्त से रंजित हो ? ऐसे साम्राज्य में किस प्रकार की शांति तथा सुख का अनुभव होगा ? जो अपनों से ही अकारण युद्ध करके प्राप्त किया गया है| श्री राम ऐसे किसी धनसंपदा साम्राज्य अधिकार में विश्वास नहीं रखते थे जिसके लिए उन्हें अपने ही संबंधों का रक्त बहाना पड़े| हमने पिताजी के वचन को निभाने का प्रण लिया है और उस प्रण के अनुसार हमें चौदह वर्ष तक वन में ही वास करना होगा अगर तुम इस तरह के विचार रखते हो तो भी उसका क्या लाभ अगर तुम क्रोध में आकर भरत से युद्ध भी कर लेते हो अयोध्या का राज्य भी जीत लेते हो तो भी हम अयोध्या वापस नहीं जा सकते क्योंकि हम पिताजी के वचनों से बंधे हुए हैं |वे लक्ष्मण जी को समझाते हैं युद्ध करने का हमें कोई भी कारण प्राप्त नहीं है| वचन के अनुसार तो हमें चौदह वर्ष तक वन में ही रहना है, युद्ध करने का आधार भी क्या है? अगर एक बार यह मान भी लिया जाए कि भरत सेना सहित इसीलिए आए हैं कि युद्ध किया जा सके तो भी उस युद्ध का परिणाम क्या होगा? किस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु युद्ध किया जाएगा| राजकाज तो भरत को प्राप्त ही है फिर क्या कारण होगा जिसके हेतु युद्ध किया जाएगा?हम तो वैसे भी अपने नगर से कोसों दूर हैं; राजमहल या राजगद्दी की तो बात सोच भी नहीं सकते| अतः क्रोध त्याग दो और किसी भी प्रकार का अनिष्टकारी विचार अपने हृदय में मत लाओ|

यद्द्रव्यं वांधवानां वा मित्राणां वा क्षये भवेत |
नाहं ततप्रतिगृहियां भक्षांवीषकृतानिव || १८२

जो द्रव्य बंधुओं तथा मित्रों के क्षय होने से प्राप्त हो मैं उसे ग्रहण नहीं कर सकता| हे लक्ष्मण! धर्म, अर्थ, काम मोक्ष, मैं पृथ्वी पर इन सभी की तुम लोगों के ही अर्थ में कामना करता हूँ| मैं सत्य कहता हूँ कि सभी भाइयों के संग्रह तथा उनके सुख के लिए ही राज्य की इच्छा किया करता हूँ; परंतु अधर्म से मैं कोई भी अधिकार नहीं चाहता| जो सुख मुझको भरत, तुम्हारे तथा शत्रुघ्न के बिना प्राप्त हो उसे नष्ट कर डालो| मैं जानता हूं कि भरत व्याकुल होकर हमसे मिलने आ रहे हैं| इसलिए वे कभी भी अप्रिय नहीं करेंगे? क्या कभी भरत ने तुम्हारे साथ कुछ भी अप्रिय किया है? जिससे तुमको ऐसा भय है अब भरत को कोई भी कठोर बात न कहना किसी अपवाद के समय भी पुत्र, पिता को तथा भाई-भाई को न मारेगा| यदि तुम राज्य के कारण ऐसा कहते हो तो मैं भरत से कह दूंगा कि राज्य लक्ष्मण को दे दो और मुझे पता है वे तुरंत ही मेरा वचन मान लेंगे| श्री राम की ऐसी बातें सुनकर लक्ष्मण जी लज्जित होते हुए कहते हैं मैं भी यह मानता हूं कि वह हमें देखने आ रहे हैं परंतु सेना के आने के कारण ही मुझे बड़ी शंका हो रही है| लक्ष्मण जी अपने मन की शंका को राम जी के सामने व्यक्त करते हैं; जिसका समाधान श्री राम जी बड़ी सरलता से भरत जी के मनोभावों को समझाते हुए करते हैं एक बड़े भाई के रूप में वे कभी भी दूसरे भाई की छवि को धूमिल नहीं होने देते थे| उन्हें विश्वास था कि ये केवल परिस्थितियाँ हैं और इनमें भरत का किसी भी प्रकार का योगदान नहीं है क्योंकि भरत ने कभी भी भाइयों से अधिक किसी को महत्व नहीं दिया| उन्हें इस बात का आभास था कि राजा दशरथ के उपरांत वे ही अपने भाइयों के लिए पिता के रूप में सारे दायित्वों का निर्वहन करेंगे| अतः उनका प्रमुख कार्य यही होगा कि सारे भाइयों में एकता विश्वास और प्रेम बना रहे| किसी के मन में यदि किसी के प्रति कोई शंका आती भी है तो, श्री राम शंका का निराकरण अवश्य करें परंतु किसी भी स्थिति में भाइयों

---

१८२ -अयोध्याकाण्ड, एकोनविशःसर्गः, त्रिपंचाश: सर्गः,श्रीमद्वाल्मीकीरामायण, वाल्मीकिजी द्वारा रचित, मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ९३२

के बीच में वैमनस्य न बने उनके परिवार को समाप्त कर देगा और श्री राम किसी भी स्थिति में न तो अपने परिवार अपने कुल की परंपरा तथा उसके मान सम्मान को नष्ट होने दे सकते थे और न ही अपने परिवार के सौहार्द में कोई भी विघ्न बाधा आने दे सकते थे|

श्री राम के प्रति भरत के मन में जो भाव था ,उससे श्रीराम भलीभांति परिचित थे, वे भाइयों के आपसी विश्वास और अनुराग को बनाए रखने के पक्षधर थे; साथ ही कहीं भी किसी भी बिंदु पर इसी प्रकार की शंका नहीं रहने देना चाहते थे| वे जानते थे कि जिस प्रकार उनके लिए अपने परिजनों तथा अपने कर्तव्यों के समक्ष धन वैभव राजसत्ता आदि का कोई मूल्य नहीं है| उसी प्रकार उनके भाइयों में भी राजसत्ता का कोई लोभ नहीं है प्रत्येक भाई आपस में एक दूसरे के साथ विश्वास की डोर से बंधा हुआ है| अतः अपने परिवार को एक करके रखना हे जेष्ठ पुत्र के रूप में उनका दायित्व है और श्री राम अपने कर्तव्य से पीछे कभी नहीं हटते थे|

ब्राह्मणों ह्येकपार्श्वेन नरांरोद्धु मिहार्हति |
न तु मूर्धाभिषिक्तानां विधिः प्रत्युपवेशने || १८३

अयोध्या कांड के ११२ वे सर्ग में जब भरत के साथ-साथ राजपुरोहित वशिष्ठ जी भी श्री राम से विनय करते हैं कि वे अयोध्या लौट जाएं तो उन्हें उत्तर देते हुए श्री राम कहते हैं की राजतिलक को ग्रहण करने वाले क्षत्रिय के लिए इस तरह का कर्म शोभा नहीं देता मेरे वनवास स्वीकार करने के पीछे अपने पिता के वचन का पालन कर उन्हें कैकई के ऋण से उऋण करना था ताकि वे लोक परलोक में अपयश न पाए, तो तुम भी कोई इस तरह का कार्य न करो जिससे पिताजी के द्वारा दिए गए वचन में किसी भी प्रकार की बाधा आए |

न याचे पितरं राज्यं नानुशासामि मातरम् |
आर्य परमधर्मज्ञं नानुजानामी राघवं || १८४

श्री राम को किसी तरह मानता हुआ न देख कर जल स्पर्श करते हुए बोले कि न तो मैं पिता का राज्य चाहता हूँ; न तो माता को ही प्रसन्न करना चाहता हूँ और न धन-संपदा; यदि श्री राम को पिता का वचन पूर्ण करना है तो करें मैं भी चौदह वर्ष तक वन में ही रहूँगा| भरतजी प्रेमपूर्वक, हठपूर्वक किसी भी विधि से श्री राम को अयोध्या वापस ले जाना चाहते थे| उनको अपनी माता द्वारा किए गए कर्म पर बड़ा ही पछतावा था| वो उसे मिटा तो नहीं सकते थे परंतु उसे सुधारना अवश्य चाहते थे| उनके मन में श्री राम के प्रति अगाध श्रद्धा थी| वे उनके लिए पिता तुल्य थे और यह कैसे संभव हो सकता था कि पिता के रहते हुए पुत्र उनको सत्ता विहीन करके स्वयं शासक बन जाए? भरत जी राजसिंहासन को देखना भी नहीं चाहते थे बैठना तो बहुत दूर की बात है|

यदि त्ववश्यं वस्तव्यं कर्तव्यं च पितुर्वचः |
अहमेव निवत्स्यामि चतुर्दश समा वने || १८५

पिताजी को दिए गए वचन के अनुरूप यदि श्री राम को वन में ही रहना है तो ठीक है वन में रहने का वचन उन्होंने दिया है;परंतु मैंने राजसिंहासन संभालने का कोई वचन नहीं दिया है| मेरे लिए तो मेरा राज सिंहासन वही हैं| जहां मेरे भाई राम अतः यदि वे यही रहना चाहते हैं|

१८३,१८४,१८५ -अयोध्या काण्ड,एकादशोत्तरशततम सर्गःश्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशक गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठसंख्या १०६६, १०६७, १०६८,

तो मैं भी उनके साथ यही रहूंगा उनको छोड़कर मैं कहीं नहीं जाऊंगा और मैं भी वन में वास करूंगा| मै भी वैसा ही जीवन जीऊँगा जैसा श्री राम जी रहे परंतु अकेले अयोध्या नहीं जाऊँगा | भरतजी किसी भी प्रकार राम जी को छोड़कर वापस अयोध्या नहीं जाना चाहते थे| उनके लिए उनके भाई राम ही सब कुछ थे| राम के बिना तो वे जीवन जीने की भी परिकल्पना नहीं कर सकते थे| राज सिंहासन संभालना तो दूर की बात अतः उन्होंने अपना निर्णय सुना दिया कि अगर श्रीराम वन में रहेंगे तो मैं में रहूँगा; यदि मैं अयोध्या जाऊंगा तो मेरे साथ श्री राम भी अयोध्या जाएंगे |

विक्रीतमाहितं क्रितम यत्पित्रा जीवता मम |
न तल्लोपियतुं शक्यम् मया वा भरतेन वा || १८६

उनके वचन सुनकर श्रीराम आश्चर्यचकित होकर बोले अपने जीते जी पिता ने जो वस्तु बेच डाली किसी के हाथ धरोहर रख दी या कोई वस्तु मोल ले ली है तो मैं,भरत उसका लोप नहीं कर सकते| यह कार्य मेरे और भरत के अधिकार से बाहर है कि हम पिताजी के द्वारा लिए गए किसी भी निर्णय को मिटा सकें अर्थात् मुझ में और भरत में वह सामर्थ्य नहीं है जो पिताजी के द्वारा दी हुई चीज को फेर ले अथवा खरीदी हुई चीज लौटा दे अथवा धरोहर हेतु दी गई चीज को वापस ले लें| पुत्र के रूप में यह हमारा परम कर्तव्य है कि पिताजी के द्वारा दिए गए वचन का अक्षरंश पालन करते हुए कुल के गौरव को बढ़ाएं और पिताजी के नाम को कलंकित न होने दें|

उपधिर्न मया कार्यो वनवासे जुगुप्सितः |
युक्तमुक्तम् च कैकेय्या पित्रा मे सुकृतं कृतं || १८७

माता कैकयी ने मुझे वन के योग्य ही समझकर वनवास दिलाया था| वो जानती थीं कि मै ही वन के योग्य हूँ; इसी कारण मेरे लिए वनवास कि माँग की अतः मेरा वन जाना ही श्रेयस्कर होगा |इन पंक्तियों में श्री राम कैकेय के द्वारा वनवास दिए जाने के उपरांत भी उसके प्रति पुत्रवत् व्यवहार करते हुए उसको किसी भी प्रकार का दोष न देते हुए यह बताने का प्रयास करते हैं की माता के कई ने मुझे इस कारण वन के लिए भेजने का निर्णय किया है क्योंकि व भली प्रकार से जानती हैं कि मैं ही वन में रहने योग्य हूँ| वन की दिनचर्या को सरलता से समाहित कर सकता हूँ और मुझे वहां पर रहने में किसी भी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होगा| अतः मैं सभी प्रकार से वन में रहने योग्य हूँ; मेरी क्षमताओं को पहचानते हुए हैं माता कैकई ने ऐसा निर्णय लिया है|

वृतों राजा हि कैकेय्या मया तद्वचनं कृतम् |
अनृतान्मोचयानेन पितरं तं महीपतिं || १८८

कैकयी के वचन को मानकर मैंने अपने पिता को असत्य से छुड़ाया था| अतः तुम भी अयोध्या का राज्य स्वीकार कर पिता को असत्य से छुड़ाओ श्री राम किसी तरह नीति धर्म की बातें पता कर भरत जी को उनके दल बल सहित वापस अयोध्या भेज देते हैं | भरत जी को उनके राजधर्म का स्मरण करवाते हैं|

१८६, १८७, १८८ -अयोध्याकाण्ड,एकादशोत्तरशततम :सर्गः,द्वादशोत्तरशततंसर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकिजी द्वारा रचित, मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या - १०६९ ,१०६९, १०७०

वे नहीं चाहते थे के वृद्धावस्था में माताओं सहित दलबल में जो लोग भी आए हैं;उनको किसी प्रकार की असुविधा हो भारत तथा शत्रुघ्न दोनों राजकुमारों को वन में कोई भी कष्ट सहन करना पड़े; साथ ही वे अयोध्या के प्रति भी चिंतित थे कि सारा राज परिवार तो इधर आ गया है| पीछे जो गृह, स्त्री और बच्चे इत्यादि रह गए हैं; उनकी देखभाल किस प्रकार होगी? राम जी किसी भी स्थिति में न तो स्वयं कर्तव्य से विमुख होते थे और न ही किसी अन्य को होने देते थे| उन्होंने भरत जी को उनके कर्तव्य याद दिलाएं; पिता के वचन का मान रखने हेतु मनाया साथ ही उसे आश्वासन दिया कि वे भली प्रकार से अयोध्या की प्रजा की सेवा करेंगे, माताओं का ध्यान रखेंगे तथा स्वयं को किसी भी प्रकार का दोष नहीं देंगे|

शत्रुघ्न च परिध्वज्य भरतं चेदंब्रवित् |
मातरं रक्ष कैकेयी माँ रोषं कुरुता प्रति || १८९

किसी के मन में किसी प्रकार ग्लानि नहीं रहने देना चाहते थे;वे चाहते थे कि सभी लोग स्वतंत्र भाव से अयोध्या जाकर अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकें परंतु उन्हें इस बात का आभास था कि भरत माता कैकेयी से रुष्ट हैं तथा उनके द्वारा किए गये कार्य के कारण कुपित भी भरत, शत्रुघ्न सहित सारे समाज को विदा करते समय भी श्रीराम अपने कर्तव्य तथा अपने स्वभाव से विमुख नहीं हुए | वह भली प्रकार से जानते थे कि कैकई के द्वारा किए गए इस अनर्थ पर शत्रुघ्न तथा भरत कुपित होंगे|

मया च सीतया चैव शपतोंसि रघुसत्तम |
इत्युक्तवाश्रुपरिताक्षों भ्रातरम् विससर्ज ह || १९०

इसलिए वे शत्रुघ्न से कहते हैं कि हे सौमित्र ! कैकेयी की रक्षा करते रहना उन पर क्रोध मत करना मैं अपनी तथा सीता की शपथ दिलाता हूँ| अपना वनवास, माताओं का दुख,महाराज दशरथ का देहांत इतना सब कुछ सहन करने के उपरांत भी श्री राम विमाता कैकेयी के प्रति वही मान सम्मान रखते हैं| जो राज महल में रहते हुए रहते थे वे नहीं चाहते कि किसी कारण भी कैकई को किसी भी प्रकार का अपमान सहन करना पड़े इसी कारण भरत तथा शत्रुघ्न से कहते हैं कि माता कैकेई के साथ किसी भी तरह का बुरा व्यवहार या उनके प्रति व्यवहार में क्रोध का प्रदर्शन न किया जाए; इसीलिए उन्हें सौगंध देते हैं और उन्हें पूर्ण विश्वास है कि भरत तथा शत्रुघ्न श्रीराम की सौगंध कभी नहीं तोड़ेंगे| उनका यह व्यवहार अपने आप में ही विशेष है जिसके कारण हमें कष्ट सहन करने पड़ रहे हैं उसके प्रति भी प्रेमभाव रखना उसके मान सम्मान को बनाए रखना समाज तथा परिवार में उसे यथोचित सम्मान मिले इसका प्रबंध करना श्रीराम के अतिरिक्त इतना सामर्थ्य किसी और में नहीं है|

अरण्यकांड के प्रथम सर्ग में श्रीराम के लिए वाल्मीकि जी ने लिखा है - 'आत्मवान' किसी से भी तिरस्कृत न होने वाले राम , उनके इस वाक्य द्वारा हमें श्री राम के आचरण तथा उस आचरण का अन्य लोगों पर पड़ने वाला प्रभाव स्वयं ही ज्ञात हो जाता है| उनके द्वारा सदैव ही असहायों की रक्षा की गई नीति तथा धर्म का पालन किया गया| दंडकारण्य वन में श्री राम का विराट को देखना और उसके भयंकरता से परिचय होना तथा विराध का सीता जी को उठा ले जाना तथा श्री राम जी का व्यथित होना उसके उपरांत एक पति के रूप में

१८९, १९० , -अयोध्या काण्ड,एकादशोत्तरशततम :सर्गः,द्वादशोंत्तरशततंसर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या - १०७७,१०७८

अपनी पत्नी की रक्षा हेतु किए गए सारे प्रयास हमें उनके एक अलग रूप से ही परिचित कराते हैं जहां में लक्ष्मण जिसे कहते हैं अयोध्या छूटने का भी मुझे इतना दुख नहीं हुआ जितना आज विराध के हाथों सीता के पकड़े जाने का दुख हो रहा है और फिर एक पति के रूप में अपने भाई की सहायता से वे विराध पर नियंत्रण करते हैं तथा वर प्राप्ति के उपरांत भी उसे मृत्यु की शैया तक पहुंचा देते हैं | वो एक ऐसे राक्षस का वध करते हैं| जिसको ब्रह्मा जी से वरदान प्राप्त था वरदान का तोड़ निकालते हुए श्री राम उसे धरती के अंदर गाड़ देते हैं| श्री राम के स्वभाव में क्रोध की उपस्थिति तभी प्रदर्शित होती है जब कोई ऐसी आपात स्थिति उत्पन्न हो जाए;जहां शस्त्र उठाए बिना काम न चलता हो जहां नीति तथा नियम ताक पर रख दिए गए हों अन्यथा श्रीराम सदैव ही बातचीत संवाद के द्वारा ही किसी भी समस्या का हल निकालने में विश्वास रखते थे| वनवास के समय चित्रकूट में वास करने के उपरांत जब श्रीराम ने सीताजी तथा लक्ष्मण सहित दंडकारण्य वन में प्रवेश किया ऋषिजनों से परिचय के उपरांत उनके दुख भरे जीवन को सुनने तथा समझने के उपरांत; श्री राम ने वहीं रहने का निश्चय किया क्योंकि वे मन ही मन यह निर्णय ले चुके थे कि इन राक्षसों का वध करके मुझे इस क्षेत्र को राक्षसों के आतंक से मुक्त करवाना है| विराध, खर-दूषण, त्रिशिरा जैसे असंख्य राक्षसों का वध करके उन्होंने दंडकारण्य को भयमुक्त किया | इसी क्रम में जब रावण द्वारा सीता जी का हरण कर लिया जाता है| तब मरीज को भी वे उसकी गति प्रदान करते हैं सीता हरण के उपरांत हम श्री राम को अपनी पत्नी के वियोग में विलाप करते हुए देखते हैं, कुपित होते हुए देखते हैं और फिर सहायता प्राप्ति हेतु आगे की योजना बनाते हुए भी देखते है|

भ्रातरं निहतं दृष्टा शयानं रामनिर्जितं |
शोकवेगपरीतात्मा विललाप विभीषण: || १९१

युद्ध कांड के १०९ सर्ग में रावण वध के उपरांत राम से परास्त अपने भाई रावण को निहत देखकर जब विभीषण व्याकुल होकर विलाप करने लगे| अपने भाई के निश्चेष्ट शरीर को देखकर विभीषण द्रवित हो जाते हैं उनके अंदर अपने भाई के प्रति जो प्रेम था; वह रुदन के माध्यम से बाहर आता है| जिस भाव को जिस प्रेम को उन्होंने अपने हृदय की गहराइयों में दबा दिया था वह प्रेम उसके मृतक शरीर को देखकर प्रदर्शित होने लगता है| रावण की वीरता ,विद्वता, तप, गुण-अवगुण कहकर शोक संतप्त हो गए| हे वीर! हे विख्यात पराक्रमी! हे सुशिक्षित! हे नीति चतुर! तुम बढ़िया सेजो पर सोने वाले होकर; आज मृतक हो पृथ्वी पर ऐसे क्यों पड़े हो? तब श्रीराम ने उन्हें समझाया

वीरविक्रांत विनीत नयकोविद |
वीर महार्हशयनोपेत कि शेपेद्य हतो भुवि || १९२

रावण वीर था विशाल युद्ध के उपरांत वो युद्ध करता हुआ धराशायी हुआ है| वीरों की वीरता का सम्मान होना चाहिए| युद्ध करते हुए चिरनिद्रा मे सोने वाले योद्धा का सम्मान प्रत्येक स्थिति में होना चाहिए| किसी भी वीर का युद्ध भूमि में अपमान नहीं होना चाहिए; विशेषकर उस व्यक्ति का जिसने युद्ध को पूरी वीरता के साथ लड़ा हो| वीर और पराक्रमी पुरुष को उसकी मृत्यु के उपरांत पूर्ण सम्मान मिलना चाहिए क्योंकि

१९१,१९२ -युद्धकाण्डे ,नवोत्तरशत द्वादशोत्तरशत: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ११८७,११८८

उसने युद्ध भूमि में पीठ नहीं दिखाई वह युद्ध बीच में छोड़कर नहीं भागा उसने वीरता के साथ अपना कौशल दिखाते हुए युद्ध किया है| अतः इस बात से कोई अंतर पढ़ना नहीं चाहिए कि वह युद्ध हारा या जीता अपितु उसकी वीरता का सम्मान करते हुए वीरगति प्राप्त होने के उपरांत उसे पूर्ण सम्मान मिलना चाहिए|

नायं विनष्टो निष्चेष्ट: समरे चंडविक्रम |
अत्युन्नतमहोत्साह: पतितोयमशंकितः || १९३

युद्ध में प्रचंड विक्रमी यह रावण निश्चेष्ट हो नहीं मरा है| इसका युद्ध उत्साह तो बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा हुआ था अर्थात् यह अत्यंत बलशाली था और इसे मृत्यु का डर भी न था| यह तो दैववश गिरकर वीरगति को प्राप्त हुआ है| जो अपने लिए परलोक की वृद्धि की आकांक्षा रखते हुए समरभूमि में मारे जाते हैं; ऐसे वीरों के लिए विरचित धर्म में स्थित जन, शोक नहीं किया करते ऐसे मृतक वीरों के लिए क्षत्रिय धर्म में शोक करने का कोई स्थान नहीं है कोई भी हो समर में सर्वदा विजय ही नहीं मिलती कभी वह भी स्वयं हत होता है|

नैवं वनिष्टा: शोच्यन्ते क्षत्रधर्ममवस्थिता |
वृद्धिमाशं समाना ये निपतंति रणाजिरे || १९४

इस कारण शोक त्याग कर अब वह कृत्य करो जो करना चाहिए और श्री राम ने विभीषण को रावण के प्रेत कर्म करने की आज्ञा दी| रावण के परिवार की स्त्रियों को रोता हुआ देखकर रामचंद्र जी ने कहा, हे विभीषण ! इन स्त्रियों को समझा कर शीघ्र ही रावण का संस्कार करो| श्री राम के मन में शत्रु पक्ष के लिए किसी भी प्रकार का द्वेष नहीं है न ही वे उनको उनके अधिकारों से वंचित करना चाहते हैं; युद्ध के उपरांत लंका की जो व्यवस्था अव्यवस्थित हो गई थी| उसको पुनः व्यवस्थित करने हेतु विभीषण को समझाते हैं; रावण एक वीर योद्धा था और युद्ध में उसने वीरगति प्राप्त की है उसको वही मान-सम्मान मिलना चाहिए| जो किसी योद्धा को मिलता है| अतः उसकी वीरगति का सम्मान करते हुए संस्कारों के अनुरूप जो भी कृत्य किया जाता है उन्हें पूर्ण करें तथा राजमहल की स्त्रियों को जो कि दुख के सागर में डूबी हुई हैं| उनको दुख के उस सागर से उबारने का संभवतःप्रयास किया जा सकता है; वह किया जाए एक वीर योद्धा को योद्धा की तरह है विदा किया जाए| एक शत्रु के प्रति भी वे कितने कर्तव्यनिष्ठ हैं| प्रत्येक दायित्व को स्वतः ही पूर्ण करने के लिए तत्पर रहने वाले श्री राम आज रावण के लिए भी वही भाव रखते हुए उसके दाह संस्कार को भी वही महत्व देते हैं; जो किसी मित्र अथवा परिजन के लिए वे स्वयं ही सारे कर्म कांडों का पालन करने की बात बोलते हैं| वो रावण को एक वीर योद्धा के रूप में सम्मानित विदाई देना चाहते हैं जबकि उसने इतना अहित किया|

नाहमहोरस्मी संस्कर्तु परदाराभिमर्शिनं |
भ्रातृरूपो हि मे शत्रुरेष सर्वाहिते रतः || १९५

विभीषण जी रावण के लिए कहते हैं कि ये तो भाई के रूप मे शत्रु था; जो स्वार्थ और अहंकार से भरा हुआ था| जो अपने आगे किसी और को कुछ नहीं समझता था| शक्ति के मद मे अंधा हो चुका था|

१९३,१९४,१९५ -युद्ध काण्डे ,नवोत्तरशत द्वादशोत्तरशत: सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित, मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या ११९१, ११९२, १२२३

सदैव अपने बारे में ही सोचता था; ऐसा व्यक्ति किसी भी रूप में आदर के पात्र नहीं; मेरे हृदय में इसके लिए कोई भाव नहीं|

रावणों नार्हते पूजां पूज्योपि गुरुगौरवात |
नृशंस इति मां कामं वक्ष्यंति मनुजा भुवि || १९६

विभीषण ने कहा मैं इस विधर्मी त्यागी क्रूर निर्णय तथा परस्त्रीगामी शत्रु रूपी भाई था| जो सदैव सब की बुराई करने में लगा रहता था अर्थात वह सबके लिए हितकारी था अतः मैं इस राक्षस का संस्कार नहीं करूंगा यद्यपि यह मेरे पिता के समान है तथापि मेरे द्वारा पूज्य नहीं हो सकता| विभीषण जी किसी भी स्थिति में रावण को कोई भी मान सम्मान नहीं देना चाहते थे क्योंकि उसने जिस प्रकार का कृत्य किया था उससे न सिर्फ लंका का अपितु पूरे समाज का अपमान हुआ रावण के परिवार के लगभग सभी सदस्यों ने उसे समझाने का निरंतर प्रयास किया परंतु बुराई उस पर इस तरह सवार हो चुकी थी कि उसे किसी के द्वारा दिया गया परामर्श भी उचित नहीं लगता था| वह स्वभाव से क्रूर तथा आचरण से दुराचारी हो गया था और ऐसा व्यक्ति किसी भी प्रकार की संस्कार के लायक नहीं है सिर्फ आयु में बड़ा होने के कारण वह मान सम्मान प्राप्त करने योग्य नहीं है उसके लिए कर्म अभी होने चाहिए सिर्फ मेरा भाई होना ही इस बात को तय नहीं करता है कि मैं उसका अंतिम संस्कार करूँ जिस प्रकार के कर्म उसने किए हैं उसके अनुसार तो वह किसी भी सम्मान का अधिकारी नहीं है| सम्मान प्राप्त करने हेतु कार्य भी उसी अनुसार होने चाहिए, केवल अग्रज होने के कारण ही वो सम्मान का पात्र नहीं हो सकता|

विभीषणमुवाचेदं वाक्यज्ञो वाक्यकोविदम |
तवापि में प्रियं कार्य त्वत्प्रभावच्च में जितं || १९७

यह सुनकर राम जी कहते हैं कि विभीषण मैंने तुम्हारी सहायता से ही रावण को मारा है| अतः मुझे तुम्हारा भी तो प्रिय करना है, अर्थात् तुम्हें लंका का साम्राज्य देना है| तुम्हें लंकापति के रूप में राज्य सिंहासन पर आसीन करना है; इस राज्य की सत्ता अब तुम्हारी है| लंकापति रावण के द्वारा अपमानित किए जाने पर जब विभीषण जी लंका छोड़कर श्री राम के शरण में आए तभी श्री राम ने समुद्र के जल से उनका अभिषेक करते हुए उनको लंकापति कहकर संबोधित किया था और अपने उसी संबोधन को मान देने हेतु श्री राम विभीषण को यह बतलाते हैं कि रावण के वध के उपरांत विभीषण को राज सिंहासन पर बैठाए बिना उनका यज्ञ पूर्ण नहीं होगा|

अवश्यं तू क्षमं वाच्यो मया त्वं राक्षसेश्वर |
अधर्मानृतसंयुक्त: कामं त्वेष निशाचर: || १९८

अवश्य ही तुम्हारे कथनानुसार रावण अधर्म से युक्त कामवासना के अधीन रहने वाला निशाचर था; तब भी तुम्हें उसे तथा उसके अवगुण को क्षमा कर देना चाहिए क्योंकि वह अब जीवित नहीं है;

१९६,१९७,१९८ - युद्धकाण्डे, चतुर्दशोत्तरशततम:सर्गः, श्रीमद्वाल्मीकीरामायणवाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १२२३

युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ है|

महात्मा बलसंपन्नो रावणो लोकरावण : |
मरणांतानि वैराणी निर्वृतं नः प्रयोजनं || १९९

यद्यपि यह राक्षस अधर्म तथा मिथ्या में तत्पर था तथापि यह बड़ा तेजस्वी बलवान तथा संग्राम में सर्वदा प्रबल रहा संसार में शत्रुता मनुष्य के जीवन तक ही रहती है मरने के उपरांत नहीं अतः अब इसके सारे संस्कार करो | श्री राम के अनुसार रावण के गुण अवगुण यह सारे उसके कर्म थे और मृत्यु के उपरांत किसी भी व्यक्ति को समभाव से ही देखना चाहिए जिस भी संस्कार जिस भी अंत्येष्टि का वह अधिकारी है उसे वह मिलना ही चाहिए रावण जब तक जीवित था वह वीर था योद्धा था और उसके साथ शत्रुता भी उसके जीवित रहते हैं थी उसकी मृत्यु के उपरांत वह भी हमारे सम्मान का अधिकारी है अतः सम्मान उसका संस्कार करना यही हमारा कर्तव्य है|

क्रियतामस्य संस्करो ममापयेष यथा तव |
त्वत्सकाशाद्यशग्रीव: संस्कारम् विधिपूर्वकम् || २००

अब तो यह जैसा तुम्हारा है वैसा मेरा भी है| मृत्यु के उपरांत चाहे शत्रु हो या मित्र सभी को समान सम्मान मिलना चाहिए उसके योग्य जो भी कर्म हो उनका पालन उचित प्रकार से किया जाना चाहिए| रावण को मृत्यु के उपरांत वह प्रत्येक संस्कार मिलना चाहिए जो साधारण जन मानस को मिलता है सिर्फ इस कारण से कि वह युद्ध क्षेत्र में श्री राम की सेना का शत्रु था उसका अपमान नहीं होना चाहिए| शत्रु भी सम्मान का अधिकारी है| हमारा वैर मात्र विचारों तथा कृत्यों का है| उसके उपरांत वह भी हमारे जैसा ही है| अतः वह भी अपनी वीरता तथा युद्ध के लिए सम्मान का पात्र है|
मानव के रूप में अवहेलना की जाए जिससे उसे मुक्ति न मिल सके? क्या यह उचित होगा ?वह भी उन सारे संस्कारों का अधिकारी है; जो मृत्यु के उपरांत किए जाते हैं| वह वीरता से युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ और श्रीराम इसी रूप में उसे देखना चाहते हैं| वे नहीं चाहते थे कि कोई भी इस तरह का कार्य या उसके संस्कार में किसी भी प्रकार का ऐसा आचरण किया जाए जो उचित न हो| रावण द्वारा किया गया व्यवहार अहंकारी राजा के द्वारा किया गया व्यवहार था, वहीं श्री राम के द्वारा किए जाने वाला व्यवहार मर्यादा पुरुषोत्तम के द्वारा किए जाने वाला व्यवहार था|

प्राप्तुमर्हति धर्मज्ञ त्वं यशोभाग्भविष्यसि |
राघवस्य वचः श्रुत्वा त्वरमाणो विभीषण: || २०१

इस समय की स्थिति में तुम और मैं रावण के प्रति एक समान भाव रखने वाले होने चाहिए समय के अनुसार जो कुछ किया जाना चाहिए वह अवश्य करें इसलिए इसका संस्कार करो इससे ही तुम्हारा यशोवर्धन होगा श्रीराम की सारी बातें सुनकर विभीषण, वे सारे संस्कार करने में लग गए जो मृत्यु के उपरांत किए जाते हैं

१९९, २००, २०१ - युद्धकाण्डे, चतुर्दशोत्तरशततम: सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित,
मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १२२३,१२२४ ,१२२५

और समस्त परिजनों ने कुश ,तिल, चावल की तिलांजलि दी| श्रीराम कभी किसी के विरुद्ध या समर्थन में भाव विशेष नहीं रखते थे व परिस्थितियों के अनुरूप ही कार्य करने को श्रेयस्कर समझते थे|
वाल्मीकि कृत रामायण में एक साधारण परंतु उत्तम पुरुष के रूप में चित्रित है रामायण का अर्थ है राम का मंदिर राम का घर, राम का आलय अथवा राम का मार्ग; वाल्मीकि के राम साधारण होते हुए भी असाधारण हैं विकट से विकट परिस्थिति में भी स्वयं को संयमित करते हुए अन्य परिजनों को उचित अनुचित का भेद कराने वाले धर्म के मार्ग पर डटे रहने वाले साधारण मानव को असाधारण बनने का मार्ग दिखाने वाले श्रेष्ठ पुरुष श्री राम, वे प्रत्येक स्थिति में उनके अनुकूल ही निर्णय लेते हुए ,उसे क्रियान्वित करते थे| हमारे समाज में वह आज भी एक प्रेरणा स्रोत के रूप में विद्यमान हैं हमारे कर्म तथा वचन एक समान होने चाहिए अर्थात दोनों एक दूसरे के पूरक होने चाहिए धर्म का पालन करने पर एक साधारण राजकुमार श्री राम अवश्य बन सकता है बस दृष्टिकोण राम का होना चाहिए |

५.३ भगवान सिंह के दैवीय राम-

राजमहल की परिधि से उत्पन्न राजनैतिक सामाजिक ताने -बाने के बीच सामंजस्य बिठाते हुए देवी सिंह के दयाराम हर उस मार्ग से अपने मार्ग को अलग कर लेते हैं जहां किसी भी प्रकार का कुचक्र चल रहा हो उनके जीवन में प्रत्येक तथ्य की स्पष्टता है| पुस्तक 'अपने अपने राम' पृष्ठ संख्या १८ में 'श्री राम जनधारणाओं का विच्छेदन करते हुए अहिल्या की कथा सुनने के बाद अपने गुरु से कहा था कि "मैं उसे देवी के दर्शन करना चाहूँगा गुरुदेव" और उनके गुरुदेव ने कुछ नहीं कहा था; मात्र गर्व से श्रीराम की ओर देखा था और साथ चलते हुए उनके कंधे पर हाथ रख कर दूर आकाश की ओर देखते हुए भी वे आकाश की ओर नहीं देख रहे थे| आकाश तक ऊंचा उठा हुआ अनुभव कर रहे थे| अपने शिष्य के मुख से उस लोक निर्वासित महिला के लिए देवी का संबोधन सुनकर फिर चलते चलते जैसे अपने आप से बातें कर रहे थे और बोले तुम मेरी आत्मा हो वह राम की ओर नहीं आकाश की ओर देख रहे थे और राम के द्वारा कहे गए शब्दों के साथ आत्मविस्तार को देख रहे थे और उन्होंने कहा कि, उसे तुम्हारी ही प्रतीक्षा है; राम अपमान और उपेक्षा ने उसके चेतना को लगभग नष्ट कर दिया है| वह डरती है कि न जाने उसे लोगों से क्या-क्या अब शब्द सुनने पड़ेंगे और बहुत कुछ तो उसने सुना भी चेतना का तो केवल यही प्रमाण शेष रह गया है उसे दूषित करने वालों की लोग पूजा करते हैं |

वे पुरुष जो ठहरे शक्तिशाली छल सकते हैं लूट सकते हैं दूसरों को अपमानित कर सकते हैं जिन्हें चलते लूटते और अपमानित करते हैं उन्हीं को इन सब के लिए दोषी भी सिद्ध कर सकते हैं आश्चर्य है कि सिरजिता है ,गढ़ता है लोगों को जीवन का अवलंबन देता है वही सबसे अधिक अपमानित भी होता है चाहे वह धरती हो स्त्री हो या सेवक हो सब की नियति एक सी है |' २०२

श्री राम के एक शब्द देवी ने उनके गुरु के कर्म तथा आत्मविश्वास दोनों को बढ़ा दिया था गुरु अपने आप में कितनी गर्व तथा आत्मविश्वास की अनुभूति कर रहे थे यह उनके शारीरिक अवस्था से पता चलता है| अपने छात्र की न्याय-प्रियता स्वतंत्र आंखों से देखने , स्वच्छंद मन से सोचने की प्रवृत्ति पर हर्षित होते हैं|

---

२०१ - युद्धकाण्डे , चतुर्दशोत्तरशततम:सर्गः श्रीमद्वाल्मीकीरामायण ,वाल्मीकि जी द्वारा रचित मुद्रक हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ संख्या १२२५

२०२ - अपने अपने राम, भगवान सिंह, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या १८

उन्हें अपने शिष्य पर मान होता है और वह उसकी सोच को सर आते हैं मन ही मन श्री राम के शब्दों के साथ उठने वाली यह तरंगे गुरु को आत्मिक संतुष्टि देती हैं|अहिल्या से मिलने के लिए श्री राम अपने दोनों हाथ जोड़कर उनकी तरफ गए और उनके साथ लक्ष्मण जी भी ठीक उन्हीं की तरह करबद्ध चल रहे थे संभवतः उसे भी लगा था कि यह व्यक्ति अन्य लोगों से भिन्न है वह ना तो अपने स्थान से हिली थी और न ही भागी थी संभव है कि उसकी आंखों से कुछ दिख ही न रहा हो, संभव है उसमें हिलने की शक्ति भी न रह गई हो नहीं वह शायद इधर देख ही नहीं रही थी वह बैठी थी और सिर गड़ाए | इसी सोच में डूबी थी उसके निकट पहुंच कर राम उसके चरणों में लेट गए थे आपने बहुत दुख झेला है मां **मैं समस्त पुरुष जाति की ओर से आपसे क्षमा मांगने आया हूं देवी मैं आपको अपमानित करने वाले उस दिन भी पुरुष जाति का प्रतिनिधि आपसे दंड मांगने आया हूं |** २०३

श्री राम समस्त पुरुष समाज को दोषी मानते हैं उनके मन में एक आदर है पुरुष समाज में उनके साथ जिस तरह का व्यवहार किया और उसका जो प्रभाव उनके मन पर पड़ा जो आघात उनके हृदय पर हुआ उसकी पीड़ा राम भली-भांति समझते थे की वे जानते थे की अहिल्या दोषी नहीं है परंतु पुरुष समाज का घमंड उनके व्यक्तित्व पर भारी पड़ रहा है और इसी कारण वे अपने ऊपर लगने वाले किसी भी आरोप का प्रतिकार नहीं कर पाएंगे और मन ही मन अपने साथ हुए अन्याय को लेकर वह बुरी तरह टूट चुकी थी मैं किसी के आगे अपनी स्थिति को स्पष्ट नहीं करना चाहते थे क्योंकि कोई उनके मन की पीड़ा को समझना नहीं चाहता था यहां श्री राम उनके मन के भावों को बिना कहे ही पढ़ लेते हैं एक मनोचिकित्सक एक मनोवैज्ञानिक एक दैवीय पुरुष के रूप में वे उनकी पीड़ा को हरना चाहते हैं|

इस समाज के व्यवहार के कारण महिला स्वयं को पतिता समझने लगी थी| उनकी जिह्वा से स्वर इस प्रकार फूट रहे थे जैसे कोई मरणासन्न व्यक्ति कुछ कहने का प्रयत्न करें और उसकी आवाज अस्पष्ट बस शब्द बन कर रह जाए बहुत ध्यान देने पर कुछ समझ में आया कि उन्होंने कहा "मैं लांछिता हूं पतिता हूँ |"

आप पतित नहीं हो सकती माँ जो पतित होते हैं वे अपने जघन्य कृत्य पर भी अपने आप को पतित नहीं कहते वे अपने पाठकों को लेकर गर्व करते हैं उनकी चेतना अहंकार से इतनी मलिन हो चुकी होती है कि वह अपने पात्र को समझ ही नहीं पाते जिनमें प्रतीत होने का बोध है जो उन कार्यों द्वारा पात्र कहे जाते हैं वह या तो अज्ञान अज्ञान अथवा व्यवस्था के कारण उनके ही पाप और पातकों का बोझ अपने ऊपर ओढ़ लेते हैं या उनके द्वारा लादे गए पातक के बोझ को ढोने को बाध्य कर दिए जाते हैं |" श्री राम यह सारी बातें प्रतिवाद करते हुए कहते हैं क्योंकि वह इस तरह की स्थितियों को लेकर पुरुष समाज की सोच से भलीभांति अवगत थे कि किस प्रकार पुरुष अपनी गलतियों को छुपाने के लिए अपने सरलतम शिकार के रूप में महिला के मान सम्मान का शिकार करता है उसका अस्तित्व कायम रहे उसकी गलती को कोई गलती न करें इसके प्रति वह पूरी तरह सचेत होता है महिला के मान सम्मान उसके अंतर्मन की पीड़ा को अनदेखा करते हुए वह स्त्री के जीवन पर है प्रश्नवाचक चिन्ह लगा देता है | अहिल्या की समझ में कुछ नहीं आ रहा वे केवल आश्चर्य से राम को निहार रही थी राम ने कुछ स्पष्ट स्वर में एक-एक शब्द पर रुकते हुए और एक एक शब्द का स्पष्ट उच्चारण करते हुए फिर कहा"**तुम पतित नहीं हो मां | तुमने तो दूसरों के पातक का प्रक्षालन अपनी पीड़ा और यातना से किया है जैसे मां अपनी गोद के बच्चे के मल का प्रक्षालन करती है हां मां अपने समस्त अहंकार के बावजूद पुरुष जाति स्त्री के सम्मुख एक शिशु ही बनकर रह जाता है अपनी धात्री और कोशिका को ही दूषित और मलिन करके किलकारियां भरने वाले शिशु से अधिक क्या है वह?**" २०४

२०२,२०३,२०४ - अपने अपने राम, भगवान सिंह ,वाणी प्रकाशन , पृष्ठ संख्या १८, १९

तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आती महिला ने दुर्बल और कांपते हुए स्वर में कहा था उसकी समझ में कुछ तो आ ही रहा था अन्यथा वाणी में यह परिवर्तन कहाँ से आता उसके नकार में भी आत्मविश्वास कहां से लौटता कुछ समझ नहीं आता बेटा बेटा शब्द का उच्चारण उसने इतनी विकसित होकर किया था कि अपना संयम ना होने वाले राम की भी आंखें आद्र हो आई थी|

"पतित वे होते हैं मां जो दूसरों को कुचलकर अकेले ऊपर उठना चाहते हैं , सिर तानकर शिखर बनना चाहते हैं मैंने शिखरों को भूचाल तो दूर मात्र में मेह से खिसकते और लुढ़कते देखा है | पर्वतों को अपने अहंकार के जड़ भार से बिना किसी ठोकर या आघात के चूर चूर होते देखा है | महावटों को झंझा और बिजली के आघात से खंडित होते देखा है |

मां, मैंने धरती को द्रवित होकर बहते देखा है पर पतित होते नहीं देखा स्त्री तो लोक जननी होती है| वह तो धरती होती है वह कभी पतित नहीं हो सकती पतितों को भी वही संभालती है और वही संभाल सकती है | अपनी अवज्ञा करके तने शिखरों को टूटने पर अपने आंचल में वही संभालती है | २०५

यदि वह पतित होगी तो उसे कौन संभालेगा ? राम ने अपने संयत पर कोमल स्वर में कहा था राम के विचारों की ऊंचाई तथा उनके भावों की गहराई उनके स्वभाव को उनके अंतर्मन को और इस समाज में चल रहे अन्याय के विरुद्ध युद्ध करने के लिए जो शक्ति जो प्रेरणा उनकी अंतरात्मा से मिलती है वह उनको तथा उनके स्वभाव को अपने आप में महान बनाती है अन्याय के विरुद्ध न्याय की ढाल बनकर खड़े हुए फिर सामने चाहे सुग्रीव का भाई बाली हो या देवी अहिल्या के पति ऋषि गौतम हों जीवन की कठिनतम समय में भी अपना संयम नहीं खोते हैं बड़े नपे तुले तरीके से अपनी बातों को कह देते हैं अन्यथा ऐसे विषयों पर विचार प्रकट करने में उस अन्याय का प्रतिरोध करने में मनुष्य और असंयमित हो जाता है| उनके विचार और उन विचारों के अनुरूप उनके कर्म ही उनके व्यवहार का आधार होते हैं साधारण मनुष्य होकर भी दैवीय गुणों से सुसज्जित श्री राम अपने आप में ही एक अनवरत यात्रा है जिसमें ना जाने ऐसे कितने ही पड़ाव हैं जहां रुकने पर हमें पता चलता है कि संयम क्या होता है कर्म का संतुलन क्या होता है असमानता का भाव क्या होता है समाज का पाषाण हृदय उस हृदय की कठोरतम भाव भंगिमाओ से परिचित तथा अपने जीवन में आसपास घटित घटनाओं के विश्लेषण के आधार पर वे ऋषि वशिष्ठ से वार्तालाप करते हुए कहते हैं | **"अपने को सभ्य कहने वाला हमारा समाज जितना रुग्ण ,अनैतिक तथा मानवीय गुणों से शून्य है उतना तो कोई नरभक्षी गण भी न होगा| उनकी क्रूरता अतिरंजित कहानियाँ गढ़ कर सामान्य नागरिकों को जिस तरह उनके प्रति निष्ठुर बनाया जाता है और जितने अनुताप ही ढंग से उनके वध के लिए प्रोत्साहित किया जाता है यदि उसी तरह का व्यवहार भी हमारे साथ करने लगे तो हमारा तो जीवन दूभर हो जाए|"** २०६

श्री राम सब के प्रति संवेदना तथा प्रेम रखते थे वे नहीं चाहते थे कि किसी के साथ भी कोई और नैतिक अमानवीय व्यवहार जिससे उसके मानस पटल पर कोई आघात पहुंचे विश्व के मान सम्मान को उसका अधिकार समझते प्रेम युक्त व्यवहार को जीवन का आधार मानते थे और सदैव अपना व्यवहार दूसरों के प्रति ऐसा ही रखते थे जैसा वे अपने प्रति चाहते थे यह बातें उन्होंने बोलकर ही नहीं अपितु अपने व्यवहार से सिद्ध करके दिखाइए किस प्रकार किसी के सुविचार उस तक ही सीमित रहने देना चाहिए और अपने विचारों से उसके मन के भावों को परिवर्तित कर देना चाहिए अपने सकारात्मक सोच तथा अच्छाइयों से किसी को इतना प्रेरित करो कि तुम स्वयं उसकी प्रेरणा बन जाओ आदर्श बन जाओ अनुकरणीय बन जाओ तथा अन्याय पूर्ण व्यवहार

२०५, २०६- अपने-अपने राम , भगवान सिंह ,वाणी प्रकाशन , पृष्ठ संख्या १९

का विरोध सम्मान तथा सहयोग का स्वागत; ये ही उनके जीवन के मूल मंत्र रहे| राम की अपर आत्मा है लक्ष्मण अर्थात् राम का ही दूसरा रूप; राम स्वयं को लक्ष्मण के बिना कुछ नहीं मानते थे उनके लिए वह और लक्ष्मण एक ही थे क्योंकि वे लक्ष्मण जी की शक्ति तथा दुर्बलता दोनों जानते थे| लक्ष्मण जी के मन में उत्पन्न होने वाले प्रत्येक भाग को भली प्रकार समझते थे| उनके प्रति श्री राम, पिता के समान भाव रखते थे पुत्रवत ही उनकी देखभाल करते थे| श्री राम की परछाई के रूप में लक्ष्मण जी भी उन्हें अपना आराध्य मानते थे| एक दूसरे के प्रति अटूट विश्वास श्रीराम के हृदय में लक्ष्मण जी के लिए अपार प्रेम था| श्री राम सदा ही अपने भाइयों के लिए एक आदर्श भाई रहे हैं| जिन्होंने अपने भाइयों की प्रसन्नता के लिए कुछ भी करना स्वीकार किया फिर चाहे वह वनवास ही क्यों न हो| अपने आदर्श तथा व्यवहार कुशलता के कारण श्री राम एक आदर्श के रूप में अपने भाइयों के लिए पूजनीय थे अपने भाइयों के आगे किसी राज-पाट तथा बहुमूल्य से बहुमूल्य वस्तु को ही मूल्यहीन समझते थे इसी कारण वे आज भी भाई के रूप में एक महान उदाहरण के रूप में माने जाते हैं|

श्री राम न्याय और प्रशासन के अंतर को तथा इनकी मान्यताओं को भलीभांति समझते थे पुस्तके एक प्रकरण में लक्ष्मण जी को रावण की एक उक्ति स्मरण हो आती है और उनके मुंह से यह बात निकल जाती है कि रावण कहता था यमराज ही धर्मराज हैं क्योंकि अंततः वही न्याय करते हैं; तो उसका कथन जितना भी भ्रम लगता हो परंतु इसमें कुछ सच्चाई तो थी ही दंड के प्रयोग के बिना न तो राजा अपनी रक्षा कर सकता है, न ही अपने राज्य की और न ही अपनी प्रजा की वाक्य पूरा करके वे श्री राम के उत्तर की प्रतीक्षा करते हैं| बहुत ही सधी हुई आवाज में विचार करते हुए श्री राम कहते हैं कि एक गड़रिया अपनी भेड़ों पर भी डंडे का प्रयोग करता है और भेड़िए पर भी परंतु इन दोनों में अंतर होता है| रावण इस अंतर को प्रायः भूल जाता था| लक्ष्मण जी इस बात के उत्तर में कहते हैं महाराज यह बात आपने ही तो कही थी कि रावण अनुभव और ज्ञान में अद्वितीय है| अपने अनुभव से मनुष्य सदा सीखता ही नहीं है; लक्ष्मण, कभी-कभी तो अपने कड़वे अनुभवों को भी बार-बार दोहरा कर ऐसी आदत में बदल देता है और उससे उबर नहीं पाता अपितु अपने ज्ञान का उपयोग भी उन्हें उचित सिद्ध करने में और एक व्याधि के रूप में दूसरे में प्रसारित करने में लगा रहता है| मनुष्य के सारे धर्मों का मूल यही तो है| अतः ज्ञान और अनुभव शील का स्थान नहीं ले सकते शील के बिना बल का सही उपयोग नहीं हो सकता शील, ज्ञान और अनुभव को विवेक में बदलता है और इसका अभाव उसी ज्ञान और अनुभव को दंभ में बदल देता है |

भगवान सिंह के राम सामने खड़े प्रत्येक व्यक्ति के मनोभावों तथा कुचक्रों को पढ़ने में सक्षम थे| शरीर से मानवीय दिखने वाले राम अपने कर्म व्यवहार तथा वाणी से दैवीय हो गए ,अनुकरणीय हो गए सशक्तों को सदा वही निर्बलों तथा दुर्बलों के सहायक के रूप में कार्य करना चाहिए| आर्थिक, समाजिक, शारीरिक तथा मानसिक रूप से प्रत्येक जीव का साथ देना चाहिए अगर अपने जीवन को माध्यम बनाकर किसी के जीवन में संपूर्णता लाई जा सके तो इससे अच्छा जीवन भला कौन सा होगा इसलिए राम मानव शरीर में होते हुए भी श्री राम दैवीय गुणों से सुसज्जित थे |

५.४- नरेंद्र कोहलीके न्यायप्रिय तथा नूतन समाज के निर्माता :-

श्री नरेंद्र कोहली के अनुसार ऋषि विश्वामित्र के समान मुझे और मेरे समय को भी श्री राम की आवश्यकता है | रूढ़िबद्ध,सामाजिक मान्यताओं से सताए हुए समाज से निष्कासित; उस प्रति व्यक्ति का उद्धारक हो जो समाज को ताड़का और सुबाहु से छुटकारा दिला सके, मारीच की सभी योजनाएं दूर फेंक सकें| विश्वामित्र के आश्रम में निसिचर हीन करौ का प्रण कर सके, संसार को रावण जैसे अत्याचारी शक्ति से मुक्त करा सके,

किंतु वे मानव शरीर लेकर जन्मे थे| उनमें वे सहज मानवीय दुर्बलताएं क्यों नहीं थी? जो मनुष्य मात्र की पहचान है? आदर्श पुरुष त्याग करते हैं; परंतु यह तो त्याग से भी कुछ अधिक ही था| जहां आधिपत्य की कामना ही नहीं थी यह तो आदर्श से भी बहुत ऊपर मानवता की सीमाओं से बहुत परेशान ही था श्रीराम में कामना, मोह,लोभ, क्रोध नहीं ऐसा मनुष्य कैसे संभव है? मेरे विपक्षी रुष्ट हैं कि राम उनके जैसे क्यों न हुए? कंचन और कामिनी काम वह उन्हें क्यों नहीं सताता? राज्य धन संपत्ति और सत्ता से उपलब्ध होने वाले विलास और व्यसन उन्हें लालायित क्यों नहीं करते ईर्ष्या शत्रुता और प्रतिशोध के भाव उनके मन में क्यों नहीं जागते गोस्वामी जी ने कहा **निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार** इंद्रिय भोग की कोई कामना उस शरीर की संरचना में सम्मिलित ही नहीं थी इसके लिए उनके मन में प्रकृति के स्वभाविक गुण अंगीकार नहीं किए जो मनुष्य को साधारण मनुष्य बनाते हैं उन्होंने तो वह तन धारण किया था| जो साधारण ही नहीं था वह माया के गुणों और इंद्रियों के नियंत्रण से परे था राम अपना तन अपनी इच्छा से निर्मित करते हैं तभी तो माया को बांधकर चेरी बना कर लाते हैं| अष्टावक्र ने बताया "मुक्तिमिच्छसि चेतात विषयान विषवत्यज" हे तात! यदि मुक्ति की इच्छा है तो विषयों को विष के समान त्याग दें कामना त्याग और मुक्त हो जा आत्मा वही शरीर तो धारण करती है जिसकी वह कामना करती है| शरीर तो हमारा भी नीच इच्छा निर्मित ही है बस आत्मा ने मन के साथ तादम में कर लिया है मन में ढेर सारी कामनाएं ओढ़ ली है इंद्रिय सुख के सपने संजो लिए हैं आत्मा ने उन्हीं कामनाओं की पूर्ति के लिए उपयुक्त शरीर धारण किए जो सुख और दुख भोग रहा है|

नरेंद्र कोहली के अनुसार श्री राम न्याय प्रिय समाज के निर्माता तथा प्रत्येक व्यक्ति के उद्धारक हैं जिसको यह समाज प्रत्येक अधिकार से वंचित कर देता है श्री राम का समाज को देखने का दृष्टिकोण समाजवाद पर आधारित है उनकी नीतियां सर्वहितकारी सर्व मंगलकारी रही इसी कारण रामराज्य को आदर्श राज्य माना जाता है और किसी राम राज्य के कारण अयोध्या नगरी आज भी विशेष स्थान रखती है |

न्याय अन्याय के बीच बहुत स्पष्ट अंतर जाने वाले शेरों एक ऐसे समाज की परिकल्पना करते थे जहां प्रत्येक व्यक्ति को मान सम्मान मिल सके चाहे वो व्यक्ति राज परिवार से संबंध रखता हो या किसी साधारण परिवार से सबके लिए समान व्यवस्था के पक्षधर थे |अभ्युदय भाग-१ पृष्ठ संख्या ३७१ के एक प्रसंग में जहाँ श्री राम विराध के वध के उपरांत वन की सारी स्थिति को देखते हुए वे कहते हैं कि-

" विराध जैसे अनेक लोग मारे जाएं पर क्या उससे अन्याय का नाश हो जाएगा वे मारे गए क्योंकि वह संगठित नहीं थे परंतु उनका क्या होगा जो रावण के समान संगठित हैं जिनके पास धन सकता बल और सेना हैं रावण की अनीति की वर्षा होती रही तो कुकुरमुत्तों के समान राक्षसों का जन्म होता रहेगा ।" २०७

अभ्युदय के एक प्रसंग में राजा दशरथ श्रीराम से राजतिलक की तैयारियों के बारे में बात करते हैं तो श्री राम के मन में अनेक प्रकार की आशंकाएं मुखर हो उठती हैं मन ही मन उन विचारों को लेकर चिंतित है जो ऋषि विश्वामित्र से संवाद के उपरांत उनके मन में वन जाने के लिए स्थान बना रहे थे और भी सोचते हैं

विश्वामित्र उनको दिया गया वचन? वन में उनकी प्रतीक्षा करते हुए इसी ऋषिगण ,वानर -रीछ , गरुड़ गिद्ध, कोल - भील , शबर -किरात आदि उनके प्रति भी तो श्री राम के कुछ कर्तव्य है दायित्व है उनका दायित्व मात्र अयोध्या तक सीमित नहीं हो सकता राजनीतिक सीमाएं मानवीय भावों संवेदना दायित्व तथा अधिकारों को संकीर्ण चौखट में बंद नहीं कर सकती **राम अयोध्या के हैं- अयोध्या का उन पर भरपूर अधिकार है किंतु अधिकार उनका भी है जो अयोध्या में नहीं है और निर्णय राम की प्रकृति आज राम को निर्णय लेना होगा राम के जीवन में निर्णय परिस्थितियां नहीं लेती राम लेते हैं |** २०८

---

२०७ ,२०८ - रामकथा अभ्युदय , नरेंद्र कोहली , डायमंड पॉकेट बुक्स, पृष्ठ संख्या ३७१, २२२

श्री राम अयोध्या के नगरीय सभ्यता के अतिरिक्त सुदूर क्षेत्रों में वास करने वाले वनवासियों के जीवन स्तर को भी सुधारना चाहते हैं ऋषि विश्वामित्र के द्वारा दी गई सूचना के आधार पर अपनी तरफ से यथासंभव कर्म करते हुए उस क्षेत्र में वास करने वाले मानव जाति के अतिरिक्त वन्यजीवों को भी एक सुरक्षित जीवन देना चाहते हैं| उनके अधिकारों की लड़ाई को लड़ना चाहते हैं वे नहीं चाहते कि वन में रहने वाला कोई भी जीव उसके अधिकारों से वंचित हो वह समाज को एक ही धरातल पर देखना चाहते हैं चित्र सामाजिक आर्थिक स्तर के आधार पर सबके अंदर समान विचारधारा का प्रवाह चाहते हैं चाहते हैं की सभी को मुख्यधारा से जोड़ा जाए जीवन जीने की जो परिपाटी तथा जो सुख सुविधाएं अयोध्या नगर के वासियों को मिलते हैं वही सुख सुविधाएं और उसी तरह का जीवन वन में रहने वाले वनवासियों को भी मिले क्योंकि एक सुरक्षित और समृद्ध जीवन जीना सबका अधिकार है विश्व को किसी दायरे में बांधकर नहीं रखना चाहते प्रयास करते हुए अपने सामर्थ्य के अनुसार जो कुछ भी कर सकते हैं उससे पीछे हटना नहीं चाहते वह अपनी परिधि अयोध्या तक न रहते हुए उसका विस्तार चाहते हैं वे अपने जीवन में एक ऐसा निर्णय लेना चाहते हैं जिससे वासियों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन आए राज तिलक उनको उनके कर्तव्य से भूख नहीं कर सकता यह भली-भांति जानते हैं इसीलिए स्वयं से कहते हैं कि कोई भी परिस्थिति राम को उसके निर्णय को परिवर्तित करने के लिए बाध्य नहीं कर सकती या बदलती रहती हैं परंतु राम के निर्णय नहीं राम एक बार जो ठान लेते हैं मैं उसे किसी भी परिस्थिति में पूरा करके ही रहते हैं वे मानते हैं कि उनका जीवन या वे स्वयं किसी एक परिस्थिति या एक दायित्व के साथ नहीं रह सकते इस पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीवो को देखने की जो उनकी दृष्टि हैं उनके प्रति जो उनका व्यवहार है दृष्टि और व्यवहार ही उन्हें विशिष्ट बनाता है किसी के साथ भी अन्याय होता हुआ या किसी का भी अहित होता हुआ नहीं देख सकते इसलिए अपने आप को मानते हैं कि उनको हर संघर्ष को उसके अंत तक ले कर जाना होगा जो कहीं किसी की स्थिति में किसी के जीवन में सुधार ला सकता हो |

कैकेयी के प्रसाद से वनवास का वचन देकर जब श्री राम माता कौशल्या के प्रसाद में आते हैं तो वह मन ही मन सोचते हैं कि जिस प्रकार माता कौशल्या माता सुमित्रा तथा रानी सीता मन ही मन प्रसन्न हैं |उसी प्रसन्नता से उद्धत सारे कार्य कर रही हैं और अकस्मात यूँ ही वनवास का समाचार देकर मैं कहीं उनकी प्रसन्नता का हरण तो नहीं कर लूँगा इस प्रकार के अनेक विचार श्रीराम के मन में विचरित हो रहे हैं क्योंकि वह भली-भांति देख भी रहे हैं और समझ भी रहे हैं कि जिस तरह का उत्सव आयोजित किया जाने वाला है उसमें राजमहल से लेकर अयोध्या का प्रत्येक वासी संलग्न है और इस तरह का कोई भी समाचार अचानक अयोध्या की गति को रोक देगा राज महल में यह जो हर्षोल्लास का वातावरण बन चुका है| वह शोक में बदल जाएगा फिर भी अपने मन को समझाते हुए कहते हैं कि कहना तो पड़ेगा ही

"मोह तथा कर्तव्य का निर्वाह साथ-साथ नहीं हो सकता मोह को तोड़ना होगा कठोर हुए बिना कोई भी कर्तव्य पूरा नहीं उतरा|" २०९

कर्तव्यों की पालना करनी हो तो आत्म अनुशासन की आवश्यकता पड़ती है| जिसमें हम किसी भी प्रकार का लोभ नहीं कर सकते सारे कार्य न्याय संगत करने पड़ते हैं| सभी कर्तव्यों की पालना उचित प्रकार से की जा सकती यदि हम किसी प्रकार का लालच लोभ या मोह करते हैं तो हम किसी भी नियम का पालन नहीं कर सकते किसी भी न्याय प्रणाली का भाग नहीं सकते| कर्तव्यों का पालन करने में बहुत कष्ट मिलते हैं परंतु उनका स्टोर को भी सहन करना पड़ता है क्योंकि हमें अपने कर्तव्य का पालन पूरी निष्ठा से करना है|

---

२०९ - रामकथा अभ्युदय , नरेंद्र कोहली , डायमंड पॉकेट बुक्स पृष्ठ संख्या २३५

श्री राम स्वयं को संभालते हैं क्योंकि उनके मन में वह सारी पीड़ाएँ स्थान बनाने की कोशिश कर रही हैं वह सारे भाव जो राज महल सहित अन्य लोगों के ह्रदय दुखी कर देंगे के दुख से दुखी होने वाले से राम का मन उदास हो गया तत्काल उन्होंने स्वयं को संभाला और स्वयं को चेतावनी दी यदि इतनी सी बात से विचलित हो गए तो वे अपना कर्तव्य कभी भी पूरा नहीं कर पाएंगे कोमल कोमल हाथ कर्तव्य की पूर्ति में कभी भी सहायक नहीं होते उन्हें दृढ़ रहना होगा दुर्बलता से हां आया अवसर निकल जाएगा और मैं अपनेआप को इस बात के लिए सुनिश्चित करते हैं कि उनके सामने चाहे माता कौशल्या माता सुमित्रा देवी सीता और भाई लक्ष्मण सहित कोई भी इतनी भी जिद करें कितना भी मनुहार करें वन जाने का निर्णय परिवर्तित नहीं करेंगे उन्हें कठोरता से इस निर्णय का पालन करना ही होगा तथा परिजनों से करवाना भी होगा क्योंकि कठोरतम निर्णय लिए बिना उसे क्रियान्वित किए बिना किसी भी तरह का परिवर्तन संभव नहीं है, वे एक सामाजिक चिंतन की तरह योजना बनाते हुए करण वध तरीके से अपनी सारी योजनाओं को फलीभूत करना चाहते थे|

समाज की सुरक्षा हेतु शस्त्र उठाने में विश्वास रखते थे वह किसी भी प्रकार की कुत्सित विचारधारा का विरोध करते थे वे जानते थे कि धर्म युद्ध मूलतः दो विचारधाराओं का युद्ध है जिसमें एक तरफ धर्म तथा दूसरी तरफ अधर्म होगा धर्म के पास सत्य की शक्ति होगी इसके अतिरिक्त कुछ नहीं अधर्म के पास संगठन होगा सत्ता हो गई थाना होगा बल होगा अनीति होगी और उसे उसकी ही विचारधारा के सभी लोगों का समर्थन प्राप्त हो वही सत्य तथा धर्म को पहचानना तथा उसके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना इतना सरल नहीं होता अतः इसका समर्थन करने वाले इस पर चलने वाले लोगों की संख्या कम होगी स्थिति चाहे कितनी भी विपरीत हो श्री राम असत्य अधर्म को जीते हुए नहीं देख सकते वे उस पर विचार करते हैं, जो धर्म तथा और धर्म के युद्ध में महत्वपूर्ण हो सहयोगी हो वे शत्रु पक्ष की शक्तियों का भी विश्लेषण करते हैं| अपने पक्ष का भी चिंतन मनन मंथन करते हैं इस युद्ध को जीता जा सके|

श्री राम का विराध युद्ध से उपरांत जब श्री राम उसे बलपूर्वक दबा देते हैं तब वह कहता है कि मैं विराध हूँ गंधर्व अति दीन स्वर में उसने यह बात कहीतब श्री राम ने उसके बाद को ध्यान से सुनो और लक्ष्मण जी ने हंसते हुए कहा थोड़ी देर पहले तो तुम राक्षस थे; मार पड़ी तो गंधर्व हो गए थोड़ी और पिटाई होगी तो कदाचित देवता हो जाओगे फिर विराध ने कहा नहीं मैं गंधर्व हूँ गंधर्व ही रहूँगा| इस पर श्री राम ने पूछा तो पहले स्वयं को राक्षस क्यों कहा था| विराध की आंखों में एक क्षण के लिए जो सोच उतरी और पुनः कंठ पर पड़ते हुए दबाव से वह पीड़ित हो उठा श्रीराम ने अपने पैर का दबाव कम कर दिया तो विराध बोला मैं शरीर से अत्यंत बलशाली था| इस क्षेत्र में कोई वैधानिक सुशासन नहीं है जीविका के बने बनाए उपयुक्त साधन नहीं है कुछ बिखरे हुए आश्रम हैं| स्थान-स्थान पर स्थापित राक्षसों के छोटे बड़े सैनिक स्कंधवार उचित व्यवस्था को नष्ट करते रहते हैं| मेरे लिए इन दो मार्गों में से एक ही मार्ग था; या तो किसी आश्रम में जाकर रहना स्वयं को ज्ञान-विज्ञान में दीक्षित करना और आसपास के क्षेत्र में राक्षसों के विरुद्ध जनसामान्य का स्वायत्त शासन स्थापित करने के लिए संघर्ष करना, पर उससे मुझे क्या मिलता? भूख, पीड़ा, चिंता और अंत में लक्ष्मण जी ने पूछा दूसरा मार्ग क्या था? विराध बोला अपनी देह के सुख के लिए लूटपाट हत्या; इसमें वैभव-विलास तथा सुख था| उसका उत्तर सुनकर श्री राम ने जानना चाहा कि रावण से उसका कोई संबंध है या उसने कभी तुम्हारी सहायता की है? विराध ने उत्तर दिया रावण से मेरा कोई सीधा संबंध नहीं है| उसके सहायकों ने वैसे ही ऐसा वातावरण बना दिया है कि पग-पग पर राक्षस और राक्षस नीति का जन्म तथा पालन पोषण हो रहा है; न्याय का शासन न हो तो प्रत्येक समर्थ मनुष्य अपने आप राक्षस बनता चला जाता है और असमर्थ जनता उसका लक्ष्य पदार्थ; उन्होंने राक्षस बनने में मेरी सहायता की और मैंने राक्षस बन कर उनकी |

ये सारी बातें श्रीराम के मन में उन प्रश्नों को जगा देती हैं; जहां से वे रामराज्य की परिकल्पना करते हैं| परिकल्पना में सबके लिए न्याय है सबके लिए सुव्यवस्था है| शासन तथा सत्ता का सदुपयोग है शक्ति तथा धन का सही प्रकार से व्यय है| राक्षसों की पद्धति तथा साधारण जन के संघर्ष को श्री राम अति निकटता से देखते हुए जिस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं; उसका ही फल है रामराज्य| वे जीवन को और जीवन के संघर्ष को प्रतिदिन देख रहे थे| यह किस प्रकार लोग अपनी शक्ति और सत्ता का दुरुपयोग करते हैं दूसरों का शोषण करने उनको दुख देने तथा उनका भक्षण करने में राक्षसी प्रवृत्ति के लोगों को असीम आनंद मिलता है| इसको वैधानिक-संवैधानिक रूप से किस प्रकार सही किया जा सकता है? कहां पर शक्ति तो कहां पर बुद्धि का प्रयोग करके इस असंतुलन को बनाए रखा जा सकता है? कि जहां एक आम नागरिक को भी यह अधिकार हो कि वे राजा के द्वारा लिए गए प्रत्येक फैसले का समर्थन या विरोध कर सकें और प्रत्येक जनसाधारण की भावना का आदर हो' श्रीराम लोकनायक कहे जाते हैं; नरेंद्र कोहली के राम आधुनिक समाज के निर्माता हैं| वे सत्ता के दुरुपयोग का घोर विरोध करते हैं नीति औरे अनीति के बीच के अंतर को बहुत स्पष्टता से कह देते हैं और वही उनके द्वारा किए गए आचरण में उनकी सोच व्यक्त होती है| जो कुछ भी उन्होंने अपने हृदय में सोचा या धारण किया उसे करके दिखाया कि कभी किसी को यह कहने का अवसर न मिले कि वे दो राज्य पुत्र थे इसलिए उनके लिए ऐसा करना सरल था उन्होंने अपनी सामाजिक व्यवस्थाओं में कुछ आधारभूत परिवर्तन करने का सदैव ही समर्थन किया; जहां सभी अपने आप को दूसरे के समान समझ सके और समाजवाद की एक नई परिभाषा गढ़ी जा सके|

भरत जी का श्री राम को वापस अयोध्या लाने के लिए वन की तरफ जाना और वहां पर श्री राम का भरत जी को प्रजा के भरण पोषण तथा प्रजा के प्रति उनके उत्तरदायित्व को याद दिलाना अपने आप में स्पष्ट करता है कि किस प्रकार वे प्रजा को प्रथम स्थान पर रखते थे वह भरत जी को याद दिलाते हैं कि माता कैकेई के द्वारा मांगे गए वचन के अनुसार भरत जी को अयोध्या का शासन देखना ही होगा परिवार में चल रहे किसी भी प्रकार के प्रसंग का अयोध्या की शासन व्यवस्था पर प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए वहां पर रहने वाले प्रजा जन अपने किसी भी अधिकार तथा किसी भी व्यवस्था से वंचित ना हो वनवास के समय वन में रहने वाले सभी वनवासियों के साथ एक विशेष प्रकार का सामंजस्य बनाना वहां की व्यवस्था को सुव्यवस्थित करना भय के वातावरण को परिवर्तित कर भयमुक्त वातावरण उपलब्ध कराना वहां के लोगों के जीवन में जिस प्रकार अशांति तथा असुरक्षाअपना स्थान बना चुके थे उसे बाहर निकाल कर एक अच्छा वातावरण देना उनका खोया हुआ आत्मविश्वास जगाना उनकी वीरता को पुनः जागृत करना तथा एकता के महत्व को समझाना सबको एक साथ रहकर एक ही शक्ति से असुरों का विरोध करने की सीख देना शास्त्र के साथ-साथ शस्त्र की उपयोगिता बताना तथा उनके अधिकारों और उनके वन्य क्षेत्र के बारे में उनको अवगत करवाना उनके अंदर यह विचार भरना यह कोई भी आसुरी शक्ति उन्हें आतंकित नहीं कर सकती| आवश्यकता है एक सुचारू व्यवस्था की और कुछ ऐसे लोगों की जो उस व्यवस्था का संचालन कर सकें वह भी बिना किसी पक्षपात के बिना किसी लोग के यह सारी बातें ही प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से इस बात को प्रमाणित करती है कि श्री राम का समाजवाद में तथा समानता के भाव में गहरा विश्वास था तथा इस बात को उन्होंने समय-समय पर उजागर किया वे कभी भी अन्याय तथा धर्म के साथ नहीं खड़े हुए और सत्य धर्म का मार्ग कितना भी कठिन हो उस पर चलने में उन्होंने कभी संकोच नहीं किया यद्यपि उनको पता था इस सत्य और धर्म का मार्ग अत्यंत कठिन है इस पर अनेक प्रकार की बाधाएं आएंगी जिससे किसी का भी मन विचलित हो सकता है तथापि उन्होंने सदैव ही धर्म सत्य तथा समाजवाद को चुना|

५.६ अमिश के दृढ़ता से नियमों का पालन करने वाले राम : -

अलगावों से अयोध्या कमजोर हो चुकी थी | एक भयंकर युद्ध अपना कर वसूल रहा था नुकसान बहुत गहरा था लंका का राक्षस राजा रावण पराजित राज्यों पर अपना शासन लागू नहीं करता था बल्कि वहां के व्यापार को नियंत्रित करता था साम्राज्य से सारा धन चूस लेना उसकी नीति थी जिससे सप्तसिंधु की प्रजा निर्धनता अवसाद तथा द्वारा चरण में गिर गई उन्हें किसी ऐसे अधिनायक की आवश्यकता थी| जो उन्हें इस दर्द से बाहर निकाल सके नायक उनमें से ही कोई एक होना चाहिए कोई ऐसा जिसे वे जानते हो एक संतप्त राजकुमार इस अंतराल को भर सके और वे राजकुमार राम कहलाए, वे अपने देश से प्यार करते हैं; वे न्याय के लिए अकेले खड़े हैं उनके भाई लक्ष्मण तथा उनकी पत्नी सीता और वे स्वयं इस अंधकार के समक्ष दृढ़ हैं| राज्य एक आदर्श राज्य है लेकिन आदर्शवाद की भी एक कीमत होती है उस आदर्शवाद को स्थापित करने हेतु श्री राम ने बहुत बड़ी कीमत चुकाई; उस कीमत को हम शब्दों में नहीं बता सकते क्योंकि किसी के जीवन को शब्दों में नहीं लिखा जा सकता उसकी वेदना संवेदना मन में चलने वाले भागों को वह भी जब भी भावेश संवेदनाएं आवेदन आए श्री राम की हो तो उन्हें शब्दों में पिरो कर प्रस्तुत नहीं किया जा सकता हां सतत प्रयास अवश्य किया जा सकता है| उन मनोभावों तक पहुँचा जाए क्योंकि जिस दृढ़ता से राम नियमों का पालन करते थे अपने और नियमों के बीच में किसी को नहीं आने देते थे वैसा कोई विरला ही कर सकता है|

गुरुकुल में अन्य छात्रों के साथ शिक्षा ग्रहण करते हुए एक दिन गुरु वशिष्ठ देव तथा असुरों के विषय पर परिचर्चा करवाते हैं राम अपना पक्ष रखते हुए कहते हैं कि

"ऋग्वेद एकम का संदर्भ देता है जिसे आज हम सभी आत्माओं का सार अर्थात् परमात्मा कहते हैं यहां तक की स्त्रैण सिद्धांतों के समर्थक देव भी एकम को ही मानते हैं| इसमें एक सूक्ष्म भेद है ऋग्वेद में स्पष्ट कहा गया है कि यद्यपि भगवान एक ही हैं लेकिन अध्यात्म समझाने के लिए वह हमारे पास कई रूपों में आते हैं जिससे हम उनके मूल रूप को समझ पाए आखिरकार प्रकृति भी तो विविधताओं से गिरी है यही बात तो हमें जोड़ती है एक ही प्रभु है जो सत्य है इससे तो पूरी प्रजाति समान हो गई |" २१०

उपर्युक्त पंक्तियों में श्री राम के वक्तव्य से उनकी सोच स्पष्ट होती है जिसमें वे सभी को एक समान समझते हैं| सब के प्रति समान विचारधारा तथा सबके साथ समान व्यवहार अध्यात्म तथा भगवान की बातें इन्हीं बातों को सत्यापित करने के लिए कही गई हैं कि जब ईश्वर की रचना के अनुसार हम सब एक हैं| आराधना करने की श्रेणी एक हैं तो फिर कैसे मनुष्य स्वार्थ व ईश्वर के रूप को बांट सकता है ईश्वर ने किसी में भी भेदभाव नहीं किया है रचना तथा अधिकार के अनुसार उन्होंने सभी को समान ही बनाया है| वह तो मनुष्य ही है जो दूसरों के अधिकार छीनकर उन्हें वंचित कर देता है श्री राम की यही सोच हम उनके जीवन में उनके व्यवहार के रूप में देखते हैं एक राजा के रूप में आसीन होने के उपरांत अयोध्या पति बनने के उपरांत उन्होंने अपनी इसी विचारधारा राम राज्य के रूप में प्रस्तुत किया जहां कभी भी किसी के लिए किसी चीज की मना ही नहीं थी उसके लिए उसका समाज उसकी जाति उसका वर्ग का महत्व नहीं था एक मनुष्य के रूप में उसके जो अधिकार हैं वह उसे अवश्य मैंने चाहिए ऐसा श्रीराम ने सुनिश्चित किया नियमों का पालन सबको करना पड़ेगा चाहे वह राजा हो चाहे वह मंत्री हो चाहे वह किसान हो चाहे वह मजदूर हो कर्तव्य में समानता नियम को माननीय में समानता तो अधिकारों में भी समानता यही उनके विचार थे जिसको उन्होंने मूर्त रूप दिया|

"पौरुषपथ में यह बड़ा जोखिम है अतिवादी विचार आसानी से और असहनशीलता और कठोरता में बदल जाते हैं खासकर परेशानी के समय |" २११

२१०, २११ - इक्ष्वाकु के वंशज , अमीश त्रिपाठी ,यात्रा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या ८४

कठोरता और असहनशीलता ऐसे शत्रु उत्पन्न करती है ,जिन से बातचीत संभव नहीं हो पाती परंतु स्त्रैण पथ की अपनी समस्याएं हैं| खासकर कि सबको एक बड़े लक्ष्य से कैसे जोड़ा जाए स्त्रैण पथ के अनुयायी अक्सर आपस में बटे हुए होते हैं और उन्हें एकजुट करने के लिए किसी चमत्कार की जरूरत होती है तभी उन्हें एक ध्वज तले एकत्रित किया जा सकता है राम जो कि खुद आधुनिक भारत में स्त्रैण पथ के मतभेद तथा क्षमताएं देख रहे थे उनका पौरुष पथ के प्रति उत्सुक होना स्वाभाविक था और पौरुष पथ को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए| असुरों का मार्ग ही भारत की वर्तमान समस्याओं का उत्तर है लेकिन असुरों के मार्ग का दोहराव ना तो किया जा सकता है और न ही किया जाना चाहिए कुछ सुधार और व्यवस्थाएं जरूरी हैं सवालों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और तभी वह हमारी समस्याओं का उपचार बन पाएंगे| कर्तव्यों का वहन करने निर्णय लेने तथा उस को क्रियान्वित करने में विश्वास रखते थे साथ ही वे यह भी मानते थे कि यदि हमारे क्रियान्वयन से कोई भी स्थिति उत्पन्न हुई हूं चाहे वह अनुकूल हो चाहे प्रतिकूल हो हमें उसका उत्तरदायित्व लेने के लिए स्वयं को तैयार रखना चाहिए हम उससे विमुख नहीं हो सकते क्योंकि वह निर्णय हमारे द्वारा लिया गया है हमारे द्वारा किया गया है तो उसका जो भी परिणाम होगा उसके लिए हमें सदैव तैयार रहना चाहिए ऐसा नहीं होना चाहिए की योजनाएं हमारी हों कार्य हमारा हो परंतु जब को फलीभूत हो तो हम उसका ठीकरा दूसरों के सिर पर फोड़ दें या उसका श्रेय लेने से बचें कोई कार्य योजना सफल होती है , तो उसका श्रेय लेना वही जब कोई कार्य योजना और सफल हो तो उसका श्रेय न लेना यह भी न्याय संगत नहीं है हम सदैव ही सही होंगे या सदैव ही हमारा निर्णय सटीक होगा ऐसा आवश्यक नहीं है तो प्रत्येक स्थिति में हमें अपने द्वारा किए गए कार्यों की स्थिति उन कार्यों का अवलोकन तथा उनका उत्तरदायित्व लेना ही चाहिए | स्त्रैण तथा पौरुष पथ के अंतर को स्पष्टता से समझते हुए वे कहते हैं कि दोनों पथों कि अपनी विशेषताएं तथा भेद हैं |
अपनी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप स्त्रैण पथ के बारे मे कहते है कि मैं मानता हूं कि स्त्रैण पथ के अधिनायक अपनी जिम्मेदारियों से बचते हैं अपने अनुयायियों के लिए उनका संदेश होता है

"यह आपका निर्णय है" जब हालात बिगड़ने लगते हैं तो कोई जिम्मेदारी लेने वालानहीं होता वही पौरुष पथ में सारी जिम्मेदारी अधिनायक की मानी जाती है और जब अधिनायक जिम्मेदारी ले लेता है तो समाज प्रगति करने लगता है वहां समाज के लिए स्पष्ट निर्देश और मकसद होता है नहीं तो बस अंतहीन बहस जांच और पक्षपात ही चलता रहता है | २१२

वशिष्ठ जी पूछते हैं कि क्या तुम एक नई राह बनाना चाहते हो ? शासन व्यवस्था हेतु कार्य करने के लिए किस पद्धति का प्रयोग किया जाना चाहिए किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए विवेका अनुसार इस तरह के निर्णय लेने चाहिए इसका उल्लेख करते हुए श्री राम कहते हैं की अतिवादी विचारधारा अर्थात किसी भी तथ्य को लेकर अत्यधिक संकीर्ण मानसिकता तथा व्यवहार में लचीलापन न होकर और सहनशीलता अथवा किसी भी बात को सिर्फ अपने दृष्टि से देखना नितांत ही अहितकारी हो सकता है | जिसके हाथ में शासन व्यवस्था हो उसे अनुशासन के साथ साथ व्यावहारिक रूप से भी सशक्त तथा भेदभाव रहित कार्य करना चाहिए जो जन नेता अथवा शासक अपने दायित्वों से बचने का प्रयास करते हैं अपने द्वारा किए गए किसी भी गलत कार्य की जिम्मेदारी लेने की हिम्मत नहीं रखते वे कभी भी सफल नहीं हो सकते एक जननायक अथवा राजा को किसी भी स्थिति में अपने उत्तरदायित्व से मुक्ति नहीं मिलती और इस तरह की मानसिकता का नेतृत्व किसी भी

२१२- इक्ष्वाकु के वंशज , अमीश त्रिपाठी ,यात्रा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या ८४

समय संकट में पड़ सकता है; इसके विपरीत जो जननायक दायित्व को कुशलता पूर्वक ग्रहण करता है और इनके प्रति सजग रहता है वह प्रगति का पर्याय बनता है अच्छी तथा बुरी स्थिति दोनों में वह स्वयं को उत्तरदाई मांगता है किसी भी तरह के पक्षपात को वरीयता नहीं देता क्योंकि अपने द्वारा कहे गए किसी भी वक्तव्य के लिए वह स्वयं को उत्तरदाई मांगता है अपनी कही हुई बात को किसी और के ऊपर अन्यथा नहीं ठोकता उसके निर्णय अधिक होते हैं परंतु निर्णय लेने से पूर्व वह समाज तथा देश की प्रत्येक परिस्थिति के बारे में सघनता से विचार करता है उसका कोई भी निर्णय त्वरित नहीं होताकिसी निर्णय के विफल होने पर वह इतनी शक्ति भी रखता है कि उसके प्रभावों को स्वीकारते हुए उसकी जिम्मेदारी स्वयं ले उसका कोई भी विचार उसका कोई भी निर्णय एक तरफा या एकल नहीं होता है उसके अंदर अपने त्रुटियों को स्वीकारने का साहस भी होता है और उन त्रुटियों को सुधारने की इच्छा शक्ति भी वह बलपूर्वक, हठपूर्वक किसी भी नियम सिद्धांत अथवा संविधान को अपनी प्रजा के ऊपर नहीं सकता क्योंकि उसे तो सब कुछ सुलभ बनाना है ।

पुस्तक के अध्याय संख्या ग्यारह ,के अनुसार जब श्रीराम के हाथ नगर की व्यवस्था आ जाती है और इस के वर्ष भर के भीतर ही बेहतर परिणाम आने लगते हैं राम ने मुख्य समस्या को पकड़ लिया था कि अधिकांश लोग कानून व्यवस्था से अंजान थे कुछ को तो कानून की किताब स्मृति का नाम तक नहीं पता था ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सदियों के साथ उसमें कई परस्पर विरोधी कानून जुड़ते चले गए मनुस्मृति को तो सब लोग जानते थे, लेकिन अधिकांश लोग यह नहीं जानते थे कि इसके कई संस्करण थे जैसे वृहद मनुस्मृति और भी कई रूप लोकप्रिय हो चले थे याज्ञवल्क्यस्मृति, नारदस्मृति , स्तंभस्मृति, अत्रिस्मृति, यमस्मृतिव्यासस्मृति । अधिकारी कानूनों का अनौपचारिक विधि से प्रयोग करते थे न्यायालय में न्यायाधीश अपने जनसमुदाय के हिसाब से दूसरे कानूनों को जानते थे| दुविधा तो तब बढ़ जाती थे जब अधिकारी ने स्मृति के किसी दूसरे कानून के आधार पर एक ऐसा फैसला सुना दिया जो उस कानून से संबद्ध ही नहीं था इसका परिणाम भारी अव्यवस्था लाने वाला था अपराधी कानूनों में परस्पर विरोध के चलते निकल भागता था कई मासूम अनभिज्ञता की वजह से इस में फंसे रह जाते थे| राम समझ गए थे कि उन्हें कानून का साधारणी करण तथा एकीकरण करना पड़ेगा उन्होंने स्मृति का अध्ययन किया और फिर उसमें उचित तर्कसंगत सामंजस्य पूर्ण और प्राथमिक को चुना इस प्रकार अयोध्या के कानून सुनिश्चित किए गए दूसरी सभी स्मृतियों को प्रचलित कर दिया गया कानून को पत्थर की शिला पर गोदवा कर सभी मंदिरों में लगवा दिया गया और हर शीला के नीचे खासतौर पर बुधवा या गया कानून की अनभिज्ञता को जायज नहीं ठहराया जाएगा राम को जल्द ही आम लोगों ने सम्मानित उपाधि दे दी **'राम विधि दाता' |**

उनका दूसरा सुधार और ज्यादा क्रांतिकारी रहा उन्होंने अधिकारियों को बिना डर या पक्षपात कानून लागू करने का अधिकार दे दिया राम एक साधारण सा तथ्य समझते थे अधिकारी समाज से सम्मान की उम्मीद करते हैं इससे पहले इनके पास इसे कमाने का मौका नहीं था अगर वह कानून तोड़ने वालों के खिलाफ दे झिझक कार्यवाही करेंगे तो सामने वाला इतना ही ताकतवर क्यों ना हो इससे जनता में अधिकारियों का डर और सम्मान बढ़ेगा राम ने खुद कई बार यह करके दिखाया कि कानून के सामने सभी समान है कई बार ऐसा हुआ कि राम सांझ ढलने के बाद महल पहुंचे तब तक वहां के सभी द्वार बंद हो जाते दरबान ने राजकुमार को देखकर द्वार खोला तो राम ने उसे नियम तोड़ने के लिए फटकारा नियम था कि रात के समय किसी के लिए भी नगर के दरवाजे नहीं खोले जाएंगे रातों को राम महल के बाहर ही सोए और अगली सुबह अंदर आ पाए अयोध्या के आम लोगों में कई महीनों तक इस बात की चर्चा हुई |श्री राम का यह व्यवहार अपने आप में विशेष है नियम सबके लिए बनाया था स्वयं के लिए भी उसी नियम का पालन करना किसी भी पद का विशेष लाभ न लेते हुए एक आम नागरिक की तरह ही उसका पालन करना|

इतना साहस सब में नहीं होता; व्यक्ति के पास जब विशेष अधिकार आ जाते हैं तो वह उनका लाभ उठाना चाहता है| श्रीराम ने कभी भी अपने अधिकारों का किसी भी प्रकार से लाभ नहीं उठाया अपितु कष्ट कर परिस्थितियों में अपना जीवन जीने के बाद भी वे सदैव ही अपने कर्तव्यों एवं दायित्वों के प्रति सजग रहें समाज में एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जहां बिना कहे ही व्यक्ति हो यह सीख मिल जाए कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं|

बड़े आदमियों के दिल भी बड़े होने चाहिए यही तो आर्यों का प्रचलन है आपके जन्म से नहीं बल्कि कार्यों से आपकी पहचान होती है बड़ा होना जन्मसिद्ध अधिकार नहीं बल्कि यह बड़ी जिम्मेदारी है | २१३

उपर्युक्त पंक्तियों के अनुसार जिस आदमी के पास सत्ता या विशेष अधिकार हो ,उसका ह्रदय विशाल होना चाहिए अर्थात वह दूसरों की गलतियों को क्षमा कर सकें अपने द्वारा किए गए कार्य ही हमारी पहचान बनते हैं जन्म से हुई उत्तराधिकार मिलने से ही हमारे योग्यता साबित नहीं होती उस योग्यता को साबित करने के लिए उसको बनाए रखने के लिए जिस प्रकार के कर्म करने चाहिए बड़ी जिम्मेदारियों का निर्वहन करने वाला व्यक्ति धैर्यवान क्षमाशील तथा किसी भी स्थिति को संभालने में सक्षम होता है केवल धनाढ्य तथा शक्तिशाली परिवार में जन्म लेने से ही कोई बड़ा नहीं हो जाता अपने कर्तव्यों तथा दायित्वों का न्याय पूर्ण तरीके से पालन करने वाला व्यक्ति ही असल में बड़ा होता है ।

मैं अच्छा राजा बनना चाहता हूँ, नहीं तो मेरा यकीन मानिए मुझे राजा बनना ही नहीं है। २१४

माता कौशल्या से अनुशासन नियम कानून के संदर्भ में बातें करते हुए कौशल्या जी उन्हें व्यावहारिक होने की सीख देती हैं और पूछती हैं तुम राजा बनना चाहते हो या नहीं और इसके उत्तर में श्री राम अपनी इच्छा प्रकट करते हैं कि मैं एक अच्छा राजा बनना चाहता हूं नहीं तो राजा बनने का कोई भी अर्थ नहीं है सिर्फ राज करने के लिए मुझे राजा नहीं बनना यदि मेरे राजा बनने से अयोध्या की प्रजा को कोई सुख प्राप्त नहीं है तो ऐसी राजगद्दी पर बैठकर राजा कहलाने का मुझे कोई भी शौक नहीं है मैं सिद्धांत एक रूप से किसी भी गलत मार्ग का न तो स्वयं अनुसरण करूंगा और न ही किसी को करने दूंगा मुझे अयोध्या की न्याय व्यवस्था एक अनुशासित रूप से ही चलानी है और तभी मैं अपनी दृष्टि में एक अच्छा राजा बन पाऊंगा जहां सभी के लिए नियम कायदे एक समान हूं चाहे वह राज्य का आम नागरिक हो या राज परिवार का कोई सदस्य यहां तक कि मेरे लिए भी वही कानून लागू होंगे जो किसी आम नागरिक के लिए ।

यह मेरी जन्मभूमि है मुझे इससे और बेहतर बनाना है एक राजा या नागरिक अधिकारी या सामान्य नागरिक के रूप में मेरे जो भी कर्तव्य है मैं उन्हीं का पालन करुंगा | २१५

इसी प्रसंग में माता कौशल्या से कहते हैं के अपनी जन्मभूमि के लिए जो भी उचित विकल्प होगा मैं उसी विकल्प को चुन लूँगा| मैं इस राज्य का राजा बनता हूँ तो भी; और नहीं बनता हूँ तो भी एक सामान्य नागरिक के रूप में मेरे जो कर्तव्य अपने मातृभूमि के प्रति हैं| मैं उसका पालन करने से पीछे नहीं हटूँगा अयोध्या आज जिस भी स्थिति में है मुझे इससे इससे आगे लेकर जाना है इसकी स्थिति और सुदृढ़ करनी है ।

अध्याय ग्यारह के एक प्रसंग में जब श्री राम अपने पिता दशरथ से संवाद करते हैं जिसमे दशरथ पूछते हैं कि क्या तुम्हें शत्रुओं से डर नहीं लगता राम कहते हैं; कोई भी कानून से ऊपर नहीं है पिताजी धर्म से शक्तिशाली कोई नहीं हो सकता दशरथ यह बात सुनकर हंसने लगे और उन्होंने पूछा मैं भी नहीं इसके उत्तर में श्री राम कहते हैं एक सम्राट ने बड़ी खूबसूरत बात कही थी धर्म सबसे ऊपर है राजा से भी ऊपर धर्म तो खुद भगवान से भी ऊपर है दशरथ ने पूछा यह किसने कहा था श्रीराम ने विनम्रता से उत्तर दिया आपने पिताजी

२१३,२१४,२१५ - इक्ष्वाकु के वंशज, अमीश त्रिपाठी, यात्रा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या १००, ११०

धर्म तथा अनुशासन की समीक्षा करते हुए राजा दशरथ से श्री राम कहते हैं कि कानून और धर्म का पालन करने वाला व्यक्ति कभी किसी से डर नहीं सकता क्योंकि उसे भली-भांति पता है कि वह जिस पथ का पथिक है उसका गंतव्य निष्काम है उसे सही कार्य करने से कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती धर्म की पालना करना तो स्वयं भगवान से भी श्रेष्ठ है बातों ही बातों में राम दशरथ जी को इस बात का बोध करवाते हैं कि उन्हें ऐसा करने की सीख महाराज से ही मिली है कि कोई भी स्थिति हूं सामने कितना भी शक्तिशाली शत्रु हो परंतु धर्म का मार्ग कभी नहीं छोड़ना क्योंकि धर्म विचलित तो हो सकता है पर परास्त नहीं धर्म को डराया तो जा सकता है पर हराया नहीं श्रीराम अपनी योजनाएं बड़े सुनियोजित ढंग से बनाते थे पहले किसी भी स्थिति की समीक्षा करना उसके उपरांत जिस भी कार्य को वह विकल्प के रूप में देख रहे हैं उसके सभी पक्षों पर चर्चा करना मंत्रणा करना और अंत में वही निर्णय लेना जो सबके लिए हितकारी हो उन्होंने न तो जीवन भर स्वयं के लिए कोई विशेष सुविधा ली और न ही अपने परिजनों के लिए धर्म के मार्ग से कभी नहीं डिगे | श्रीराम के लिए अपयश का अर्थ मृत्यु ही था वे कभी भी ऐसे आचरण के पक्षधर नहीं थे जिसके कारण मनुष्य को स्वयं या उसके परिवार को लज्जित होना पड़े अथवा धर्म से विमुख होने का कलंक लगे अपयश की प्राप्ति से वे सदैव ही बचने की इच्छा रखते थे तथा अन्य लोगों को भी इसी प्रकार का परामर्श दिया करते थे|

उनकी दृष्टि में विधर्मी होने का अर्थ अपने कर्तव्य से मुंह मोड़ लेना था| धर्म पालना हेतु उन्होंने अपना सर्वस्व त्याग दिया परंतु धर्म को नहीं देगा उन्होंने आजीवन रघुकुल का मान बढ़ाने हेतु त्याग तप तथा संयम से कार्य किया किसी के द्वारा किए गए गलत कार्य के लिए उसे दंडित अवश्य करते थे अगर वह अपराध छम में है और व्यक्ति को अपने किए गए कार्य पर दिलानी है तथा बल सुधार का अवसर चाहता है तो वे सुधार का अवसर देने के पक्षधर थे परंतु वह कभी भी कोई गलत उदाहरण प्रस्तुत नहीं होने देना चाहते थे क्योंकि उनको पता था यदि एक बार किसी भी गलत चीज को यह गलत मार्ग अपनाया गया तो भविष्य में उसके परिणाम भयानक होंगे इसी कारण वे कभी भी न तो स्वयं किसी तरह के और नैतिक कार्य करते थे और न ही किसी को करने की अनुमति देते वह स्वभाव के जितने विनम्र तथा वाणी से जितने मृदुल थे नियमों का पालन करने हेतु उतने ही दृढ़ प्रतिज्ञ थे| श्री राम ने अपना संपूर्ण जीवन धर्मपालना तथा कानून व्यवस्था का दृढ़ता से पालन किया इक्ष्वाकु के वंशज के रूप में अपने कुल की परंपरा मान तथा गौरव को बढ़ाया सदैव ही धर्म का मार्ग अपनाया ।

५.७ सुलभ अग्निहोत्री के संस्कृति के रक्षक राम:-

सुलभ अग्निहोत्री की पुस्तक में श्री राम को आर्य संस्कृति के रक्षक के रूप में प्रतिबिंबित किया गया है| जिनकी व्यक्तित्व का निर्माण ही रक्षक के रूप में हुआ है| उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य किसी भी स्थिति में आर्य संस्कृति की रक्षा करना है और वह भी नियम तथा सिद्धांतों पर चलते हुए क्योंकि श्रीराम ऐसा मानते हैं कि जो व्यक्ति नियम तथा सिद्धांतों से विमुख हो जाता है| वह अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता साथ ही वे इस बात का विशेष रुप से ध्यान करते हैं कि उनके द्वारा तथा राज परिवार के द्वारा किसी भी इस तरह के कार्य को न किया जाए जिससे आर्यों की छवि धूमिल हो इस भावना के प्रति सजग दिखते हैं उनका आचरण उनका व्यवहार उनकी निर्णय लेने की क्षमता प्रत्येक कार्य में इस बात को ही प्रमुखता देते हैं अपने पूर्वजों की चली आ रही परंपरा का निर्वहन उचित प्रकार से करना है इसका भान उन्हें सदैव ही रहा वे अपने भाइयों को भी इसी प्रकार की सीख देते हैं क्योंकि जानते हैं राजपुरुष के कर्तव्य कठिन होते हैं|

परंतु विशेषाधिकार के रूप में प्राप्त यह दायित्व हमसे हमारी कुछ सामान्य अधिकारों को हमसे छीन लेते हैं एक साधारण नागरिक जिस कार्य को उन्मुक्तता से कर सकता है ,उसे राजपुरोहित भी कर पाए ऐसा संभव नहीं है क्योंकि राजपुरुष की अपनी मर्यादा होती हैं वह अपनी संस्कृति का रक्षक होता है प्रवर्तक होता है अतः उसे किंचित मात्र भी फूल नहीं होनी चाहिए अन्यथा उसका परिणाम पूर्वजों के साथ-साथ आने वाली पीढ़ियों को भी भुगतना पड़ता है उनका मन मस्तिष्क सदा वही इस बात को लेकर उद्धत रहता है कि उनके परिवार के द्वारा कोई भी ऐसा उदाहरण प्रस्तुत न हो जिससे उनको या संपूर्ण आर्य जाति को लज्जित होना पड़े बड़े से बड़े बलिदान के लिए भी तैयार हैं शौर्य तथा वीरता उनके ऐसे गुण हैं जो उन्हें संस्कृति के रक्षक के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं|

पुस्तक के अध्याय राम जन्म के अंतर्गत जब राज गुरु वशिष्ठ चारों कुमारों की जन्म कुंडली या बनाते हैं और उन्हें रघुकुल की कीर्ति पताका को और भी दीप्ति प्रदान करने वाला बताते हैं और साथ ही महारानी कौशल्या सुमित्रा और कैकई से कहते हैं कि "**आपके यह पुत्र साधारण नहीं है और इनमें भी जेष्ठ पुत्र राम धरती से रक्ष संस्कृति का समूल नाश करने वाला बनेगा** | २१६

रावण आज जो लंका पर अपना राज्य स्थापित कर अपनी विजय यात्रा आरंभ कर रहा है शीघ्र ही समूचे देवों और आर्यों के लिए बहुत बड़ा संकट बनने वाला है| राम देव और आर्यों को इस रावण नाम के आतंक से मुक्ति दिलाएगा| महामानव के जन्म के साथ ही उसकी जीवन यात्रा के लक्ष्य को परिभाषित कर दिया गया हो चिन्हित कर दिया गया हो उसके कर्म अपने आप में ही मानवता तथा धर्म की एक ऐसी परिभाषा करते हैं जो युगो युगो तक आदर्श के रूप में स्थापित होती है श्री राम का जन्म तथा उनके द्वारा किए गए कर्म अपने आप में श्रेष्ठतम हैं परंतु कहते हैं न राम से बड़ा राम का नाम और राम से बड़ा राम का काम अर्थात विक्रम ही तो है जिन्होंने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम राम बनाया महामानव राम बनाया देव पुरुष राम बनाया क्योंकि किसी भी परिस्थिति में असंभव से दिखने वाले कार्य को संभव कर देना निराशा को आशा में परिवर्तित कर देना और विश्वास को विश्वास में यही तो है राम और उनके काम एक संपूर्ण संस्कृति के रक्षक के रूप में अपने दायित्वों का आजीवन निर्वहन करना अपने द्वारा किए जा रहे प्रत्येक कार्य का गुण अवलोकन करना प्रत्येक स्थिति में सहज रहना इत्यादि न जाने कितने श्रीराम के व्यक्तित्व में समाए हुए हैं| वन्य महिषी द्वारा घायल होने पर श्रीराम के लिए चिकित्सा व्यवस्था की जाती है उनके घायल होने का समाचार सुनकर राजा दशरथ अत्यंत चिंतित होते हैं और कहते हैं कि श्रीराम का घाव ठीक तो हो जाएगा न? गुरु के द्वारा आश्वासन पाने पर राजा दशरथ की चिंता थोड़ी कम होती है और वे कहते हैं कि श्रीराम तो अभी बालक हैं उनके शरीर पर लगे हुए इस प्रकार के घाव न जाने कब तक भरेंगे और उनके चिन्ह उनके शरीर पर ही रह जाएंगे राजा दशरथ श्रीराम के प्रति चिंतित होते हैं,तो उनकी चिंता को दूर करते हुए श्री राम की पराक्रम से परिचित गुरु कहते हैं कि -

"आपके कुमार अब बालक नहीं रहे वह एक वीर योद्धा के रूप में विकसित हो चुके हैं, मुझे प्रतीत नहीं होता कि कौशल में कोई इनका सामना करने का सामर्थ्य रखता हो |" २१७

गुरु के ऐसे वचन सुनकर राजा दशरथ का सीना गर्व से चौड़ा हो गया| उस समय वे चक्रवर्ती सम्राट के रूप में नहीं एक पिता के रूप में गुरु के द्वारा कहे हुए वाक्यों की सुखद अनुभूति करते हैं कि उनका पुत्र इतना पराक्रमी है वीर है निडर है जैसा कि कोई भी पिता अपने पुत्र के बारे में सुनकर गौरवान्वित होगा|

---

२१६ -राम रावण कथा खंड-एक,पूर्व पीठिका, अध्याय रामजन्मसुलभ अग्निहोत्री,अंजुमन प्रकाशन २९५

२१७ -राम रावण कथा खंड -दो,दशानन,अध्याय-वशिष्ठ का प्रस्ताव, ,सुलभअग्निहोत्री रेडग्रैबबुक्स, पृ.सं १८३

यह एक सहज गुण हैं, जिसे प्रत्येक पिता अपने पुत्र में देखना चाहता है उसके और उसको उसकी वीरता को इस जगत में सम्मानित होते हुए देखना चाहता है| ठीक उसी प्रकार राजा दशरथ एक पिता के रूप में इस सुख की अनुभूति कर रहे थे| क्षत्रिय होने के कारण यह एक विशेषता या अनिवार्यता के रूप में प्रत्येक बालक के अंदर पाए जाने वाला गुण है, जिसके न होने पर उसके क्षत्रिय धर्म की पालना पर भी प्रश्न उठता है|

श्री राम के शारीरिक स्वास्थ्य पर चिंतित होते हुए एक पिता के रूप में जब राजा दशरथ अपनी चिंता व्यक्त करते हैं गुरु वशिष्ठ राम के शारीरिक सौष्ठव के बारे में राजा दशरथ को अवगत करवाते हुए कहते हैं कि आप उन्हें बालक न समझे वह एक वीर योद्धा के रूप में परिवर्तित हो चुके हैं और किसी साधारण योद्धा के रूप में नहीं अपितु एक ऐसे योद्धा के रूप में जिसका कौशलपुरी में कोई भी प्रतिद्वंदी नहीं हो सकता वे युद्ध कला में पारंगत हो चुके हैं विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र ओं का प्रयोग उत्तम प्रकार से करते हैं युद्ध कला की सभी सिद्धियां उन्होंने बड़ी सहजता से ही प्राप्त कर ली है और अपने पुत्र के बारे में गुरु वशिष्ट के विचार सुनकर एक पिता के रूप में राजा दशरथ को बड़ा मान मिलता है वे मन ही मन इस बात को लेकर प्रसन्न होते हैं कि कैसे सुकुमार सा दिखने वाला राजकुमार राम आज एक कुशल योद्धा बन चुका है जिसको लेकर उसके गुरु इतने आश्वस्त हैं; उस को हराने वाला इस साम्राज्य में कोई नहीं|

गुरुकुल में चारों राजकुमारों को भी अन्य छात्रों की तरह शारीरिकश्रम , भिक्षाटन आदि जैसे कार्य करने पड़ते थे इसी क्रम में एक दिन अपने भाइयों के बीच चल रहे हास परिहास को सुनने हेतु श्री राम लकड़ी काटने का काम छोड़ कर उनकी बातें सुनने लगते हैं उनका शरीर पसीने से लिप्त देख लक्ष्मण जी उनसे आग्रह करते हैं कि वे अपनी कुल्हाड़ी लक्ष्मण जी को दे दें और तनिक विश्राम करें लक्ष्मण जी अब तक लकड़ी का बचा एक लट्ठ काटकर उस कार्य को पूर्ण कर दें, इस पर श्री राम उनको साफ ही मना कर देते हैं उनके अनुसार गुरु जी के द्वारा यह निर्धारित हुआ है यह कार्य से राम ही करेंगे इसे कोई अन्य नहीं कर सकता वे कहते हैं की **“गुरुदेव ने यह कार्य मुझे सौंपा है यह मुझे ही करना है |”** २२९

अपने दाहिने हाथ में कुल्हाड़ी थामकर बाएं हाथ से लक्ष्मण को रोका लक्ष्मण ने फिर भी आग्रह किया लाइए यह कार्य मुझे करने दीजिए इस बात पर श्री राम उत्तर देते हैं कि **“मैं अपने देह की सुविधा के लिए गुरु की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करुंगा|”** २१८

उनकी ऐसा करने पर भरत जी लक्ष्मण से कहते हैं कि, **“लक्ष्मण क्या तुम नहीं जानते कि राम भैया गुरु,ब्राह्मणों तथा मुनिजनों की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करते उन की पालना करने में वे किसी भी प्रकार के तर्क को नहीं स्वीकारते|”**

श्रीराम कभी भी अपने व्यक्तिगत तथा पारिवारिक हित हेतु किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं करते थे अपने गुरु के द्वारा कहे हुए वचनों का अक्षर अंश पालन करते हैं, वे इस बात को नहीं स्वीकार करते कि गुरु ने उनको जो दायित्व दिया है उसका निर्वहन कोई और करें चाहे वे उनके अपने भाई ही क्यों न हो बाल्यकाल से ही श्रीराम में इस प्रकार का समर्पण इस प्रकार की मनोभाव न उनके रूप को परिलक्षित करती हैं| उन्हें किसी के देखने न देखने जानने या न जानने से कोई अंतर नहीं पड़ता था, उन्हें तो सिर्फ वही करना था जो धर्म के अनुसार उचित हो वह न केवल न्याय प्रक्रिया अथवा पद्धति में विश्वास करते थे अपितु आचरण द्वारा सबको यही सीख देते थे कि किसी भी स्थिति में नियम का उल्लंघन नहीं करना चाहिए| वह भी जब गुरुजनों तथा ऋषि-मुनियों ने किसी कार्य को करने हेतु आपको दायित्व सौंपा हो तो वह अपने आप में हैं|

२१८-राम रावण कथा खंड दो,दशानन,अध्याय-भविष्य के संकेत ,अध्याय-वशिष्ठ जाबालि संवाद ,सुलभ अग्निहोत्री रेडग्रैबबुक्स,पृष्ठ संख्या २५३

एक नियम है, जिसका उल्लंघन किसी भी स्थिति में नहीं करना चाहिए| उनका इतना दृढ़ प्रतिज्ञ होना सत्य निष्ठा होना उनकी परिपूर्णता का परिचायक है| पुस्तक के ३८वें अध्याय वशिष्ठ जाबालि संवाद के कथानक में जाबालि गुरु वशिष्ट से प्रश्न पूछते हैं श्री राम का शैक्षिक विकास किस रूप में हो रहा है ? अस्त्र-शस्त्र सभी प्रकार की शिक्षा- दीक्षा के महत्व पर वार्तालाप करते हुए वह कहते हैं **"सूर्यवंशी की प्रतिष्ठा ही नहीं समस्त आर्य, देव कुलों की प्रतिष्ठा श्री राम के चरित्र पर ही निर्भर करती है |"** [२१९]

श्री राम के चरित्र को कितना विशिष्ट एवं नेतृत्व से सुसज्जित करके देखा गया है, दो मनीषियों के संवाद में श्री राम का चर्चा बिंदु के रूप में रहना तथा उनके चरित्र की विशेषताओं को समस्त आर्य जाति के उदाहरण के रूप में देखना बिना किसी शब्द के ही श्रीराम के चरित्र तथा उनके व्यक्तित्व को परिभाषित करता है जिस समय रावण के आतंक के कारण संपूर्ण मानव जाति सहित देवता भी त्राहिमाम कर रहे थे उस समय श्रीराम का ऐसे योद्धा के रूप में शिक्षित होना तथा उनके गुरुओं का उन पर विश्वास होना उनके व्यक्तित्व की गहराइयों तथा ऊंचाइयों को प्रदर्शित करता है उन्हें इतिहास में सदैव ही एक ऐसे योद्धा के रूप में देखा जाएगा स्नेह उन्नत साधन ना होते हुए भी कोल भील वानरों के साथ उनमें आत्मविश्वास भरते हुए उस समय की सबसे सशक्त सेना के साथ युद्ध किया तथा विजय प्राप्त की यह उनके साहस का परिचायक नहीं तो और क्या है उनका किसी भी स्थिति में क्रोधित न होना परंतु किसी के द्वारा किसी पर अन्याय किए जाने पर उसको दंडित करने हेतु शस्त्र उठा लेना उनको अपने आप में ही युगपुरुष के रूप में स्थापित करता है ऐसे योद्धा के रूप में प्रसिद्ध है जो वीर होने के साथ-साथ मानवीय संवेदनाओ से भी परिपूर्ण था|

पुस्तक के अध्याय 'कुमारो का अभ्यास' के अंतर्गत लक्ष्मण जी तथा शत्रुघ्न आम के पेड़ पर चढ़े हुए अमिया तोड़कर एकत्र कर रहे होते हैं इसी बीच में राम का आगमन होता है और वे उनके द्वारा किए गए इस कार्य के लिए उन्हें सचेत करते हैं कि इस तरह का कार्य करना उचित नहीं है उनकी सुरक्षा को लेकर भी वे प्रश्न करते हैं कि यदि लक्ष्मण जी घायल हो जाते हैं तो इस कार्य का क्या लाभ होगा वह अपने भाइयों से इस
तरह के कार्य की बिल्कुल अपेक्षा नहीं करते हैं उनके हृदय में क्रोध तो नहीं है | क्रोध तो उनके लिए एक अपवाद ही रहा वह भी उस स्थिति में ही आता था जब किसी निर्बल के ऊपर किसी को अत्याचार करते हुए देखते| आश्रम का अनुशासन तथा नियम सबके लिए एक समान है यदि उनके भाई ही इस प्रकार अनुशासन को तोड़ेंगे तो अन्य विद्यार्थियों से क्या अपेक्षा की जाएगी यद्यपि आश्रम के अधिकांश विद्यार्थी यह नहीं जानते थे कि वे चारों सम्राट पुत्र हैं परंतु प्रश्न तो अनुशासन का था क्योंकि आगे जाकर भविष्य में इन्हीं चारों ने राज्य की बागडोर संभाल दी थी और यदि व्यवहार में ही इस प्रकार की अनुशासनहीनता निहित हो गई तो यह उनके आचरण के लिए कदापि उचित नहीं होगा उनके अनुसार यदि राज परिवार के सदस्यों को विशेष अधिकारों की प्राप्ति थी; तो उसके बदले में उन्हें बहुत कुछ त्यागना भी पढ़ता था और यह उनके कर्तव्यों में दिखना चाहिए संयम दृढ़ता आदि का पालन करते हुए| निःशंक- निर्द्वन्द उन्मुक्त आचरण, प्रसन्नता-अप्रसन्नता का सहज प्रदर्शन, मित्र मंडली में अनौपचारिक व्यवहार इन सब की स्वतंत्रता राज परिवार को त्यागनी ही होती है| श्री राम ने सदा ही जीवन भर त्याग किया देखा जाए तो उनका जीवन अन्य राजाओं की तरह राज्य से सुख भोगने के लिए था ही नहीं उन्होंने स्वयं को कष्ट देना श्रेयस्कर समझा परंतु अपने कुल के मान सम्मान तथा आर्यों के गौरव पर कभी भी आंच नहीं आने दी सीता हरण के उपरांत यदि वे चाहते तो अयोध्या में संदेश भेज कर वहां से सेना बुला सकते थे|

२१९-राम रावण कथा खंड दो,दशानन,अध्याय-भविष्य के संकेत ,अध्याय-वशिष्ठ जाबालि संवाद ,सुलभ अग्निहोत्री रेडग्रैबबुक्स,पृष्ठ संख्या १५८

राजा जनक से भी सहायता हेतु कह सकते थे परंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया यह अपने आप में ही इस बात को इंगित करता है कि उस महान व्यक्ति में संघर्ष करने की जो जीजिविषा थी उसका कोई अन्य उदाहरण नहीं हो सकता उन्होंने कभी किसी से सहायता नहीं ली परंतु स्वयं को इस तरह सुशिक्षित किया दूसरों के साथ इतना संयमित व्यवहार किया उनके कार्य अपने आप ही सुगम होते गए उन्होंने बड़े-बड़े राजाओं का मान सम्मान तो नहीं किया परंतु साधारण जनमानस का निर्बलों, दुर्बलों, शोषितों का सदैव ही मान सम्मान किया|

रावण जैसे अभिमानी दुराचारी तथा शक्तिमान राजा को भी बार-बार दूधों के द्वारा शांति संदेश तथा परामर्श भेजते रहे; उसको बार-बार उसके द्वारा किए जा रहे कृतियों को सुधारने का पर्याप्त समय दिया उसके दुराचरण उसके व्यभिचार पूर्ण व्यवहार जिससे कि समस्त देव लोक भी त्राहिमाम थे| उसको पाठ पढ़ाने हेतु उन्होंने रावण से युद्ध किया जीवन में एक ऐसा पाठ पढ़ाया जिससे उसको इस बात का ज्ञान हो कि वह सर्वशक्तिमान नहीं है उसका उसका अभिमान उसका दर्द ही उसके पतन का कारण है संपूर्ण मानव सभ्यता के रक्षक थे न केवल आर्य, न केवल देव, न ऋषि मुनि अपितु संपूर्ण जगत को उन्होंने अपने जीवन के द्वारा एक ऐसा संदेश एक ऐसा उदाहरण दिया जिससे निर्बल से निर्बल व्यक्ति भी स्वयं को सबल महसूस कर सकता है धर्म पर चलने की एक ऐसी सीख दे जो यह तो बताती है कि धर्म की राह सरल नहीं परंतु यह मार्ग ही हमें हमारे उस लक्ष्य तक लेकर जाता है| जहां हम स्वयं के साथ - साथ संपूर्ण मानवता को गौरवान्वित करते हैं अतः इन सब तथ्यों तथा उदाहरणों से यह बात अपने आप में ही सिद्ध होती है कि वे एक ऐसी संस्कृति के रक्षक है जो निर्माण में विश्वास करती है धर्म में विश्वास करती है मानवता में विश्वास करती है|

षष्टम अध्याय : उपसंहार

जिसके जन्म से ही ग्रह नक्षत्रों की चाल परिवर्तित हो गई हो ऐसे शिशु के आगमन से संपूर्ण अयोध्या नगरी ममतामई हो गई हो जिसके रूप को देखकर ही चित्त को शांति मिलती हो;जो इक्ष्वाकु के वंशज के रूप में रघुकुल की पताका को शोभायमान करता हो जिसका स्वभाव इतना सरल एवं सहज हो कि किसी के भी अंतर्मन को छू जाता हो; उसके प्रकाश से प्रकाशित होने से यह संसार कैसे बच सकता है| जो किसी भौगोलिक सीमा को न मानकर सांस्कृतिक राज्य का निर्माता हो जो राजा होकर भी वनवासी का जीवन जीता हो जो धन-धान्य का स्वामी होकर भी उनका उपभोग स्वयं के लिए ना करता उसको क्या कहेंगे क्या मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं कहेंगे जो मर्यादा में रहना जानता हो जो पुरुषार्थ को ही सफल मानता हो वही तो मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने का अधिकारी होगा| बाल्यकाल से गुरु के आदेश पर ऋषि मुनियों की सहायता करने हेतु वन के लिए जाना ऋषि मुनि तथा गुरुजनों के कहे हुए एक-एक शब्द का पालन करना किसी भी प्रकार के मानवीय तथा दैवीय कार्यों में बाधा बन रहे असुरों के समक्ष दीवार बनकर खड़े हो जाना और ऐसे असुरों को मारने में किसी भी प्रकार का संकोच ना करना किसी भी तथ्य किसी भी घटना को धर्म और धर्म के तराजू पर रखकर पालना और मात्र उसी तथ्य को ग्रहण करना जो धर्म के अनुकूल हो यह गुण तो है मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम की जिनके जीवन के वृतांत को अनेकों बार लिखा गया अनेकों बार सुना गया है और देखा गया मानव योनि में जन्म लेने के उपरांत भी वे महामानव कहलाए अपने दुख अपनी पीड़ा अपने संघर्षों को ना देखते हुए सदा भी दूसरों की पीड़ा कम की दूसरों को सहयोग दिया अपने साथ कार्य करने वाले सेनापतियों अधिकारियों को भील वानरों इत्यादि का उत्साहवर्धन किया उनको उनके द्वारा किए गए कार्य के लिए प्रोत्साहित किया स्वयं को इतना सरल एवं सहज रखा कि कोई भी व्यक्ति उनसे अपने हृदय की व्यथा कह सके| उन्होंने कभी भी अपने आप को किसी सीमा में बांधकर नहीं रखा अति साधारण व्यक्ति से लेकर विशिष्ट व्यक्तियों का उनकी अपनी पहुंची थी स्वभाव तथा विचार इतने सरल यह कोई क्रोध भी नहीं कर सकता था विनम्रता सहनशीलता तथा वाणी संयम जैसे गुणों आभूषणों से अलंकृत श्री राम स्वभाव तथा वाणी से जितने मृदुल थे कर्तव्य परायणता के मामले में उतने ही अनुशासित; दूरदर्शिता श्रीराम के गुणों में से एक महत्वपूर्ण गुण था जिससे वह किसी भी घटना के बारे में पूर्वानुमान लगाकर उससे होने वाले लाभ तथा हानि का आकलन करके ही अपने आगे की प्रक्रिया प्रारंभ करते थे इस प्रकार दूरदर्शिता के गुण के कारण है दे गुरुकुल से लेकर राजमहल तक वही निर्णय करते आए जो सबके हित में हो माता के कई द्वारा राम के लिए वनवास मांगने पर उन्होंने इसका मर्म भी समझ लिया और अपने हृदय में वनवासियों की मंगल की कामना लिए सहर्ष तैयार हो गए उनकी इसी दूरदर्शिता के कारण राज महल में मनमुटाव की परिस्थिति नहीं आई वे सभी योजनाओं का निर्धारण करके ही उनको क्रियान्वित किया करते थे|

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने गोस्वामी तुलसीदास जी को भारत का लोकनायक कहा था लोकनायक वह होता है जो समन्वय कर सके हमारे समाज को एक सूत्र में बांध सकें| समाज के बढ़ते हुए भेद को समाप्त कर सके, अनेकता की अनेक प्रवृतियां स्वाभाविक है परंतु अनेकता में एकता ही सबल और सक्रिय समाज तथा देश की पहचान होती है | आज के विषम परिवेश में तुलसीदास कृत रामचरितमानस के अनुच्छेद से अनेकता में एकता के तत्वों को पहचाना जा सकता है| विखंडित समाज को अखंड करके भारत के आदर्श से जोड़ा जा सकता है | तुलसीदास जी ने राम को आदर्श के रूप में समक्ष रखा है वह विशिष्ट हैं | शासन -सूत्र संबंधों से घिरे हुए क्षुद्र मनुष्य के हाथों में पड़ कर समाज को पतनशीलता की ओर ले जाता है|

राम सभी प्रकार से संबंधों से ऊपर उठे हुए आदर्श का नाम है तुलसीदास जी श्री राम को एक ऐसे राजा के रूप में प्रस्तुत करते हैं जो परम उदार हैं प्रजा वत्सल हैं| बिना किसी अपेक्षा के ही सबके प्रति सहानुभूति रखते हैं सबका कल्याण करते हैं| शासक के रूप में ऐसे राजाराम की अनिवार्यता प्रत्येक युग में अपेक्षित है| सनातन काल तक मानव समाज श्री राम जैसे शासक की प्रतीक्षा करता रहेगा| रामचरितमानस में वर्णित मानवीय संबंधों से परिचित होकर संभव है आत्म परिष्कार कर सकें| तुलसीदास जी की यह पंक्ति इस बात को सत्यापित करती है

कंदमूल फल सुरस् अति, दिए राम कहुँ आनि |
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानी || २२०

शबरी द्वारा दिए गए अत्यंत रसीले स्वादिष्ट कंदमूल और फल खाकर श्री राम जी बार-बार उनकी प्रशंसा करते हुए उन्हें प्रेम सहित ग्रहण करते हैं |प्रकृति द्वारा प्रदत कंदमूल तथा फल प्रकृति का ही अनुपम उपहार है परंतु श्री राम शबरी के उस प्रेम की सराहना करते हैं जिस प्रेम के वश में होकर शबरी ने चुन-चुन कर उन कंदमूल लो और फलों को एकत्र किया जो रस से भरे हुए तथा मीठे थे श्री राम यह भली प्रकार जानते थे कि शबरी के मन में उनके प्रति क्या भाव है और उसी भाव से विभोर होकर अपने प्रयास के अनुसार परिश्रम करते हुए उन्होंने वे खाद्य पदार्थ एकत्र किए थे यह बात श्रीराम के अंतर्मन को छू जाती है और विश्वरी के भावों को ग्रहण करते हुए उन रसीले कंदमूल तथा फलों की बार-बार प्रशंसा करते हैं यहां पर श्री रामचंद्र जी की उदारता प्रकट हो रही है| राम की यही उदारता हमारे समाज में फैले भेदभाव को मिटाने के लिए संजीवनी बूटी के रूप में कार्य करेगा| मनुष्य को मनुष्य की दृष्टि से ही देखा जाना चाहिए उसके पद प्रतिष्ठा तथा कार्य क्षेत्र के अनुरूप नहीं यदि मानवी जीवन में किसी तत्व का आधार होता है तो वह भाव अर्थात भावनाओं का क्योंकि हमारा व्यवहार हमारे संबंध सब इसी पर टिके हुए होते हैं किसी के साथ हमको कैसा व्यवहार करना है किसी के साथ किस वाणी में वार्तालाप करना है किसी के साथ हमारे संबंध कैसे होंगे वह सब हृदय के भावों पर ही निर्भर करता है|

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि आज के मानव समाज में रामचरितमानस अधिकांश रूप में प्रासंगिक है सामाजिक न्याय नारी की प्रतिष्ठा समाज को मुख्यधारा में लाने का प्रयोग अधिक से अधिक रचनात्मक हो सके तथा शांति व स्नेह के साथ हमारा समाज प्रगति पथ पर निर्भय होकर अग्रसर हो सके इसके लिए तुलसीदास कृत रामचरितमानस का अध्ययन अनिवार्य ही नहीं अपरिहार्य है|

श्री राम मन के भावों को ही महत्व देते थे| जिस व्यक्ति ने जिस रूप में उनको चाहा वे उसी रूप में उसे मिले |उनके अंदर व्यक्तित्व मूल्यांकन की अद्भुत शक्ति थी | एक कुशल प्रबंधक के रूप में वे भली-भांति जानते थे कि कौन सा कार्य किसके लिए उचित होगा| अपनी सेना तथा समाज में भी उन्होंने व्यक्तियों को उनकी कुशलता तथा दक्षता के आधार पर ही कार्य विभाग दिए थे ऐसा करते हुए वे अमुक व्यक्ति पर अपनी पूर्ण सहमति तथा विश्वास व्यक्त करते थे जिस कारण व्यक्ति अपने कार्य को पूरी तन्मयता से समाप्त करता था और उसके परिणाम दूरगामी एवं सुखद होते थे साथ ही उस व्यक्ति को इस बात की प्रसन्नता भी होती थी कि श्रीराम उस पर विश्वास करते हैं उन्होंने अपने जीवन में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उसके द्वारा किए

---

२२० -अरण्यकांड ,रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास जी ,गीतप्रेसस गोरखपुर , पृष्ठसंख्या ६११

गए कार्य हेतु श्रेय तथा धन्यवाद दोनों दिया| वे जानते थे कि अपनी क्षमता के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति याद जीव उनकी सहायता कर रहा है फिर चाहे वह चींटी हो गिलहरी हो या वनवासी| उनका जीवन पारदर्शी था |वे दूसरों के समक्ष भी वैसे ही थे जैसे असल में थे उनकी कथनी और करनी में एबी भेद नहीं था उन्होंने अपने जीवन में किसी भी प्रकार का दुराव-छिपाव वित्त सकारात्मक प्रेरक शक्ति की तरह सबके जीवन में प्रेरणा का माध्यम बने वे सकारात्मक सोच के स्वामी थे और इस सोच के कारण है उनके आसपास एक विशेष प्रकार की ऊर्जा विद्यमान रहती थी जिससे उनके आसपास रहने वाला व्यक्ति स्वयं है संचारित होता रहता था|

ब्रह्म ऋषि विश्वामित्र के साथ वन जाने से लेकर उनकी सांस्कृतिक यात्राओं तक उन्होंने कुल चार यात्राएं की विश्वामित्र जी के साथ वनों को राक्षसों से मुक्त कराना जनकपुर जाना चौदह वर्ष का वनवास काटना तथा राजा राम के रूप में सांस्कृतिक यात्रा करना, ये उनके जीवन के वह शक्ति स्तंभ रहे, जिसके द्वारा श्री राम ने अन्य राजाओं से अधिक आर्यवर्त को समझा| उनके सभी निर्णय जनहित में होते थे, उन्होंने अपने आप को एक परिधि या एक राज्य का राजा न मानते हुए सभी के साथ न्याय करने का साहस रखा अर्थात न्याय पाने के लिए श्री राम के राज्य का नागरिक होना ही आवश्यक नहीं था, कभी भी कहीं भी किसी को भी यदि इस प्रकार की आवश्यकता हुई तो श्रीराम ने उसका साथ दिया ही उसे न्याय दिलवाया ही क्योंकि वह मानते थे इस सफल व्यक्ति को सदा ही निर्बल की सहायता करनी चाहिए क्योंकि वह सहायता पाने का अधिकारी है | श्री राम का आदर्श व्यक्तित्व तथा उनका जीवन प्रबंधन अथवा जीवन को देखने का दृष्टिकोण एकदम सरल एवं स्पष्ट रहा असत्य तथा अधर्म को असत्य और अधर्म कहने में कभी नहीं चूके गलत बातों का खंडन किया | अत्याचार के विरुद्ध शस्त्र उठाए और वही मित्रों प्रजाजनों परिजनों आदि के प्रति वात्सल्य भाव भी रखा| किसी के भी दुख से दुखी हो जाते थे| वंचित को उसका अधिकार दिलाने के लिए सदा उद्यत रहते थे किसी भी स्थिति में किसी के अधिकारों का हनन स्वीकार नहीं करते थे उनके जीवन पर आधारित जितनी भी रचनाएँ पढ़ने को मिलती हैं, उन सब में भी उन्हें संबंधों का न्यायोचित रुप से पालन करते हुए ही पाया गया है | उनके व्यवहार की प्रमुख विशेषता थी, न तो किसी शुभ समाचार से अत्यधिक हर्षित होना और न ही किसी शोक समाचार से शोकाकुल होना अर्थात उनका संयमित व्यवहार जो उनके आचरण की प्रमुखता रही अपने इन्हीं गुणों के कारण वे मानवता की अंतिम पीढ़ी तक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम बनकर ही जनमानस के हृदय में निवास करेंगे | रामचरितमानस अर्थात राम के चरित्र का सरोवर अपने आप में ही उनके चरित्र की विशेषता उन्होंने एक पुत्र, पति,भाई, मित्र,सहयोगी,सहचर से लेकर सेनानायक,नरेश,जनसेवक, प्रजा पालक के रूप में अपने गुणों तथा अपने आदर्शों का सर्वोत्तम प्रकार से निर्वहन किया| रामचरितमानस के प्रत्येक कांड में उन्हें मानवीय संबंधों के विभिन्न रूपों में विभिन्न घटनाक्रमों में विभिन्न स्थितियों में संयमित रूप से अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए सामाजिक तथा पारिवारिक आदर्श के निर्माण में सहयोग देते हुए उसका आधार बनते हुए बताया गया है क्योंकि वे इस बात का विचार करते थे कि यदि मैं बड़ा भाई हो कर नीति विरुद्ध कोई आचरण करुंगा या गुरु तथा माता पिता की आज्ञा का पालन नहीं करुंगा तो मेरे अनुज भी ऐसा ही करेंगे | एक शिष्य के रूप में यदि गुरुकुल के नियमों का पालन नहीं करुंगा तो अन्य छात्र भी ऐसा ही करेंगे|

क्षत्रिय होने के नाते यदि राक्षसों के संहार हेतु विश्वामित्र जी के साथ नहीं जाता तो अन्य क्षत्रिय भी अपने कर्मों से विमुख हो जाएंगे, एक क्षत्रिय होते हुए भी ऋषि परशुराम के क्रोध को सहन नहीं करता हूँ तो अन्य राजा भी ऋषि मुनियों के प्रति इसी प्रकार का आचरण करेंगे| एक पुत्र होने के नाते यदि पिता के वचन का पालन नहीं करता हूँ , तो आने वाली पीढ़ी अभी स्वार्थवश ऐसा ही करेगी, यदि वन में रहकर वनवासियों के जीवन में किसी भी प्रकार के परिवर्तन का कारण नहीं बनता हूँ, तो समाज में बहुत बड़ा अंतर व्याप्त हो जाएगा|

यदि सुग्रीव का मित्र बनकर उसके भाई बालि का वध नहीं करता हूँ, तो अन्य भाई भी अपने भाइयों के साथ इसी तरह का दुर्व्यवहार करेंगे, यदि एक पति बनकर अपनी पत्नी की रक्षा करने हेतु उस का हरण करने वाले को दंड नहीं देता हूँ, तो संसार के अन्य पति भी इससे सीख लेते हुए इस प्रकार के किसी दुराचार का विरोध नहीं कर पाएगा| एक राजा के रूप में यदि अपनी प्रजा के लिए अच्छे जीवन स्तर का प्रबंध नहीं करता हूं तो अन्य राजा भी निरंकुश हो जाएंगे फिर क्या यह समाज दिशाहीन होने से बच पाएगा? निश्चित ही नहीं | अतः हम इस बात को प्रमाणित कर सकते हैं कि रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी और सदैव रहेगी|

रामचरितमानस श्रीराम के जीवन उनकी सोच उनके व्यक्तित्व उनकी कार्यशैली उनके व्यवहार उनके कर्तव्य का सार है यह अपने आप में एक संपूर्ण ग्रंथ है जो मानवीय मूल्यों तथा मानव जीवन को परिभाषित करता है इसके बारे में रहीम जी ने कहा है

रामचरितमानस विमल, संतन जीवन प्राण |
हिंदूआन को वेदसम, जमुनहि प्रगट कुरान || २२१

अर्थात रामचरितमानस हिंदुओं का वेद है; यह विमल है और संत जीवन का प्रत्यक्ष प्राण है| रामचरितमानस की समीक्षा, विवेचना, व्याख्या हम जिस भी रूप में करते जाए इतनी वृहद इतनी विस्तृत तथा अभूतपूर्व अनुभवों से परिपूर्ण है| डॉक्टर जॉर्ज ग्रियर्सन के अनुसार रामचरितमानस बाइबल से भी अधिक प्रभावशाली है| मानस के अनेक विदेशी अध्येता एवं रूपांतरकारों में यह मत प्रचलित है कि किसी भी ग्रंथ की तुलना में मानस विश्व साहित्य के उच्चतम ग्रंथों में किसी भी प्रर कम नहीं है| कविवर सुमित्रानंदन पंत जी की धारणा है कि यह इतिहास में महाकाव्य और महाकाव्य में इतिहास है| तुलसीदास की रामचरितमानस भक्ति मार्ग का सर्वोत्तम ग्रंथ समझा जाता है| इसकी भाषा सरल तथा कीर्ति विश्वव्यापी है | यह राम कथा अवधी में लिखी गई है जो कि संपूर्ण उत्तर प्रदेश में भी नहीं बोली जाती किंतु उसके मानस में सभी भाषाओं की सीमाओं को पार कर अपना प्रभाव विश्वव्यापी कर दिया| तुलसीदास जी स्वयं कहते हैं कि

सरल कबित कीरति विमल सोई आदरहिं सुजान |
सहज बयर बिसराई रिपु जो सुनि करहीं बखान || २२२

अर्थात उस कविता का आदर होता है,जो सरल हो जो सुबोध हो जिसमें निर्मल चरित्र का वर्णन हो जिसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक झगड़े को भूल कर प्रशंसा करने लगे कविता से कोई सीख ले सके उसको आत्मसात कर सकें भाषा की दृष्टि से मानस में शास्त्रीय और अलौकिक भाषा कि जुगलबंदी बहुत उत्कृष्ट प्रकार से किया गया और मानस की विशेषता यह है कि यह प्रत्येक व्यक्ति के यदि वह निरक्षर है तो उतनी ही सरल है उतनी ही ग्राह्य है | जिस प्रकार पंडित के लिए गूढ़ तथा अगाध सब समान है|

तुलसीदास जी ने अर्थ ,काम और यश की आकांक्षाओं से मानस को नहीं रचा , उनका उद्देश्य स्वांतः सुखाय होते हुए भी परांतः सुखाय है| वह इससे जनमानस का परिष्कार भी करना चाहते हैं भारतीय समाज का अधिक आधार पारिवारिक जीवन मानव के माध्यम से उन्होंने आदर्श गृहस्थ जीवन के लिए अनुकरणीय पारिवारिक चरित्रों का निर्माण किया है|

---

२२१ – रहीम के काव्य में धार्मिक लोक-विश्वास,गगनांचल रहीम विशेषांक, अनुराग शर्मा , पृष्ठसंख्या ७०

२२२ - बालकांड ,रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास जी ,गीतप्रेसस गोरखपुर , पृष्ठसंख्या १८

राम के चरित्र से उदात्त मानवीय गुणों और रावण से घोर भौतिकता अर्थात वैभव, अधर्म तथा धर्म की अवमानना तथा राक्षसत्व को उभार मिला| तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में समन्वय का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया है|

राम राज्य की समीक्षा एवं विवेचना:-

राम राज्य के बिना श्री राम के गुणों की विवेचना अपूर्ण है क्योंकि श्री राम की सोच समाज के प्रति उनके कर्तव्य तथा उनका व्यवहारिक ज्ञान ही साकार रूप में राम राज्य है किसी भी व्यक्ति के द्वारा लिए गए निर्णय एवं उसके द्वारा किए गए कार्यों को उसके व्यवहार तथा उसकी सोच से जोड़कर ही देखा जाता है अर्थात उसके द्वारा किया गया कार्य ही उसके आचरण का प्रमाण पत्र होता है|यह कहना असत्य नहीं होगा कि रामराज्य अर्थात सामाजिक-पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्रीराम की भूमिका अति महत्वपूर्ण है; रामराज्य एक ऐसी राज्य व्यवस्था के रूप में आज भी विद्यमान है जिसमें समाज के सभी पक्षों के साथ न्याय हुआ यदि किसी वर्ग को ऐसा लगा कि उसकी आवाज नहीं सुनी जा रही , शोषित है तो उस पर विशेष ध्यान दिया गया रामराज्य एक ऐसा राज्य जहां चारों वर्णों के लिए समान विचारधारा तथा समान भाव थे| चारों वर्णों के पुरुषों के स्नान के लिए घाटों की व्यवस्था होने के साथ-साथ स्त्रियों के लिए अलग घाट व्यवस्था इतना ही नहीं पशु पक्षियों के लिए भी घाट की व्यवस्था करना| प्रकृति पर्यावरण से लेकर कलात्मकता भवन निर्माण की उत्कृष्टता पर भी यथोचित ध्यान दिया जाना समाज के सभी वर्गों को संतुष्ट करना सामंतवादी विचारधारा न होकर समाजवादी विचारधारा का प्रवाह होना| सभी को अधिकार होना कि अपनी बात कह सके सभी को अधिकार होना कि वो राम से मिल सके चाहे वह स्त्री हो या पुरुष हो श्रमिक वर्ग का हो या व्यापारी वर्ग का समाज में कोई निर्बल न रहे इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा गया रोग व्याधि इत्यादि राम राज्य में कहीं स्थान नहीं पाते थे | किसी की अल्पायु में मृत्यु न होना| राजा बनने के उपरांत भी राजाराम का अनवरत अनेक स्थानों पर यात्रा करना, उन स्थानों पर रहने वाले लोगों की कुशल-क्षेम जानना उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना| भौगोलिक चक्रों का संतुलित होना शत्रु पक्ष के साथ भी श्री राम का मित्रवत व्यवहार होना आदि अनेक ऐसे निष्कर्ष निकलकर आते हैं जो राम राज्य को परिभाषित करते हैं| रामराज्य सदैव ही कुशल शासकों का स्वप्नराज्य रहा है|

श्री राम की छवि लोकपाल की छवि है और इसकी स्वीकारोक्ति समय-समय पर सभी साहित्यकारों , विद्वानों तथा विचारकों ने की है राम राज्य के बारे में चौदहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध कवि और शायर अमीर खुसरो ने भी कहा है इस विश्व का प्रत्येक सर्वसाधारण राज्य की और सामाजिक व्यक्ति यह जान ले कि मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु श्री राम एक शानदार तथा स्मरणीय शख्सियत हैं राम मेरे मन में हैं और मुझसे कभी भी जुदा नहीं होंगे और मैं जब भी बोलूंगा राम-राम अवश्य बोलूँगा राम नाम की महिमा क्रांतिकारी कवि कबीर की वाणी में भी पाते हैं|

राम मिले निर्भय भया रही न दूजी आस |
जाई सामना शब्द में राम नाम विश्वास || २२३

राम का मिल जाना ही निर्भय होने के लिए पर्याप्त है राम विश्वास का ही पर्याय हैं| विश्वास न्याय का, विश्वास समानता का, विश्वास सबलता का जिसके नाम में ही अदम्यसाहस, शांति, परस्परसहयोग, दृढ़ता इत्यादि

---

२२३ – रामराज्य की कल्पना के निहितार्थ , ई- जागरण , पवन गुगनानी

गुणों का समन्वय हो वह अपने आप में ही सर्वोच्च उदाहरण होगा| श्रीराम का व्यवहार तथा उनकी नीतियाँ सदैव ही धारण करने योग्य रही हैं| वे सामंतवाद तथा भाई भतीजावाद को बिल्कुल भी पसंद नहीं करते थे उनके अनुसार जो सुयोग्य हो उसको उसके लायक कार्य तथा अधिकार क्षेत्र अवश्य मिलना चाहिए|

श्री राम के लिए कोई परिचित अपरिचित नहीं था उनके लिए दायित्व के अनुसार योग्यता तथा दक्षता ही महत्व रखते थे| वे न्यायिक प्रणाली में विश्वास रखते थे और उनका आचरण आजीवन न्याय प्रणाली के साथ ही सम्बद्ध रहा उनके लिए राजवंशी होना या राज परिवार का सदस्य होना मात्र ही योग्यता का आधार नहीं था अपने क्षेत्र में विशेषता अपनी संस्कृति का संवाहक होना तथा धर्म अधर्म के बीच का अंतर सामने वाला व्यक्ति ही सक्षम होता था विपरीत परिस्थितियों में भी यदि व्यक्ति का चरित्र शुद्ध रहे| उसकी वाणी उसके व्यवहार पर उसका संयम रहे तो वह व्यक्ति अवश्य ही योग्य होगा विषम परिस्थितियों या विपरीत परिस्थितियों में आकर अपने आदर्शों के साथ समझौता करने वाला व्यक्ति कभी भी अपने पद तथा दायित्व के साथ न्याय नहीं कर सकता श्रीराम के जीवन में अनेक ऐसे अवसर आए जब वे चाहते तो सहायता तथा संसाधनों को सरलता से जुटा सकते थे परंतु उन्होंने उस स्थिति के अनुसार ही कार्य किए अपने आप को साधारण व्यक्ति के रूप में ही प्रदर्शित कर हम सब को यह सिद्धि कि यदि जीवन में कभी निर्वाचित होना पड़े तो भी धर्म का साथ न छोड़े आजकल थोड़ी सी कठिनाई आने पर लोग विचलित हो जाते हैं भ्रष्टाचार जमाखोरी घूसखोरी जैसे अपराध करते हैं और उसका ठीकरा अपनी मजबूरी और गरीबी के नाम पर फोड़ते हैं क्या उनके लिए श्री राम का जीवन एक सीख नहीं हो सकता? जिसने सब कुछ छीन जाने के बाद भी असत्य तथा अधर्म को छुआ तक नहीं दृढ़ता से अपने मार्ग पर अटल वीर की भांति चलते रहे और उसका परिणाम क्या हुआ वह हम सबके समक्ष है; वे आज भी पूजनीय हैं वंदनीय हैं उनका आचरण सराहनीय है अनुकरणीय है| अपने उन्हीं पर आदर्श पुरुष श्री राम के जीवन उनके आचरण तथा उनके रामराज्य से सीखने को बहुत कुछ है| आज जहां हम अपनी परंपराओं पद्धतियां संस्कारों के प्रति उदासीन हो रहे हैं वहीं प्रभु श्री राम ने हर उस परंपरा का पालन किया जो उनके पूर्वजों से उन्हें मिली उस रघुकुल की परंपरा में प्राण देना तो सरल था परंतु वचन को तोड़ना नहीं उसी परंपरा का निर्वहन करते हुए प्रभु श्री राम ने अपना राजपाट सुख हो गए हो परिवार सब कुछ त्याग दिया परंतु वचन तथा धर्म की पालना हो अपना सर्वस्व देकर भी निभाया| वनवास से लेकर जल समाधि लेने तक श्री राम ने कभी एक क्षण के लिए भी अपने उत्तरदायित्व को नहीं त्यागा यदि निकटता से हम उनके जीवन को देखते हैं तो हम कोई भी एक ऐसा पल नहीं पाते जब श्री राम अपने बारे में सोच रहे हैं या कोई भी ऐसा कार्य कर रहे हैं ,जिससे उन्हें व्यक्तिगत रूप से लाभ हो वे सदा ही सब के बारे में सोचते थे सबका हित सोचते थे तथा सब के लिए कार्य करते थे| रामचरित मानस की चौपाइयों में राजधर्म को उद्धृत करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है-

मुखिया मुख सो चाहिए खानपान कहूं एक |
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक || २२४

अर्थात् राजा को अपने समाज के मुख के सदृश्य होना चाहिए जैसे मुख अन्न को ग्रहण करता है और उसका प्रभाव अन्य अंगों के पालन-पोषण पर समान रूप से होता है| ठीक इसी प्रकार से राजा को होना चाहिए वो अपने राज्य का मुख होता है जिसके द्वारा किए गए कार्य का प्रभाव पूरी राजव्यवस्था पर पड़ता है अतः उसे विवेकवान होना चाहिए|

---

२२४ – अयोध्या कांड ,श्री राम चारितमानस , गोस्वामी तुलसीदास जी , गीतप्रेस गोरखपुर , पृष्ठसंख्या ५५६

इसी प्रकार राजा शासक होकर जनता से कर शुल्क उपहार ग्रहण करता है एवं इससे राजकोष का संचालन इस प्रकार करता है कि संपूर्ण राज्य का पालन-पोषण समान रूप से हो सके यह राज धर्म का एक अंश है| रामराज्य में व्यक्ति से अधिक उसके गुणों को प्रमुखता दी गई है, वहां विचारों का अधिक महत्व रहा है| व्यवस्था से किसी भी प्रकार का समझौता नहीं किया गया| जहाँ प्रजा-रक्षण और पोषण का कार्य कोई व्यक्ति नहीं अपितु विचार करते थे| श्रीराम ने कभी भी व्यक्ति पूजा पर बल नहीं दिया, वे विचारों के पूजक थे सिद्धांतों के पूजक थे और यही व्यवस्था हमें राम राज्य में देखने को मिलती है जहां से राम के अंदर कभी भी किसी राजपाट धन वैभव का लोभ नहीं रहता| वे प्रजा के भरण-पोषण को साधना के रूप में देखते थे | प्रजा को किसी भी प्रकार का कष्ट न हो शारीरिक, मानसिक या आत्मिक और प्रजा के सुख को बनाए रखने के लिए समाज में सामंजस्य बनाए रखने के लिए उनको जो कुछ त्यागना पड़ा उन्होंने त्यागा | वे कभी भी वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के लिए ऐसा उदाहरण प्रस्तुत नहीं करना चाहते थे जिस को आधार बनाकर कोई भी यह कह सकें कि अगर अयोध्या नरेश श्री राम ऐसा कर सकते हैं तो मैं क्यों नहीं उन्होंने ऐसा उदाहरण बनाया कि लोग कहते हैं कि श्रीराम ने ऐसा किया तो मुझे भी करना चाहिए उन्होंने त्याग किया तो हम भी त्याग कर सकते हैं उन्होंने धर्म की पालना की तो हमें भी धर्म का पालन करना चाहिए जिस प्रकार साहित्यकारों लेखकों तथा इतिहासकारों में श्री राम को लेकर अलग-अलग प्रकार की सोच है कल्पनाएं हैं ,परंतु रामराज्य एक ऐसी शासन व्यवस्था के रूप में विद्यमान है जिसके आगे सभी नतमस्तक हैं| किसी भी कार्य को करने वाले व्यक्ति को उसका श्रेय देना उसके मान सम्मान को बनाए रखना उस तक अपनी पहुंच रखना और अपने तक उसकी पहुंच रखना स्वयं को उसके समान मानते हुए उसके मनोभावों से परिचित होना और उसी आधार पर एक राजा के रूप में उचित निर्णय लेना कि इसका प्रभाव प्रजाजनों पर कैसा पड़ेगा श्री राम के ऐसे राजा के रूप में सदृश्य होते हैं जो हृदय से कोमल परंतु धर्म के मार्ग पर अडिग रहने वाला है राम राज्य के सभी व्यवस्थाएं सामाजिक ताने-बाने लोगों के कार्य विभाग गुप्तचर व्यवस्था समाज के सभी वर्गों में समानता इत्यादि वह गुण हैं जो किसी भी शासन व्यवस्था को सर्वोत्तम बनाने के लिए पर्याप्त हैं | रामराज्य अर्थात सुराज्य निश्चित रूप से रामराज्य को शासन व्यवस्था का स्वर्ण युग कहा जा सकता है राजा सहित सभी प्रजाजनों का धर्म परायण होना सर्वत्र आदर्श व्यवस्थाएं तथा आदर्श संस्कार रामराज्य एक सांस्कृतिक साम्राज्य था; उसे मर्यादित राजतंत्र भी कहा जा सकता है| जिसका मूल लोकतंत्र हो अर्थात प्रजा के विचारों की पूर्ण प्रमुखता राजा भी अपने निर्णय प्रजा की रुचि-अरुचि को ध्यान में रखकर करता हो रामराज्य संस्था का सर्वोत्तम उदाहरण था है और सदैव ही रहेगा| रामराज्य श्री राम के व्यवहार तथा उनकी सोच का सजग उदाहरण है| श्री राम एक व्यक्ति के रूप में जिस प्रकार से सोचते थे| वह सब उनके व्यवहार में समाहित था और उसकी सोच के आधार पर रामराज्य की स्थापना हुई| यह मात्र एक शासन व्यवस्था नहीं अपितु श्री राम के सामाजिक पारिवारिक आदर्श का जीता जागता प्रमाण है किस प्रकार व परिवार के साथ साथ समाज के प्रति भी अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए एक ऐसे आदर्श रूप को स्थापित करते गए| जिसकी समानता आज तक कोई भी नहीं कर पाया ,परंतु इसको स्थापित का लक्ष्य अवश्य होना चाहिए| रामराज्य को यदि हम श्रीराम का प्रतिबिंब बोले तो अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि उनके राज्य में हर वह व्यवस्था थी जो उनकी विचारधारा में थी| हर प्रकार का उपक्रम उपस्थित था जो बस सोचते थे सामाजिक व्यवस्था राजनैतिक व्यवस्था आर्थिक व्यवस्था और मानव जीवन को पल्लवित-पोषित करने वाले कोई भी व्यवस्था जिससे उसका जीवन कहीं न कहीं किसी न किसी आयाम में फलता फूलता है हर उस दृष्टिकोण के बारे में भी सोच लेते थे उस पर कैसे कार्य करना है उसकी पूर्व नियोजित रूपरेखा बनाकर ही उसको कार्य का रूप प्रदान करते थे|

उनके राज्य में कम आय वर्ग के लोगों की चिंता पूर्णरूपेण होती थी इस प्रकार के प्रबंध किए गए थे कि यदि किसी परिवार की आय कम हो तो भी उसको जीवन की मूलभूत सुविधाएं सरलता से प्राप्त हो सके; उसके लिए सभी साधन सहज रूप से उपलब्ध हो, जिससे उसके परिवार में आत्मिक संतोष बना रहे उसके पारिवारिक स्वास्थ्य पर किसी भी प्रकार का दुष्प्रभाव न पड़े बच्चों के अध्ययन भरण पोषण आदि की समुचित व्यवस्था हो इसके लिए पूरी सामाजिक प्रणाली की रचना ही इस प्रकार की गई थी कि प्रत्येक परिवार तक सभी सुविधाओं की बहुत हो सके सभी साधनों का उपयोग सभी योग्य लोग कर सकें जितने भी कार्य किए जाते थे या जितने भी निर्णय लिए जाते थे सभी में धर्म का समावेश था अर्थात् कोई भी कार्य धर्म से विमुख नहीं था लोगों के संतुष्टि के आधार पर ही लोकमत का निर्माण होता था| जिसका राम राज्य में सर्वोच्च स्थान था रामराज्य किसी विशेष कुशलता या दक्षता की मांग नहीं करता वह मानवीय मूल्यों तथा सुदृढ़ सामाजिक संरचना को ही आधारभूत तत्वों में गिनता है| रामराज्य का अर्थ है स्वराज्य ,धर्म राज्य ,लोक राज्य और ऐसा राज्य तो तभी संभव है जब साधारण लोग भी धर्म निष्ठा और वीर्यवान बनें क्योंकि जो समाज की रचना है जो राष्ट्र की रचना है उसमें समाज के लोगों का महत्वपूर्ण योगदान है उनके संस्कार तथा उनके चरित्र पर हैं समाज तथा राष्ट्र की संरचना निर्भर है| यदि समाज का कोई व्यक्ति अनैतिक चरित्रहीन या देशद्रोही है तो उस समाज की उन्नति संभव नहीं तो रामराज्य तो एक स्वप्न ही हो सकता है| रामराज के अवयव के रूप में यदि हम राम राज्य के साथ को समझने का प्रयास करें तो उसमें तुलसीदास जी द्वारा रचित दोहा

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग |
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहि भय सोक न रोग || २२५

प्रमुख भूमिका निभाता है क्योंकि इसके अर्थ के अनुसार राम राज्य में प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन को वर्णन एवं आश्रम के और आधार पर व्यतीत करता था और उसी के अनुसार अपने कार्य करता था| इसी कारण सामाजिक व्यवस्था, स्वास्थ्य ,व्यापार तथा पर्यावरण सुरक्षित एवं संरक्षित था| परिस्थितिकी तंत्र में किसी भी प्रकार का असंतुलन नहीं जाता था सभी तारे सभी आयु सभी जीवो तथा सभी लोगों में परस्पर अनुपात के कारण राम राज्य में व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से जारी करना तथा उनका पालन करवाना सरल था परिस्थितिकी तंत्र में किसी भी प्रकार का असंतुलन नहीं था| सभी आयु वर्ग तथा वर्णों में परस्पर सहयोगी अनुपात के कारण राम राज्य में व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से जारी करना तथा उनका पालन करवाना सरल था| राम राज्य का आधार नीति और मर्यादा पर आधारित एक ऐसा राज्य था जिसमें कर्म को ही धर्म माना जाता था और उस धर्म से कोई विमुख नहीं हो सकता था कोई भी नागरिक अपनी पुरुषार्थ से विमुख नहीं हो सकता था| धर्म अर्थ काम मोक्ष अर्थात धर्म से नीतियों पर चलते हुए अर्थ को कमाना तथा लक्ष्मी की प्राप्ति करना अपने सामर्थ्य के अनुसार अनुशासन का पालन करते हुए कर इत्यादि को राजकोष में जमा करना सभी का एक दूसरे की सहायता करना कुटुंब व्यवस्था का संचालन सुचारू रूप से करना सभी आयु के बालक बालिकाओं को शिक्षित करवाना उनको उनके रूचि के अनुसार विषय चुनने की स्वतंत्रता देना जिससे आगे चलकर वह एक कुशल नागरिक के रूप में अपने राज्य अपने राष्ट्र को सेवा दे सकें| ऐसे ही दायित्व प्रजा के लिए नियत किए गए थे क्योंकि मात्र राजा के ही सब कुछ करने से कोई शासन व्यवस्था सुचारू नहीं हो सकती इसे अनुशासित रूप से चलाने के लिए प्रजा का सहयोग तथा प्रजा का अनुशासित व्यवहार नितांत

---

२२५ – उत्तरकाण्ड, रामचरितमानस ,गोस्वामी तुलसीदास जी ,गीतप्रेस गोरखपुर , पृष्ठसंख्या ८५३

आवश्यक है| जहाँ राजा से लेकर ऋषि-मुनि, ऋषि-मुनि से लेकर व्यापारी और व्यापारी से लेकर श्रमिक तक को यह भली-भांति ज्ञात हो कि उसके कर्तव्य क्या है उस से क्या अपेक्षाएं हैं? उसे अपने आप को किस रूप में प्रमाणित करना है तथा किस प्रकार नागरिक होने का कर्तव्य निभाना है; तो उस राज्य में सुशासन ही होगा क्योंकि वहां पर पारदर्शिता है और जहां पर पारदर्शिता होती है वहां पर कुछ नहीं असंभव नहीं| जहां राजा का जीवन सार्वजनिक है वहां प्रजा का आचरण भी उसी के अनुकूल होना चाहिए अपेक्षाओं का स्तर थोड़ा बहुत कम अधिक तो हो सकता है पर असामान्य रूप से इसमें एक वृहद अंतर नहीं हो सकता|

श्री राम मात्र ऐतिहासिक पुरुष नहीं थे| वे मानवता तथा नैतिकता का अकाट्य साक्ष्य हैं क्योंकि वे नैतिक मर्यादा के सबसे बड़े स्रोत थे| यदि हम रामनाम का जाप भी करते हैं तो वह भी अमोघ होता है इस जाप से हम अपने भीतर के ईश्वरत्व को पुकारने की प्रक्रिया के रूप में भी देख सकते हैं| वे एक धर्म तक ही सीमित नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के हैं; चाहे संस्कृति ,भौगोलिक भिन्नताएं ,चाहे देश अलग-अलग क्यों न हों, परंतु श्री राम के द्वारा स्थापित किए गए मूल्य आज भी अमूल्य है|

अतः श्री राम को किसी सीमा में नहीं बांधा जा सकता वे असीमित हैं| मानसिक तथा आत्मिक सुख व संतोष का आधार है क्योंकि उनका चरित्र हमें हमारे दैनिक जीवन में भी निर्णय लेने की क्षमता हेतु प्रेरित करता है| चाहे समाजवाद हो या प्रजातंत्र चाहे राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया, उनकेराज्य में प्रत्येक व्यक्ति के पास इन में भाग लेने की सहभागिता और अभिव्यक्ति का अधिकार सुरक्षित था| प्रेम तथा सद्भाव उनकी राज्य की नींव थे ऐसा नहीं था कि विरोध नहीं हुआ अथवा किसी बात के विपक्ष में कोई संवाद नहीं हुआ परंतु उसको तथ्यों के आधार पर सुलझाना उसके समीक्षा करना तथा पुनः उसको क्रियान्वित करना यह रामराज्य का सतत चलने वाला उपक्रम था,अर्थात मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया थी; जो व्यक्ति विशेष से होते हुए सभी अधिकार तथा दायित्व क्षेत्रों में क्रमशः चलायमान थी| रामराज्य एक ऐसे प्रतिबिंब के रूप में प्रकट होता है, जो श्री राम कि सुविचार एक अवधारणा से हम सबको अवगत कराता है क्योंकि उन्होंने अपने राज्य में वह सब संभव करके दिखाया जो कभी युवराज होते हुए सोचा होगा , वनवास का उनका अनुभव ,गुरुकुल से मिली हुई शिक्षा तथा जीवन को देखने का उनका दृष्टिकोण पूर्वजों से मिली हुई वैचारिक धरोहर इन सब का समन्वय था रामराज्य |श्रीराम के जीवन में जब -जब परिस्थितियां प्रतिकूल हुई धर्म पर चलने का उनका संकल्प और गहरा होता गया| अनेक प्रकार की बाधाएं अनेक प्रकार की विपत्तियां उन्होंने अपने जीवन में देखी और उनका अनुभव किया विषम परिस्थितियों में भी किसी कार्य को सार्थक कैसे किया जा सकता है यह प्रभु श्रीराम के जीवन से सीखने योग्य है | उन्होंने मानव जाति को एकता के सूत्र में बांधना और एक स्पष्ट अंतर दिखाया धर्म अधर्म के बीच में प्रत्येक स्थिति में धर्म के पथ पर अडिग रहकर चलने वाले श्री राम अपने जीवन से यही सीख देते हैं कि कितनी भी बाधाएं आए कितनी भी विपत्तियां आए परंतु हमारा विश्वास नैतिकता और अनैतिकता के बीच का अंतर हमारे स्वयं के दृष्टिकोण में स्पष्ट होना चाहिए| यदि हम धर्म के मार्ग पर है तो हमें विचलित करने के अनेक प्रयास किए जाएंगे| परंतु अंततः विजय धर्म की ही होगी यदि हमारे पास कोई राजकीय धार्मिक शासकीय दायित्व है तो हम दोगुना उत्तरदाई हो जाते हैं क्योंकि तब हमें सामंजस्य और संतुलन बनाए रखते हुए ऐसे निर्णय तथा कार्य करने होते हैं जो सार्थक हो| श्री राम के जीवन से हम यह भी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं कि अधिकार तभी प्राप्त होते हैं| जब हम अपने उत्तरदायित्व का निर्वाहन बिना किसी स्वार्थ के करते हैं| एक अधिकारी या प्रशासक के रूप में आप जनमानस का प्रेम तथा विश्वास तभी जीत सकते हैं; जब आप अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन निष्कपट होकर करें ,न्याय अन्याय के बीच के भेद को समझते हुए न्याय पूर्ण आचरण करें दूरदृष्टा हों अपने संकल्पों को पूर्ण करने की क्षमता प्रत्येक स्थिति में हो चाहे वे अनुकूल हो या प्रतिकूल|

उनके जीवन में राज महल से लेकर वनवास और पुनः राज्य अभिषेक तक हम विभिन्न स्वभाव के लोगों को विभिन्न प्रकृति के लोगों को उनके आसपास देखते हैं| श्री राम सबके बीच सामंजस्य बिठाकर किसी भी योजना को क्रियान्वित करने का एक विशेष गुण रखते थे प्रत्येक पल उनके साथ परेशानी के रूप में रहने वाले लक्ष्मण जी अत्यंत क्रोधित स्वभाव के थे परंतु श्री राम हर बार उनके क्रोध की ज्वाला को अपने मोहक मुस्कान और विनम्र शब्दावली के द्वारा शांत करते थे| कोल-भील, वनवासी से लेकर रावण के राज्य के अनेक दूत तथा रावण के परिजन सबसे ही उनका संवाद उच्च स्तर का रहा उनके हृदय में कभी भी किसी के लिए कोई द्वेष या किसी प्रकार की शत्रुता नहीं रही| वह केवल मुख्य विषय पर अपना ध्यान केंद्रित रखा करते थे जिससे कार्य में सुगमता तथा तीव्रता आती थी और उनके सभी कार्य पूर्ण होते थे| जो कि लगभग असंभव से प्रतीत होते थे वरना एक राजकुमार का एक वनवासी के रूप में दक्षिण दिशा की ओर जाना जहां से उसका कोई सीधा संबंध भी न हो वहां के जनमानस तथा वनवासी के साथ सामंजस्य बिठाना पशु- पक्षियों तथा वन के वातावरण को समझना ऋतुओं के प्रभाव, भौगोलिक स्थिति का ज्ञान इन सब को समझते हुए इन सब के साथ कार्य करते हुए एक पूरी सेना का निर्माण कर लेना ताकि रावण को यह बताया जा सके कि उसका अभिमान उनकी एकता के आगे कुछ नहीं है| सीता जी को ससम्मान वापस लाना तथा सभी को ससम्मान यथा योग्य भेंट देकर विदा करना| राज्य-अभिषेक के समय केवट को याद करना उसके लिए विशेष भेंट भेजना और भी न जाने कितने ऐसे प्रसंग और घटनाक्रम हैं जिससे हम प्रभु श्री राम की सोच उनके अंतर्मन तथा उनके व्यवहार का गहन अध्ययन करते हुए उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम तथा पारिवारिक-सामाजिक आदर्श की भूमिका में पाते हैं|

परिशिष्ट

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

आधार ग्रंथ:-

१ - रचित रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास जी, टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार गीता प्रेस गोरखपुर

२ - श्रीमद्वाल्मीकि रामायण, महर्षि वाल्मीकि, अनुवादक -चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा,प्रकाशक रामनारायण लाल पब्लिशर

३ - श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण रामायण भाषा,श्री पंडित राम लग्न पांडे विशारद,ठाकुर प्रसाद प्रकाशन

४ - रामायण के ज्योति-स्तंभ, लेखक श्रीनिवास शास्त्री, अनुवादिका श्रीमती सुशीला भटनागर, वीणाप्रकाशन

५ - राधेश्याम रामायण, राधेश्याम कथावाचक, श्री राधेश्याम पुस्तकालय

६ -तत्वार्थ रामायण,श्री रामचंद्र केशव डोंगरे जी महाराज, श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भंडार

७ - संपूर्ण रामायण, पंडित ज्वाला प्रसाद, शास्त्री बी एस प्रविंदर प्रकाशन

८ - तुलसीदास की साहित्य साधना,डॉक्टर लल्लन राय

९ - अग्नि पुराण, महर्षि वेदव्यास, साकार हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस गोरखपुर

१० -राम कथा ,गोपाल उपाध्याय , प्रकाशक जगदीश भारद्वाज, मुद्रक शान प्रिंटर्स

११ - रामकथा: उत्पत्ति और विकास, कामिल बुल्के ,मुद्रक -अरुण कुमार राय प्रकाशक -हिंदी परिषद प्रकाशन

१२ - कंब रामायण, महाकवि कबन ,अनुवादक- श्री एन. वी, राजगोपालन संपादक-अवध नंदन, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद

१३ -कश्मीरी रामावतारचरित ,श्री प्रकाश राम कुर्यग्रामी,अनुवादक -डॉक्टर शिबनकृष्ण रैणा ,प्रकाशक भुवन वाणी ट्रस्ट

१४ - अपने अपने राम, भगवान सिंह, वाणी प्रकाशन

१५ - रामकथा अभ्युदय ,नरेंद्र कोहली ,डायमंड पॉकेट बुक्स

१६ - रक्षक राम ,सूरज पटेल ,प्रभात प्रकाशन

सहायक पुस्तकें :-

१ -राम-रावण कथा खंड-एक 'पूर्व पीठिका', सुलभअग्निहोत्री, अंजुमन प्रकाशन

२ -राम-रावण कथा,खंड-दो 'दशानन', सुलभ अग्निहोत्री ब्लूमबर्ग प्रकाशन

३ -इक्ष्वाकु के वंशज,अमीश त्रिपाठी,अनुवाद उर्मिला गुप्ता, यात्रा प्रकाशन

४- सीता के जाने के बाद -राम, डॉ अशोक शर्मा, अंजुमन प्रकाशन

५ - धर्मात्मा विभीषण, सुधीर निगम, ज्ञान गंगा प्रकाशन

६ -रघुकुल रीत सदा ,राजेंद्र अरुण ,प्रभात प्रकाशन

७ - हिंदू संस्कृति ,स्वामी तेजोमयानंद ,सेंट्रल चिन्मय मिशन ट्रस्ट

८ - रामायण -भ्रांतियां और समाधान, स्वामी विद्यानंद सरस्वती, आर्य प्रकाशन मंडल

९ -गुरु गोविंद सिंह जी द्वारा रचित रामावतार श्री राम कथा आलोचना एवं व्याख्या, डॉ कैलाश नाथ भारद्वाज पंजाब हिंदी साहित्य अकादमी

१० - तुलसीदास परिचय तथा रचनाएं ,सुदर्शन चोपड़ा ,हिंद पॉकेट बुक्स

लेख ,पत्र - पत्रिकाएँ :-

१ - तुलसीदास की प्रासंगिकता, विजय राज

२ - रामायण के कुछ प्रेरक-प्रसंग, खुशहाल चंद्र आर्य

३ - वर्तमान समय में राम की प्रासंगिकता ,केशव मोहन पांडे

४ - राम भक्ति साहित्य में नारी चिंतन,आरंभ त्रैमासिक-पत्रिका, प्रिया कौशिक

५ - राम की प्रासंगिकता ,डॉ राजेंद्र कुमार सिंघवी

६ - श्री राम के धर्मनिष्ठा ,शिवकुमार गोयल

७ - रामराज्य की परिकल्पना के निहितार्थ , पवन गुगनानी

८ - गगनांचल ,भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

पी० के० यूनिवर्सिटी ,करेरा, शिवपुरी, मध्य प्रदेश

हिंदी विषय में शीर्षक- 'रामचरितमानस में सामाजिक पारिवारिक आदर्श के निर्माण में श्री राम की भूमिका' के अंतर्गत विद्यावाचस्पति उपाधि हेतु

मार्गदर्शन
डॉ० विक्रांत शर्मा
हिंदी विभागाध्यक्ष पी० के० यूनिवर्सिटी

शोधकर्ता
दीप्ति शर्मा
पी० के० यूनिवर्सिटी हिंदी विभाग

सत्र -२०१६ -१७